# PURAŚCHARYARṄAVA

COMPILED BY H. H. THE MAHARAJA PRATAPA SINHA SHAH BAHADUR OF NEPAUL.

## PART III.

*Containing 9th 10th 11th and 12th Chapters.*

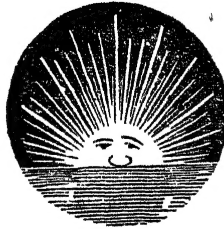
EDITED

BY

SHRI PANDITA MURALI DHARA JHA

*Offg. Professor of Astronomy, Government Sanskrit College, Benares.*

——:o:——



PRINTED & PUBLISHED

BY

PRABHAKARI PRINTING WORKS BENARES CANTT.

1904.

# पुरश्चर्यार्णवः

श्री ५ नेपालमहाराजाधिराजप्रतापसिंहसाहबहादुरवर्म-
विरचितः

तस्य

नवमदशमैकादशद्वादशतरङ्गात्मकः।

## तृतीयखण्डः।

काशिकराजकीयसंस्कृतपाठशालायां ज्यौतिषशास्त्राध्यापक-
झोपाभिधपण्डितमुरलीधरशर्मणा संशोधितः।

स च

वाराणस्यां

संवत् १९६१ वत्सरे
प्राभाकरीयन्त्रालये तदधिपतिद्वारा मुद्रयित्वा प्राकाश्यं नीतः।



# भूमिका ।

विदितोऽयं विद्वद्भिर्भवद्भिः पुरश्चर्यार्णवस्यातुलविषयभङ्गिभारः। तत्र कतिपयानां विषयाणां दिदृक्षुसौकर्याय सत्वरं लाभाय च मातृकावर्णाननुसृत्यात्रैव शकले सूची संरक्षिता यस्या विलोकनेन मनसि तान्त्रिकविषयजातदिदृक्षोद्रेकः सहसा शाम्येत् ।

अथ तन्त्रशास्त्रे मन्त्रोद्धारो, देवताध्यानानि, यन्त्राणि चातिदुर्ज्ञेयान्यवगम्य तदखिलानां सुलभाय सर्वजनीनो वर्णबीजकोशोऽनेकान् मातृकाबीजकोशानवलोक्य निहितोऽथ येषां ध्यानार्थं चित्राणि यन्त्राणि च तेषां देवानामनुक्तान्यन्यतोऽपि संगृह्य न्यस्तानि ।

नैतावद्भि-(वर्णबीजकोशध्यानचित्रयन्त्रै)र्विद्वांसो मां यथार्थं वक्रोक्त्या वा तन्त्रे सर्वज्ञताधिकारितागतं ब्रुवाणाः स्वमनोमोदं लभन्ताम् । किन्तु निष्पक्षपातिमतिभिस्तेऽक्षरशोऽस्मत्परिश्रममवलोक्यानवधानतातोऽनवगताभिप्रायतश्च ग्रन्थपूर्वापरसम्बन्धविघटनाद्यखिलाशुद्धिसूचनां शोधनपुरस्सरां कम्पन्यधिपतिभ्यो वितरीतुमारभन्ताम् । येनातिलज्जमानः स्तोकबुद्धिविभवाद्धृष्टश्च पुनरन्यावसरे तन्निःक्षेपणादतिधन्यवाददानविहितनिष्क्रयोऽयं जनो भविता ।

पतन्ति पुनरुद्यन्ति बहवो भुवि किन्तु ते ।
उत्थापयन्ति विरलाः पतितान् बलभागिनः ॥-इति

सं. १९६१
आषाढ-१९ बुधे ।

भवदीयकरुणाकणाभिलाषी,
झोपाभिधो मुरलीधरशर्मा ।

---

१ चित्रकारिदोषाद् ध्यानानुपूर्वक्रमभिन्नान्यतस्तत्सूची विलोक्या ।

# पुरश्चर्यार्णवस्य

## विषयानुक्रमणिका ।

१ शरीरावयवविहितान्यासनानि वेदितव्यानि ।

१ अयं पशुर्गण्डकापरनामेति ।

[ य ]

१ अत्र ध्याने काचित् त्रुटिरस्ति तदर्थं शुद्धिपत्रं विलोक्यम् ।

# पुरश्चर्यार्णवस्य शुद्धिपत्रम् ।

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| धावननिधिं | धावनविधिं | ६ | ५ |
| ब्राह्मादिं | ब्राह्मचादिं | १ | १४ |
| नैरऋते | नैरऋते | १३ | ६ |

वंशीधरं कृष्णदेहं चकार द्वापरे युगे ।
(तन्त्रराजेऽपि)
कदा चिदाद्या ललिता पुंरूपा कृष्णविग्रहा ।
वेणुनादसमारम्भादकरोद्विवशं जगत् ॥
अहं सदाशिवो देवः प्रकृतिर्विष्णुरुच्यते ।
त्रुटिः १७ १

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| शैवतारा | सैव तारा | १७ | १८ |
| वगामखी | वगलामुखी | ११ | २१ |
| ऽस्विति | ऽस्त्विति | ३५ | १८ |
| मिर्मोले | निर्मोले | ३६ | १७ |
| श्राद्यो | श्राद्या | ३१ | २ |
| प्रतिमा | प्रतिभा | ४० | ७ |
| यस्य तुष्टा | यस्य तुष्टो | ४२ | ७ |
| ऽन्वत्रायज्ञं | ऽन्ववायाद्यं | ४६ | ८ |
| घातक्कं | घातकं | ४८ | १ |
| श्रोतसि | स्रोतसि | ५० | २० |
| कालद्विं- | कलिद्विं- | ७१ | १० |
| त्रेताऽसिय- | त्रेताऽसित- | ८१ | ११ |
| हूंकारो वा | हुंकारो वा | ८५ | १२ |
| वंशत्रयादितः | दर्षत्रयान्वितः | ८८ | ४ |
| षड्विश- | षड्विंश- | ८१ | ५ |
| युक्तमण्डप- | युक्तमण्ड- | १६ | ८ |
| सिद्ध्यैः | सिद्ध्यै | १७ | १६ |
| भवन्मत्येव | भवत्येव | १८ | ६ |
| कृतिका | कृत्तिका | ११ | १ |
| पूर्वषाढा | पूर्वाषाढा | ११ | ७ |
| भूमिस्थं | भूमिष्ठं | १०२ | १४ |
| विदाइ | विदारी | ११० | ४ |
| सन्निरी- | संनिरी | ११३ | १७ |
| भृङ्गाभो | भृङ्गाभो | ११४ | १ |
| पुष्पदि- | पुष्पादि- | ११६ | ११ |
| हृद्यं | हृद्यं | ११७ | १४ |
| भूयांसेश- | भूयांशेऽंश- | १३० | ३ |
| वियोनीति | वियोनीनि | १३५ | ५ |
| अर्धचन्द्रम् त्र्यस्रम् | त्र्यस्रम्- अर्धचन्द्रम् | १३७ | १० |
| षडस्रम् | पञ्चास्रम् | १३८ | ३ |
| पञ्चास्रम् | सप्तास्रम् | १३८ | ३ |
| सप्तास्रम् | षडस्रम् | १३८ | ३ |
| कुण्डमेकविधं | कुण्डमेवंविधं | १३१ | २ |
| रापर्णम् | रार्पणम् | १४१ | ४ |
| दैर्घा- | दैर्घ्या- | १४२ | १४ |
| दीक्षादीनात् | दीक्षादिनात् | १४७ | २४ |
| रचयते | रचयेत् | १५० | १८ |
| नदी | नन्दी | १५१ | १६ |
| सन्धान- | संधान- | १५२ | १७ |
| भूतानि | भूतानि | १५४ | १६ |
| द्वितीयकम् | द्वितीयकम् | १५५ | १७ |
| भित्वा | भित्त्वा | १५७ | ५ |
| ह्रूँ ह्रूँ सः | ॐ ह्रूँ ह्रूँ सः | १५१ | २० |
| तावत्काला | तावत्कला | १६२ | २४ |
| येनैष | येनैव | १६४ | १० |
| अधिष्ठित- | अधिष्ठितं | १६४ | २२ |
| ऊँर्ध्वास्यं | ऊर्ध्वास्यं | १६१ | ४ |
| भ्रमध्ये | भ्रूमध्ये | १६१ | १५ |
| स्वरुपणी | स्वरूपिणी | १७१ | १ |
| पूर्वयुक्तेति | पूर्वयुक्त्येति | १७१ | १६ |
| रात्मनं | रात्मानं | १८८ | १८ |
| स्रूचा | स्रुचा | ११० | १ |
| स्रूवम् | स्रुवम् | ११० | १५ |
| प्राषाण- | पाषाण- | ११२ | ११ |
| शङ्खवरो | शङ्खवटी | ११३ | ३ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|
| प्रभाव्प | प्रभाव्य | ११४ | ३ |
| प्रोक्ष्यण्य- | प्रोक्षण्य | ११५ | ४ |
| व्रीहिर्बहु- | व्रीहिबहु | ११६ | १७ |
| शङ्खवरो | शङ्खवटी | २०२ | २८ |
| घटस्थान्ते | घटस्यान्ते | २०५ | ६ |
| स्थापनीयनि | स्थापनीयानि | २०५ | १२ |
| उँर्ध्वं- | ऊर्ध्वं- | २०७ | ३ |
| अवगन्तयाः | अवगन्तव्याः | २०८ | ७ |
| उँर्ध्वं | ऊर्ध्वं | २१० | ९ |
| धारयन्तं | धारयन्तं | २१० | १० |
| क्रौं चबीजं | क्रोमिँ च | २२२ | १४ |
| ताम्बुलानि | ताम्बूलानि | २२५ | १५ |
| सुघार्णबकृतः | सुधार्णवकृतः | २२७ | २२ |
| संम्प्रदानं | सम्प्रदानं | २२८ | ६ |
| द्रव्याद्यकृष्टः | द्रव्यादाकृष्टः | २३० | ६ |
| प्रियस्वदा | प्रियंवदा | २३३ | १८ |
| उँढाया | ऊढाया | २३४ | १३ |
| वैकक्षिका | रैकक्षिका | २३५ | २१ |
| नरश्रेष्ट | नरश्रेष्ठ | २३८ | २ |
| समुद्धरेतू | समुद्धरेत् | २४१ | १२ |
| निऋर्ति | निर्ऋतिम् | २४२ | ९ |
| प्रासमुद्रां | ग्रासमुद्रां | २४१ | ३ |
| प्रासं | ग्रासं | २४१ | ६ |
| क्ष्यत्वा | ध्यात्वा | २५१ | ८ |
| उँर्ध्वे निष्कले | ऊर्ध्वे निष्कले वा | २५६ | २ |
| पीठोपीठा- | पीठोपपीठा- | २५६ | ४ |
| हरेम् | हरेत् | २५६ | १० |
| प्रयक्ताम् | प्रयुक्तम् | २५७ | २१ |
| सर्षापा- | सर्षपा- | २६० | २१ |
| अक्षपाठनं | अक्षपाटनं | ३६२ | ४ |
| इष्टां | इष्टं | २७१ | ११ |
| अतिरिक्ता | अतिरक्ता | २७४ | ११ |
| सुषुण्मां | सुषुम्णां | २८२ | १ |
| प्रासन- | प्राशन- | २८४ | १३ |
| क्रुरकर्मसु | क्रूरकर्मसु | २८५ | ५ |
| इनि | इति | २८६ | ९ |
| दद्याद्वि- | दद्याद्द्वि- | २८६ | २१ |
| ऋत्विकार्ट- | ऋत्विक्कर्तृ- | २८८ | १७ |
| दर्शन | दशन- | २८९ | २ |
| विशोध्यं यत्नेन | विशाधयेत् तेन | २८९ | १० |
| श्वरसी | श्वरसि | २९१ | ८ |
| गाहास्तीद्विजे- देवादेवर्ज्यं | गोहस्तिद्विजदे- वादिवर्जं | २९६ | २४ |
| सिद्धयेः | सिद्धयः | २९७ | २२ |
| तारावज्रनखं दंष्ट्रायुधा- य महासिं- हाय हुँफट् नमः | तारो वज्रनख- दंष्ट्राय महा- सिंहाय हूँफ- ट् नमः | २९८ | २० |
| दोतु- | होतु- | ३०१ | १ |
| सुधौतंदन्ताद्यं | सुधौतदन्ताद्यं | ३०१ | ११ |
| कुक्षित् कुक्षि- दष्टौ | कुक्षिः कुक्ष्यो- ऽष्टौ | ३०७ | २० |
| एंशान्यां | ऐशान्यां | ३१० | १० |
| ददानि | ददामि | ३१० | १७ |
| ूर्णमानसः | पूर्णमानसः | ३१४ | ५ |
| क्षाद्यै- | अाद्ये- | ३११ | १७ |
| दीक्षाक्रसः | दीक्षाक्रमः | ३१८ | १३ |
| वेचित्र्य- | वैचित्र्य- | ३१८ | १५ |
| दिव्यदृष्ट्याऽ- वलोकनान् | दिव्यदृष्ट्यव- लोकनात् | ३२३ | १० |
| बद्धाञ्जलिः | बद्धाञ्जलिः | ३२४ | ५ |
| नस्थित- | नसंस्थित- | ३२५ | ८ |
| ल्याग्रेषु | ल्यग्रेषु | ३२८ | ३२ |
| ॐ | ङः | ३२९ | ३१ |
| वत्मना | वर्त्मना | ३३२ | ११ |
| स्थापययामि | स्थापयामि | ३३३ | १५ |
| पूररणीय | पूरणीयम् | ३३७ | २३ |
| काथेन | क्वाथेन | ३४२ | ११ |
| पदर्थं | एतदर्थं | ३४२ | २१ |
| सनेपि | सनेयि | ३४२ | ३० |

| अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ.। | प. |
|---|---|---|---|
| सूक्ष्माय | सूक्ष्मायै | ३४५ | ११ |
| बध्वा | बद्ध्वा | ३४६ | २६ |
| दावन- | दाचम | ३४९ | ११ |
| स्नातार्थे | स्नानार्थं | ३५० | ११ |
| दिवेद्य | निवेद्य | ३५० | २२ |
| मन्त्राते | मन्त्रान्ते | ३५० | २५ |
| पञ्चषड्रससं-युक्तं | पञ्चधा षड्रसो-पेतं | ३५३ | २७ |
| वलिवटुकाय | बलिर्वटुकाय | ३५५ | २२ |
| ३५६ | २५६ | ३५६ | २७ |
| पलये- | पलेपये | ३५८ | ८ |
| ष्टतृन् | ष्टातॄन् | ३६२ | २७ |
| अञ्जलिः | ञ्जलिः | ३६३ | ७ |
| वामकद्यां | वामकस्थां | ३६३ | २१ |
| बह्ने- | वह्ने | ३६४ | ६ |
| | | ,, | ७ |
| वेदिक | वैदिक | ३६४ | २१ |
| लोकिताक्ष | लोहिताक्ष | ३६८ | ३ |
| गणपये | गणपतये | ३७३ | १५ |
| बध्वा | बद्ध्वा | ३७६ | १ |
| द्रुणेश- | दुर्गाणेश- | ३७७ | २३ |
| -ड्विधिमद- | -ड्विधमिद- | ३७८ | २७ |
| मात्मानि | मात्मनि | ३८५ | ११ |
| आग्नेज्यां | आग्नेय्यां | ३८७ | २४ |
| चंतान् | चैनात् | ३८९ | ११ |
| -मस्तास्तु | -मस्तासु | ३८९ | १८ |
| शक्तिशङ्ग- | शक्तिसङ्ग | ३९४ | ४ |
| वत्वा | ध्यात्वा | ४०० | २ |
| खण्डव- | षण्णव- | ४०० | १८ |
| पावर्तिं | पार्वति | ४०१ | १ |
| देवेभ्यः | वेदेभ्यः | ४०१ | १५ |
| चर्मन्व- | चर्मण्द- | ४०२ | २ |
| इशाने | ईशाने | ४०३ | २० |
| वोपरि | स्वोपरि | ४११ | १७ |
| कौणिन्या- | कौण्डिन्या- | ४१७ | २१ |
| त्रिषिद्ध- | निषिद्ध- | ४१७ | २२ |
| नियभन | नियमेन | ४१७ | २८ |
| प्रसूनो | प्रसुतो | ४१७ | ३० |
| गणशा | गाणेशा | ४१८ | २७ |
| बध्वा | बद्ध्वा | ४२७ | ११ |
| कुर्परे | कूर्परे | ४२९ | २ |
| | | ,, | ५ |
| व्यात- | व्यात्त- | ४२९ | १९ |
| विजनामि | विजानामि | ४३० | १ |
| मुक्त्यार्थं | मुक्त्यर्थं | ४३१ | २२ |
| सवंतन्त्रेषु | सर्वमन्त्रेषु | ४३४ | १३ |
| नाशिते | नाशिनी | ४३५ | ७ |
| -दंशगुणैः | -दंशगुणं | ४३५ | ११ |
| स्फादिकं | स्फाटिकं | ४३५ | १३ |
| स्काटिके | स्फाटिके | ४३५ | २२ |
| पितृणा- | पितॄणा- | ४३७ | १५ |
| कुर्परे | कूर्परे | ४३८ | १० |
| बद्मसूत्रै- | पद्मसूत्रै- | ४३९ | १५ |
| श्रेष्टाय | श्रेष्ठाय | ४४२ | १० |
| त्रुद्यति | त्रुट्यति | ४४४ | ४ |
| -त्रिषिद्धं सं | -न्निषिद्धसं | ४४४ | ८ |
| संत्रुद्यते | संत्रुट्यते | ४४४ | २२ |
| कनिष्ठादित | कनिष्ठादि | ४४७ | १८ |
| अङ्गुष्ठा | -अनङ्गुष्ठा | ४५१ | १६ |
| तलान्तनिलि- | तलातर्मिलि | ४५२ | १४ |
| गोयनीया | गोपनीया | ४५३ | १२ |
| सधिानी | साधिनी | ४६० | ८ |
| मन्त्रजपा- | मन्त्रचिन्ता | ४६४ | १९ |
| गूढयानो | गूढपादो | ४६८ | १६ |
| वर्णतुं- | वर्त्तुं- | ४७४ | ११ |
| ईन्द्र- | इन्द्र- | ४७५ | १४ |
| ओद्याम्बुरोव-धीशो- | ओघाम्बुरोष-धीशो | ४७५ | १६ |
| बकारेण | खकारेण | ४८० | ८ |
| शकारेण | सकारेण | ४८१ | ८ |
| विधानः | विधानतः | ४९४ | १३ |
| प्रार्थतित्वा | प्रार्थयित्वा | ४९४ | २१ |

| अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ. | प. | अशुद्धम्। | शुद्धम्। | पृ. | प. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| -ऽन्तस्थिति | -न्तस्तिथि- | ४३५ | ११ | मन्त्रस्रान- | मन्त्रस्नान- | ४११ | १६ |
| शाक्तेद्वयं वाद्य- | शक्तेर्द्वयं चाद्य- | ४३६ | ११ | प्रजापते | प्रजायते | ५०१ | १५ |

त्रुटिः ५०५ पृ. ६ प.

(सिद्धान्तसंग्रहे)

अथास्याः संप्रवक्ष्यामि ऋष्यादीन् भैरवोदितान्।
श्रीकृष्णस्तु ऋषिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम्॥
शिवशक्त्यात्मिका काली देवता परिकीर्त्तिता।
पदैः सदीर्घैरङ्गानि कृत्वा ध्यायेज्जगन्मयीम्॥
श्मशानस्थां महाकालीं मुक्तकेशीं दिगम्बराम्।
दंष्ट्राकरालवदनां मुण्डमालाविभूषिताम्॥
दक्षिणोर्ध्वे धनुर्वामे करपद्मे तथा शरान्।
अधः पाशं च खड्गं च धारयन्तीं क्रमेण च॥
नीलमेघप्रभादीप्तां महाकालसमन्विताम्।
प्रातस्तु संस्मरेदेनां मूलचक्रकृतालयाम॥
मध्याह्नेऽनाहते चक्रे सायं व्योमाम्बुजस्थिताम्।

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| पराक्षिणा- | पराक्षिना- | ५०५ | ८ | भ्यीं सिता | भ्यां शिता | ५७५ | १३ |
| सबार्थे | सर्वार्थे | ५१४ | ८ | उभयास्तं | उदयास्तं | ५७६ | १४ |
| -दित्यहुः | -दित्याहुः | ५१५ | १५ | साधनमुच्चये | साधनसमुच्चये | ५७७ | २ |
| दर्पणैः | तर्पणैः | ५२२ | १ | कन्यारुप- | कन्यारूप- | ५८५ | १ |
| यथाशक्त्या | -यथाशक्त्या | ५२७ | ४ | बहिस्कृते | बहिष्कृते | ५८६ | २१ |
| इत्याभि- | इत्यभि- | ५२८ | १ | तदन्तं | तदन्नं | ५११ | ५ |
| सेनदशस्वराः | सेनदशः स्वराः | ५३७ | ११ | अलिस्यन्द- | अलिस्पन्द- | ५९५ | १४ |
| हिरण्मम् | हिरण्मयम् | ५३१ | १६ | मञ्चकाग्रेषु | मञ्चकाङ्गेषु | ५१६ | ११ |
| संशुद्धै | सुशुद्धे | ५४४ | १८ | पुजयीच्छेवे | पूजयेच्छिवे | ६०३ | २३ |
| पषां | येषां | ५४५ | १४ | प्रतियाता- | प्रतिघाता- | ६०५ | १८ |
| प्रायश्चित- | प्रायश्चित्त- | ५४८ | २० | तस्याहिर्जा- | तस्मिन् हि जा- | ६०७ | ३ |
| -भ्रुवाश्च | भ्रुवां च | ५४१ | १० | धराणी | धरणी | ६०८ | ६ |
| जाप्पयोः | जाप्यपोः | ५५० | १३ | जगदे | भजने | ६११ | ६ |
| देवीतर्प- | देवि तर्प- | ५५१ | ३ | प्रक्षातिलां | प्रक्षालितां | ६१४ | ४ |
| नीरूप- | निरूप- | ५५३ | १ | ीरार्दने | वीरार्दनेन | ६१६ | ११ |
| बौद्धायनः | बौधायनः | ५५७ | १ | सितबाद्या- | सितबाधा- | ६१६ | २१ |
| सिद्धुपा- | सिद्धुपाया- | ५६२ | २५ | चन्द्रिका | चण्डिका | ६१८ | १ |
| दुग्धेनाशव- | दुग्धेनाशत्र- | ५६७ | १३ | संस्थाये | संस्थापये | ६१८ | १० |
| कुमुमै- | कुसुमै- | ५७१ | २ | ङेऽन्तम् | ङेऽन्तकम् | ६२७ | १६ |
| देदी- | -देवी | ५७४ | ११ | सुराशवैः | सुरासवैः | ६२८ | २० |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. | प. |
|---|---|---|---|
| -णाढ्यं | णाद्यं | ६३५ | १ |
| ह्युर्ध्वं- | ह्यूर्ध्वं- | ६३७ | १९ |
| -माक्य- | -माणिक्य- | ६४० | २२ |
| नमःसास्त्रं | नमसाऽस्त्रं | ६४४ | १९ |
| शुकं धानां | शुकं दधानां | ६४१ | २४ |
| जाम्बुनद- | जाम्बूनद | ६५४ | ७ |
| रुपदंष्ट्र- | रुदग्रदंष्ट्र- | ६६२ | ६ |
| नृसिंहोऽय- | ह्नृसिंहो य- | ६६४ | ९ |
| तमो | नमो | ६६८ | १६ |
| रामन्त्र | राममन्त्र | ६८३ | १५ |
| प्रीयम् | प्रियम् | ६८३ | २० |
| सत्यत्वा- | शस्तत्वा- | ६९१ | १६ |
| मिश्रि | मिश्र | ६९२ | ६ |
| ऋीलसमा | ऋीलहया | ६९२ | १२ |
| च भयं | चाभयं | ६९३ | ७ |
| वामचारेण | वामाचारेण | ७१६ | ४ |
| हृष्ट्वो | हृष्ट्वा | ७२० | ५ |
| चित्र | चित्र्य | ७२१ | २० |
| मृद्धि | मृदु | ७२९ | ६ |
| भावे तु कल्प- | भावेऽनुकल्प- | ७२९ | १७ |
| चापे | चाण्डे | ७३० | ३ |
| विस्तर- | विष्टर- | ७३१ | १२ |
| शूद | शूद्र | ७४० | १ |
| जयेत् | जपेत् | ७४२ | १० |
| स्यु | स्युः | ७४३ | ११ |
| तिष्टत्सु | तिष्ठत्सु | ७४५ | १६ |
| भ्रंसयि- | भ्रंशयि- | ७४७ | १५ |
| फड- | फडि- | ७५१ | ११ |
| चंर्या | चर्यां | ७५९ | १९ |
| दंष्ट्राग्र | दंष्ट्राग्र | ७६६ | १४ |
| समुण्ड | सुमुण्ड | ७६८ | ५ |
| यावन्त्यः | यावत्यः | ७७६ | ३ |
| ललानं | लालनं | ७७८ | ९ |
| फ्रोमिति | स्फ्रोमिति | ७७९ | २० |
| द्धारण- | द्धार | ७८१ | १ |
| अनन्तरं | अनुत्तरम् | ७८१ | १७ |
| कारान्तौ | कारान्तो | ७८१ | २५ |
| डित्ययि | डित्यपि | ७८४ | १६ |
| स्थ्यालङ्कार | स्थ्यलङ्कार | ७८५ | १८ |
| आलाढा | आलीढा | ७८९ | २ |
| चन्द्रधं- | चन्द्रार्धं- | ७९१ | १ |
| असां त्रयाणां | आसां तिसृणां | ७९१ | ९ |
| वृत्या | वृत्त्या | ८०५ | १० |
| सक्तैः- | शक्तैः- | ८१५ | २२ |
| षद्वर्णैं- | षड्वर्णैं- | ८२२ | २ |
| गौर्यंषे | गौर्यंषे | ८२८ | २५ |
| वाशा | वासा | ८३६ | २१ |
| योन्यत्मक | योन्यात्मक | ८५७ | २१ |
| कौलेयस्तस्मा- | कौले यस्तस्मा- | ८६३ | २० |
| वरंहसित | वरभसित | ८७१ | १८ |
| क्ष्म्रौं | क्ष्म्रा | ८७२ | ७ |
| मन्त्रदेवीं- | मन्त्रदेवीं- | ८७६ | १६ |
| ह्रौं | ह्रीं | ८७८ | १३ |
| व्यापकन्त | व्यापकं तु | ८७८ | १८ |
| भीषामां | भोषणां | ८७८ | २० |
| येष्या | ध्येया | ८८१ | ७ |
| तरो | तारो | ८८३ | १६ |
| श्वेतम्बरां | श्वेताम्बरां | ८८४ | १२ |
| हूनेत् | हुनेत् | ८८४ | १९ |
| प्रकर्त्तिताः | प्रकीर्त्तिताः | ८८६ | ७ |
| प्रकर्त्तितम् | प्रकीर्त्तितम् | ८८७ | ८ |
| भौममन्त्रः | बुधमन्त्रः | ८८७ | २१ |
| सिध्यते | सिध्यति | ८९१ | ६ |
| तदोर्भि- | दोर्भि- | ८९१ | ८ |
| द्विजोतमान् | द्विजोत्तमान् | ८९८ | १९ |
| यमन्त्रः | यममन्त्रः | ८९८ | २३ |
| अदित्य- | आदित्य- | ९०३ | १८ |
| द्यमानसः | द्यतमानः | ९०७ | २ |
| प्रभाती | प्रभावती | ९०८ | १९ |
| स्याहृषीणां | स्य व्याहृतीनां | ९११ | ७ |
| प्रीणिजाता- | प्राणिजाता- | ९११ | १५ |
| बृहत्वा | बृहत्त्वा | ९१२ | २० |

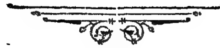
| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| ज्यै हि | ज्यैर्हि | ९१४ | १ | किलासश्वित्र- | किलातश्वित्र- | ९२४ | १२ |
| मकुटं | मुकुटं | ९१४ | २३ | हुनेद्घोसफ | हुनेद्घोशफ | ९२५ | १४ |
| ब्रह्माण्डपावि- | ब्रह्माण्डमाविस्फु- | | | दक्षिणमूर्त्तिं- | दक्षिणामूर्त्तिं | ९२६ | ८ |
| स्फुरज्ज्यो- | रज्ज्योतिः- | | | तिष्टते | तिष्ठते | ९२६ | २० |
| तिस्फा- | स्फा- | ९१६ | ९ | उर्णा | ऊर्णा | ९२७ | २ |
| तिष्टते | तिष्ठते | ९२० | १४ | आनुष्टुबस्य | आनुष्टुभस्य | ९३५ | २ |
| पशिरिष्टं | परिशिष्टं | ९२३ | १ | दायात् | दद्यात् | ९३६ | १३ |
| श्रेष्ठत्व- | श्रेष्ठत्व- | ९२३ | २२ | यथाशक्तिं | यथाशक्ति | ९३६ | २३ |

त्रुटि ९४२ पृ. ८ प. ।

सप्ताश्वं सप्तखड्गं च जातं देशे कलिङ्गके ।
विश्वामित्रार्षकं त्रिष्टुप् छन्दः काश्यपगोत्रजम् ॥
रक्ताम्बरधरं रक्ताभरणैरुपशोभितम् ।
रक्तगन्धनुलेपाङ्गं रक्तध्वजपताकिनम् ॥
किरीटिनं सकेयूरं मणिगं रक्तच्छत्रिणम् ।

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| चात्रेयर्षं | चात्रेयार्षं | ९४३ | २ | द्यदैवतम् | द्यमदैवतम् | १०७९ | ५ |
| आभुवदुती | आभुवदूती | ९४६ | २४ | प्रकर्त्तितम् | प्रकीर्त्तितम् | १०७९ | १४ |
| तिन्दोऽक्षश्च | तिन्दुकोऽक्षश्च | ९५० | ११ | सङ्ख्यान | सङ्ख्याने | १०८९ | १८ |
| षोदशभि | षोडशभि | ९५० | १६ | राङ्कुरे | राङ्कवे | १०९५ | ९ |
| वेदपायराणाय | वेदपारायणाय | ९५९ | १९ | उग्रचण्डा च | उग्रचण्डा | ११०७ | ४ |
| शिरश्चेदो | शिरश्छेदो | ९६४ | १० | ऽश्विभ्यां | ऽश्विभ्यां | ११११ | १४ |
| कञ्जुकोपेता | कञ्चुकोपेता | ९६५ | १९ | भूम्यर्थेनृत- | भूम्यर्थेऽनृत- | १११३ | १६ |
| किरिष्ये | करिष्ये | १००९ | ९ | समारम्य | समारभ्य | १११४ | १० |
| हूता | हुता | १०१० | ९ | गजपुजा | गजपूजा | १११४ | ११ |
| सिंन्धुभरैव | सिन्धुभैरव | १०१३ | २३ | मुंहूरुदर | मुंहुरुदर | १११६ | १५ |
| स्नपायेद् | स्नापयेद् | १०१४ | १३ | न.सारन्धं | नासारन्ध्रं | १११६ | १७ |
| स्तपतन्तु | स्नापयन्तु | १०१७ | ८ | भासं | मांसं | १११७ | १२ |
| ग्रीतवद्या | गीतवाद्या | १०२० | ५ | कूर्चास्नानल- | कूर्चास्त्रानल- | ११२१ | ३ |
| व्रीहिने | व्रीहिणे | १०२१ | ३ | उष्णषी | उष्णीषी | ११२५ | २ |
| ससागच्छ | समागच्छ | १०३५ | १ | गान्धर- | गान्धार- | ११२५ | ३ |
| विचीनां | विचीनां | १०५३ | ३ | वाभवम् | वाग्भवम् | ११३४ | ९ |
| सम्बूको | शम्बूको | १०५३ | ६ | क्षिप्रसाद- | क्षिप्रप्रसाद- | ११४० | १४ |
| परिकल्पते | परिकल्प्यते | १०५७ | ९ | त्रायवृतम् | त्रयावृतम् | ११४० | १८ |
| प्रागिपाकेन | प्राङ्विपाकेन | १०५७ | १७ | विंद्वेषे | विद्वेषे | ११४६ | २४ |
| पार्षतैणैन | पार्षतैणेन | १०५९ | १९ | स्फुरत्कशरं | स्फुरत्केशरं | ११४८ | २ |
| गात्र्यन्तर- | गायत्र्यन्तर- | १०६५ | ७ | त्रिकोण | त्रिकोणम् | ११४९ | १ |

| अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. | अशुद्धम् । | शुद्धम् । | पृ. । | प. |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| उतरान्तं | उत्तरान्तं | ११५० | २३ | कमाना | कामना | ११८५ | २६ |
| न्मत्रवर्णौ | न्मन्त्रवर्णौ | ११५६ | ३ | द्विनम्र- | द्विनम्र- | ११८९ | ८ |
| बुधादोनां | बुधादीनां | ११५८ | १४ | उच्चुस्ततः | ऊच्चुस्ततः | ११९४ | २१ |
| मालामन्त्रं | मालायन्त्रं | ११५८ | २३ | प्रोको | प्रोक्तो | ११९५ | १३ |
| प्रयोदयात् | प्रचोदयात् | ११६० | १५ | स्तम्भनिर्भयः | स्तम्भं निर्भयः | १२०८ | २१ |
| ध्यायै | ध्याये | ११६२ | १० | लक्षे | लक्षं | १२१५ | ११ |
| रीत्यत्येर्थः | रीत्येत्यर्थः | ११६४ | १४ | मालिका | मालिकाम् | १२१७ | २० |
| त्रिष्टूप् | त्रिष्टुप् | ११७० | ७ | समागात्य | समागत्य | १२२५ | १६ |
| गीवत् | गीतवत् | ११७० | २३ | लिङ्गनादाभिः | लिङ्गनादिभिः | १२२६ | ९ |
| पुरश्चर- | पुरश्चरण- | ११७२ | १७ | शेषागमं | शैवागमं | १२२९ | १५ |
| संख्या | संख्यया | ११८३ | १७ | सिंहताम् | संहिताम् | १२३० | १ |



## शमहाविद्यास्तत्पुरश्चरणविशेषाश्च प्रदर्श्यन्ते ।

तथा च (मुण्डमालायाम्)

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ॥
वगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका ।
एता दश महाविद्याः सिद्धिविद्याः प्रकीर्त्तिताः ॥

तत्रादौ प्रथमविद्या प्रोक्ता (कुमारीतन्त्रे)

भैरव उवाच ।

अस्ति गुह्यतमं ह्येतज्ज्ञानमेकं सनातनम् ।
अतीव हि सुगोप्यं च कथितुं नैव शक्यते ॥
अतीव मत्प्रियाऽसीति कथयामि तव प्रिये ।
सर्वं ब्रह्ममयं ह्येतत् संसारं स्थूलसूक्ष्मकम् ॥
प्रकृतिं तु विना नैव संसारमुपपद्यते ।
तस्माच्च प्रकृतेर्मूलकारणं नैव दृश्यते ॥
रूपाणि बहुसङ्ख्यानि प्रकृतेरस्ति भामिनि ।
एषां मध्ये महेशानि कालीरूपं मनोहरम् ॥
विशेषतः कलियुगे नराणां भुक्तिमुक्तिदम् ।
तस्या उपासकाश्चैव ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥
इन्द्रः सूर्यश्च वरुणः कुवेरोऽग्निस्तथाऽपरः ।
दुर्वासाश्च वशिष्ठश्च दत्तात्रेयो बृहस्पतिः ॥
बहुना किमिहोक्तेन सर्वे देवा उपासकाः ।

कालिकायाः प्रसादेन भुक्तिमुक्त्यादिभागिनः ॥
तस्या मन्त्रं प्रवक्ष्यामि यतो रक्षेज्जगत्त्रयम् ।
ककारं वह्निसंयुक्तं रतिविन्दुसमन्वितम् ॥
त्रिगुणं च ततः कूर्चयुग्मं लज्जायुगं ततः ।
दक्षिणे कालिके चेति पूर्वबीजानि चोच्चरेत् ॥
वह्निजायावधिः प्रोक्तो कालिकाया मनुः शिवे ।
द्वाविंशत्यक्षरी विद्या सिद्धिविद्येयमीरिता ॥

मन्त्रार्थमाह (संकेततन्त्रे)

ककाराद्विश्वमुत्पन्नं तेन सृष्टिस्वरूपिणी ।
रेफः कालाग्निरुद्रात्मा तेन संहाररूपिणी ॥
ईकारश्च महालक्ष्मीर्लोकत्रयविभाविनी ।
तेनेयं पालिनी शक्तिः सामरस्यं च विन्दुना ॥

(कालीतन्त्रे)

ककाराच्छिवरूपत्वात् सर्वैश्वर्यप्रदायिनी ।
ज्वलनार्णसमायोगात् सर्वतेजोमयी शुभा ॥
विन्दुमाली केवलं तु सर्वतत्त्वप्रकाशिका ।
विन्दुना निष्कलत्वाच्च कैवल्यफलदायिनी ॥
कूर्चबीजं केवलं तु सर्वबोधप्रकाशकम् ।
चैतन्यरूपं संसारभीषणं मुक्तिदायकम् ॥
व्योम्ना प्रकाशमानत्वं ग्रसमानत्वमग्निना ।
तयोर्विसर्ग ईकारो विन्दुना* तान्त्रिकी मता ॥
दक्षिणा सिद्धसाध्यादिरहिता क्षिप्रसिद्धिदा ।

* विन्दुनादात्मिका इति ४ पु० पा० ।

कालसंकलनात् काली कालग्रासं करोत्यतः॥
स्वाहेति विषयाः सर्वे देवतायां समर्पिताः।
एवं समस्तरूपेण केवलं चित्कलाऽपरा॥
सर्वदेवमयी साक्षाच्छब्दब्रह्मस्वरूपिणी।
एवं ध्यायेद्विशुद्धात्मा जीवन्मुक्तः स्वयं शिवः॥

विद्यामाहात्म्यमाह (भैरवीतन्त्रे)

नात्र चित्ताविशुद्धिः स्यान्नारिमित्रादिदूषणम्।
न वा प्रयासबाहुल्यं समयासमयादिकम्॥
न वित्तव्ययबाहुल्यं कायक्लेशकरं न च।
देवैर्देवत्वविधये सिद्धैः खेचरसिद्धये॥
पन्नगै राक्षसैर्मर्त्यैर्मुनिभिश्च मुमुक्षुभिः।
कामिभिर्धर्मिभिश्चार्थमीप्सुभिः सेव्यते सदा॥
य एनां चिन्तयेन्मन्त्री सर्वकामसमृद्धिदाम्।
तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्वसिद्धिर्न संशयः॥
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभा गताः।
राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः॥
वह्नेः शैत्यं जलस्तम्भं गतिस्तम्भं विवस्वतः।
दिवारात्रिव्यत्ययं च स कर्त्तुं भवति क्षमः॥
अन्ते च लभते देव्या गणत्वं दुर्लभं नरः।
चन्द्रसूर्यसमो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि॥
न तस्य दुर्लभं किंचिद्यः स्मरेद्घोरकालिकाम्।

(कालीतन्त्रे)

अस्याः स्मरणमात्रेण सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि।

एवं समस्तविद्यानां राज्ञी स्तोतुं न शक्यते ॥
वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
सर्वसिद्धिप्रदा देवी अनिरुद्धसरस्वती ॥
तस्मादस्या ज्ञानमात्रात् सिद्धयः संभवन्ति हि ।

तथा ।

अपि चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् ।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समो मन्त्रः सदा भवेत् ॥

तन्त्रान्तरे ।

कलौ काली कलौ काली कलौ काली तु केवला ।
साधिता कालनाथेन प्रत्यक्षा कालिका कलौ ॥
कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चिन्मोक्षकामुकः ।
स भोजनं विना नूनं क्षुन्निवृत्तिमभीप्सति ॥
कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चिच्छान्तिमिच्छति ।
स हि शीतनिवृत्त्यर्थं हिमशैलं निषेवते ॥
कलौ कालीं विहायाथ यः कश्चित् काव्यमिच्छति ।
स तु दुःखनिवृत्त्यर्थं पापानि कुरुते सदा ॥
श्रीमहाकालिका विद्या कलौ पूर्णफलप्रदा ।
कलिर्हि यस्या दासस्य पादपूजां करोति हि ॥
अज्ञानाज्ज्ञानतो वाऽपि सलीलं वा सहेलया ।
स्मृताऽपि सिद्धिदा काली सकृदेव महेश्वरि ॥
महाविद्या सिद्धिविद्या विद्याभेदैः प्रतिष्ठिता ।
उपविद्यादिभेदैश्च कालिका संस्थिता भुवि ॥
ताराद्याः सकला विद्याः कालिकायाः प्रजज्ञिरे ।
सर्वा विद्याः कालिकायां संस्थिता एव पार्वति ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः (कालीतन्त्रे)

भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक्छन्द उदाहृतम् ।
देवता कालिका प्रोक्ता लज्जाबीजं तु बीजकम् ॥
शक्तिस्तु कूर्चबीजं स्यादनिरुद्धसरस्वती ।

(कालीक्रमे)

कीलकं चाद्यबीजं तु चतुर्वर्गार्थसिद्धिदम् ।

(कालीतन्त्रे)

कवित्वार्थे नियोगः स्यादेवमृष्यादिकल्पना ।
अङ्गन्यासकरन्यसौ यथावदभिधीयते ॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

(वीरतन्त्रेऽपि)

दीर्घषट्कयुताद्येन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

न्यासान्तराणि तत्रैव द्रष्टव्यानि ।

अथ ध्यानं (मेरुतन्त्रे)

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषणाम् ॥
खड्गाभयवराँश्छिन्नं मुण्डं च दधतीं करैः ।
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ॥
कण्ठावसक्तमुण्डालीं गलद्रुधिरचर्चिताम् ।
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मविराजिताम् ॥
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ।
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ॥
सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविच्छुरिताननाम् ।
घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तलम्बकचोच्चयाम् ।

शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम् ॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
महाकालसमायुक्तां शवोपरिरतान्विताम् ॥
सुखप्रसन्नवरदां स्मेराननसरोरुहाम् ।
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं श्मशानालयवासिनीम् ॥

तथा ।

कपिलारत्नसम्पूर्णपृथ्वीदानस्य यत् फलम् ।
कोटिहोमसहस्रस्य देव्या ध्यानेन तत् फलम् ॥
एतन्मन्त्रजपान्मन्त्री मुच्यते ब्रह्महत्यया ।
पितृमातृवधाद्यैश्च किमन्यैः *क्षुद्रघातकैः ॥

अथ शापोद्धारस्तत्रान्तरे ।

शापोद्धारं प्रवक्ष्यामि वशिष्ठमुनिना कृतम् ।
चतुर्विंशतिलक्षाणि जप्त्वा कोपेन शप्तवान् ॥
अद्य प्रभृति देवेशि कालिके कालरूपिणि ।
तव मन्त्रेषु संसिद्धिः कष्टेनैव भविष्यति ॥
इति श्रुत्वा महादेवी प्रादुर्भूता प्रसाद्य तम् ।
उवाच पुत्र किमिदं शापदानं वृथा कृतम् ॥
एवं फलं यथा न स्यात् तथा कुरु मुनीश्वर ।
ज्ञानं दत्तं दुराराध्यं दुर्लभं यत् सुरैरपि ॥
ततः प्रीत्या वरं लब्ध्वा ज्ञानविज्ञानसंयुतम् ।
उवाच प्रीतमनसा शापान्तं मन्त्रसङ्कटे ॥
मातः क्रोधेन कथितं तत्रापायमहं ब्रुवे ।
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य घोररूपे च दक्षिणे ॥

---

* क्षुद्रपातकैरिति २, ३, ४, ५, पु० पा० ।

सिद्धिं कुरुद्वयं प्रोच्य कालिकेति पदं ततः ॥
ममाभीष्टफलं शीघ्रं देहि द्रविणसम्पदम्।
जपादौ मन्त्रमुच्चार्य जपान्ते च पुनः पठेत् ॥
भविष्यति ततः सिद्धिरचिरात् परमेश्वरि।

अथासनभेदा उक्ता मत्स्यसूक्ते।

मृद्वच्चूडकमासीनश्चान्येषु कोमलेषु च।
विष्टरे वा समास्तृत्य साधयेत् सिद्धिमुत्तमाम् ॥

एषां लक्षणानि तत्रैव।

अर्वाक् षण्मासतो गर्भच्युतमाहुर्मृदुं बुधाः।
चूडोपनयनैर्हीनमेतच्चाच्चूडकं विदुः ॥
निवृत्तचूडको बालो हीनोपनयनः पुमान्।
यो मृतः पञ्चमे वर्षे तमेव कोमलं विदुः ॥

तथा।

मृतासनं विना देवि यो जपेत् कालिकां नरः।
तावत् स नारकी ज्ञेयो यावदाहूतसंप्लवम् ॥

यो वीर इत्यर्थः। पशोस्तु तादृशासननिषेधात्।
मृद्वासनाद्यभावे ऽनुकल्प उक्तो (वीरतन्त्रे)

शवाभावे विष्टरं तु शवरूपं प्रकल्पयेत्।
पञ्चाशद्भिर्भवेद्ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरम् ॥

(कालीतन्त्रादौ)

मृताभावे कुशरूपं विष्टरं परिकल्पयेत।
विष्टरः साधकस्याथ कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ॥
भूतपत्राणि यस्मिन् वै स कुशेत्यभिधीयते।
हस्ते पादे दश दशमिता दिग्युगं हृत्सरोजे

विंशत्सङ्ख्याः सकलवरदे मस्तके कीर्त्तिताश्च ।
गुह्ये जिह्वावदनरदने घ्राणकर्णस्तनेषु
लिङ्गे चाण्डे युगपरिमिता योजनीयाः कुशाश्च ॥
इत्येष विष्टरः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः ।
कुशैर्वा बन्धनं कार्यं नाड्या वा परमेश्वरि ॥
रक्तमिश्रितसूत्रेण पट्टसूत्रेण वा पुनः ।
विष्टरं परिकल्प्याथ तस्योपरि जपं चरेत् ॥
विधिविष्टरपद्मस्य विधिः प्रोक्तो मया तव ।
शवरूपं प्रकल्प्याथ कविर्वाग्मी भवेन्नरः ॥
स्वयम्भुवाक्तं सूत्रं च कर्त्तव्यं सर्वसिद्धये ।
शवाभावे विष्टरस्तु शवरूपः प्रकीर्त्तितः ॥
विष्टरः शिवरूपः स्यात् स्वस्य शक्तित्वकल्पना ।
शिवशक्तिसमायोगात् किं न सिद्ध्यति भूतले ॥

अथ विष्टरसंस्कारः (शक्तिसङ्गमे)

गायत्र्या त्रोटनं कार्यं मूलेन ग्रथनं चरेत् ।
कृतसङ्कल्पको मन्त्री कोमलं वामपाणिना ॥
कूर्चबीजेन सङ्गृह्य अस्त्रमन्त्रेण प्रोक्षणम् ।
प्रणवं भुवनेशीं च समुच्चार्य तु तं वदेत् ॥
शवरूप महाप्रेत चाष्टसिद्धिं प्रयच्छ मे ।
इति स्तुत्वा तु तं सम्यक् कुशमध्ये निधापयेत् ॥
तस्य देहे त्रिकोणं तु रक्तचन्दनकेन वै ।
मायां तन्मध्यगां लिख्य बहिर्मण्डलकं चरेत् ॥
प्रणवम्-आः सुरेखे च वज्ररेखे ततःपरम् ।

कूर्चं चास्त्रं वह्निवधूरयं च मण्डले मनुः ॥
आँकारं च ततो मायां क्रौँकारं हंस एव च ।
वह्निजायां समुच्चार्य शवप्राणाः पदं वदेत् ॥
इह प्राणाः पदं चोक्त्वा शवजीव इह स्थितः ।
शवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुरेव च ॥
श्रोत्रघ्राणानीहागत्य सुखं च चिरमेव च ।
तिष्ठन्तु स्वाहया युक्तः प्राणसंस्थापने मनुः ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्याधारशक्तिपदं ततः ।
कोमलासनपदं ङेऽन्तं नमोऽन्तेन तमर्चयेत् ॥
प्रणवं कामपीठाय नमः शब्दान्नमस्क्रिया ।
स्वर्णैर्माषत्रयैः पट्टे कार्या मूर्त्तिः शवस्य तु ॥
संस्थाप्य विस्तरस्यान्ते सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

मृताभाव इति वचनात् पशोः शवानुकल्पकुशविष्टरमपि नास्ति मुख्येऽधिकारिण
ानुकल्पेऽधिकारादिति सुधार्णवकृतः ।

आसनान्तरसंस्कारोऽप्युक्तो (भैरवतन्त्रे)

कुशं व्याघ्राजिनं वाऽपि कम्बलं लोहितं तथा ।
कोमलाद्यासनं वाऽपि पीतवस्त्रेण वेष्टयेत् ॥
आसनं सम्यगापाद्य ततः शोधनमाचरेत् ।
कल्पोक्तेन विधानेन पूजां सम्यक् समाचरेत् ॥
पूजार्थमासनमहं शोधयामि महेश्वरि ।
देव्याज्ञामेवमादाय मूलहृन्मनुनाऽपि च ॥
जलेनासनमभ्युक्ष्य कवचेनावगुण्ठ्य च ।
अस्त्रमन्त्रेण संरक्ष्य सदाशिवनिभं स्मरेत् ॥
तत्र पीठमनुं भक्त्या जपेदष्टोत्तरं शतम् ।

यथा विभवसम्भारैः पूजयित्वा सदाशिवम् ॥
सिद्धीश्वर महादेव सर्वसिद्धिप्रदायक ।
देहि मेऽभीष्टसिद्धिं त्वमेतदासनरूपतः ॥
इदं मन्त्रं समुच्चार्य उपविश्यासने ततः ।
यथाविधि विधायाथ गुरवे दक्षिणां ददेत् ॥

इत्यासनसंस्कारः ।

अथ देशाः (फेत्कारिणीये)

एकलिङ्गे श्मशाने च शून्यागारे चतुष्पथे ।
तत्रस्थः साधयेद्योगी विद्यां त्रिभवमोचिनीम् ॥

एकलिङ्गलक्षणमुक्तं तत्रैव ।

पञ्चक्रोशान्तरे यत्र न लिङ्गान्तरमीक्षते ।
तदेकलिङ्गमाख्यातं तत्र सिद्धिरनुत्तमा ॥

श्मशानादिलक्षणमुक्तं (त्रिशक्तिरत्नाकरे)

दह्यन्ते व्यसवो यत्र शवकीलकसंकुले ।
गृध्रगोमायुकाकाद्यैर्मांसलुब्धैर्यदावृतम् ॥
तत् श्मशानमिति ख्यातं पिशाचगणसेवितम् ।
काकादिनीडसंयुक्तं कृत्तिच्छत्रादिसंयुतम् ॥
नागरैर्दूरनिर्मुक्तं साध्यसोद्वेगकारकम् ।
सौधसंरूढघासाढ्यं शून्यागारं तदुच्यते ॥
चतुर्णां च यथा यत्र संयोगो युगपद्भवेत् ।
तच्चतुष्पथमित्युक्तं रजन्यामिष्टदायकम् ॥
पूर्वपूर्वमिदं शस्तं जघन्यश्चोत्तरोत्तरम् ।
उज्झटे पर्वते वाऽपि निर्जने वा चतुष्पथे ॥
देवागारे देवशून्ये विल्वमूले नदीतटे ।

स्वगृहे निर्जनारामे तथा चाश्वत्थसन्निधौ ॥

(कुमारीतन्त्रे)

तदभावे दिव्यगेहे सिन्दूरादिभिरङ्किते ।
खड्गशूलगदाकर्त्रीचामरव्यजनादिभिः ॥
वितानधूपसङ्कीर्णे कृष्णागुरुसुवासिते ।
युवतीनां सुरापीनां वेश्यानां लास्यशोभिते ॥
शङ्खघण्टारवाकीर्णे दीपावलिविराजिते ।
एवम्भूते गृहे पूजा कालिकायाः सुशोभना ॥

अथ पुरश्चरणविधिः (वीरतन्त्रे)

आदौ मन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं पुरश्चरणमाचरेत् ।
ततः सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत् ॥

(स्वतन्त्रतन्त्रे)

दिवा लक्षं शुचिर्भूत्वा हविष्याशी जपेन्नरः ।
ततस्तु तद्दशांशेन होमयेद्धविषा प्रिये ॥
तर्पयेत् तीर्थतोयेन पयसा सर्पिषाऽपि वा ।
मधुना वा सितामिश्रतोयेन परमेश्वरीम् ॥
देवीं चाभिषिञ्चेत् तोयैस्तर्पणस्य दशांशतः ।
तद्दशांशं हविष्यान्नैर्भोजयेद्भक्तितः प्रिये ॥
कालीमन्त्रविदो विप्रान् दक्षिणां गुरवे ददेत् ।
पाशवं कठिनं कल्पं शृणु वीरं ततः प्रिये ॥
रात्रौ मांसाशवैर्देवीं पूजयित्वा विधानतः ।
ततो नग्नां स्त्रियं नग्नो रमन् क्लेदयुतोऽपि वा ॥
जपेल्लक्षं ततो देवीं होमयेज्ज्वलितेऽनले ।
योनिकुण्डे स्थिते सर्पिर्मांसमद्ययुतं तथा ॥

दशांशं तर्पयेन्मद्यैर्मांसमिश्रैस्तु साधकः ।
तर्पणस्य दशांशेन अभिषिञ्च्य जगन्मयीम् ॥
दशांशं भोजयेत् साधु साधकं कालिकाप्रियम्
मद्यं मांसं च मत्स्यं च चर्वणं च प्रदापयेत् ॥
ततस्तु तोषयेद्भक्त्या गुरुं स्वर्णादिभिः प्रिये ।
एतत्कल्पद्वयाद्देवि मन्त्रः सिध्यति वै ध्रुवम् ॥

( कालीतन्त्रे )

आदौ पुरस्क्रियां कुर्यान्नियमेन यथाविधि ।
लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ॥
रात्रौ ताम्बूलपूर्णास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।
ततः सिद्धमनुर्मंत्री प्रयोगार्हो न चान्यथा ॥

( साधनसमुच्चये )

नित्यकर्म दिवा कृत्वा रात्रौ पूजां समाचरेत् ।
पूजान्ते तु जपं कुर्यात् कारणास्वादमोदितः ॥
जपेन लक्षमात्रेण काली विद्या प्रसिध्यति ।

( भैरवतन्त्रे )

लक्षं जपेद्धविष्याशी दिनेनैव जितेन्द्रियः ।
ब्रह्मचर्यपरो भूत्वा पुरश्चरणकर्मणि ॥
तथा रात्रौ जपेल्लक्षं मन्त्री मैथुनतत्परः ।
कृत्वाऽऽचारक्रमेणैवं साधयेन्मन्त्रमात्मनः ॥
विधानेनाथ सिद्धिः स्यान्मनुरेव न संशयः ।

( भैरवयामले )

दीक्षाविधानमधिगम्य गुरोः सकाशा-
ल्लब्ध्वा मनुं जपति लक्षमितं दिवा यः ।

रात्रौ हविष्यभुगमत्सरकामकोप-
लोभाद्यचञ्चलमनाः स तु साधकेन्द्रः ॥
लक्षं निशि स्ववनितासु रतावसाने
नग्नो विमुक्तचिकुरस्त्वयि दत्तचित्तः ।

(महाकालस्तुतौ)

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो
दिवा मातर्युष्मच्चरणयुगलध्याननिरतः ।
परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं
जपो लक्षं स स्यात् स्मरहरसमानः क्षितितले ॥

(मेरुतन्त्रे)

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।
अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥
दशांशं होमयेदाज्यैस्तर्पयेदभिषेचयेत् ।
होमं च तर्पणं पूजा कर्त्तव्या तु विशेषतः ॥
ततः प्रयोगान् कुर्वीत काम्यानिष्टफलाप्तये ।

(वीरचूडामणौ)

साधनस्य विधिं वक्ष्ये संकेतपरमाद्भुतम् ।
येन विज्ञातमात्रेण खेचरत्वं च जायते ॥
होमं कुर्यात् प्रयत्नेन पायसेन तिलेन वा ।
स्नातः शुक्लाम्बरधरो नित्यकर्म दिवाशुचिः ॥
रात्रौ पूजां प्रकुर्वीत पञ्चमुद्राविधानतः ।
अनेनैव विधानेन लक्षमेकं जपेद्बुधः ॥
स्वस्वकर्म पुरस्कृत्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
हावभावादिकं कुर्यान्महाचीनलतां हरेत् ॥

(श्रुतिसिद्धान्ततन्त्रे)

तेनैव तर्पणं कुर्यात् स्नानपानादिकं सदा ।
दक्षिणे पाशवः कल्पो वीरकल्पस्तु वामिनाम् ॥
कल्पद्वयं समाश्रित्य मन्त्रः सिध्यति सत्वरम् ।
गुरोराज्ञां समादाय स्नातः शुक्लाम्बरः शुचिः ॥
दिवा लक्षं जपेद्विद्यां ब्रह्मचर्यं समाश्रितः ।
रात्रौ च देवदेवेशीमिष्ट्वा वामोपचारकैः ॥
शक्तीः संपूज्य विधिवत् कृत्वा निधुवनोत्सवम् ।
कोमलाद्यासनासीनो मुक्तकेशो दिगम्बरः ॥
ताम्बूलपरिपूर्णास्यः सिन्दूराङ्कितभालकः ।
रहस्यमालामादाय जपेल्लक्षमनन्यधीः ॥
कुलमार्गप्रपन्नानां विधिरेषः प्रकीर्त्तितः ।

अत्र ब्राह्मणस्य पशोर्वा दक्षिणोपचारेण दिवैकलक्षजपः । शूद्रस्य वीरस्य च रात्रौ वामोपचारेणैकलक्षजप इति राघवभट्टादयः ।

तेषामयमाशयः ।

भैक्ष्यादिनियमाहारः सकृद्रात्रौ विधीयते ।
दिवा चैव जपं कुर्यात् पौरश्चरणिको द्विजः ॥

इति (फेत्कारिणी-)तन्त्रवचनात् ।

स्नातः शुक्लाम्बरधरः शुचिः प्रयतमानसः ।
दिवा सर्वं प्रकर्त्तव्यं धर्मकामार्थसिद्धये ॥
द्विजानामत्र सर्वेषां विधिरेषः प्रकीर्त्तितः ।

इति (मेरुतन्त्र-)वचनाच्च विप्रादिकर्त्तृकपुरश्चरणे ।

त्रिसन्ध्यं देवपूजां च त्रिसन्ध्यं जपमाचरेत् ।
रात्रौ मन्त्रं च मालां च स्पृशेन्नैव कदा चन ॥

इति पशुभावप्रकरणीय-(भावचूडामणि-)वचनात् । पशुकर्त्तृकपुरश्चरणे च दिवस एव कालः ।

एवं च ।

द्विजानां चैव सर्वेषां दिवाविधिरिहोच्यते ।
शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ॥

इति (महाकालसंहिता-) वचनोत्तरार्धात् ।
शूद्रकर्त्तृकपुरश्चरणे ।

गते तु प्रथमे यामे तृतीयप्रहरावधि ।
निशायामेव जप्तव्यं रात्रिशेषे जपेन्न च ॥

वीरपुरश्चरणप्रकरणीय-(मुण्डमाला-)वचनाद्वीरकर्त्तृकपुरश्चरणे च रात्रिरेव काल इति व्यवस्थितेः ।

पशुर्गुरुमुखाल्लब्धां विद्यां कालघनप्रभाम् ।
पाशवेन तु कल्पेन लक्षं जपति साधकः ॥
दिव्यगुरुमुखाल्लब्ध्वा कालिकां दिव्यरूपिणीम् ।
लक्षं जप्यात् सदा मन्त्रं वीरकल्पेन साधकः ॥

इति (कालीकुलार्णव-)वचनात् ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जपेत् पशुः ।
दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरो रात्रौ लक्षं जपं चरेत् ॥

इति (कालीक्रम-)वचनाच्च सर्वेषामेकलक्षजपात्मकमेव पुरश्चरणं सिध्यतीति ।
अस्मिन् मते ।

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूलपूर्णास्यः शय्यायां लक्षमानतः ॥
एवं लक्षद्वयं जप्त्वा तद्दशांशेन मन्त्रवित् ।
अयुतं होमयेद्देवि दिवारात्रिप्रभेदतः ॥

इति सर्वेषां भिन्नभिन्नेति कर्त्तव्यताकसमुचितलक्षद्वयजपात्मकपुरश्चरणविधायक-(कुमारीतन्त्र-)विरोधो दुर्वारः ।

(निरुत्तरतन्त्रेऽपि) लक्षद्वयपरिमित एव जप उक्तः ।

**लक्षद्वयं जपेद्विद्यां दिवारात्रिप्रभेदतः**—इति ।

सुधार्णवकृतस्तु—

'एवं लक्षद्वयं जप्त्वा 'इत्यादि–(कुमारीतन्त्रा–)दिवचनाद्दिवारात्र्योर्भिन्नभिन्नाचारेणैकैकलक्षजपात्मकसमुचितलक्षद्वयजपः सर्वस्यैव प्राप्तः ।

**स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जपेत् पशुः ।**
**दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरो रात्रौ लक्षं जपं चरेत् ॥**

इति (कालीक्रम–)वचनेनापवाद्यते ।

एवं च वीरब्राह्मणस्यापि रात्रौ मैरेयाद्युपादानपुरःसरः ।

**ब्राह्मणो मदिरां दत्त्वा ब्राह्मण्यादेव हीयते ।**

इत्यादिवाक्यविरुद्धो वीरभावप्रकरणीयब्राह्मणकर्तृकक्षीरोपादानविधायक-(भावचूडामणि–)विरुद्धश्च जपः प्राप्तः ।

तत्र

**द्विजानां चैव सर्वेषां दिवाविधिरिहेष्यते ।**

इत्यपवादकं वाक्यम् । तेन वीरस्यापि ब्राह्मणस्य मैरेयाद्युपादानपूर्वकं दिवालक्षजपः पर्यवसन्नो भवति ।

एवं च राजन्यवैश्ययोरपि रात्रिमात्रजपापवादकम् ।

**शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।**

इत्युत्तरार्धम् । तेन (कुमारिकल्प–)वचनं राजन्यवैश्यविषयं पर्यवस्यति ।

अपवादविषयपरिहारेणोत्सर्गस्य व्यवस्थितेः पशूनां रात्रिजपश्च पशुभावप्रकरणीय–(भावचूडामणि–)वचनपरास्त एवेति सर्वमनवद्यम् ।

वस्तुतस्तु—

'पशुर्गुरुमुखाल्लब्ध्वा'इत्यादि(कालीकुलार्णव–)वचनात् पशोर्लब्धमन्त्रस्य पशुभावेन वीराल्लब्धमन्त्रस्य वीरभावेन च साधने एकलक्षजपो वैपरीत्ये च लक्षद्वयजप इत्याहुः । अत्र वैपरीत्ये (कुमारीतन्त्रो–)क्तरीत्या लक्षद्वयजपस्य कर्त्तव्यतया वीराल्लब्धमन्त्रस्य पशुभावेन साधनासम्भवात् पशोर्लब्धमन्त्रस्य वीरभावेन साधनमेव वैपरीत्यमिति ध्येयम् ।

अत्र कृष्णभट्टपादाः ।

'एवं लक्षद्वयं जप्त्वा'इत्यादि–(कुमारीतन्त्रा–)दिवचनात् सर्वेषामपि लक्षद्वयपरिमित एव जपः । पशुदिव्यवीराणामेकैकलक्षजपविधायक-(कालीकुलार्णवकालीक्रमा-)दिवचनं तु सिद्धमन्त्रविषयम् ।

अत एवोक्तं (यामलादौ)

गुरुणा साधितो मन्त्रो यदि भाग्येन लभ्यते ।
लक्षमात्रं तदा जप्त्वा सर्वकर्माणि साधयेत्—इति ॥

तत्र विशेषस्तु ।

रात्रौ मांसासवैर्देवीं पूजयित्वा विधानतः ।
ततो नग्नां स्त्रियं नग्नो रमन्–इत्यादि(स्वतन्त्रतन्त्रा–)दिवचनात् ।
ब्राह्मणो मदिरां दत्वा—इत्यादिमहाकालोक्तविरुद्धमैरेयदानादिकम् ।
अज्ञानात् स्वस्त्रियं गत्वा–इत्यादिसामान्यपुरश्चरणप्रकरणीय–(सिद्धान्तसम्प्रदाया)–दिवचनविरुद्धरात्रिजपप्राक्कालीनसुरतादिकं च ब्राह्मणस्यापि प्राप्तम् ।

तदुभयमपि ।

द्रव्येण सात्त्विकेनैव ब्राह्मणः पूजयेच्छिवाम् ।
स्वकीयां परकीयां वा सामान्यवनितां तथा ॥
जपेयुस्ताः समाकृष्य क्षत्रविट्शूद्रजातयः ।

इति (महाकालसंहिता)–वचनेनापवाद्यते ।

एवं च ।

स्वजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ।
स्पृष्ट्वा तथा समाघ्राय पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥
ऋतुकालं विना चापि न गच्छेत् स्त्रियमादरात् ।

इत्यादिभिः पशुभावप्रकरणीय–(भावचूडामणि–)वचनैर्विप्रेतरपशोरपि तदुभयं निरस्तमेव ।

पशुमात्रस्य रात्रिजपनिषेधक–(भावचूडामणि–)वचनं तु एतद्देवताव्यतिरिक्तदेवतोपासकपशुपरम् ।

रात्रावपि जपेत् तावत् प्रत्यवायोपशान्तये ।

इति पशुकर्त्तृककाम्यप्रकरणीय–(श्रुतिसिद्धान्ततन्त्र)–वचनेन एतद्देवतोपासकपशौ रात्रिजपस्यापि विहितत्वात् ।

शूद्राणां च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।

इति वचनं तु शूद्राणां रात्रिजपे फलातिशयबोधकं न तु शूद्रकर्त्तृकदिवातनजप-प्रतिषेधकम् ।

तथा च ।

वीरदिव्ययोर्दिवापाशवकल्पेनैकलक्षजपो वीरकल्पेन रात्रावेकलक्षजपस्तत्रापि साक्षान्मैरेयाद्युपादानं शूद्रस्यैव न तु वीरस्यापि त्रैवर्णिकस्य तदुपादानम् ।

क्षीरेण ब्राह्मणैस्तर्प्या घृतेन नृपवंशजैः ।
माक्षिकैर्वैश्यवर्णैस्तु आसवैः शूद्रजातिभिः ॥

इति (भैरवतन्त्र-) वचनात् ।

अत एवोक्तं (महाकालसंहितायाम्)

श्रूयते यत् फलाधिक्यं तत्रादौ मद्यदानतः ।
तद्धि शूद्रपरं ज्ञेयं न तु द्विजपरं प्रिये—इति ॥

पशोस्तु दक्षिणाचारेण दिवैकलक्षजपस्तेनैवाचारेण रात्रावेकलक्षजप इति सर्वेषामपि लक्षद्वयजपात्मकमेव पुरश्चरणं पर्यवसन्नमिति प्राहुः ।

मम त्वेवं प्रतिभाति ।

दक्षिणे पाशवः कल्पो वीरकल्पस्तु वामिनाम् ।

इत्यादि (श्रुतिसिद्धान्त-) तन्त्रवचनाद्दक्षिणमार्गिणः पाशवकल्प एव वाममार्गिणो वीरकल्पएवाधिकारित्वे सिद्धे पाशवकल्पेन वीरकल्पेन च पुरश्चरणमुक्त्वा—

कुलमार्गप्रपन्नानां विधिरेष प्रकीर्त्तितः ।

इति तत्रैवोक्तत्वात् ।

कुलाचारक्रमेणैवं साधयेन्मन्त्रमात्मनः ।

इति (भैरवतन्त्र-) वचनात् ।

दक्षवामक्रियायुक्तः कौलश्चोभयमिश्रितः ।

इत्याचारप्रकरणीय-(वाडवानल)-वचनाच्च एतत्कल्पद्वयाश्रयणे कौलिकस्यैवाधिकारः प्रतीयते ।

तथा च ।

पाशवकल्पेन दिवैकलक्षजपरूपपुरश्चरणं दक्षिणमार्गिणः । वीरकल्पेन रात्रावेकलक्षजपरूपपुरश्चरणं वाममार्गिणः । एतदुभयात्मकपुरश्चरणं कौलिकस्येति मार्गभेदेन पुरश्चरणस्यापि भेदः ।

**द्विजानां चैव सर्वेषाम्**—इत्यादौ द्विजपदं पशुपरं न तु विप्रमात्रपरम् । तस्य त्रैवर्णिकवाचकत्वात् । अत एव क्षत्रियवैश्ययोः संग्रहाय सर्वेषामिति पदमुपात्तम् । उत्तरार्धे तु नोपात्तम् । अन्यथा राजन्यवैश्यविषयकाकाङ्क्षाया अनिवृत्तिप्रसङ्ग इति तु सुधार्णवकृतैवोक्तम् । पशुश्च दक्षिणमार्गी । एवमुत्तरार्धे शूद्रपदं वाममार्गिपरम् ।

अत एवोक्तं (मेरुतन्त्रे)

**शूद्रादियवनान्तानां सिद्धिर्वामपथे स्थिता**—इति ।

**दिव्यो गुरुमुखात्**—इत्यत्र **दिव्यो वाऽप्यथ वा वीरः**—इत्यत्र च दिव्यवीरौ वाममार्गिणौ न तु कौलिकौ । कौलिकवाममार्गिभेदेन तयोः प्रत्येकं द्वैविध्यस्य वक्ष्यमाणत्वात् तथा च दिवैकलक्षजपविधायकानि (कालीकुलार्णवा)—दिवचनानि दक्षिणमार्गपरतया रात्रावेकलक्षजपविधायकानि (साधनसमुच्चया-)दिवचनानि वाममार्गपरतया दिवारात्रिभेदेन समुचितलक्षद्वयजपविधायकानि (भैरवतन्त्रकुमारीतन्त्रा-) दिवचनानि च कुलमार्गपरतया संगमनीयानीति सकलमकलङ्कम् ।

किञ्च ।

**लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।**
**अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं जपेन्मनुम् ॥**

इत्यादावपि त्रिविधमार्गोपयुक्तं त्रिविधपुरश्चरणं सुधीभिराकलनीयम् ।

ननु पशूनामेतद्देवताराधने कथमधिकारः ।

**दिव्यभावं वीरभावं विना कालीं न पूजयेत् ।**
**पूजयेन्नरकं याति दुःखं तस्य पदे पदे ॥**
**पशुभावाश्रितो देवि यदि कालीं प्रपूजयेत् ।**
**रौरवं नरकं याति यावदाहूतसंप्लवम् ॥**

इति (निरुत्तरतन्त्र-)वचनेन निषेधादिति चेन्न । दिव्यभावमित्यादिवचनानां वामाचारप्रकरणीयतया वाममार्गिणां पशुभावाश्रयणनिषेधपरत्वात् ।

तथा च ।

**वाममार्गी दिव्यभावं विना कालीं न पूजयेत् ।**

पशुभावाश्रितः सन् यदि पूजयेत् तदा रौरवं नरकं यातीति तदर्थः ।

तदुक्तमन्यत्रापि ।

**दिव्यभावं वीरभावं वाममार्गी समाश्रयेत् ।**

पशोः संसर्गमात्रेण रौरवं नरकं व्रजेत्-इति ॥

तथा च ।

पशुभावो हि विप्राणां श्रेयस्करतरो मतः ।
तस्मात् पाशवकल्पेन विप्रः कालीं प्रपूजयेत् ॥

इति (श्रुतिसिद्धान्ततन्त्र-) वचनात् ।

विप्रो दक्षिणमार्गेण महामायां प्रपूजयेत् ॥

इत्यादि (सिद्धान्तसार-)वचनाच्च पशूनामेतद्देवतोपासनाधिकारित्वमक्षतमेव ।

अन्यथा ।

पशुर्गुरुमुखाल्लब्ध्वा-इत्यादिपूर्वोक्त-(कालीकुलार्णव-)वचनस्य ।

स्वाचारनिरतो नित्यं दिवा लक्षं जयेत् पशुः ।

इत्यादि (कालीक्रम-)वचनस्य चासङ्गत्यापत्तेः ।

एवं च ।

साधके क्षोभमापन्ने देवीक्षोभः प्रजायते ।
तस्माद्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
विना पीत्वा सुरां भुक्त्वा मांसं गत्वा रजस्वलाम् ।
यो जपेद्दक्षिणां कालीं तस्य दुःखं पदे पदे ॥
कलावासवयोगेन तर्पयेत् कालिकां प्रिये ।

इत्यादि-(निरुत्तरतन्त्र-)वचनानामपि वीरपरत्वमवगन्तव्यम् । वीरस्यापि ब्राह्मणस्य मैरेयाद्युपादाननिषेधाद्ब्राह्मणेतरवीरपरत्वमुक्तवचनानामिति बहवः ।

वस्तुतो ब्राह्मणस्य वीरादिभाव एव निषिद्धः ।

पशुभावो हि विप्राणाम्-इत्युक्तत्वात् ।

ननु ।

मद्यं मत्स्यं तथा मांसं मुद्रां च मैथुनं ततः ।
ब्राह्मणो वीरभावेन कालिकायै निवेदयेत् ॥
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्च कुलयोगतः ।
पञ्चमैः पूजयेत् कालीं मोक्षार्थी यः कलौ भवेत् ॥

इत्यादि-(निरुत्तरतन्त्र-)वचनाद्ब्राह्मणस्य वीरभावे कथं नाधिकार इति चेन्मैवम् ।

ब्राह्मं वीर्यं तथा क्षेत्रं संस्कारा ब्रह्मसंभवाः ।
ब्राह्मणाचरणाद्ब्रह्मविद्याभिर्ब्राह्मणो भवेत् ॥

इति (मेरुतन्त्रो-)क्तेषु पञ्चसु लक्षणेषु निर्देशक्रमप्रातिलोम्येन लक्षणचतुष्टयहीनस्य शूद्रतुल्यस्यैव ब्राह्मणस्य वामाचाराधिकारितया सर्वाचारपरिभ्रष्टस्य तादृशस्यैव ब्राह्मणस्य कुलाचाराधिकारितया च तदितरस्य विप्रस्य तदुभयानधिकारित्वेन वीरभावनिषेधात् ।

तदुक्तं (मेरुतन्त्रे)

उक्तेषु लक्षणेष्वेकं यस्मिन् विप्रे प्रदृश्यते ।
तस्यैव ब्राह्मणस्यात्र वामे स्यादधिकारिता ॥

तथा ।

चतुर्लक्षणहीनानां मार्गाः स्यु कौलिकादयः ।

तथा ।

सर्वाचारपरिभ्रष्टः कुलाचारं समाश्रयेत् ।
कुलाचारपरिभ्रष्टो रौरवं नरकं व्रजेत्-इति ॥

अत एवोक्तं (भावनिर्णये)

वृषलः पशुभावं तु न कदाऽपि समाश्रयेत् ।
ब्राह्मणो वीरभावं च मनसाऽपि न भावयेत् ॥

इति च शब्दाद्दिव्यभावमपि ।

एवं च ब्राह्मणकर्त्तृकमदिराद्युपादानविधायकं वाक्यं यत्र यत्रोपलभ्यते तत्र तत्र ब्राह्मणपदस्य पूर्वोक्तलक्षणचतुष्टयहीनवीरब्राह्मणपरत्वमवधेयम् । तान्त्रिकमते तादृशेऽपि ब्राह्मणपदप्रयोगात् । अत एव तस्यैव ब्राह्मणस्येत्युक्तं (मेरुतन्त्रे)

ब्राह्मणैस्तु सदा पेयं क्षत्रियैस्तु रणागमे ।
वैश्यैर्धनप्रयोगे च शूद्रैर्नैव कदा चन ॥

इति-(कुलार्णव-)वचनं तु सदा पेयमित्यत्र सदा अपेयमित्यकारप्रश्लेषादपि सङ्गच्छते । एवं च कलिधर्मप्रकरणे गृह्यपरिशिष्टे हरिनाथोपाध्यायैः सौत्रामण्यां सुराग्रहणनिषेधस्योक्तत्वात् ।

कुलाचाराधिकारिब्राह्मणस्यास्माभिरुपदर्शितत्वाच्च ।

सौत्रामण्यां कुलाचारे ब्राह्मणः प्रपिबेत् सुराम् ।

इति (समयाचार-)वचनं सङ्गच्छत एव ।

यत् तु ।

त्रेतायां पूजिता देवी घृतेन सर्वजातिभिः ।
मधुभिः सर्ववर्णैस्तु पूजिता द्वापरे युगे ॥
पूजनीया कलौ देवी केवलैरासवैः-इति (यामल-)वचनम् । तत्र सर्ववर्णशब्दो ब्राह्मणेतरपरः ।

अव्यध्वरीणो भूदेवस्त्रिपदायज्ञसूत्रधृक् ।
न कदाऽपि स्पृशेद्धालां न च देव्यै निवेदयेत् ॥

इति (महाकालसंहिता-) वचनेन ब्राह्मणस्य सर्वदा मैरेयदाननिषेधात् ।

इत्थं च ।

यत्रावश्यं विनिर्दिष्टं मदिरादानमुत्तमम् ।
ब्राह्मणस्ताम्रपात्रे तु गव्यं मद्यं प्रकल्पयेत् ॥

इति (भैरवतन्त्रो-)कोऽनुकल्पविधिरपि पूर्वोक्तवीरब्राह्मणपर एव । तदितरस्य तु तत्रापि नाधिकारः ।

ब्राह्मणस्त्वनुकल्पं च कृत्वा चाण्डालतामियात् ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

(महाकालसंहितायाम्)

कदा चिदनुकल्पोक्तां दद्याद्देव्यै द्विजः सुराम् ।
उपमद्यानि ते वच्मि तानि देव्यवधारय ॥
आर्द्रकस्य गुडस्यापि समभागे भवेत् सुरा ।
ताम्रपात्रे तथा क्षौद्रं पयो गव्यं तथाऽत्र च ॥
नारिकेलोदकं कांस्ये रीतौ तालरसोऽपि च ।
रसालश्च रसो रङ्गे शङ्खे वा पानसो द्रवः ॥
मधूकपुटके द्राक्षा तत्पुष्पं तद्दलेऽपि च ।
चिञ्चारसं पद्मपत्रेऽश्वत्थे कारकपानकम् ॥
उपमद्यानि चैतानि द्वादश स्युर्वरानने ।

द्विजो दित्सति चेन्मद्यं द॰ ।देतानि नो सुराम् ॥
एतान्यपि न देयानि सात्त्विकैर्धर्मभीरुभिः ।
मद्यं वाऽप्युपमद्यं वा मद्यनाम न गच्छति ॥
पातित्यं किन्तु नामीभिस्तथैव पतितो भवेत् ।

अत्र द्विजपदं ब्राह्मणेतरद्विजपरं न तु ब्राह्मणपरम् । अत एवोक्तं तत्रैव ।

नारिकेलोदकं कांस्ये ताम्रे गव्यं तथा मधु ।
राजन्यवैश्ययोर्दानं न विप्रस्य कदा चन ॥
एवं प्रदानमात्रेण हीनायुर्ब्राह्मणो भवेत् इति ।

एवं च ।

नानोपचारसम्भारैर्भक्तितः पूजिताऽपि च ।
विना मकारयोगेन नैव तुष्यति कालिका ॥

इत्यादि ( कुलरत्नावली- ) वचनमपि शूद्रादिकर्तृकाराधनपरं बोद्धव्य विप्रादिकर्तृकोपासनायां न सात्त्विकैरेवोचारैस्तस्यास्तुष्टिश्रवणात् । एतत् सद्य ( महाकालसंहितायां ) स्पष्टम् ।

तथा हि ।

वस्तु॰ न्येषु तिष्ठत्सु देवीप्रीतिकरेषु च ।
किमेतया वै सुरया कदन्नमलरूपया ॥
भूतप्रेतपिशाचार्थं पूयमिश्रं* सुरामिषम् ।
तद्ब्राह्मणेन नो देयं देव्यै नात्तव्यमेव च ॥
न चैतया तुष्यति सा बहु वाऽपि घृणायते ।
उद्विग्ना च भवेत् तस्माद्दद्यान्नैव द्विजः सुराम् ॥
हतो वेदो हतो धर्मः परलोको हतः स्वकः ।
कुलं हतं हता जातिर्हतं ब्राह्मण्यमेव च ॥
प्राज्ञंमन्येन मूर्खेण पिवताऽज्ञानतः सुराम् ।

* पूयमस्त्रम् इति २-३-५ पु० पा० ।

किं कृतं साधितं किं वा किं च वा समुपार्जितम् ॥
यदयं हतवान् स्वस्य सर्वं मद्योपसेवनात् ।
एवमेवाज्ञानमग्नो मामप्याशु हनिष्यति ॥
उद्विग्नैवं महामाया भवेत् तदवलोकनात् ।
कैवर्त्तपुक्कशम्लेच्छरजकान्त्यावसायिनाम् ॥
चर्मकारनटप्रोथमेदोवेणूपजीविनाम् ।
सिद्धदुर्गन्धिशुष्कान्नं द्रव्यं मह्यं निवेद्य हि ॥
सुधावत् पिवतां पुंसां कथं विट्सु न हि स्पृहा ।
अन्ये न सन्ति वस्त्वाद्या नैवेद्यकरणाय किम् ॥
अस्पृश्यं यत् तदानीय मह्यं ददति कौलिकाः ।
ऋचो यजूंषि सामानि ह्यथर्वाङ्गिरसस्तथा ॥
वेदेभ्यः कोटिगुणिता महामन्त्रास्तथैव च ।
ये पावयन्ति देहस्थान् मद्यैराकण्ठपूरितैः ॥
मामपि प्लावयिष्यन्ति किमाश्चर्यं हि ते जनाः ।
सात्त्विकैरेव नैवेद्यैः कन्दैः पुष्पैः फलैर्दलैः ॥
अभावे भावभक्तिभ्यां सत्यं तुष्टा भवाम्यहम् ।
न मद्यमांसविस्तारैः प्रेतराक्षसभोजनैः ॥
ब्राह्मणो मानसाः पुत्रा मरीच्यत्र्यङ्गिरोमुखाः ।
एतेषामन्वयोद्भूताः पुनरन्ये सहस्रशः ॥
कश्यपश्चैव दुर्वासा दत्तात्रेयश्च चन्द्रमाः ।
बृहस्पतिर्विश्रवाश्च शक्तिर्दक्षो मृकण्डुजः ॥
नारदः कपिलो व्यासः कालाग्निर्जमदग्निजः ।
दाक्षः कविरथर्वा च शाण्डिल्यो गौतमो मनुः ॥
नाचिकेता भरद्वाजः श्वेताश्वतर एव च ।

और्वो दधीचिश्च्यवन ऋचीकश्च पराशरः ॥
शातातपो लोमशश्च जैगीषव्यश्च देवलः ।
पैठीनसिर्वीतिहव्यः संवर्त्तोऽगस्तिरासुरिः ॥
उपमन्युर्मतङ्गश्च तथा वाजस्रवाः कठः ।
उद्दालकश्चारुणेय आश्वलायन एव च ॥
उत्तङ्कश्च यवक्रीतः कात्यायन ऋतश्रवाः ।
एते चान्ये च मुनयो वेदवेदाङ्गपारगाः ॥
ईजानाः क्रतुभिः सर्वैः समाप्तवरदक्षिणैः ।
गृणन्तो निगमं सर्वं कुर्वन्तो दुश्चरं तपः ॥
ध्यायन्तो निष्कलं ब्रह्म जपन्तो मामकं मनुम् ।
सर्वदा सात्त्विकैरेवोपचारैः पूजयन्ति माम् ॥
सदा मय्यर्पितहृदः सदा मद्भावभाविताः ।
सदा मच्छरणं प्राप्ताः शान्ता दान्ता जितेन्द्रियाः ॥
वाय्वाहारा निराहारा ऊर्ध्वरेतस एव च ।
तपोबलाद्भ्रंसयितुं शक्रमप्यलमीदृशाः ॥
न निवेदितवन्तस्ते किमर्थं मदिरां मयि ।
विज्ञायास्यां महादोषं निन्द्यतां पापहेतुताम् ॥
गर्हाकरत्वं पातित्यकारित्वं पूतितामपि ।
परलोकविनाशित्वं तथा नरकहेतुताम् ॥
विप्रत्वजातिहन्तृत्वं म्लेच्छतुल्यत्वकारिताम् ।
अतस्तत्यजुरेवैनां संगृह्य श्रुतिपद्धतिम् ॥
यद्यस्यां दोषराहित्यं पुण्यकारित्वमेव च ।
स्यात् तदा ते कथं मह्यं ददुर्नैव सुरां द्विजाः ॥
धर्मव्यवस्थां ज्ञात्वेत्थमन्येऽपि द्विजजातयः ।

न्निवेदयिष्यन्ति नैव मह्यं मद्यं कथं चन ॥
बोधिता अपि शास्त्रार्थैरनादृत्य वचो मम ।
मोहाद्व्यवहरिष्यन्ति लोभोपहतचेतसः ॥
ये के चित् तां धर्मराजः शासिष्यति न संशयः ।
तीव्रैर्दण्डैर्महाघोरनरकादिनिपातनैः ॥
इति सत्यं पुरा मह्यं प्रोवाच जगदम्बिका ।
तत्राहमवदं देवि देवीवक्त्रोत्थिताक्षरैः ॥
अतः परं श्रुत्युदितं धर्ममद्वाक्यमेव च ।
देव्याज्ञां च समुल्लङ्घ्य ये दास्यन्ति सुरां द्विजाः ॥
तेषां शास्त्री महामाया श्रोतव्यं शृण्वतः परम् ।
द्विजेतरः संप्रदद्याद्देव्यै मद्यं सदा रहः ॥
स्वयं महाप्रसादं च युञ्जीत प्रत्यहं प्रिये ।
मांसानि दग्धमीनांश्च सर्वदैव निवेदयेत् ॥
शूद्रादीनामथैतेषां सद्यस्तुष्यति कालिका ।
द्विजानां यावती निन्दा कथिता मद्यदानतः ॥
शूद्राणां तावती ज्ञेया प्रशस्तिर्वरवर्णिनि ।
अतः शूद्रः प्रयत्नेन देव्यै मद्यं निवेदयेत् ॥
दीर्घायुष्ट्वमरोगित्वं वाग्मित्वं राजमान्यताम् ।
पुत्रक्षेत्रकलत्रार्थपरिपूर्णत्वमेव च ॥
अन्ते स्वर्गादिगमनं शूद्रः प्राप्नोति मद्यतः ।
श्रूयते यत् फलाधिक्यं तन्त्रादौ मद्यदानतः ॥
तद्धि शूद्रपरं ज्ञेयं नैव द्विजपरं प्रिये ।
स्वयं यदन्नो भवति तदन्ना तस्य देवता ॥
पितरश्च तदन्नाः स्युरित्येवं वैदिकी स्थितिः ।

प्राणिजातिषु सर्वासु मानुष्यमतिदुर्लभम् ॥
मानुष्येष्वपि देहेषु शूद्रः श्रेष्ठोऽन्त्यजातितः ।
शूद्राच्छतगुणो वैश्यो वैश्यात् साहस्रिको नृपः ॥
नृपात् कोटिगुणो विप्रो ज्ञेयः स्वाध्यायतत्परः ।
अत एव हि सर्गादौ जगत् सृष्ट्वा चराचरम् ॥
यद्यत् सारतरं वस्तु तद्ब्रह्माऽदाद्द्विजातये ।
वेदाः षडङ्गशास्त्राणि क्षमा सत्यं तपो धृतिः ॥
शौचं दानं दया धर्मो विवेकः कलभाषिता ।
त्यागः शान्तिश्च मर्यादा स्वाध्यायोऽध्यात्मचिन्तनम् ॥
यज्ञाः सर्वहविर्गव्यं पयो मेध्यान्नमेव च ।
एतेषां विपरीतानि ददौ शूद्रेभ्य एव च ॥
त्रयाणामपि वर्णानां दासभावमदात् ततः ।
सर्वशिल्पोपजीवित्वं मन्त्रराहित्यमेव च ॥
अनाशीस्त्वमशौचत्वमपाङ्क्तेयत्वमेव च ।
अस्पृश्यत्वमपाठित्वमसम्भाष्यत्वमेव च ॥
मद्यमांसोपयोगित्वं तद्विक्रेतृत्वमेव च ।
देवेभ्यस्तत्प्रदातृत्वं तदुत्पादित्वमेव च ॥
म्लेच्छादिदेशगमनं तत्संपर्कित्वमेव च ।
महासाहसकारित्वं वेदाश्रोतृत्वमेव च ॥
एतस्मात् कारणाद्देवि वेदमर्यादयाऽनया ।
ब्रवीमि मदिरादानेष्वेषामेवाधिकारिता ॥
दोषोऽणुरपि नैतेषां देवेभ्यो मद्यदानतः ।
फलातिरेकता वाऽपि श्रूयते निगमादिषु ॥
अतः प्रयत्नतः शूद्रो दद्याद्देव्यै परिश्रुतम् ।

तामेव वर्जयेद्विप्रः सदा प्राणात्ययेऽपि हि ॥
निशम्यापीदृशान् दोषानथ चेद्दातुमिच्छति ।
स च सा च विजानाति धर्मं वा पापमेव वा ॥
(अगस्त्यसंहितायामपि)
आवां तु पिशितै रक्तैः सुरयाऽपि सुरेश्वरि ।
वर्णाश्रमोचितं धर्ममविचार्य यजन्ति ये ॥
भूतप्रेतपिशाचास्ते भवन्ति ब्रह्मराक्षसाः ।
(मेरुतन्त्रे)
अमृतेन सहोत्पन्नं स्थाने मद्यं सुधायते ।
विषेणापि सहोत्पन्नं तेन मद्यं विषायते ॥
तथा ।
गौडी पैष्ठी च माध्वी च सुरा इत्यभिधीयते ।
सा क्षत्रवैश्ययोर्नेष्टा ब्राह्मणस्य तु का कथा-इति ॥
अथ विद्याभेदाः (कालीतन्त्रे) ।
कलीहृदयविद्या च सिद्धिविद्या महोदया ।
पुरा येन यथा जप्त्वा सिद्धिमायुर्दिवौकसः ॥
कामाक्षरं वह्निसंस्थमिन्दिरानादविन्दुभिः ।
मन्त्रराजमिदं ख्यातं दुर्लभं पापचेतसाम् ॥
त्रिगुणा तु विशेषेण सर्वशास्त्रप्रबोधिका ।
अनया सदृशी विद्या न हि सारस्वतप्रदा ॥
आकर्षणवशीकारमारणोच्चाटनं तथा ।
शान्तिपुष्ट्यादिकर्माणि साधयेदनयाऽचिरात्-इत्यादि
तथा ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं साधनं च पुरस्क्रिया ।
अनिरुद्धसरस्वत्याः समानं सर्वमीरितम् ॥

(मेरौ)

जपपूजादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भोगमोक्षदम्।

(श्रुतिसिद्धान्ते)

स्वबीजं पूर्वमुद्धृत्य कालिके वह्निगेहिनी।
एषा षडक्षरी विद्या भुक्तिमुक्तिफलप्रदा॥

(मेरुतन्त्रे)

न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भोगदो मतः।

तत्रैव।

क्रीँ हूँ ह्रीँ त्र्यक्षरात्माऽयं मन्त्रः काल्याः प्रकीर्त्तितः।
प्राग्वज्जपादिकं चास्य विशेषात् सन्ततिप्रदः॥
कालीबीजं च हूँ मायां हुँ फट् पञ्चाक्षरो मनुः।
न्यासध्यानादिकं प्राग्वद्विशेषाद्भूतनाशनम्॥
क्रीँ हूँ ह्रीँ हुँ फडत्युक्त्वा स्वाहान्तः सप्तवर्णकः।
मायाद्वन्द्वं कूर्चयुग्ममैन्द्रान्तं मदनत्रयम्॥
मायाविन्द्वीश्वरयुतं दक्षिणे कालिके पदम्।
संहारक्रमयोगेन बीजसप्तकमुद्धरेत्॥
एकविंशत्यक्षरात्मा ताराद्यः कालिकामनुः।

(मेरुतन्त्रेऽपि)

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि एकविंशतिवर्णकम्।
ॐ ह्रीँ ह्रीँ हूँ युगं त्रिः क्रीँ दक्षिणे कालिके वदेत्॥
त्रिः क्रीँ हूँ हूँ शक्तियुग्ममस्य न्यासादि पूर्ववत्।
विल्वमूले शवारूढो वटमूले तथैव च॥
लक्षं मनुमिमं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्।
पञ्चमं प्रतिनिध्यायं दक्षिणाम्नायसिद्धिदम्॥

तथा।

दक्षिणे कालिके स्वाहा मनुरष्टाक्षरः परः।

न्यासः प्राग्वद्ध्यानमत्रशवरूपशिवस्थिताम् ॥
महाकालरतासक्तां शिवाभिर्दिक्षु वेष्टिताम् ।

तथा ।

पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत् प्रयोगानाचरेत् तथा ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि शक्रवर्णमनूत्तमम् ॥
क्रीँ हूँ ह्रीँ दक्षिणे कालिके क्रीँ हुँ ह्रीँ दहनप्रिया ।
यजनं पूर्ववत् प्रोक्तं न्यासध्यानजपादिकम् ॥
विशेषान्नृसुरादीनामयमाकर्षणक्षमः ।
हूँ हूँ त्रिः क्री द्विश्च लज्जां दक्षिणे कालिके पुनः ॥
हूँ हूँ त्रिः क्रीँ द्विश्च लज्जां स्वाहेत्याकृतिवर्णवान् ।
न्यासपूजादिकं प्राग्वद्विशेषेण वशीकृतिः ॥
जपादेतस्य भवति सर्वमन्यत् तु पूर्ववत् ।
क्रीँ क्रीँ क्रीँ हूँ समुच्चार्य हूँ लज्जाद्वयमुच्चरेत् ॥
दक्षिणे कालिके स्वाहा तिथिवर्णः प्रकीर्त्तितः ।
मन्त्रराजोऽयमाख्यातः पूर्ववत् स्यादुपासना ॥
विशेषाद्धतराज्यानामयं राज्यप्रदो भवेत् ।

अथैतद्गायत्र्याः पुरश्चरणमुक्तं (सिद्धान्तसंग्रहे)

एवं ध्यात्वा महाकालीं जपेल्लक्षचतुष्टयम् ।
रक्तार्कैर्विल्वपत्रैश्च तद्दशांशेन होमयेत्—इति ॥

अथ महाकालमन्त्रः (शक्तिसङ्गमे)

श्रीशिव उवाच ।

महाकालं समारभ्य नित्यानां निर्णयं शृणु ।
महाकालो महाभीमः प्रलयानलसन्निभः ॥
कालीमायासमुद्भूतः कालीमानसिकः शिवः ।
महाकालः परः शम्भुः परातीतगुणाकरः ॥

तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि येन रक्षेज्जगत्त्रयम् ।
कूर्च्चयुग्मं महाकाल प्रसीदेति पदद्वयम् ॥
लज्जायुग्मं वह्निजायासंयुक्तः षोडशार्णकः ।
षोडशार्णा यथा मुख्याः सर्वश्रीचक्रमण्डले ॥
तथाऽयं सर्वकालीषु महाकालः प्रकीर्त्तितः ।
कालिकाऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्दः प्रकीर्त्तितम् ॥
देवता तु महाकालः सर्वरूपी निरञ्जनः ।
कूर्च्चबीजं तथा माया शक्तिरस्य प्रकीर्त्तिता ॥
स्वाहाकीलकमुद्दिष्टं काल्यर्थे विनियोगता ।
मायया तु षडङ्गानि ध्यानं शृणु वरानने ॥

अथ ध्यानम् ।

कोटिकालानलाभासं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम् ।
श्मशानाष्टकमध्यस्थं मुण्डाष्टकविभूषितम् ॥
पञ्चप्रेतस्थितं देवं त्रिशूलं डमरुं तथा ।
खड्गं च खर्परं चैव वामदक्षिणयोगतः ॥
बिभ्रतं सुन्दरं देहं श्मशानभस्मभूषितम् ।
नानाशवैः क्रीडमानं कालिकां हृदयस्थिताम् ॥
लालयन्तं रतासक्तं घोरचुम्बनतत्परम् ।
गृध्रगोमायुसंयुक्तं फेरवीगणसंयुतम् ॥
जटापटलशोभाढ्यं सर्वशून्यालये स्थितम् ।
सर्वशून्यं मुण्डभूषं प्रसन्नवदनं शिवम् ॥

भावयेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं पूजां विधायाथ लक्षसङ्ख्यं जपेच्छिवे ।

तद्दशांशेन हवनं करवीरप्रसूनकैः ॥
स्वयम्भूवाऽऽक्तैर्बीजाक्तैः कारणाक्तैश्च वा हुनेत् ।
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं कालीवत् सर्वमाचरेत् ॥

अथ महाकालीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि महाकालीमहामनुम् ।
ॐ क्ष्रैँ क्ष्रैँ क्रैँ ततः क्रैँ च पशुं गृहाण चोच्चरेत् ॥
हुँ फट् स्वाहा शक्रवर्णः सिद्धमन्त्र उदाहृतः ।
नास्य मुन्यादिकं न्यासः सिद्धमन्त्रस्य विद्यते ॥
कृष्णतोयेन संपूर्णे घटे चाहूय कालिकाम् ।
ब्राह्म्यादिभिश्च दूतीभिर्युक्तां संपूज्य भक्तितः ॥
अष्टमीं चण्डिकां त्वत्र देवीं ध्यायेद्गृहे पुनः ।

ध्यानं यथा ।

पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।
शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभयान् ॥
दक्षादक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणां भोगिभूषणाम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं वामाचारेण साधकः ।
पिचुमर्दस्य समिधो घृताक्ता जुहुयात् ततः ॥
रज्ज्वा प्रज्वलिते वह्नौ तर्पणादि ततश्चरेत् ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री मारयेदचिराद्रिपून् ॥

अथ भद्रकालीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भद्रकाल्याः परं मनुम् ।
हौँ कालीति महाकाली ह्रिः किणिः फड्वसुप्रिया ॥
चतुर्दशाक्षरो मन्त्रो भद्रकाल्या उदाहृतः ।
पदैः षड्भिः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यातव्येयं सदा देवी भद्रकाली भयावहा ।
क्षुत्क्षामा कोटराक्षी च नाहं तृप्तेति वादिनि ॥
मसीमुखी मुक्तकेशी जगद्ग्रसनलालसा ।
जम्बूफलाभदशना लोलजिह्वा भयङ्करी ॥
शूलं कपालं च शृणिं ज्वलत्पाशं च बिभ्रती ।
अशेषं कालिकातन्त्रे यत् प्रोक्तं तदिहापि च ॥
जपन्यासप्रयोगाद्यं यो विशेषः स उच्यते ।
आराध्य प्रजपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥
रिष्टमाला विधातव्या जपार्थं सिद्धिमिच्छता ।
इयं देवी महादेवी शत्रुनिग्रहकारिणी ॥
यथेष्टचेष्टया चिन्त्या धर्मकामार्थसिद्धिदा ।
अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भद्रकाल्याः सुगोपितम् ॥
गृध्रकर्णि विरूपाक्षि लम्बस्तनि महोदरि ।
उत्पादयोत्पादयेति द्विधोपरि पदं भवेत् ॥
द्विधा वेत्ति पदं हुँ फट् स्वाहा सप्ताग्निवर्णकः ।
पिप्पलादो मुनिः प्रोक्तो निवृच्छन्द उदाहृतम् ॥
भद्रकाली देवता स्याद्द्विरुत्पादय हृत् स्मृतम् ।
उपरिभ्यां शिरः प्रोक्तं वेत्तिभ्यां तु शिखा स्मृता
हुँ फड्भ्यां कवचं प्रोक्तं स्वाहयाऽस्त्रमुदीरितम् ।

अथ ध्यानम् ।

अतिरौद्रा महादंष्ट्रा भृशं दीर्घा कृशोदरी ।
सुवृत्तनयना शूरा दीर्घघोणा मदातुरा ॥
स्निग्धगम्भीरनिर्घोषा नीलजीमूतसन्निभा ।

भृगुद्यघटसंदीप्ता महारदनभीषणा ॥
दंष्ट्रोष्ठकोपताम्राक्षी रक्तदीर्घशिरोरुहा ।
त्रिशूलव्यग्रदोर्दण्डा नरकीटपलाशिनी ॥
अतिरक्ताम्बरा देवी रक्तमांसासवप्रिया ।
शिरोमाला भूषिताङ्गी पिवन्ती शोणितासवम् ॥
नृत्यन्ती च हसन्ती च पिशाचगणसेविता ।
पिशाचस्कन्धमारुह्य भ्रमन्ती वसुधातलम् ॥
शङ्करस्य मुखोत्पन्ना योगिनी योगवल्लभा ।
इत्थम्भूता भद्रकाली मातृभिः परिवारिता ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

ध्यात्वा सम्यक् समाराध्य ततो मन्त्रं जपेद्बुधः ।
अयुतं मन्त्रसिद्ध्यर्थं मातृकान्यासतत्परः
घृतहोमस्तथा कार्यस्तर्पणादि समाचरेत् । ॰म् ।
धूमावत्यां च यत् प्रोक्तमनयाऽपि तदाचरेत् ॥

अथ सिद्धिकालीमन्त्रः (कालीतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये महादेवि सिद्धविद्यां महोदयाम् ।
ईश्वरेण पुरा प्रोक्तां देवीं हृदीशसंज्ञिताम् ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य हृल्लेखाबीजमुद्धरेत् ।
रतिबीजं समुद्धृत्य पपञ्चमभगान्वितम् ॥
ठद्वयेन समायुक्तं विद्या राज्ञी प्रकीर्त्तिता ।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥
सिद्धिकाली [illegible] देवता भुवनेश्वरी ।
रतिबीजं बीजमस्या हृल्लेखा शक्तिरुच्यते ॥
हृल्लेखया षड्दीर्घेण प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।

अङ्गषट्कं ततो न्यस्य ध्यात्वा देवीं शिवो भवेत् ॥

ध्यानं यथा ।

खड्गोच्छिन्नेन्दुबिम्बस्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा
सव्ये पाणौ कपालाद्‌ ... तमयं मुक्तकेशी पिबन्ती ।
दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमयमुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा
पायान्नीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डलालीढपादा ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्विंशतिसाहस्रं सहस्रैरेव संयुतैः ।
होमयेत् तद्दशांशेन मृदुपुष्पेण मन्त्रवि ॥

अथ श्मशानकालीमन्त्रः ( स्वतन्त्रतन्त्रे )

श्मशानकालिकामन्त्रं शृणुष्वावहिता शिवे ।
वाणीं मायां ततो लक्ष्मीं कामबीजं ततः परम् ॥
कालिके संपुटत्वेन चतुष्कं बीजमालिखेत् ।
एकादशार्णा देवेशि चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
ऋषिर्भृगुर्निवृच्छन्दो देवता कालिका परा ।
श्मशानाद्या च वाङ्माया बीजं शक्तिर्महेश्वरि ॥
कीलकं कामबीजं तम्— ... ... ... इति ।
चतुश्चतुस्त्रिचतुस्तु विद्यामन्त्रैः षडङ्गक ॥
विन्यस्य ध्यानं कुर्वीत कालिकायां समा तः ।
अञ्जनाद्रिनिभां देवीं श्मशानालयवासिनीम् ॥
त्रिनेत्रां मुक्तकेशीं च शुष्कमांसातिभीषणाम् ।
पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णं कपालक ॥
सद्यः कृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम् ।
स्मितवक्त्रां सदा वाममांसतर्पणतत्पराम् ॥
नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदा शवैः ।

एवं ध्यायेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशेन होमयेत्–इति ।

अथ सिद्धिलक्ष्मीमन्त्रः (कालानलतन्त्रे)

ॐ ह्रीँ हूँ हाँ फ्रेँ क्षोँ क्रोँ नमः ।

श्रुतिश्चटी च दोग्ध्री च शोषिणी शिरया सह ।
दोला तदनु मालूरः सामरश्च निरत्ययः ॥
शेषे दण्डः परिज्ञेय इयमुक्ता नवाक्षरी ।
नैतस्य सदृशो मन्त्रस्त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथोद्धरिष्ये देवेशीं षोडशार्णां मनूत्तमाम् ।
यामेकवारमुच्चार्य मुच्यते जन्मसंकटात् ॥

ह्रीँ हूँ फ्रेँ छ्रीँ ह्लाँः ह्रीँ क्रोँ फ्रेँ स्त्रीँ श्रीँ होँ जूँ ब्लौँ ब्रीँ स्वाहा ।

चटी दोग्ध्री शिरोसिद्धिभूमर्द्धिः प्रोथ एव च ।
फली पुनः शिरो रेतः प्रातरान्वे ततः परम् ॥
पुरश्चरणहोमाः स्युर्म[illegible]नाहृदपर्यटाः ।
मन्त्रोऽयमपि सर्वेषां मनूनामुत्तमः स्मृतः ॥

अनयोर्ऋष्यादिन्यास उक्तस्तत्रैव ।

श्रीसिद्धिलक्ष्मीमन्त्रस्य ऋषिर्नारद ईरितः ।
गायत्री छन्द आख्यातं सिद्धिलक्ष्मीश्च देवता ॥
चटीबीजं तथाऽऽख्यातं समीहा शक्तिरिष्यते ।
प्रबन्धः कीलकं विद्यात् पुरुषार्थे तु[illegible] ॥
विनियोगोऽस्य मन्त्रस्य कथितस्त्वयि नारद ।

अथ कराङ्गन्यासौ ।

षड्दीर्घभाजा बीजेन कराङ्गन्यासमीरितम् ।

इदानीं ते सुगमेन कथयामि द्विजर्षभ ॥
श्रुतिपूर्वं बीजमुक्त्वा अङ्गुष्ठाभ्यां पदं ततः ।
शेषे दण्डः समाख्यातः पुनर्बीजद्वयं वदेत् ॥
तर्जनीभ्यां यदा तत्र दण्ड इत्यभिधीयते ।
पुनर्बीजद्वयं यत्र भ्यामन्ता मध्यमा ततः ॥
दण्डः शेषे च विज्ञेयः पुनस्तद्बीजमेव च ।
अनामिका भ्यामन्ता च ततो दण्डः प्रकीर्त्तितः ॥
बीजद्वयात् कनिष्ठाभ्यां पदाद्दण्डबीजं स्मृतम् ।
बीजद्वयं करतलपृष्ठाभ्यां दण्ड इत्यपि ॥
इति करन्यासं कृत्वा अङ्गन्यासं चरेत् सुधीः ।
क्रमेणानेन वै ब्रह्मन् संभवन्यासमाचरेत् ॥
श्रुतिच्चट्यौ समाभाष्य हृदयाय पदं ततः ।
दण्डस्तदनु विप्रर्षे बीजद्वयं तथा परम् ॥
शिरसे पदतश्चैव दोग्ध्रीबीजं स्मृतं तदा ।
तद्बीजद्वयमुच्चार्य शिखायै पदमेव च ॥
इन्द्रबीजं समाख्यातं पुनर्बीजद्वयं वदेत् ।
कवचाय पदाच्चैव दोग्ध्रीबीजं हि नारद ॥
बीजे तथा समुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषडिति ।
षडङ्गन्यासमित्युक्तमर्च्चयां कायशोधनम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि तन्निबोध अजात्मज ।
श्वेतां श्वेतशवारूढां नृमुण्डकृतकुण्डलाम् ॥
पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ।
व्याघ्रचर्माधृतकटीं शुष्कावयवभूषिताम् ॥

आबद्धयोगपट्टां च नरास्थिकृतभूषणाम् ।
हस्तैः षोडशभिर्दीप्तां विस्रस्तघनकुन्तलाम् ॥
खड्गं बाणं तथा शूलं चक्रं शक्तिं गदामपि ।
जपमालां कर्त्तृकां च बिभ्रतीं दक्षिणैर्भुजैः ॥
फलकं कार्मुकं नागपाशं परशुमेव च ।
डमरुं फेरुपोतं च नरमुण्डकपालकम् ॥
उद्वहन्तीं करैर्वामैर्दीप्तसर्वाङ्गभूषणाम् ।

एतद्ध्यानं नवाक्षर्याः । षोडसार्णविद्यायास्तु ध्यानान्तरमुक्तं तत्रैव ।

महातेजोमयी लक्ष्मी रश्मिकोट्ययुतप्रभा ।
पञ्चवक्त्रा दशभुजा त्रिपञ्चनयनैर्युता ॥
श्वेतवर्णनिभा देवी महाप्रेतोपरिस्थिता ।
मातृकाष्टकमध्यस्था सिद्धियोगनिषेविता ॥
दारितास्या लेलिहाना ज्वालालुप्तजगत्त्रयी ।
उच्छ्वासोच्छ्वासवेगेन चालयन् कुलपर्वतान् ॥
क्वचिद्देशे क्वचित् कूटे क्वचित् संहरते क्षणात् ।
क्वचित् सृजेत् पालयेच्च स्वतन्त्राद्वा प्रवर्त्तते ॥
गोनासाभरणैर्युक्ता उरगेन्द्रविभूषिता ।
पाशाङ्कुशधरा देवी वराभयकराम्बुजा ॥
सव्यहस्ते धृतं खड्गं त्रैलोक्यक्षोभकारकम् ।
वामे खट्वाङ्गमत्युग्रं दक्षिणे शूलमुत्तमम् ॥
वामे तु कलशं दिव्यं महारत्नप्रपूरितम् ।
एषा प्रत्यङ्गिरा देवी उन्मत्ता व्योमदेहजा ॥
एकात्मा नैकभेदेन विश्वं व्याप्य व्यवस्थिता
प्रत्यङ्गिरा महादेवी सिद्धिलक्ष्मीर्जयप्रदा ॥

( पद्धतौ )

खट्वाङ्गाङ्कुशपाशशूलवरकृद्भीत्राणपात्रं शिरः
कुम्भासिज्वलितोद्भटैर्भुजवरैराभासमानां शिवाम् ।
रुद्रस्कन्धगतां शरच्छशिनिभां पञ्चाननां सुन्दरीं
पञ्चत्र्यक्षविराजितां भगवतीं श्रीसिद्धिलक्ष्मीं भजे ॥

उक्तयोः श्रीसिद्धिलक्ष्मीमन्त्रयोः पुरश्चरणं तु वक्ष्यमाण-(महाकालसंहितो-) क्तगुह्यापुरश्चरणवज्ज्ञेयम् ।

तदुक्तं (कालानलतन्त्रे)

यथा कामकला काली गुह्यकाली यथा द्विज ।
यथा छिन्ना यथा तारा वज्रकापालिनी यथा ॥
सिद्धिलक्ष्मीस्तथा देवी विशेषो नास्ति कश्चन ।
एकैव पूजा विज्ञेया प्रयोगाश्च तथा द्विज ॥
अत्रानुक्तं हि यत् किञ्चित् संहितायां च तद्विदुः ।
ग्रन्थगौरवभीत्या च नोक्तमन्यत् त्वयि द्विज ॥
संक्षेपेण सिद्धिलक्ष्म्यास्त्वयि सर्वं प्रकीर्त्तितम् ।
विस्तृतं च महाकालसंहितायां द्विजोत्तम ॥
जपः पुरश्चरणं च आचारश्चापि नारद ।
महाकालसंहितायां कामकलाभ्यासे प्रकीर्त्तितः ॥
तेनैव वर्त्मना विप्र सिद्धिलक्ष्म्याऽखिलं* विदुः ।
पौनरुक्त्यभयेनात्र निगदामि न नारद ॥

अथ गुह्यकालीमन्त्रः (महाकालसंहितायाम्)

गुह्यकाल्यास्तु मन्त्राणामष्टादश भिदाः प्रिये ।
सर्वागमेषु गोप्यास्ते न प्रकाश्याः कदा चन ॥
मन्त्राणां भेदतो ध्यानभेदाः स्युर्विविधास्तथा ।

---

* सिद्धिलक्ष्म्याः- अखिलमिति सन्धिस्तान्त्रिकः ।

यन्त्रभेदा अपि तथा वाहनानां भिदास्तथा ॥
यो मन्त्रो येन चाभ्यस्तस्तत्राम्नायः प्रकीर्त्तितः ।
ब्रह्मणा च वशिष्ठेन रामेण च तथा प्रिये ॥
हिरण्याक्षानुजेनापि कुवेरेण यमेन च ।
भरतेन दशास्येन वलिना वासवेन च ॥
विष्णुनाऽन्यैश्च देवैश्च दैत्येन्द्रैर्विविधैरपि ।
उपासिता सिद्धिहेतोर्लब्ध्वा सिद्धिश्च भूयसी ॥
शतवक्त्राऽशीतिवक्त्रा षष्टिवक्त्रा तथैव च ।
षट्त्रिंशदानना विंशदानना परिकीर्त्तिता ॥
तथा विंशतिवक्त्रा च दशवक्त्रा च कालिका ।
पञ्चवक्त्रा त्रिवक्त्रा च द्विवक्त्रा चैकवक्त्रिका ॥
या गुह्यकाली तन्मध्ये भरतोपासिता प्रिये ।
दशवक्त्रा षोडशार्णा चतुष्पञ्चाशदोर्युता ॥
सर्वासां गुह्यकालीनां सा वै मुख्यतमा स्मृता ।
तामेवादौ व्याहरामि व्याहरिष्ये ततः पराः ॥
षोडशाक्षरको मन्त्रः कीलितश्चाप्यकीलितः ।
तत्रादौ कीलितं वच्मि ततो वक्ष्याम्यकीलितम् ॥
कीलकाकीलकध्यानमेकमेव हि पार्वति ।

मन्त्रोद्धारमाह ।

आदौ वेदादिमुद्धृत्य ततः पस्य द्वितीयकम् ।
एकारयुक्तं तदधो रेफं विन्दुं च योजयेत् ॥
सिद्धिशब्दं ततः प्रोच्य करालिं च विनिर्द्दिशेत् ।
लज्जां क्रोधमनुस्मृत्य कफोणिं वाममुद्धरेत् ॥
वामदृग्विन्दुधोवह्नियुक्तं कुर्यात् ततश्च तम् ।

वधूबीजं पुनर्मन्त्रद्वितीयं बीजमुद्धरेत् ॥

हृन्मन्त्रो वह्निजाया च मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः।

प्रकारान्तरमाह।

अथ वा कामिनीबीजात् पूर्वं क्रोधमनुस्मरेत्।

इयं हि भरतोपास्या कीलिताऽपि च शापतः ॥

भरतोपासिता षोडशाक्षरी द्विविधा। तत्राद्या कीलिता द्वितीया त्वकीलितेत्यर्थः।

सप्तदशाक्षरीमाह।

रामोपास्यामतो वक्ष्येऽक्षरसप्तदशान्विताम्।

साऽऽपि हारीतमुनिना कीलिता तपसो बलात् ॥

आदौ तस्यैव मन्त्रस्य चतुरोऽर्णान् समुद्धरेत्।

द्वितीयबीजोपरि च हसखं विनियोजयेत् ॥

एवं तु पञ्चमं बीजं षष्ठं खेन च वर्जितम्।

सप्तमं हसहीनं च करालि तदनन्तरम् ॥

त्रयोदशैकादशके स्थाने सप्तममक्षरम्।

पञ्चमं द्वादशस्थाने द्वितीयं च चतुर्दशे ॥

आद्यं पञ्चदशे कुर्याद्वह्निजयान्तगो मनुः।

हारीतोपासिता ह्येषा च्यवनोपासितां शृणु ॥

षष्ठपञ्चमयोरस्य व्यत्ययः समुदीरितः।

एतावतैव भवति च्यावनी सुमहाफला ॥

अत्रापि रामोपासिता सप्तदशाक्षरी द्विविधा हारीतोपासिता च्यवनोपासिता चेति। तयोर्मध्ये हारीतोपासितैव कीलिता च्यवनोपासिता तु न कीलितेति बोध्यम्।

ऋष्यादिकमाह।

षोडशाक्षरयोर्मन्त्रभेदयोरधुना ब्रुवे।

ऋष्यादिकं ततः सप्तदश्याश्च कथयामि ते ॥

अथर्वा ऋषिरुद्दिष्टो जगती छन्द उच्यते।

देवता गुह्यकाली च द्वितीयार्णं तु कीलकम् ॥
शक्तिस्तु दशमं बीजं द्वितीये नवमं भवेत् ।
पुरुषार्थचतुष्कस्य सिद्धये कामनास्थितिः ॥
सप्तदश्यास्तु मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिर्मतः ।
छन्दश्च सप्रतिष्ठाख्यं देवता गुह्यकालिका ॥
पञ्चमार्णं कीलकं स्यात् सप्तमं शक्तिरुच्यते ।
तदेव विपरीतं हि च्यावनीसमुदीरितम् ॥
प्रयोगः सर्वसिद्ध्यर्थं जपे प्रोच्चारितो भवेत् ।
अन्येषां मन्त्रभेदानां यदुद्धारं वदामि ते ॥
तदा ऋष्यादिकं तेषां कथयिष्यामि पार्वति ।

अथ षडङ्गन्यासस्तत्रैव ।

द्वे पञ्च त्रीणि च द्वे च द्वे पुनर्द्वे पुनस्तथा ।
वर्णाक्षराणां भारत्यास्तत्तत्स्थाने प्रविन्यसेत् ॥
तावन्तोऽर्णाः सप्रणवास्तत्र तत्र स्थले न्यसेत् ।
यादृशी च्यावनी मन्त्रवर्णावल्यनुतिष्ठति ॥
तारयोर्मध्यवर्त्तीनि देवीवर्णानि तानि हि ।
न्यस्येत् स्थलेषु तेष्वेव हारीतोपसिते मनौ ।

ध्यानमाह ।

भरतोपासिता या च रामोपास्या च या स्मृता ।
ध्यानं तयोरेकमेव कथ्यमानं मया शृणु ॥
ध्यायेद्देवीप्रभावोत्थप्रोच्छलद्रक्तवारिधिम् ।
उत्तुङ्गोत्तुङ्गकल्लोलप्रपूरितदिगन्तरम् ॥
तत्र द्वीपं रक्तमांसपूरितं रक्तवालुकम् ।
नवकोटिकचामुण्डाकोटिभैरववेष्टितम् ॥

तन्मध्ये मण्डलं ध्यायेद्योजनायुतविस्तृतम् ।
भैरवीकोटिघटितं प्राकारं तत्र चिन्तयेत् ॥
एकं श्मशानं तन्मध्ये शतयोजनविस्तृतम् ।
चिन्तयेत् प्रोच्छलद्वह्निज्वालाव्याप्तर्क्षमण्डलम् ॥
योगिनीकोटिविहितकरतालिकचेष्टितम् ।
नानास्त्रनद्धमुण्डस्त्रक्कृततोरणमालिकम् ॥
तदन्तःस्थापिनीं कालीं ध्यायेन्निश्चलमानसः ।
रत्नसिंहासनं दिव्यं हीरमुक्तादिनिर्मितम् ॥
धारयन्तं चतुष्कोणे युगं वेदं विचिन्तयेत् ।
सत्ययुगं च ऋग्वेदं शुक्लवर्णं च पूर्वगम् ॥
त्रेतायुगं यजुर्वेदं पीतवर्णं च दक्षगम् ।
द्वापरं सामवेदं च रक्तं पश्चिमदिग्गतम् ॥
अथर्ववेदं च कलिं श्याममुत्तरदिग्गतम् ।
उपवेदस्य शुभ्रस्य मूर्ध्नि सिंहासनं स्थितम् ॥
तस्य सिंहासनस्योर्ध्वमन्यत् सिंहासनं महत् ।
स्वस्वास्त्रवाहनयुतैर्दिगष्टपतिभिर्वृतम् ॥
देव्याः सिंहासनधराँस्ताँश्च ध्यायेदतन्द्रितः ।
स्वां स्वां दिशमवष्टभ्य स्थितान् परमशोभितान् ॥
इन्द्रं पीतं सवज्रं च स्थितमैरावतोपरि ।
पावकं रक्तवर्णं च छागस्थं शक्तिपाणिकम् ॥
यमं कृष्णं कासरस्थं दण्डहस्तं भयानकम् ।
निर्ऋतिं धूम्रवर्णं च खड्गहस्तं तुरङ्गगम् ॥
वरुणं पाशहस्तं च शुभ्रं मकरवाहनम् ।
श्यामं वायुं ध्वजधरं हरिणोपरि संस्थितम् ॥

गदाधरं कुबेरं च कुङ्कुमाभं नरे स्थितम् ।
ईशानं शुभ्रवर्णं च शूलहस्तं वृषे स्थितम् ॥
सिंहासनं तृतीयं च पञ्चप्रेतैर्धृतं प्रिये ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ॥
एते पञ्चमहाप्रेताः स्थिताः सिंहासनादधः ।
पीतः श्यामस्तथा रक्तो धूम्रः श्वेतः क्रमादिमे ॥
दण्डं चक्रं च शक्तिं च शूलं खट्वाङ्गमेव च ।
धारयन्तो मुखे न्यस्ततर्जनीकास्त्रिलोचनाः ॥
केशरिद्विपकोलाश्च फेत्काररवभीषणाः ।
ऊर्ध्वं पीठं ततो ध्यायेद्भैरवाख्यं भयानकम् ॥
खर्वं स्थूलतरं घोरं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ।
पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं च कीकशाभरणान्वितम् ॥
खट्वाङ्गं कर्त्तृकां दक्षे कपालं डमरुं तथा ।
धारयन्तं मुण्डमालायुतं दंष्ट्राग्रभीषणम् ॥
तदूर्ध्वं षोडशदलं पद्मं यज्ञोपकल्पितम् ।
ज्योतिष्टोमोऽग्निष्टोमो वाजपेयश्च षोडशी ॥
चयनं पुण्डरीकं च राजसूयोऽश्वमेधकः ।
बार्हस्पत्यं विश्वजिच्च गोमेधो नरमेधकः ॥
सौत्रामण्यश्च सावित्री सूर्यकान्तोऽचलम्भिदः ।
एतादृशैः षोडशभिर्दलैः पद्मं प्रकल्पितम् ॥
तस्योपरि ततो ध्यायेच्छिवासनमनुत्तमम् ।
बिन्दुनादयुतं नीलं शशाङ्ककृतलाञ्छनम् ॥
महार्घरत्नाभरणं त्रिनेत्रं भीमदर्शनम् ।
वज्रदंष्ट्रानखस्पर्शं पद्मपृष्ठे शिवोत्तमम् ॥

पिङ्गोर्ध्वैकजटाभारं द्विभुजं नागहारिणम् ।
वसानं चर्म वैयाघ्रं शूलखट्वाङ्गधारिणम् ॥
अष्टपत्राम्बुजं तस्योपरिष्टान्नवमासनम् ।
धर्मो ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च चतुर्दिशि ॥
यशो विवेकः कामश्च मोक्षश्चेति विदिग्दिशि ।
एवमष्टदलाम्भोजोपविष्टां गुह्यकालिकाम् ॥
ध्यायेन्नीलोत्पलश्यामामिन्द्रनीलसमद्युतिम् ।
घनाघनतनुद्योतां स्निग्धदूर्वादलद्युतिम् ॥
ज्ञानरश्मिच्छटाटोपज्योतिर्मण्डलमध्यगाम् ।
दशवक्त्रां गुह्यकालीं सप्तविंशतिलोचनाम् ॥
द्विद्विनेत्रयुतां वक्त्रे वामदक्षिणसंमुखे ।
सप्तस्वन्येषु वक्त्रेषु त्रित्रिलोचनसंयुताम् ॥
ऊर्ध्ववक्त्रं द्वीपकाख्यं चण्डयोगेश्वरीति हि ।
तस्याधः केशरिमुखं श्वेतवर्णं विभीषणम् ॥
तस्याधः फेरुवक्त्रं च कृष्णं त्रैलोक्यडामरम् ।
वानरास्यं ततो वामे रक्तवर्णं महोज्ज्वलम् ॥
नरास्यं तदधो ज्ञेयं किर्मीराभं महोत्कटम् ।
ऋक्षवक्त्रं भवेद्दक्षे धूम्रवर्णं भयानकम् ॥
गारुडास्यं ततो वामे पिङ्गवर्णं सुचञ्चुकम् ।
दक्षिणे मकरास्यं च हरिताभं प्रकीर्त्तितम् ॥
गजास्यं वामतः प्रोक्तं गौरवक्त्रं स्रवन्मदम् ।
हयास्यं दक्षिणे काल्याः श्यामवर्णं विचिन्तियेत् ॥
महादंष्ट्राकरालानि दारुणस्वनवन्ति च ।
अट्टाट्टहासयुक्तानि स्रवद्रक्तानि सर्वदा ॥

लेलिहानविनिष्क्रान्तललज्जिह्वान्वितानि च ।
अहर्निशं कम्पमानान्यास्यानि दधतीं शिवाम् ॥
भीमनिर्ह्लादिनीं भीमां भ्रूभङ्गकुटिलाननाम् ।
पिङ्गलोर्ध्वजटाजूटां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ॥
नानारत्नविनिर्माणसमुण्डस्वर्णभूषणाम् ।
स्रवद्रक्तनृमुण्डास्रक्कृतनक्षत्रमालिकाम् ॥
आकण्ठगुल्फलम्बिन्याऽलङ्कृतां मुण्डमालया ।
श्वेतास्थिगुलिकाहारग्रैवेयकमहोज्ज्वलाम् ॥
शवदीर्घाङ्गुलीपङ्क्तिमण्डितोरःस्थलस्थिराम् ।
कठोरपिङ्गलोत्तुङ्गवक्षोजयुगलान्विताम् ॥
महामारकतग्राववेदिश्रोणिपरिष्कृताम् ।
विशालजघनाभोगामतिक्षीणकटिस्थलाम् ॥
अन्त्रनद्धाः कटिस्रोवलत्किङ्किणिमण्डिताम् ।
चतुष्पञ्चाशता दोष्णां भूषितां जगदम्बिकाम् ॥
रत्नमालां कपालं च चर्म पाशं तथैव च ।
शक्तिं खट्वाङ्गमुण्डं च भुशुण्डीं धनुरेव च ॥
चक्रं घण्टां ततो बालप्रेतं शैलमतः परम् ।
नरकं कालनकुलौ सर्पमुन्मादवंशिकाम् ॥
मुद्गरं वह्निकुण्डं च डमरुं डिण्डिमं तथा ।
भिन्दिपालं च मुशलं पाशं पट्टिशमेव च ॥
शतघ्नीं च शिवापोतं वामहस्तेषु बिभ्रतीम् ।
अथ दक्षभुजे रत्नमालां कर्त्रीमसिं तथा ॥
तर्जनीमङ्कुशं दण्डं रत्नकुम्भं त्रिशूलकम् ।
पञ्चपाशुपतान् बाणान् शोषकोन्मादमूर्छकान् ॥

संहारकान् मृत्युकरानेवं नामप्रधारिणः ।
कुन्तं च पारिजातं च छुरिकां तोमरं तथा ॥
पुष्पमालां डिण्डिभं च गृध्रं चैव कमण्डलुम् ।
मांसखण्डं श्रुवं बीजपूरं श्रुचं तथैव च ॥
परशुं च गदां यष्टीं मुष्टिं कुणपलालनम् ।
धारयन्तीं महारौध्रीं जगत्संहारकारिणीम् ॥
जवापुष्पाभनागेन्द्रकृतनूपरयुग्मकाम् ।
पाटलोरगनिर्माणलसदङ्गदशोभिताम् ॥
धूसराहिकृतस्फीतकटिसूत्रावलम्बिनीम् ।
सुपाण्डुरभुजङ्गेन्द्रकृतताटङ्कशोभिताम् ॥
श्वेतदर्वीकरानद्धजटामुकुटमण्डिताम् ।
वैयाघ्रचर्मवसनां द्वीपिचर्मोत्तरीयकाम् ॥
किङ्किणीजालशोभाढ्यां वीरघण्टानिनादिनीम् ।
नूपुरारावललितां घर्घराशब्दभीषणाम् ॥
कटकाङ्गदकेयूरनरास्थिकृतशोभनाम् ।
रक्तपद्ममयीं मालां पादपद्मावलम्बिनीम् ॥
काञ्चीकट्टारकप्रेङ्खत्कटिमध्यविराजिताम् ।
ब्रह्मसूत्रोज्ज्वलत्कण्ठयोगपट्टोत्तरीयकाम् ॥
सौम्योग्रभूषणैर्युक्तां नागाष्टकविराजिताम् ।
रत्नकुण्डलकर्णश्रीपञ्चकालानलस्थिताम् ॥
पद्मोपरिस्थितां देवीं नृत्यमानां सदोदिताम् ।
पद्मासनसुखासीनां सर्वदेवाधिदेवताम् ॥
मुक्तहुँकारजिह्वाग्रं चालयन्तीं विचिन्तयेत् ।
त्रिकोटिशक्तिचामुण्डानवकोटिभिरन्विताम् ॥

महायोगिनीकोटीनामष्टादशभिरूर्जिताम् ।
चरन्तीं च हसन्तीं च डाकिनीषष्टिकोटिभिः ॥
भैरव्यशीतिकोटीभिः परिवारैश्च वेष्टिताम् ।
कोटिकालानलज्वालान्यक्कारोद्यत्कलेवराम् ॥
महाप्रलयकोट्यर्कविद्युदर्बुदसन्निभाम् ।
दुर्निरीक्षां महाभीमां सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥
शत्रुपक्षक्षयकरीं दैत्यदानवसूदिनीम् ।
निर्विकारां निराभासां कूटस्थां चिद्विलासिनीम् ॥
अद्वैतां परमानन्दां नित्यां शुद्धां निरञ्जनाम् ।
सृष्टिः स्थितिश्च संहारोऽनाख्या भासा पदाभिदाम् ॥
वेदान्तवेद्यां कैवल्यरूपां निर्वाणकारिणीम् ।
गुणातीतामात्मरूपप्रबोधातीतगोचराम् ॥
एवं ध्येया महाकाली प्रोद्भिन्ननवयौवना ।
पञ्चवक्त्रस्य मध्यस्थां गुह्यकाली परेश्वरी ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

पर्वते वा नदीकूले शून्यागारे शिवालये ।
पीठे चतुष्पथे कुर्यात् पुरश्चरणमुत्तमम् ॥
नियमास्तत्र भूयांसः प्रकर्त्तव्याः प्रयत्नतः ।
अवैधकरणात् सिद्धिहानिः स्यान्नात्र संशयः ॥
त्रिकालमाचरेत् स्नानं हविष्यं भक्षयेन्निशि ।
स्वमन्त्रं चाक्षसूत्रं च गुरोरपि न दर्शयेत् ॥
त्यजेद्दुष्टप्रवादं च परीवादं च वर्जयेत् ।
तथा दुर्जनसंसर्गान् स्त्रीशूद्रालापनं तथा ॥
वस्त्रं कुशाशनं व्याघ्रचर्म चापि नृमुण्डकम् ।

आसनं च महादेवि प्रशस्तश्चोत्तरामुखः ॥
शुद्धस्फटिकरुद्राक्षनृमुण्डास्थिविनिर्मिताम् ।
जपमालां शुभां विद्धि प्रशस्तामुत्तरोत्तराम् ॥
अनेनोक्तविधानेन लक्षसङ्ख्यं जपेन्मनुम् ।
होमं दशांशतः कुर्यात् तर्पणं चाभिषेचनम् ॥
ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत् प्रिये ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

षोडशार्णा महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्महद्भिर्भक्तिनोदितैः ॥
येन लब्धा कुलेशानि सद्गुरोर्मुखपङ्कजात् ।
स धन्यः सर्वलोकेषु पूज्यस्त्रिभुवनौकसाम् ॥
नातः परतरा विद्या त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
अतः सर्वप्रयत्नेन विद्येयं षोडशाक्षरी ॥
जप्तव्या साधकश्रेष्ठैर्ध्यातव्या गुह्यकालिका ।
येनेयं साधिता विद्या स एव स्यात् सदाशिवः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

दशवक्त्रा तु या प्रोक्ता गुह्यकाली मया तव ।
प्रकृतिः सा परिज्ञेया कालीनां जगदम्बिका ॥
अन्या विकृतयः प्रोक्ताः कार्यकारणभेदतः ।

तथा ।

सैव ज्ञेया वरारोहे निर्गुणब्रह्मरूपिणी ।
जगत् सर्वं वशे तस्या वश्या कस्यापि सा न च ॥
विश्वं सर्वं सृजति सा कोऽपि सृजति तां न हि
सा पालयति संसारं तां पालयति कोऽपि न ॥

तां न संहरते कोऽपि सा सर्वं संहरत्यदः ।
तदाज्ञयाऽनिलो वाति सूर्यस्तपति तद्भयात् ॥
तद्भीत्याऽग्निः पचत्यन्नं मृत्युश्चरति तद्भयात् ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सेन्द्राश्चैव दिवौकसः ।
ऋषयश्च मरीच्याद्यास्तामेव समुपासते ॥

अथ कामकलाकालीमन्त्रः (महाकालसंहितायाम्)

श्रीदेव्युवाच ।

परात् पर परेशान शशाङ्ककृतशेखर ।
योगादियोगिन् सर्वज्ञ सर्वभूतदयापर ॥
त्वत्तः श्रुता मया मन्त्राः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ।
विधिवत् पूजनं चापि न्यासावरणकक्रमैः ॥
तारा च च्छिन्नमस्ता च तथा त्रिपुरसुन्दरी ।
बाला च वगला चापि त्रिपुरा भैरवी तथा ॥
काली दक्षिणकाली च कुब्जिका विवरेश्वरी ।
अघोरा राजमातङ्गी सिद्धिलक्ष्मीस्त्वरुन्धती ॥
अश्वारूढा भोगवती नित्यक्लिन्ना च कुक्कुटी ।
कौमारी चापि वाराही चामुण्डा चण्डिकाऽपि च ॥
भुवनेशी तथोच्छिष्टचाण्डाली चण्डघण्टिका ।
कालसंकर्षिणी चापि गुह्यकाली तथाऽपरा ॥
एताश्चान्याश्च वै देव्यः समन्त्राः कथितास्त्वया ।
किन्तु कामकलाकालीं नोक्तवानसि मे प्रभो ॥
तत् किं मय्यपि गोप्यं ते प्रायशः परमेश्वर ।
न हीदृशं त्रिलोकेषु तव किं चन विद्यते ॥

यदकथ्यं मयि भवेदपि प्राणाधिकाधिकम् ।
तत् किं गोपयसि प्राज्ञ मयीदं दैवतं महत् ॥
यद्यस्मि ते दयापात्रं मान्याऽस्मि स्नेहभाजनम् ।
अनुग्राह्याऽस्मि कान्ताऽस्मि तदेमां वद साम्प्रतम् ॥
देवीं कामकलाकालीं समन्त्रध्यानपूर्विकाम् ।

श्रीमहाकाल उवाच ।

धन्याऽस्यनुगृहीताऽसि तया देव्यैव सर्वथा ।
यत् ते बुद्धिः समुत्पन्ना तां देवीं प्रति भामिनि ॥
विधाय शपथं देवि कथयामि तवाग्रतः ।
न हीदृशं भुक्तिमुक्तिसाधनं भुवि विद्यते ॥
यथार्थमात्थ देवि त्वं गोप्यत्वं चापि सर्वथा ।
किन्तु भक्तिविशेषात् ते कथयामि न संशयः ॥
राज्यं दद्याद्धनं दद्यात् स्त्रियं दद्याच्छिरस्तथा ।
न तु कामकलाकालीं दद्यात् कस्यापि न क्वचित् ॥
इन्द्रेणोपासिता पूर्वं देवराज्यमभीप्सिता ।
वरुणेन कुवेरेण ब्रह्मणा च मया तथा ॥
रामेण रावणेनापि यमेनापि विवस्वता ।
चन्द्रेण विष्णुना चापि तथाऽन्यैश्च महर्षिभिः ॥
सहेलं वा सलीलं वा यस्याः स्मरणमात्रतः ।
विद्यालक्ष्मीः राज्यलक्ष्मीः कीर्त्तिलक्ष्मीर्वशे स्थिता ॥
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् ।
राज्यार्थी लभते राज्यं कान्तार्थी कामिनीं शुभाम् ॥
यशोऽर्थी कीर्त्तिमाप्नोति मुक्त्यर्थी मुक्तिमाप्नुयात् ।
अणिमाद्यष्टसिद्ध्यर्थी सिद्ध्यष्टकमवाप्नुयात् ॥

तथा ।

द्विसप्ततितमं यावत् पुरुषाः पूर्वजाः स्थिताः ।
तेषां भाग्योदयैः पूर्णैर्विद्येयं यदि लभ्यते ॥
तदा सर्वस्वदानेन गृह्णीयादविचारयन् ।
कृतकृत्यं मन्यमानो गुरोः पादावभिस्पृशन् ॥

तथा ।

एकतः प्राणदानं स्यादेकतश्चैतदर्पणम् ।
तुलया विधृतं चेत् स्यादेतद्दानं विशिष्यते ॥

तथा ।

कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्लभ्यते वा न लभ्यते ।
शपथं कुरु देवेशि प्रकाश्येयं न कुत्र चित् ॥
सत्यं सत्यं त्रिसत्यं मे ततो वक्ष्यामि पार्वति ।
नो चेत् तेऽपि न वक्ष्यामि प्रमाणं तत्र सैव मे ॥

देव्युवाच ।

शपे त्वच्चरणाब्जाभ्यां हिमाद्रिं शिरसा शपे ।
शपे स्कन्दैकदन्ताभ्यां यद्येनामन्यतो ब्रुवे ॥
शपेऽथ वा तया देव्या यां मे त्वं कथयिष्यसि ।
प्रकाशयामि यद्येनां सैव मे विमुखी भवेत् ॥

महाकाल उवाच ।

साधु साधु महाभागे प्रतीतिर्मेऽधुना त्वयि ।
अकार्षीः शपथं यस्मात् तस्माद्वक्ष्याम्यसंशयम् ॥
समाहिता सावधाना भव देवि वरानने ।
विधेहि चित्तमेकाग्रं बद्ध्वाऽञ्जलिपुटं प्रिये ॥
कालीं कामकलापूर्वां शृणुष्वावहिता मम ।

तथा ।

या गुह्यकाली सैवेयं काली कामकलाऽभिधा ।
मन्त्रभेदाद्ध्यानभेदाद्भवेत् कामकलात्मिका ॥
यथा त्रिभेदा तारा स्यात् सुन्दरी सप्तसप्ततिः ।
दक्षिणा पञ्चभेदा स्यात् तथेयं गुह्यकालिका ॥
सप्तधा ध्यानमन्त्राभ्यां जायते भिन्नरूपिणी ।
यथा पञ्चाक्षरो मन्त्रो देवी चैकजटा स्मृता ॥
द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो देवी दक्षिणकालिका ।
तथाऽन्येष्वपि देवेषु मुख्यासु बहुषु प्रिये ॥
देवी कामकलाकाली मनुरष्टादशाक्षरः ।
षोडशार्णा यथा मुख्या सर्वश्रीचक्रमध्यगा ॥
तथेयं नवकालीषु सदा मुख्यतमा स्मृता ।
त्रैलोक्याकर्षणो नाम मन्त्रोऽस्याः परिकीर्त्तितः ॥
तस्योद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणु यत्नेन पार्वति ।
श्रुत्वाऽवधारयस्वेमां सर्वकल्याणहेतवे ॥

मन्त्रोद्धारमाह ।

आद्यवर्गाद्यवर्णोऽक्ष्णा वामेन परिशीलितः ।
मूर्ध्नि मूर्ध्ना यतृतीययुगधः परिकीर्त्तितः ॥
विन्दुवामाक्षिसंयुक्तो वह्निः खपरमस्तकः ।
वामश्रुत्यर्धचन्द्रेण तृतीयः सपरो भवेत् ॥
दक्षस्कन्धोर्ध्वदन्ताभ्यां चाक्षरो विन्दुमस्तकः ।
ओष्ठवर्गद्वितीयो हपूर्वाधरोष्ठविन्दुयुक् ॥
षडक्षराणि सम्बोध्य यथानामस्थितिक्रमात् ।
प्रतिलोमेन चोद्धृत्य तानि बीजानि पञ्च वै ॥

भूतबीजाद्यमारभ्य मारबीजान्तमेव हि ।
वैश्वानरवधूयुक्तो मन्त्रो ह्यष्टादशाक्षरः ॥
अस्याः स्मरणमात्रेण यावन्त्यः सन्ति सिद्धयः ।
स्वयमायान्ति पुरतो जपादीनां च का कथा ॥
सप्त कामकलाकाल्या मनवः सन्ति गोपिताः ।
तेषु सर्वेषु मन्त्रेषु मुख्योऽयं परिकीर्त्तितः ॥
स्मरणादस्य मन्त्रस्य मूर्च्छिताः सर्वदेवताः ।
स्तम्भिता वेपमानाश्च उत्तिष्ठन्त्यतिविह्वलाः ॥
निदेशवर्त्तिनो भूत्वा वर्त्तन्ते चेटका इव ।
किं बहूक्तेन देवेशि सत्यपूर्वं ब्रवीम्यहम् ॥
सहस्रवदनेनापि लक्षकोट्याननेन वा ।
महिमा वर्णितुं शक्यो नास्य वर्षायुतैर्मया ॥
सामान्यतो विजानीहि यद्यदिच्छति साधकः ।
तत् तत् करोति सकलं प्रजापतिरिवापरः ॥
त्रैलोक्याकर्षको नाम मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ।

ऋष्यादिन्यासमाह ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि छन्दश्चर्षिं च बीजकम् ।
अस्य कामकलाकाल्याः ऋस्याहमृषिर्मतः ॥
छन्दश्च बृहतीख्यातं देवी चेयं प्रकीर्त्तिता ।
आद्यबीजं तु बीजं स्यात् क्रोधार्णं शक्तिरेव च ॥
विनियोगोऽस्य सर्वस्य सर्वदा सर्वसिद्धये ।
षडङ्गं पञ्चबीजैस्तैर्नाम्नाऽप्येकं च कारयेत् ॥
नामाक्षराणि प्रत्येकं तत्र देयानि पार्वति ।

अथ ध्यानम् ।

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि कुरु चित्तैकतानताम् ।
उद्यद्घनाघनाश्लिष्यज्जपाकुसुमसन्निभाम् ॥
मत्तकोकिलनेत्राभां पक्कजम्बूफलप्रभाम् ।
सुदीर्घप्रबलालम्बिविस्रस्तघनमूर्धजाम् ॥
ज्वलदङ्गारवच्छोणनेत्रत्रितयभूषिताम् ।
उद्यच्छारदसंपूर्णचन्द्रकोकनदाननाम् ॥
दीर्घदंष्ट्रायुगोदश्चद्विकरालमुखाम्बुजाम् ।
वितस्तिमात्रनिष्क्रान्तललज्जिह्वाभयानकाम् ॥
व्यात्ताननतया दृश्यद्द्वात्रिंशद्दन्तमण्डलाम् ।
निरन्तरं वेपमानोत्तमाङ्गां घोररूपिणीम् ॥
अंसासक्तनृमुण्डासृक्पिबन्तीं वक्त्रकन्दरात् ।
सृक्कद्वन्द्वस्रवद्रक्तस्नापितोरोजयुग्मकाम् ॥
उरोजाम्भोजसंसक्तसम्पतद्रुधिरोच्चयाम् ।
सश्चीत्कृतिं धयन्तीं तल्लेलिहानरसज्ञया ॥
ललाटे घननारासृग्विहितारुणचित्रकाम् ।
सद्यश्छिन्नगलद्रक्तनृमुण्डकृतकुण्डलाम् ॥
श्रुतिनद्धकचालम्बिवतंसलसदंसकाम् ।
स्रवदस्रौघया शश्वन्मानव्या मुण्डमालया ॥
आकण्ठगुल्फलम्बिन्याऽलङ्कृतां केशबद्धया ।
श्वेतास्थिगुलिकाहारग्रैवेयकमहोज्ज्वलाम् ॥
शवदीर्घाङ्गुलिपङ्क्तिमण्डितोरःस्थलस्थिराम् ।
कठोरपीवरोत्तुङ्गवक्षोजयुगलान्विताम् ॥
महामारकतग्रावर्वेदिश्रोणिपरिष्कृताम् ।

विशालजघनाभोगामतिक्षीणकटिस्थलाम् ॥
अन्त्रनद्धार्भकशिरोवलत्किङ्किणीमण्डिताम् ।
सुपीनषोडशभुजां महाशङ्खाश्वदङ्गदाम् ॥
शवानां धमनीपुञ्जैर्वेष्टितैः कृतकङ्कणाम् ।
ग्रथितैः शवकेशैः स्रग्दामभिः कटिसूत्रिणीम् ॥
शवपोतकरश्रेणीग्रथनैः कृतमेखलाम् ।
शोभमानाङ्गुलीमांसमेदोमज्जाङ्गुलीयकैः ॥
असिं त्रिशूलं चक्रं च शरमङ्कुशमेव च ।
ललानं च तथा कर्त्रीमक्षमालां च दक्षिणे ॥
पाशं च परशुं नागं चापं मुद्गरमेव च ।
शिवापोतं खर्परं च वसासृङ्मेदसाऽन्वितम् ॥
लम्बत्कचं नृमुण्डं च धारयन्तीं स्ववामतः ।
विलसन्नूपुरां देवीं ग्रथितैः शवपञ्जरैः ॥
श्मशानप्रज्वलद्घोरचिताग्निज्वालमध्यगाम् ।
अधोमुखमहादीर्घप्रसुप्तशवपृष्ठगाम् ॥
वमन्मुखानलज्वालाजालव्याप्तदिगन्तराम् ।
प्रोत्थायैव हि तिष्ठन्तीं प्रत्यालीढपदक्रमात् ॥
वामदक्षिणसंस्थाभ्यां नदन्तीभ्यां मुहुर्मुहुः ।
शिवाभ्यां घोररूपाभ्यां वमन्तीभ्यां महानलम् ॥
विद्युदङ्गारवर्णाभ्यां वेष्टितां परमेश्वरीम् ।
सर्वदैवानुलग्नाभ्यां पश्यन्तीभ्यां महेश्वरीम् ॥
अतीव भीषमाणाभ्यां शिवाभ्यां शोभितां मुहुः ।
कपालसंस्थं मस्तिष्कं ददतीं च तयोर्द्वयोः ॥
दिगम्बरां मुक्तकेशीमट्टहासभयानकाम् ।

सप्तधा बद्धनाराच्योगपट्टविभूषिताम् ॥
संहारभैरवेणैव सार्धं संभोगमिच्छतीम् ।
अतिकामातुरां कालीं हसन्तीं खर्वविग्रहाम् ॥
कोटिकालानलज्वालान्यक्कारोद्यत्कलेवराम् ।
महाप्रलयकोट्यर्कविद्युदर्बुदसन्निभाम् ॥
कल्पान्तकारिणीं कालीं महाभैरवरूपिणीम् ।
महाभीमां दुर्निरीक्ष्यां सेन्द्रैरपि सुरासुरैः ॥
शत्रुपक्षक्षयकरीं दैत्यदानवसूदनीम् ।
चिन्तयेदीदृशीं देवीं कालीं कामकलाभिधाम् ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि पौरश्चरणिकं विधिम् ।
एकस्मिन् पत्रविहिते सिद्धिस्तात्कालिकी भवेत् ॥
भूमिशुद्धिर्द्रव्यशुद्धिः पूर्वैव कथिता मया ।
यमाश्च नियमा ये स्युः पुरश्चरणकर्मणि ॥
सर्वानेव प्रयुञ्जीत सततं भक्तितत्परः ।
कृतनित्यक्रियः प्रातः कृतपूजाविधिः शुचिः ॥
नरास्थि निखनेद्भूमावस्त्रमन्त्रमुदीरयन् ।
तारं क्रोधोऽनु ह्रौँ पाशस्मरभूतान् समुद्धरेत् ॥
सिद्धिमुच्चार्य देहीति युग्मं वह्नयङ्गनां वदेत् ।

भूतबीजं फ्रोमिति ।

तथा ।

तदुपर्येव चास्तीर्य स्वासनं सुष्ठु कल्पितम् ।
नृमुण्डमग्रतः कृत्वा नरास्थिजपमालया ॥
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।

अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं तथैव च ॥
दशांशं होमयेन्मन्त्री तर्पयेदभिषेचयेत् ।
होमे सन्तर्पणे चैव पूजावत् कथितो विधिः ॥
पूजायां वा प्रयोगे वा होमे वा तर्पणेऽथ वा ।
गुह्यकालीविधानेन सर्वं कार्यं शुचिस्मिते ॥
अत्रानुक्तं विधानं यत् तत्रत्यं तत् प्रकल्पयेत् ।
तत्राप्यनुक्तं यत् किञ्चित् तत्रोक्तो दक्षिणाविधिः ॥

इति प्रथममहाविद्याप्रकरणम् ।

अथ द्वितीयविद्यायाः (फेत्कारिणीतन्त्रे)

कैलाशशिखरासीनं चन्द्रखण्डविराजितम् ।
वक्षःस्थले समासीना पृच्छति स्म नगात्मजा ॥
कथमीशान सार्वज्ञ मलभैंस्ते तपोधनाः ।
कां विद्यां प्राप्य कवयो भारतादि प्रचक्रिरे ॥
श्रुत्वा नगात्मजावाक्यं विहस्य परमेश्वरः ।
प्राह प्रियां परिष्वज्य साधु साध्विति पूजयन् ॥
शृणु साध्वि महाविद्यामज्ञानेन्धनदाहिनीम् ।
यामवाप्य महात्मानो धर्मकामार्थमुक्तिषु ॥
नासाध्यं मेनिरे किञ्चित् कवयः शुद्धबुद्धयः ।
वादे सदसि या वाचः स्तम्भिनी प्रतिवादिनाम् ॥
विद्याहानिकरी देवि विदुषां वलिदानतः ।
हास्याय या सदस्यानामशुद्धमपि जल्पयेत् ॥
वादिनं चापि राजानं मन्त्रिणं वशमानयेत् ।

जल्पयेद्वादिनमित्यन्वयः ।

मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण जपात् सर्वज्ञतां नयेत् ॥

मन्त्रोद्धारणमाह ।

सपरं प्रथमं दत्वा चतुर्थस्वरभूषितम् ।
रेफारूढं स्फुरद्दीप्तमिन्दुविन्दुसमन्वितम् ॥
त्रकारं च ततो दद्याच्चतुर्थेनैव भूषितम् ।
दीर्घौकारसमायुक्तं हकारं योजयेत् ततः ॥
फट्कारं च ततो दद्यात् संपूर्णः सिद्धमन्त्रतः ।

सपरो हकारः । शेषं स्पष्टम् ।

( मत्स्यसूक्ते )

अथ वक्ष्ये महादेव्या मन्त्रोद्धारमनुत्तमम् ।
यच्च ज्ञात्वा नरो भाति वाचस्पतिरिवापरः ॥
मायाबीजं समुद्धृत्य तवर्गप्रथमं तथा ।
रतिविन्दुवह्नियुतं द्वितीयं बीजमुत्तमम् ॥
कूर्चबीजं तृतीयं तु फट्कारस्तदनन्तरम् ।
सम्पूर्णसिद्धमन्त्रस्तु रश्मिपञ्चकसंयुतः ॥

पञ्चरश्मिः प्रणवः ।

तदुक्तं ( तारार्णवे )

अनन्तरं समुद्धृत्य मायोत्तरमनुं ततः ।
पपञ्चमः समायुक्तं पञ्चरश्मिः प्रकीर्त्तितः ॥

अनुत्तरमकारः । मायोत्तरमुकारः । पपञ्चमो मकारः ।

( तन्त्रबोधे )

तारं लज्जां त्रकामेशीं हुँ फडित्युग्रतारिका ।
माया स्त्रीँ हूमथास्त्रान्तमित्येकजटयाऽर्च्चयेत् ॥
अस्त्रहीनमिदं नीलसरस्वत्या विनिर्दिशेत् ।

कामेशी ईकारः ।

त्र्यक्षरोऽसौ महामन्त्रः फट्कारान्तौ हृदि स्थितः ।
पञ्चरश्मिसमायुक्तोऽथाज्ञानेन्धनदाहकः ॥

( मत्स्यसूक्ते )

लज्जाबीजं वधूबीजं कूर्चबीजं तथा हि फट् ।
एवं पञ्चाक्षरी विद्या पञ्चभूतप्रकाशिनी ॥

तथा ।

ताराऽस्त्ररहिता त्र्यर्णा महानोलसरस्वती ।
कुल्लुकेति समाख्याता त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥

( तारार्णवे )

वशिष्ठाराधिता चोग्रा न शीघ्रफलदा यतः ।
अतस्तेनैव मुनिना शापो दत्तः सुदारुणः ॥
ततः प्रभृति विद्येयं फलदात्री न कस्य चित् ।
शक्तिबीजं त्रपान्तस्थबीजोपरि नियोजितम् ॥
ततः प्रभृति विद्येयं वधूरिव यशस्विनी ।
फलिनी सर्वविद्यानां जयिनी जयकाङ्क्षिणाम् ॥
विषक्षयकरी विद्या अमृतत्वप्रदायिनी ।
मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण विजयी भुवि जायते ॥
मूको भवति वागीशो गीष्पतिर्जायते नरः ।

शक्तिबीजमिति । शक्तिबीजं सकारः । त्रपान्तस्थबीजं त्रोङ्कारः । तेन स्त्रीमिति वधूबीजं भवति । शापस्तु कृष्णावतारपर्यन्तमेव ।

जाते कृष्णावतारे तु पुनः शापात् प्रमुच्यते ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

मन्त्रार्थमाह ( साधनसमुच्चये )

प्रणवाद्ब्रह्मरूपा सा सोऽहं तत्त्वस्वरूपिणी ।
व्योम्ना प्रकाशमानत्वं ग्रसमानत्वमग्निना ॥
तयोर्विसर्ग ईकारो विन्दुना तान्त्रिकी मता ।
तकारः सर्वपापघ्नो रेफस्तत्त्वप्रकाशकः ॥

विन्दुमाली महाबीजं शब्दब्रह्मप्रकाशकम् ।
कूर्च्चं प्रबोधरूपं स्यादस्त्रं जाडयविनाशकम् ॥
एवं यो वेत्ति शुद्धात्मा स तु साक्षान्महेश्वरः ।

(मत्स्यसूक्ते)

श्रीबीजाद्या यदा विद्या तदा श्रीः सर्वतो मुखी ।
एषैव हि महाविद्या मायाद्या सकलेष्टदा ॥
वाग्भवाद्या महावाक्यस्वरूपा सर्ववाङ्मयी ।

तथा ।

गुटिकासिद्धिवेतालपातालवटयक्षिणी ।
परपुरप्रवेशश्च आज्ञासिद्धिः प्रजायते ॥
जिह्वायां चिन्तनादेव त्रिकालज्ञो भवेद्ध्रुवम् ।
यस्तु विद्यामभेदेन चिन्तयेत् साधकोत्तमः ॥
जीवन्मुक्तो विमुक्तश्च अन्ते सोऽपि भवेद्ध्रुवम् ।

(ब्रह्मसंहितायां फेत्कारिण्यां) च ।

क्षिप्रप्रसादाज्जगतां सदा नीलसरस्वती ।
विशेषतः कलियुगे मत्प्रसादाद्भविष्यति ॥
सिद्धमन्त्रो यदा मन्त्री बालिशस्यापि मूर्द्धनि ।
करं दत्वा दिशत्याशु सोऽपि श्लोकान् पठेत् पुनः ॥

दिशति श्लोकं कुर्विंत्याज्ञापयति ।

तथा ।

मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण अनुभावद्वयं भवेत् ।
तात्कालिकी च कविता परैरनविभाव्यता ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः (मेरुतन्त्रे)

मुनिरक्षोभ्यसंज्ञोऽस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
तारादेवी ह्रीँ च बीजं हूँ शक्तिश्चास्य कीर्त्तिता ॥

(मन्त्रचूडामणौ)

अक्षोभ्य ऋषिरेतस्या बृहतीछन्द ईरितम् ।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥
हूँ बीजमस्त्रं शक्तिः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदा ।

दामोदरमिश्रकृतसंग्रहे ।

अक्षोभ्य ऋषिरेतस्या बृहतीच्छन्द ईरितम् ।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता ॥
हूँ बीजमन्त्रः शक्तिः स्यान्माया स्त्रीँ कीलकं स्मृतम् ।
विनियोगो भवेद्देवि चतुर्वर्गफलाप्तये ।

उग्रतारा देवतेति (मन्त्रचूडामणौ)

अथ कराङ्गन्यासौ । तत्रादौ उग्रतारायाः (ताराकल्पे)

षड्दीर्घमायाबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥

नीलसरस्वत्यास्तु (सिद्धसारस्वते)

अखिलवाग्रूपिणीं प्रोच्य हृदाय नमो वदेत् ।
अखण्डवाग्रूपिणीं च शिरसे वह्निवल्लभा ॥
ब्रह्मवाग्रूपिणीमुक्त्वा शिखायै वषडित्यपि ।
विष्णुवाग्रूपिणीमुक्त्वा कवचाय हुमुच्चरेत् ॥
रुद्रवाग्रूपिणीं नेत्रत्रयाय वौषडित्यपि ।
सर्ववाग्रूपिणीमुक्त्वा अस्त्राय फडिति स्मरेत् ॥
षड्दीर्घमायया बीजं बीजान्ते तानि योजयेत् ।

एकजटायाः (तन्त्रचूडामणौ)

बीजान्ते एकजटायै हृदयं परिकीर्त्तितम् ।
तारिण्यै शिरसे तद्वद्वज्रोदके शिखां तथा ॥
उग्रजटे च कवचं महापरिसरे तथा ।

पिङ्गोग्रैकजटे तद्वन्नेत्रास्त्रे परिकीर्त्तिते ॥

न्यासोऽयमुग्रतारैकजटयोर्विरुद्ध इति साम्प्रदायिकः ।

अथ ध्यानम् ( गन्धर्वतन्त्रे )

श्मशानं तत्र संचिन्त्य तत्र कल्पद्रुमं स्मरेत् ।
तन्मूले मणिपीठं च नानामणिविभूषितम् ॥
शिवाभिर्बहुमांसास्थिमोदमानाभिरन्ततः ।
चतुर्दिक्षु शवामुण्डाश्रिताङ्गारास्थिभूषिताः ॥
तन्मध्ये भावयेद्देवीं यथोक्तध्यानयोगतः ।

( नीलतन्त्रे )

प्रत्यालीढपदां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
खर्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्रचर्मवृतां कटौ ॥
नवयौवनसंपन्नां पञ्चमुद्राविभूषिताम् ।
चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महाभीमां वरप्रदाम् ॥
खड्गकर्त्रीधरां सव्ये वामे मुण्डोत्पलान्विताम् ।
पिङ्गोग्रैकजटां ध्यायेन्मौलावक्षोभ्यभूषिताम् ॥
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रयभूषिताम् ।
प्रज्वलत्पितृभूमध्यगतां दंष्ट्राकरालिनीम् ॥
सावेशस्मेरवदनामस्थ्यालङ्कारभूषिताम् ।
विश्वव्यापकतोयान्तः श्वेतपद्मोपरिस्थिताम् ॥

( श्यामारहस्यादौ )

खड्गकर्त्रीसमायुक्तसव्येतरभुजद्वयाम् ।
कपालोत्पलसंयुक्तसव्यपाणियुगान्विताम्—इति पाठः ॥

( तन्त्रान्तरे )

खड्गकर्त्रीधरां देवीं कपालोत्पलधारिणीम्—इति पाठः ।

(मन्त्रचूडामणौ)

तस्योपरि गृहे देवीं खर्वां नीलमणिप्रभाम् ।
लम्बोदरीं व्याघ्रचर्मसमावृतनितम्बिनीम् ॥
पीनोन्नतपयोभारां रक्तवर्त्तुललोचनाम् ।
ललज्जिह्वां महाभीमां दंष्ट्राकोटिसमुज्ज्वलाम् ॥
नीलोत्पललसन्मालां बद्धजूटां भयङ्करीम् ।
श्वेतास्थिपट्टिकायुक्तकपालपञ्चशोभिताम् ॥
ललाटे रक्तनागेन कृतकर्णावतंसकाम् ।
अतिशुभ्रमहानागकृतहारमहोज्ज्वलाम् ॥
दूर्वादलश्यामनागकृतयज्ञोपवीतिनीम् ।
चतुर्भुजां रक्तमांसखण्डमण्डितमुष्टिना ॥
जटाजूटाक्षसूत्रेण शोभितां तीक्ष्णधारया ।
खड्गेन दक्षिणस्योर्ध्वे शोभितां वीरनादिनीम् ॥
तदधःस्थाद्बीजवृन्तकर्त्रिकालङ्कृतां पराम् ।
वामोर्ध्वे रक्तनालेन दिगम्बरमनोहराम् ॥
दधतीं नीलपद्मं च तदधःस्थात् कपालकम् ।
जगतां जाड्यसंयुक्तं दधतीं कुन्दसन्निभम् ॥
धूम्राभनागसंदोहकृतकेयूरसत्वराम् ।
सुवर्णवर्णनागेन कङ्कणोज्ज्वलपाणिकाम् ॥
शुभ्रवर्णमहादेवकृतसद्विमलासनम् ।
निर्यन्त्रणभिया तद्वत् संकुचत्प्रपदात्मिकाम् ॥
शवपादद्वयारूढवामपादां महोन्मुखीम् ।
कुन्दाभनागसंशोभिकटिसूत्रां त्रिलोचनाम् ॥
असृग्रक्तेन नागेन कृतनूपुरपल्लवाम् ।

सद्यश्छिन्नगलतद्रक्तमुण्डै रक्तविभूषणैः ॥
अन्योन्यकेशग्रथितैः पादपद्मविलम्बितैः ।
पञ्चाशद्भिर्महामालाशोभितां परमेश्वरीम् ॥
ज्वलच्चितामध्यसंस्थां द्वीपिचर्मोत्तरांशुकाम् ।
अक्षोभ्यनागसम्बद्धजटाजूटां वरप्रदाम् ॥
एवम्भूतां महादेवीमात्मानं यागवस्तु च ।
विज्ञापयेन्महादेवपण्डितोऽहं महाकविः ॥

(तारोपनिषदि)

विरुद्धवाक्यार्थशरीरमण्डले
नवाम्बुदाभां गुरुमुन्नतोदरीम् ।
अतीव खर्वां नवयौवनस्था-
मधःस्थशार्दूलककृत्तिमूर्धजाम् ॥
अनैक्यमाहत्य शवोपरिस्थितां
शवार्धमालीढपरीतमध्यमाम् ।
विशीर्णवर्णां नृशिरःस्रजोद्भवां
त्रयीविवर्त्तारुणलोचनत्रयाम् ॥
अभेदपिङ्गैकजटाविराजितां
विभूषणाच्छन्नसितास्थिभीषणाम् ।
महाष्टसिद्धिप्रकराहिभूषणा-
मट्टाट्टहासैर्जगतामभीतिदाम् ॥
जटास्वनन्तः श्रवसोश्च तक्षको
महाहिपद्मो हृदि हारभूषणाम् ।
तथैव कर्कोटककृतोपवीतिकां
सुमेखलायामथ देववासुकिः ॥

सशङ्खपालः किलकङ्कणो मतः
पदेषु पद्मः किलनूपुरश्रियम् ।
भुजेषु नागः कुलिकोऽङ्गदो मतो
भुजोऽर्धमालामहता स्थितिः स्थिता ॥
सितश्च रक्तो धवलश्च मेचक-
स्तथैव नागोऽथ सितश्च पाण्डरः ।
भुजङ्गमानामिह वर्णजातयो
भवन्ति सर्वे मुनिभिर्ज्वलच्चिताम् ॥
कपालकर्त्रीग्रथितोग्रमूर्धजां
सनालमिन्दीवरकान्तिमालाः ।
विकोषखड्गं सततं च दक्षिणे
स्वपौरुषोत्थैर्दधतीं भुजैः सदा ॥
पदार्थदंष्ट्राद्वयपञ्चमुद्रया
विराजमानामसितोत्पलस्रजम् ।
विचिन्तयेत् तां च कवित्वकारिणी-
मन्यागतार्थं प्रजपेच्च तारिणीम् ॥

(फेत्कारिणीतन्त्रेऽपि)

प्रत्यालीढपदार्पिताङ्घ्रिशवहृद्घोराट्टहासा वरा
खड्गेन्दीवरकर्तृखर्परभुजा हूँकारबीजोद्भवा ।
खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटोग्रनागैर्वृता
जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम् ।

प्रत्यालीढलक्षणं तु (संगीतरत्नाकरे)

वामो यत्र निषण्णोरुरन्तरे पूर्वमानतः ।
दक्षिणं चरणं चाग्रे पञ्चतालप्रसारितम् ॥

अस्त्रौ द्वावपि तद्विन्द्यादालीढं तु सदैवतम् ।
आलाढाङ्गविपर्यासात् प्रत्यालीढमुदाहृतम् ॥

तालं वितस्तिः । अस्त्रौ चक्रौ । मौलावक्षोभ्यभूषितामिति । अत्राक्षोभ्यो नागरूप अक्षोभ्यो देवीमूर्धन्यस्त्विमूर्त्तिर्नागरूपधृगिति (भावचूडामणि-) वचनात् ।

अथ पुरश्चरणविधिः । तत्रादौ मन्त्रध्यानमुक्तं (साधनसमुच्चये)

मूलचक्रे च हृल्लेखां सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।
स्वाधिष्ठाने पीतवर्णं द्वितीयं च विभावयेत् ॥
नाभौ जीमूतसंकाशं कूर्चबीजं महाप्रभम् ।
अस्त्रबीजं हृदि ध्यायेत् कालाग्निसदृशप्रभम् ॥
मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वां विद्यां विभावयेत् ।
सूर्यकोटिप्रतीकाशां योगिनां दृष्टिगोचराम् ॥

तदुक्तं (तारातन्त्रे)

स्वेच्छाचारपरो मन्त्री पुरश्चरणसिद्धये ।
रहस्यमालामादाय लक्षमेकं जपेत् सदा ॥

(सुरेन्द्रसंहितायाम्)

लक्षमात्रं जपेन्मन्त्रं दशांशमसितोत्पलैः ।
आज्याक्तैर्जुहुयान्मन्त्री तद्दशांशेन तर्पयेत् ॥
कालागुरुद्रवोपेतैर्विमलैर्गन्धवारिभिः ।
तर्पयेच्च परां देवीं तत्प्रकारमिहोच्यते ॥
जले चावाह्य विधिवत् पाद्याद्यैरुपचारकैः ।
संतर्प्य विधिवद्देवीं परिवारान् सकृत् सकृत् ॥
देवीबुद्ध्या स्वमात्मानं संपूज्य साधकोत्तमः ।
तारिणीं सिञ्चयामीति जलं मूर्ध्नि विनिःक्षिपेत् ॥
कुम्भाख्यमुद्रया देवि नमोऽन्तेनाभिषेचनम् ।

(वीरचूडामणौ)

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् सुधीः।
पद्मैस्त्रिमधुरोपेतैर्वाक्पतिर्जायते नरः॥

(ताराणंवे)

एवं ध्यात्वा हविष्याशी जपेल्लक्षचतुष्टयम्।
रहस्यमालामादाय जपेद्वा लक्षमेव च॥

(मेरुतन्त्रे)

रतं कुर्वन्नदन् भक्ष्यमनेकं दधि मध्वपि।
मधु मांसं च ताम्बूलं जपेल्लक्षचतुष्टयम्॥
दशांशं जुहुयाद्रक्तपद्मैः क्षीराज्यलोलितैः।
शवमुण्डं पूरयित्वा जपस्थाने जपं चरेत्॥
नारीं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् महानिशि बलिं हरेत्।
न कार्यः सुभ्रुवां द्वेषो यत्नतः परिपूजयेत्॥
जपे न कालनियमो न स्थितौ सर्वदा जपेत्।
श्मशाने शून्यसदने देवागारेऽथ निर्जने॥
पर्वते वनमध्ये वा शवमारुह्य मन्त्रवित्।
समरे शत्रुनिहतं यद्वा षाण्मासिकं शिशुम्॥
विद्यां संसाधयेच्छीघ्रं साधितैवं प्रसिध्यति।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्त्तुमर्हति॥

अथैतद्विद्याभेदास्तत्रैव।

अथातः संप्रवक्ष्यामि दैत्यानां वरसिद्धये।
ब्रह्मणोपासितां तारां वल्यादिभिरुपासिताम्॥
ॐ त्रीँ ह्रीँ हूँ समुच्चार्य ह्रीँ हुँ फड्नगवर्णकः।
मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दस्तारा च देवता॥
न्यासाँस्तु पूर्ववत् कुर्याद्ध्यानमस्या निरूप्यते।

श्वेताम्बरां चन्द्रकान्तिं चन्द्रार्द्धकृतशेखराम् ॥
कर्त्तरीं च कपालं च कराभ्यां दधतीं भजेत् ।
नानालङ्कारशोभाढ्यां त्रीक्षणां पद्मसंस्थिताम् ॥
जपपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ।
मधुयुक्परमान्नेन होमाद्विद्यानिधिर्भवेत् ॥
रक्तां वश्ये स्वर्णवर्णां स्तम्भने मारणेऽसिताम् ।
उच्चाटने धूम्रवर्णां शान्तौ श्वेतां स्मरेदिमाम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि तारकस्य वराय तु ।
ब्रह्मणोपासितां तारां द्वादशार्णां सुदुर्लभाम् ॥
वाचं लज्जां रमां कामं हसरा औसमन्विताः ।
विसर्गाढ्याः पञ्चमं तु कूटमेतदुदीरितम् ॥
हुँ उग्रतारे हुँ फट् मन्त्रः प्रोक्तो जपादिकम् ।
सर्वं पूर्ववदेवास्य कलौ प्रत्ययकारिणी ॥
अथातः संप्रवक्ष्यमि ब्रह्मणा समुपासिताम् ।
हिरण्यकसिपोर्दातुं वरं सप्तार्णसंमिताम् ॥
प्रणवं कवचं मायां क्लीँ प्राक् कूटं च पञ्चमम् ।
हुँ फडन्तः सर्वमस्या न्यासाद्यं पूर्ववद्भवेत् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि हरिणा या ह्युपासिता ।
बौद्धमार्गप्रचारार्थं सिद्धिदा द्वादशाक्षरी ॥
उपासिता ब्रह्मणा या तस्याः कूटे तु पञ्चमे ।
सौरुक्त्वा साधिता विद्या द्वादशार्णाऽतिबुद्धिदा ॥
यत्प्रभावाद्दिवो दासः काश्या उच्चाटितः पुरा ।
तस्यास्तु पूर्ववज्ज्ञेयं न्यासध्यानजपादिकम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि सप्तार्णां रामसेविताम् ।

लक्ष्मीप्रभृति नाशार्थं तेन मत्तः सदा हली ॥
ब्रह्मोपासितसप्तार्णा मध्ये कूटं तु पञ्चमम् ।
ततु त्यक्त्वा सौँ स्तत्र चोक्त्वा बलरामेण सेविता ॥
शत्रुक्षयकरी चेयं तथा वाक्सिद्धिकारिणी ।
ध्यानपूजादिकं प्राग्वत् प्रयोगादिकमेव च ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि नारायणसुसेविता ।
पञ्चार्णा यत्प्रभावेण दैत्यानां कदनं कृतम् ॥
त्रीँ हुँ फट् क्रीँ वाग्भवं च पञ्चार्णा सर्वसिद्धिदा ।
असां त्रयाणां तु मुनिर्विष्णुः प्राग्वज्जपादिकम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि मया या [illegible]ता ।
दत्ता च रविणाऽदित्यै सा विद्या तु षडक्षरी ॥
ॐ ह्रीँ हूँ ह्रीँ हुँ फडिति मुनिः सोऽहं च पूर्ववत् ।
ज्ञेयं न्यासादिकं सर्वं प्रयोगादि च पूर्ववत् ॥
अथान्यं संप्रक्ष्यामि चास्याः पञ्चाक्षरं मनुम् ।
जलन्धरवधार्थं तु मया सिद्धं कृतं सुराः ॥
स्त्रीँ हुँ मायां हुँ फडिति मनुः पञ्चाक्षरो मतः ।

तन्त्रान्तरेऽपि ।

वधूबीजं च कवचं मायां कूर्चं तथाऽस्त्रकम् ।
सार्धपञ्चाक्षरो मन्त्रो द्वितीयः परिकीर्त्तितः ॥

( मेरुतन्त्रे )

मया पञ्चमुखैर्जप्तो दक्षमार्गेण भो सुराः ।
देवांशेषु च विप्रेषु तथा धर्मपरेषु च ॥
यमानां नियमानां च तन्त्वस्था नान्यदेवताः ।
वाममार्गाराधितास्तु कार्यं साधयितुं क्षमाः ॥

दक्षिणाराधिता देवा रणसाहाय्यकारकाः ।
तेजोनिधीन् रिपून् हत्वा नयन्ति ब्रह्मशाश्वतम् ॥
क्षत्रियाणां क्षयार्थं तु मया रामाय चार्पिता ।
पञ्चामृतं सुरास्थाने मांसस्थाने च सूरणम् ॥
मत्स्यस्थाने खण्डो बोध्यो धर्मपत्न्यां रतं रतम् ।
अन्यत् पूर्ववदेव स्याद्गुह्यमेतत् प्रकाशितम् ॥
लुब्धस्तारां न सेवेत लोकद्वयपरिक्षयात् ।
अस्याः पूजादिकं प्राग्वद्विशेषोऽत्र निरूपितः ॥
तारायाः सद्गुरोः सिद्धिः स्त्रीरते भ्रान्तता भवेत् ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि महातारामनुं सुराः ॥
सिद्धिर्मार्गद्वयेनापि वर्णावर्णाधिकारतः ।
स्त्रीँ ह्रीँ ह्राँहुँ नमस्तारायै महापदमुच्चरेत् ॥
तारायै सकलेत्युक्त्वा उस्वरान् तारय द्वयम् ।
तारद्वयं वह्निजाया द्वात्रिंशार्णो मनुर्मतः ॥
न्यासपूजाजपाद्यं तु प्राग्वत् सर्वं समाचरेत् ।

(तारिणीतन्त्रे)

ईश्वर उवाच ।

श्रूयतां शैलतनये जाड्यनाशकरी परा ।
चतुर्वर्गफला विद्या मन्त्रसिद्धिप्रदायिका ॥
वर्गाद्यं वह्निसंयुक्तं वामाक्षिपरिभूषितम् ।
नादबिन्दुसमायुक्तं वसुसिद्धिप्रदायकम् ॥
पुनश्चतुर्मुखं देवि रकारेण विभूषितम् ।
स्वरेणैव चतुर्थेन चन्द्रखण्डेन च प्रिये ॥
लाञ्छितं वै महाबीजं चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

ततः कृष्णे पदं चोक्त्वा ततो देवीपदं स्मृतम् ॥
ह्रीँकारं च ततो दद्यात् स्वपूर्वमुद्धरेत् ततः ।
इकारेण च रेफेण मकारेण च भूषितम् ॥
ततो वाग्भवमुच्चार्य मन्त्रमेनं समुद्धरेत् ।
नवाक्षरो मनुर्देवि तारिण्याः समुदीरितः ॥
इयमेव महाविद्या स्वर्गे मर्त्ये सुदुर्लभा ।
अष्टसिद्धिप्रदा देवि चतुर्वर्गफलप्रदा ॥

अथ ऋष्यादिन्यासः

शक्तिरस्य ऋषिः प्रोक्तो बृहतीछन्द ईरितम् ।
तारिणी देवता प्रोक्ता ह्रीँकारं बीजमुच्यते ॥
वाग्भवं शक्तिरित्युक्तमिति ऋष्यादिकं चरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

कृष्णां लम्बोदरीं भीमां नागकुण्डलशोभिताम् ।
रक्तमुखीं ललज्जिह्वां रक्ताम्बरधरां कटौ ॥
पीनोन्नतस्तनीमुग्रां महानागेन वेष्टिताम् ।
शवस्योपरि देवेशि तस्योपरि कपालके ॥
नासाग्रध्याननिरतां महाघोरां वरप्रदाम् ।
चतुर्भुजां दीर्घकेशीं दक्षिणस्योर्ध्वबाहुना ॥
बिभ्रतीं नलिनीमेकां वामोर्ध्वे पानपात्रकम् ।
वराभयधरां देवीमधस्ताद्दक्षवामयोः ॥
पिबन्तीं रौधिरीं धारां पानपात्रे सदाशिवे ।
सर्वसिद्धिप्रदां देवीं नित्यां गिरिनिवासिनीम् ॥
लोचनत्रयसंयुक्तां नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
दीर्घनासां दीर्घजङ्घां दीर्घाङ्गीं दीर्घजिह्विकाम् ॥

चन्द्रसूर्याग्निभेदेन त्रिलोचनसमन्विताम् ।
शत्रुनाशकरीं देवीं महाभीमां वरप्रदाम् ॥
व्याघ्रचर्मशिरोबद्धां जगत्त्रयविभाविताम् ।
साधकानां सुखं कर्त्रीं सर्वलोकभयङ्करीम् ॥
एवम्भूतां महादेवीं तारिणीं प्रणमाम्यहम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं संपूजयित्वा च एभिर्द्रव्यैर्महेश्वरि ।
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥

अथाक्षोभ्यमन्त्रः । (ब्रह्मसंहितायाम्)

अक्षोभ्यस्य मनुं त्यक्त्वा देवीं तारां जपेद्यदि ।
सिद्धिहानिर्भवेत् तस्य रौरवं नरकं व्रजेत् ॥
अक्षोभ्यस्य मनुं विप्र कवचं सारमुत्तमम् ।
अतिगुह्यं महाध्यानं सर्वध्यानेषु चोत्तमम् ॥
अग्रे मनुं प्रवक्ष्यामि ध्यानं चैव ततः परम् ।
कवचं च ततः पश्चात् कथयामि क्रमेण तु ॥
अनुत्तरं समुद्धृत्य पपञ्चमविभूषितम् ।
अक्षोभ्येति च स्वाहेति रमाद्यन्तं महामनुः ॥
स्वयम्-ऋषिश्च संप्रोक्तो विराट्छन्द उदीरितम् ।
अक्षोभ्यो देवता प्रोक्तस्त्रिमूर्त्तिर्नागरूपधृक् ॥
विनियोगस्तु नियतं पुरुषार्थचतुष्टये ।
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वसौभाग्यदायकम् ॥
सहस्रादित्यसंकाशं नागरूपधरं शुभम् ।
विद्युत्कोटिसमं वक्त्रं वह्निभास्वरलोचनम् ॥
सार्धत्रिवलयोपेतं जटाकोट्यग्रसंस्थितम् ।

महालावण्यसंयुक्तं सुरासुरनमस्कृतम् ॥
सूर्यविद्युत्समाभासं महामणिशिखोपरि ।
एतद्रूपं महाकायं देवैरपि सुपूजितम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

अक्षोभ्यं पूजयित्वाऽऽदौ तारां संपूजयेत् सुधीः ।

तथा ।

पुरश्चर्यादिकं चास्य तारिणीवत् समाचरेत् ।

इति ताराप्रकरणम् ।

अथ श्रीविद्या ।

तत्रादौ कामराजविद्या ( चन्द्रपीठे )

स्मरो भगं विन्दुमती लपरा वाग्भवं मतम् ।
शिवो जीवः स्मरः शम्भुर्लपरा कामकूटकम् ॥
भृगुः कामः क्षमा माया कामराजाभिधा मता ।

कूटत्रयस्य वाग्भवादिसंज्ञा च तत्रैवोक्ता ।

प्रथमं वाग्भवं कूटं द्वितीयं कामकूटकम् ।
तृतीयं शक्तिकूटं स्यात् कूटत्रयतनुर्मनुः ॥

अथ लोपामुद्राख्या विद्या( ज्ञानार्णवे )

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोपामुद्राभिधां पराम् ।
का॰राजाख्यविद्यायाः शक्तिं तुर्यां च सुन्दरीम् ॥
हित्वा मुखे शिवेन्द्राढ्या लोपामुद्रा प्रकाशिता ।

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवे एकारमीकारं च विहायादौ हकारसकारौ दद्यादित्यर्थः । इयमगस्त्योपासिता ।

अथ षोडशी (योगिनीतन्त्रे)

श्रीबीजमाया स्मरयोनिशक्ति-
स्तारं च माया कमलाऽथ विद्या ।
शक्त्यादिबीजैश्च विलोमतोक्त्या
श्रीषोडशीयं च शिवोपदिष्टा ॥

तन्त्रान्तरे ।

श्रीबीजं शक्तिबीजं च कामबीजं च वाग्भवम् ।
बालान्तसंस्थितं बीजं प्रणवं च ततः परम् ॥
शक्तिबीजं रमां चैव विद्यां च परमेश्वरि ।
लोपां वा कामराजं वा त्रिकूटामथ वा पराम् ॥
विन्यस्य प्रणवाद्यानि बीजानि पञ्च सुन्दरि ।
विपरीतक्रमेणैव विन्यसेत् षोडशीं पराम् ॥

( मायातन्त्रेऽपि )

लक्ष्मीः परा मदनयोनियुता च शक्ति-
स्तारः परा च कमलाऽप्यथ मूलविद्या ।
शक्त्यादिभिश्च विपरीततया प्रदिष्टा
श्रीमन्त्रराज उदितः परदेवतायाः ॥

( महाकालसंहितायाः )

अतः परतरा विद्या न भूता न भविष्यति ।
केनापि नैव शप्तेयं न च केनापि कीलिता ॥

( ज्ञानार्णवे )

वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
वर्णितुं नैव शक्येयं श्रीविद्या षोडशाक्षरी ॥
ब्रह्मविद्या स्वरूपा हि भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
एकोच्चारेण देवेशि वाजपेयस्य कोटयः ॥
अश्वमेधसहस्राणि प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ।
काश्यादितीर्थयात्राः स्युः सार्धकोटित्रयान्विताः ॥
तुलां नायान्ति देवेशि नात्र कार्या विचारणा ।
एकोच्चारेण गिरिजे किं पुनर्ब्रह्मकेवलम् ॥
षोडशार्णा महाविद्या न प्रकाश्या कदा चन ।

गोपितव्या त्वया भद्रे स्वयोनिरिव पार्वति ॥
अपि प्रियतमे देयं सुतदारधनादिकम् ।
राज्यं देयं शिरो देयं न देया षोडशाक्षरी ॥
सप्तलक्षं महाविद्यास्तन्त्रादौ कथिताः प्रिये ।
सारात् सारतरा चेयं महाविद्या सुगोपिता ॥

अथ ऋष्यादिन्यासस्तत्रैव ।

ऋषिरस्य महेशानि दक्षिणामूर्त्तिरव्ययः ।
पङ्क्तिश्छन्दः समाख्यातं देवी त्रिपुरसुन्दरी ॥
वाग्भवं बीजमित्युक्तं शक्तिस्तु शक्तिकूटकम् ।
कामराजः कीलकं स्यादृष्यादिन्यास ईरितः ॥

वाग्भवादीनां बीजादिरूपत्वे हेतुरुक्तो ( दक्षिणामूर्त्तिसंहितायाम् )

निःसरन्ति महामन्त्रा महाग्नेर्विस्फुलिङ्गवत् ।
तथैव मातृका वर्णा निःसृता वाग्भवाः प्रिये ॥
अत एवास्य देवस्य वाग्भवं बीजमुच्यते ।
योषित् पुरुषरूपेण स्फुरन्ती विश्वमातृका ॥
महामोहेन देवेशि कीलयन्ती जगत्त्रयम् ।
अतस्तत्कीलकं देवि तेन सौभाग्यगर्भिता ॥
पालयन्ती जगत् सर्वं तेनेयं शक्तिरुच्यते ।

अथ कराङ्गन्यासस्तन्त्रान्तरे ।

अँ आँ सौँरिति प्रोक्तं बीजं त्रिविधमुत्तमम् ।
एतद्बीजं द्विरावृत्य मध्यमाद्यङ्गुलीषु च ॥
शुद्धिं करस्य कुर्वीत तलयोः पृष्ठयोरपि ।
चतुर्थी नतिसंयुक्ता नाममन्त्रैः पृथक् पृथक् ॥
मध्यमाऽनामिका चैव कनिष्ठाऽङ्गुष्ठतर्जनी ।

क्रमेण नाम चाख्यातमङ्गुलीनां महेश्वरि ॥

(नवरत्नेश्वरे)

सर्वज्ञता नित्यलुतृप्तता च अनादिबोधश्च स्वतन्त्रता च ।

अलुप्तशक्तित्वमनन्तता च षडाहुरङ्गानि शिवे शिवाद्याः ॥

अत्र बहुविधन्यासजालं (ज्ञानार्णवादौ) द्रष्टव्यम् ।

अथ ध्यानम् ।

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।

पाशाङ्कुशधनुर्बाणधारयन्तीं शिवां श्रये ॥

(सिद्धान्तसंग्रहे महाकालसंहितायां) च ।

उद्यच्चन्द्रोदयक्षुब्धरक्तपीयूषवारिधेः ।

मध्ये हेममयी भूमी रत्नमाणिक्यमण्डिता ॥

तन्मध्ये नन्दनोद्यानं मदनोन्मादनं महत् ।

नित्याभ्युदितपूर्णेन्दुज्योत्स्नाजालविराजितम् ॥

सदा सह वसन्तेन कामदेवेन रक्षितम् ।

कदम्बचूतपुन्नागनागकेशरचम्पकैः ॥

वकुलैः पारिजातैश्च सर्वर्त्तुकुसुमोज्ज्वलैः ।

झङ्कारमुखरैर्भृङ्गैः कूजद्भिः कोकिलैः शुकैः ।

नानावर्णैरथान्यैश्च द्विजसङ्घैर्निषेवितम् ।

शिखिकारण्डहंसाद्यैर्नानापक्षिभिरावृतम् ॥

नानापुष्पलताकीर्णैः शोभितं वृक्षखण्डकैः ।

पर्यन्तदीर्घिकोत्फुल्लकमलोत्पलसम्भवैः ॥

रजोभिर्धूसरैः सम्यक् सेवितं मलयानिलैः ।

ध्यात्वैवं नन्दनोद्यानं तदन्तः प्राङ्गणं स्मरेत् ॥

शुद्धकाञ्चनसंकाशवसुधाभिरलङ्कृतम् ।

प्राङ्गणं चिन्तयित्वेत्थं सुरसिद्धनिषेवितम् ॥

तन्मध्ये मण्डपं ध्यायेद्व्याप्तब्रह्माण्डमण्डलम् ।
सहस्रादित्यसंकाशं चतुरस्रं सुशोभितम् ॥
रत्नतेजःप्रभापुञ्जपिञ्जरीकृतदिङ्मुखम् ।
मध्यस्तम्भविनिर्मुक्तं कोणस्तम्भसमन्वितम् ॥
महामाणिक्यवैदूर्यरत्नकाञ्चनभूषितम् ।
मुक्तादामवितानाढ्यं रत्नसोपानमण्डितम् ॥
मन्दवायुसमाक्रान्तं गन्धधूपतरङ्गितम् ।
रत्नचामरघण्टादिवितानैरुपशोभितम् ॥
जातीचम्पकपुन्नागकेतकीमल्लिकादिभिः ।
रक्तोत्पलसिताम्भोजमाधवीभिः सुपुष्पकैः ॥
बद्धाभिश्चित्रमालाभिः सर्वत्र समलङ्कृतम् ।
तिर्यगूर्ध्वलसद्रक्तपुत्तलीकोटिमण्डितम् ॥
नानारत्नादिभिर्दिव्यैर्निर्मितं विश्वकर्मणा ।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् ॥
स्वर्णादिरत्नभूमिं च वालुकां काञ्चनप्रभाम् ।
उद्यदादित्यसंकाशं व्याप्तब्रह्माण्डमण्डपम् ॥
शतयोजनविस्तीर्णं ज्योतिर्मन्दिरमुत्तमम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारमण्डितम् ॥
रत्नोपक्लृप्तसंशोभिकपाटाष्टकसंयुतम् ।
नवरत्नसमाक्लृप्ततुङ्गगोपुरतोरणम् ॥
हेमदण्डशिखालम्बिध्वजावलिपरिष्कृतम् ।
मध्यकोणस्थितस्तम्भनवरत्नसमन्वितम् ॥
महामाणिक्यवैदूर्यरत्नचामरशोभितम् ।
कल्पवृक्षे गिरेः पार्श्वे छत्रं तन्मण्डपोपरि ॥

सुवर्णसूत्रै रचितं तन्मध्ये रत्नमण्डपम् ।
तन्मध्ये स्फुरितं ध्यायेत् त्रिशृङ्गं ज्योतिरुत्तमम् ॥
तस्य मध्ये महाचक्रं पीयूषपरिपूरितम् ।
रत्नसिंहासनं तस्य। वेद्या मध्ये स्मरेच्छुभम् ॥
विरिञ्चिविष्णुरुद्रेशरूपपादचतुष्टयम् ।
सदाशिवमयं साक्षात् तस्मिन् परशिवात्मकम् ॥
पुष्पपर्यङ्कतन्मध्ये श्रीमदुद्यानपीठके ।
पर्यङ्कबन्धविलसत्स्वस्तिकासनशालिनीम् ॥
ध्यायेत् परशिवाङ्कस्थां पद्ममध्योज्ज्वलाकृतिम् ।
त्रिपुरां सुन्दरीं देवीं बालार्ककिरणारुणाम् ॥
जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमोपमाम् ।
पद्मरागप्रतीकाशां कुङ्कुमारुणसन्निभाम् ॥
स्फुरन्मुकुटमाणिक्यकिङ्किणीजालमण्डिताम् ।
कालालिकुलसंकाशकुटिलालकपल्लवाम् ॥
प्रत्यगारुणसंकाशवदनाम्भोजमण्डिताम् ।
किञ्चिदर्धेन्दुकुटिलललाटमृदुपट्टिकाम् ॥
पिनाकधनुराकारभ्रूलतां परमेश्वरीम् ।
आनन्दमुदितोल्लासलीलां दोलितलोचनाम् ॥
स्फुरन्मयूखसङ्घातविलसद्धेमकुण्डलाम् ।
स्वगण्डमण्डलाभोगजितेन्द्वमृतमण्डलाम् ॥
विश्वकर्मविनिर्माणसूत्रविस्पष्टनासिकाम् ।
ताम्रविद्रुमबिम्बाभरक्तोष्ठीममृतोपमाम् ॥
दाडिमीबीजपङ्क्त्याभदन्तपङ्क्तिविराजिताम् ।
स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्य[illegible]ाम् ॥

अनौपम्यगुणोपेतचिबुकोद्देशशोभिताम् ।
कम्बुग्रीवां महादेवीं मृणालसदृशैर्भुजैः ॥
रक्तोत्पलदलाकारसुकुमारकरां भुजाम् ।
कराम्बुजनखज्योतिर्विद्योतितनभस्तलाम् ॥
मुक्ताहारलतोपेतसमुन्नतपयोधराम् ।
त्रिवलीवलयामुक्तमध्यदेशसुशोभिताम् ॥
लावण्यसरिदावर्त्तनिम्ननाभिविभूषिताम् ।
अनर्घ्यरत्नघटितकाञ्चीयुतनितम्बिनीम् ॥
नितम्बबिम्बद्विरदरोमराजिवराङ्कुशाम् ।
कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमीश्वरीम् ॥
लावण्यकुसुमाकारजानुमण्डलबन्धुराम् ।
लावण्यकदलीतुल्यजङ्घायुगलमण्डिताम् ॥
गूढगुल्फपदद्वन्द्वप्रपदाजितकच्छपाम् ।
तनुं दीर्घाङ्गुलोच्छन्ननखराजिविराजिताम् ॥
ब्रह्मविष्णुशिरोरत्ननिघृष्टचरणाम्बुजाम् ।
शीतांशुशतसंकाशकान्तिसंतानहासिनीम् ॥
लौहित्यजितसिन्दूरजपादाडिमरागिणीम् ।
रक्तवस्त्रपरीधानां पाशाङ्कुशकरोद्यताम् ॥
रक्तपद्मनिविष्टां तु रक्ताभरणभूषिताम् ।
जगदाह्लादजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् ॥
चतुर्भुजां त्रिनेत्रां तु पञ्चबाणधनुर्धराम् ।
कर्पूरशकलोन्मिश्रताम्बूलपूरिताननाम् ॥
महामृगमदोद्दामकुङ्कुमारुणविग्रहाम् ।
सर्वशृङ्गारवेशाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम् ॥

जगदानन्दजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् ।
जगत्कर्षणकर्त्रीं जगत्कारणरूपिणीम् ॥
सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां सर्वशक्तिमयीं भजे ।

अथ दीपिनीविद्या तत्रैव ।

वाङ्मायाकमलाबीजं वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ।
तारं लक्ष्मीं च वाग्बीजं मन्मथं भुवनेश्वरीम् ॥
तज्जप्त्वा च ततः पश्चाद्वाग्भवाख्यं समुच्चरेत् ।
प्रणवं भुवनेशानीं रमां कामं च वाग्भवम् ॥
कामराजं ततो जप्त्वा त्रैलोक्यक्षोभकारकम् ।
ॐकारं चापि वाग्बीजं रमां मन्मथमायया ॥
स्वप्नावतीं महादेवि जपेत् तत्र समाहितः ।
प्रणवं चाधरं कामं रमां च भुवनेश्वरीम् ॥
मधुमतीं ततो जप्त्वा मायाश्रीकूर्चबीजकम् ।
प्रणवाद्यं च देवेशि हंसबीजपुटीकृतम् ॥
एतद्बीजं समुच्चार्य शक्तिकूटं ततो जपेत् ।

जपनियमस्तु ।

जपेदादौ जपेत् पश्चात् सप्त वाराननुक्रमात् ।
कामराजादिबीजानां दीपनं चैव कारयेत् ॥

अथ पुरश्चरणविधिः (वामकेश्वरतन्त्रे)

तत्र स्थित्वा जपेल्लक्षं साक्षाद्देवीस्वरूपधृक् ।
किंशुकैर्हवनं कुर्याद्दशांशं च वरानने ॥
कुसुम्भकुसुमैर्वाऽपि मधुरत्रयमिश्रितैः ।

(सिद्धान्तसारेऽपि)

लक्षमात्रं जपेद्विद्यां हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
होमं कुर्याद्दशांशेन किंशुकैर्मधुराप्लुतैः ॥

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् कर्त्तुमर्हति—इति ।

अथ त्रिपुरभैरवमन्त्रः (वामकेश्वरे)

माया लक्ष्मीस्तथा हंसः प्रासादबीजमेव च ।
वह्निजायान्तको मन्त्रो भवेत् त्रैपुरभैरवः ॥
षडङ्गमूलमन्त्रेण वलिपूजादिकं तथा ।

अथ ध्यानम् ।

एकवक्त्रं त्रिनयनं चतुर्बाहुसमन्वितम् ।
दक्षिणे चाङ्कुशं खड्गं वामे खेटकपाशकौ ॥
धारयन्तं रक्तवर्णं वृषासनगतं विभुम् ।
ऊर्ध्वकेशं हारहारं कपालमालयाऽन्वितम् ॥
एवंविधं महादेवि ध्यायेत् त्रिपुरभैरवम् ।

अस्य पुरश्चरणं षोडशीपुरश्चरणसमानम् ।

अथ बालामन्त्रः (त्रिपुरासारसमुच्चये)

अथ त्रिलोकार्च्चितशासनाया
वक्ष्यामि बीजत्रयमम्बिकायाः ।
गोप्तव्यमेतत् कुलधर्मविद्भि-
रमुष्य हेतोर्निजसिद्धये च ॥
कान्तादिभूतपदगं कगतार्धचन्द्रं
दन्तान्तपूर्वजलधिस्थितवर्णयुक्तम् ।
एतज्जपं नरवरो भुवि वाग्भवाख्यं
वाचां सुधारसमुचां लभते स सिद्धिम् ॥
कान्तान्तं कुलपूर्वपञ्चमयुतं नेत्रान्तदण्डान्वितं
कामाख्यं गदितं जपान्मनुरयं साक्षाज्जगत्क्षोभकृत् ।
दन्तान्तेन युतं सदण्डिसकलं संमोहनाख्यं कुलं

सिध्यत्यस्य गुणाष्टकं खचरतासिद्धिश्च नित्यं जपात् ॥

ऋषिर्दक्षिणामूर्त्तिसंज्ञो महात्मा
भवेच्छन्द एतस्य मन्त्रस्य पङ्क्तिः ।
सरस्वत्यचिन्त्यप्रभावा प्रदिष्टा
बुधैर्देवता देववृन्दार्च्चिताङ्घ्रिः ॥

अमुष्य मन्त्रस्य रदान्तयुक्तं बीजं सदण्डं नकुलीशपूर्वम् ।
शक्तिस्तु सा खण्डलकर्णपूर्वसहार्धजैवातृकमाननान्तम् ॥

(मेरुतन्त्रे तु)

बालाबीजं वाग्भवं स्यात् तार्त्तीयं शक्तिरुच्यते ।
कीलकं कामराजः स्याद्द्विरावृत्या षडङ्गकम्—इत्युक्तम् ॥

(त्रिपुरासारसमुच्चये)

वर्णः शुक्लो मुनिभिस्त्रिभुवनमहितस्य मन्त्रराजस्य ।
आगमपारगमतिभिर्गान्धारोऽस्य स्वरो गदितः ॥

विद्यामूलोत्पत्तिरेषा मयोक्ता
ज्ञातव्येयं सर्वथा सिद्धिकामैः ।
देव्या शप्ता येन विद्येयमाद्या
पूर्वं तेन प्राणहीनाऽभवत् सा ॥

ज्ञातव्येत्यनेन तु जप्तव्येति सूचितम् ।

देव्या शप्तेत्यनेन च निषेधहेतुर्दर्शितः । शापनिर्मुक्तिप्रकारस्तु तत्रैवोक्तः ।

शिवशक्तिबीजमत एव शम्भुना
निहितं तयोरुपरि पूर्वबीजयोः ।
अकुलं कुलोपरि च मध्यसाधरे
दहनं ततः प्रभृति सोर्जिताऽभवत् ॥

संज्ञाभेदमाह ।

भैरवीयमुदिता कुलपूर्वा देशिकैर्यदि भवेत् कुलपूर्वा ।

सैव शीघ्रफलदा भुवि विद्येत्युच्यते पशुजनेष्वतिगोप्या ॥

अकुलं हकारस्तत्पूर्वा चेद्भैरवी । कुलं सकारस्तत्पूर्वा चेद्विद्येत्युच्यत इत्यर्थः आद्यन्तबीजयोर्विन्दुयोजाभावाद्वक्ष्यमाणत्रिपुरभैरवीविद्यावैलक्षण्यमस्या बोद्धव्यम् ।

अस्या ध्यानमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

अभयं पुस्तकं बालां वरं च दधतीं करैः ।
अरुणामरुणाब्जस्थां रक्तवस्त्रां द्विजेशकाम् ॥

तन्त्रान्तरे तु ।

संस्मरेत् त्रिपुरां बालां शरच्चन्द्रसमप्रभाम्-इति ।

शुक्लवर्णेयमुक्ता ।

(त्रिपुरासारसमुच्चये)

पाशाङ्कुशाभयवरोद्यतपाणिपद्माम्...इत्यायुधविशेष उक्तः ।

अथ पुरश्चरणं (ज्ञानार्णवे)

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं हवनं चरेत् ।
तर्पणादि ततः कुर्यात् सर्वसौभाग्यभाग्भवेत्-इति ॥

इति श्रीविद्याप्रकरणम् ।

अथ भुवनेश्वरीविद्या (शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये जगद्धात्रीमधुना भुवनेश्वरीम् ।
ब्रह्मादयोऽपि यां ज्ञात्वा लेभिरे श्रियमूर्जिताम् ॥
नकुलीशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्धचन्द्रवान् ।
बीजं तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ॥
ऋषिः शक्तिर्भवेच्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
कथिता सुरसङ्घेन सेविता भुवनेश्वरी ॥
षड्दीर्घयुक्तबीजेन कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यदिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजेद्भुवनेशीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

प्रजपेन्मन्त्रविन्मन्त्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानतः ।
त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा बीजत्रयात्मकम् ।
मन्त्रं समुद्धरेन्मन्त्री त्रिवर्गफलसाधनम् ॥
षड्दीर्घभाजा मध्येन वाग्भवाद्येन कल्पयेत् ।
षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि मन्त्रवित् ॥

अथ ध्यानम् ।

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्-
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।
पाणिभ्यां मणिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थसव्यचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रविलक्षं जपेन्मन्त्रं पायसैर्मधुराप्लुतैः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री पीठे प्रागीरिते यजेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्बीजपुटिता माया विद्येयं त्र्यक्षरी मता ।
मध्येन दीर्घयुक्तेन वाक्पुटेन प्रकल्पयेत् ॥
अङ्गानि जातियुक्तानि क्रमेण मनुवित्तमः ।

अथ ध्यानम् ।

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं
रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं संबिभ्रतीं शाश्वतीम् ।
मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीं
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पालाशपुष्पैः स्वाद्वक्तैः पुष्पैर्वा राजवृक्षकैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अनन्तो विन्दुसंयुक्तो मायाब्रह्माग्नितारवान् ।
पाशादिस्त्र्यक्षरो मन्त्रः सर्ववश्यफलप्रदः ॥
ऋष्याद्याः पूर्वमुक्ताः स्युर्बीजेनाङ्गक्रिया मता ।

अथ ध्यानम् ।

वराङ्कुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम् ।
बालार्ककोटिप्रतिमां त्रिनेत्रां भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हविष्यभुग्जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
षट्सहस्रं प्रजुहुयाज्जपान्ते मन्त्रवित्तमः ॥
दधिक्षौद्रघृताक्ताभिः समिद्भिः क्षीरभूरुहाम् ।
तत्सङ्ख्यया तिलैः शुद्धैः पयोऽक्तैर्जुहुयात् ततः ॥

अस्याः पुमान्महादेवः । तन्मन्त्रः पञ्चाक्षरस्तत्प्रकरण एवोक्तः ।

इति भुवनेश्वरीविद्याप्रकरणम् ।

अथ भैरवीविद्या ।

तत्रादौ त्रिपुरभैरवीविद्या प्रोक्ता (शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये परां विद्यां त्रिपुरामतिगोपिताम् ।
यां ज्ञात्वा सिद्धसङ्घानामधिपो जायते नरः ॥
वियद्भृगुहुताशस्थो भौतिको विन्दुशेखरः ।
वियत् तदादिकेन्द्राग्निस्थितं वामाक्षिविन्दुमत् ॥
आकाशभृगुवह्निस्थो मनुः सर्गेन्दुखण्डवान् ।
वाग्भवं प्रथमं बीजं कामबीजं द्वितीयकम् ॥

तृतीयं शक्तिबीजाख्यं त्रिभिर्बीजैरितीरिता ।
पञ्चकूटात्मिका विद्या वेद्या त्रैपुरभैरवी ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिश्छन्दः पङ्क्तिः समीरितम् ।
देवता देशिकैरुक्ता देवी त्रिपुरभैरवी ॥

तथा ।

षड्दीर्घयुक्तेनाद्येन बीजेनाङ्गक्रिया मता ।

न्यासान्तराणि विस्तरभयादुपेक्षितानि पुरश्चरणस्यैवात्र निरूपणीयत्वात् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दीक्षां प्राप्य जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
पुष्पैर्भानुसहस्राणि जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षजैः ॥
त्रिमध्वक्तैः प्रसूनैर्वा करवीरसमुद्भवैः ।

तत्त्वलक्षं लक्षत्रयम् ।

अथ चैतन्यभैरवीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

चैतन्यभैरवीमन्त्रस्त्र्यक्षरः कथ्यतेऽधुना ।
सहावैकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥
सकला ह्रीँ समायुक्ता द्वितीयं बीजमुच्यते ।
सहारा औसमायुक्ता विसर्गान्तास्तृतीयकम् ॥

अत्र त्रिभिर्बीजैर्द्विरावृत्त्या षडङ्गन्यासः कार्यः ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम् ।
मुकुटोर्ध्वलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बराञ्चिताम् ॥

पाशाङ्कुशधरां नित्यां वामहस्तकपालिनीम् ।
वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम् ॥
एवं ध्यात्वा यजेद्देवीं पूर्वसिंहासने स्थिताम् ।
पुरश्चर्यादिकं प्राग्वत् प्रयोगांश्चापि साधयेत ॥

प्राग्वदिति त्रिपुरभैरवीवत् ।

अथ भुवनेश्वरभैरवीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भुवनेश्वरभैरवीम् ।
हसावैकारसंयुक्तौ प्रथमं बीजमीरितम् ॥
हसकला ह्रीँ समेता द्वितीयं बीजमुच्यते ।
हसावौकारसंयुक्तौ विसर्गान्तं तृतीयकम् ॥
षड्दीर्घान्वितमध्येन बीजेनोक्तं षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमप्रभाम् ।
चन्द्ररेखाजटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससम् ॥
नानालङ्कारशुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
पाशाङ्कुशवराभीतीर्दधानां च शिवां श्रये ॥
चैतन्यभैरवीवत् स्याद्यन्त्रोक्तमिहार्थवत् ।

अस्याः पुरश्चरणं तु त्रिपुरभैरवीपुरश्चरणवद्बोध्यम् ।

अथ कमलेश्वरीभैरवी तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भैरवीं कमलेश्वरीम् ।
हसस्थाने सहेत्युक्त्वा सर्वं मन्त्रादि पूर्ववत् ॥
राज्ञा ज्ञाता ततः शप्ता तुहिनागेऽभवन्नदी ।
त्यक्तस्तया वाममार्गो राजभीत्या तु मत्कृते ॥
यतो लब्धं तया दुःखं कलौ ख्यातिं गमिष्यति ।
प्रनष्टेषु च देवेषु प्रत्यक्षेयं भविष्यति ॥

अवर्णाश्चापि वर्णाश्च भविष्यन्ति वरप्रदाः ।
त्यक्त्वा मपञ्चकं पूजां कृत्वा ये जपतत्पराः ॥
अस्यास्तीरे पुरश्चर्या नवकात् संप्रसीदति ।
भुवनेशी भैरवी तु कृत्वा रूपान्तरं मम ॥
कार्यार्थं बहवः शिष्याः कौलिका वामिनः कृताः ।
तस्या ध्यानाद्यर्च्चनादि प्राग्वद्दक्षिणमार्गतः ॥

अथ संपत्प्रदाभैरवी (ज्ञानार्णवे)

यथाऽसौ त्रिपुरा बाला तथा त्रिपुरभैरवी ।
संपत्प्रदा नाम तस्याः शृणु निर्मलमानसे ॥
शिवश्चन्द्रो वह्निसंस्थो वाग्भवं तदनन्तरम् ।
कामबीजं तथा देवि शिवचन्द्रान्वितं ततः ॥
पृथ्वीबीजं तु वह्न्याढ्यं तार्त्तीयं शृणु वल्लभे ।
शक्तिबीजे महेशानि शिववह्नी नियोजयेत् ॥
कुमार्याः परमेशानि हित्वा सर्गं तु वैन्दवम् ।
त्रिपुराभैरवी देवी महासंपत्प्रदा प्रिये ॥

त्रिपुरभैरवी विसर्गरहिता संपत्प्रदा भवति ।

न्यासपूजादिकं सर्वं त्रिपुराभैरवीसमम् ।

ध्यानं यथा ।

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम् ।
किरीटरत्नविलसच्चित्रचित्रितमौक्तिकाम् ॥
गलद्रुधिरपङ्काढ्यमुण्डमालाविराजिताम् ।
नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ॥
मुक्ताहारलताराजत्पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ॥

पुस्तकं चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम् ।
वरदानरतां नित्यां महासंपत्प्रदां स्मरेत् ॥

अस्याः पुरश्चरणमपि पूर्ववद्बोध्यम् ।

अथ कौलेशभैरवी तत्रैव ।

संपत्प्रदाभैरवीवद्विद्धि कौलेशभैरवीम् ।
हसराद्यैव देवेशि त्रिषु बीजेषु पार्वति ॥
इयं तु सहराद्या स्याद्ध्यानपूजादिकं तथा ।

त्रिपुरभैरवीवदिति शेषः । आदिपदात् पुरश्चरणस्यापि संग्रहः ।

अथ कामेश्वरभैरवी तत्रैव ।

कामेश्वरी च रुद्राणां पूर्वसिंहासने स्थिता ।
एतस्या एव विद्याया बीजद्वयमुदाहृतम् ॥
तदन्ते परमेशानि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
एतस्या एव तार्त्तीयं रुद्राणां परमेश्वरि ॥
ध्यानपूजादिकं देवि चैतन्यावत् समीरितम् ।

एवं पुरश्चरणमपि ।

अथ षट्कूटाभैरवी (ज्ञानार्णवे)

डाकिनीराकिनीबीजे लाकिनीकाकिनीयुगम् ।
शाकिनीहाकिनीबीजे आहृत्य सुरसुन्दरि ॥
आद्यमैकारसंयुक्तमन्यदौकारमण्डितम् ।
शक्रस्वरान्वितं देवि तार्त्तीयं बीजमालिखेत् ॥
विन्दुनादकलाक्रान्तं तृतीयं शैलसम्भवे ।
द्विरावृत्त्या षडङ्गानि विधाय परमेश्वरि ॥

पुरश्चरणं तु पूर्ववत् ।

अथ नित्याभैरवी तत्रैव ।

एतस्या एव विद्यायाः षडर्णाः क्रमशः स्थिताः ।

विपरीतान् वद प्रौढे विद्येयं भोगमोक्षदा ॥

न्यासपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ।

अथ रुद्रभैरवी तत्रैव ।

शिवश्चन्द्रौ मादनान्तं पान्तं वह्निसमन्वितम् ।

शक्तिभिन्नं विन्दुनादकलाढ्यं वाग्भवं प्रिये ॥

संपत्प्रदाया भैरव्याः कामबीजं तदेव हि ।

सदाशिवस्य बीजं तु महासिंहासनस्य च ॥

सदाशिवबीजं प्रेतबीजम्

एषा विद्या महेशानि वर्णितुं नैव शक्यते ।

ऋष्यादिन्यासस्त्रिपुरभैरवीवत् ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम् ।

नानालङ्कारशुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम् ॥

वमद्रुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससम् ।

त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च ॥

पिनाकं च शरान् देवीं पाशाङ्कुशयुगं क्रमात् ।

पुस्तकं चाक्षमालां च शिवसिंहासनस्थिताम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

न्यासपूजादिकं सर्वं त्रिपुराभैरवीसमम् ।

एवं पुरश्चरणमपि । अत्र भैरवो वटुकस्तन्मन्त्रपुरश्चरणं शिवप्रकरणे प्रोक्तम् ॥

इति भैरवीप्रकरणम् ।

अथ छिन्नमस्ताविद्या ।

( विश्वसारे यामले च )

प्रचण्डचण्डिकां वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम् ।

यस्याः प्रसादमात्रेण शिव एव भवेन्नरः ॥

अपुत्रो लभते पुत्रमधनो धनमाप्नुयात् ।

कवित्वं च सुपाण्डित्यं लभते नात्र संशयः ॥

मन्त्रोद्धारमाह ।

लक्ष्मीं लज्जां ततो मायां मात्राद्वादशिकामथ ।
वज्रवैरोचनीये च माये फट्स्वाहया युते ॥
लक्ष्मीबीजं यदाऽऽद्यं स्यात् तदा श्रीः सर्वतोमुखी ।
लज्जाबीजेन चाद्येन वश्यतां यान्ति योषितः ॥
मायाबीजेन चाद्येन महापातकनाशनम् ।
मात्राद्वादशिकाबीजमाद्यं स्यान्मुक्तिदायकम् ॥

अत्र लज्जापदं कामबीजपरम् ।

तथा चोक्तम् ।

अत्र लज्जापदं देवि कामबीजपरं भवेत् ।
महाकालमतं प्रोक्तं मन्त्रोद्धारं शुभावहम्-इति ॥

मन्त्रोद्धारश्लोकस्थलज्जापदस्य तु मायाबीजपरत्वेऽपि न क्षतिः ।

श्रीबीजानन्तरं क्व चित् कामबीजस्य क्व चिन्मायाद्वयस्य च दर्शनात् । मायापदस्य क्व चित् कूर्चपरत्वमपि दृश्यते ।

सबिन्दुवामश्रुतियुग्वियन्माया प्रकीर्त्तिता-इति ।

मात्राद्वादशिका वाग्भवम् ।

(विश्वसारे)

ताराद्या षोडशी चान्या भवेत् सप्तदशाक्षरी ।
एषा विद्या महाविद्या भुक्तिमुक्तिकरी सदा ॥

तदुक्तं (मेरुतन्त्रे)

प्रणवं च रमां लज्जां बीजद्वन्द्वं च वाग्भवम् ।
वज्रवैरोचनीये ह्रीँ ह्रीँ फट्स्वाहा घनाक्षरः ॥
भैरवोऽस्य मुनिः प्रोक्तः सम्राट्छन्द उदाहृतम् ।
छिन्नमस्त भवेद्देवी वाममार्गेण सिद्धिदा ॥

(यामलादौ)

आसामृषिर्भैरवोऽहं नाम्ना तु क्रोधभूपतिः ।
सम्राट्छन्दो देवता च छिन्नमस्ता प्रकीर्त्तिता ॥
मायाबीजं स्वाहा शक्तिः कथिता ब्रह्मयोनिना ।
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥

(मेरौ)

आँ खड्गाय हृदाख्यातमीँ सुखड्गाय मस्तकम् ।
ऊँ वज्राय शिखा प्रोक्ता ऐँ पाशाय तनुच्छदम् ॥
औमङ्कुशाय नेत्रं स्यादश्वासुरक्षयाय च ।
हूँ हूँ नवार्णोऽस्त्रमत्रः सर्वे स्युः प्रणवादिकाः ॥
स्वाहान्ताः सर्व एवैते ततो ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानं यथा ।

भास्वन्मण्डमध्यस्थां विपरीतरतस्थितौ ।
रतिकामौ समारूढां विकीर्णसकलालकाम् ॥
वामे करे निजशिरश्छिन्नं संदधतीं पुनः ।
गलान्निर्गतमस्त्रं च पिवन्तीं तन्मुखेन च ॥
डाकिनीवर्णिनीभ्यां च सखीभ्यां परिवारिताम् ।

अथ मन्त्रान्तरम् (महाकालसंहितायाम्)

अथातश्छिन्नमस्ताया मन्त्रं ते व्याहराम्यहम् ।
जिघृक्षयाऽपि यस्य स्युः साधकस्याष्ट सिद्धयः ॥
नातः परतरा काचिदुग्रा देवी भविष्यति ।
तस्मादसक्तैर्मनुजैर्न ग्राह्येयं कथं चन ॥
सिद्धिर्वा मृत्युरपि वा द्वयोरेकतरं भवेत् ।
प्रणवं च रमाबीजं लज्जां वाग्भवमेव च ॥
वज्रवैरोचनीये च इत्येवं तत उद्धरेत् ।

क्रोधद्वयं ततश्चास्त्रं स्वाहान्तः षोडशाक्षरः ॥

अस्य न्यासादिकं पूर्ववत् कार्यम् ।

अथ ध्यानम्

ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि तत्र चेतो निवेशय ।
स्वनाभौ नीरजं ध्यायेत् शुद्धं विकशितं सितम् ॥
तत्पद्मकोशमध्ये तु मण्डलं चण्डरोचिषः ।
जपाकुसुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम् ॥
रजःसत्त्वतमोरेखायोनिमण्डलसन्निभम् ।
मध्ये तस्या महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ॥
छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम् ।
प्रसारितमुखीं भीमां लेलिहानोग्रजिह्विकाम् ॥
पिबन्तीं रक्तधारां च निजकण्ठसमुद्भवाम् ।
विकीर्णकेशपाशां तां नानापुष्पसमन्विताम् ॥
दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।
दिगम्बरां महाघोरां प्रत्यालीढपदस्थिताम् ॥
अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधराम् ॥
नागाङ्गदां नागकाञ्चीं नागनूपुरसंयुताम् ।
नागकुण्डलसंयुक्तामष्टनागसमन्विताम् ॥
विपरीतरतासक्तरतिकामोपरिस्थिताम् ।
डाकिनीवर्णिनीयुक्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
दक्षिणे वर्णिनीं ध्यायेद्वामपार्श्वे तु डाकिनीम् ।
वर्णिनीं लोहितश्यामां मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ॥
कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ।

देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम् ॥
अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम्।
डाकिनीं वामपार्श्वे तु कल्पान्तज्वलनोपमाम्* ॥
विद्युच्छटाभनयनां दन्तपङ्क्तिवलाकिनीम्।
दंष्ट्राकरालवदनां पीनोत्तुङ्गपयोधराम् ॥
महाघोरां महादेवीं मुक्तकेशीं दिगम्बराम्।
लम्बोदरीं कालरात्रीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥
लेलिहानमहाजिह्वां मुण्डमालाविभूषिताम्।
कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम्।
करस्थितकपालेन भीषणेनातिभीषणाम् ॥
आभ्यां निषेव्यमाणां तु ध्यायेद्देवीं विचक्षणः।
दुर्निरीक्ष्यां चेतसाऽपि सर्वकामफलप्रदाम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (यामले)

भुवनेशीं कामबीजं कूर्चबीजं च वाग्भवम्।
भुवनेशीं कूर्चबीजं वाग्भवं तदनन्तरम् ॥
वज्रवैरोचनीये च हुँ फट् स्वाहा ततः परम्।

मन्त्रान्तरम्।

हृल्लेखावाग्भवं कूर्चं वाग्भवं कूर्चमेव च।
अष्टान्ता छिन्नमस्ता या महाविद्या प्रकीर्त्तिता ॥
यस्याश्च सदृशी विद्या जगत्स्वपि न विद्यते।
षड्वर्णोऽयं मनुः साक्षान्मोक्षदो नात्र संशयः ॥

एतदुभयस्य ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासः पूर्ववत् कार्यः।

---

* जलदोपमामिति पाठः।

ध्याने विशेषो यथा ।

अस्या ध्यानमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने ।

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिबन्तीं मुदा ।
नागाबद्धशिरोमणित्रिनयनां हृद्युत्पलालङ्कृतां
रत्यासक्तमनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जपासन्निभाम् ॥
दक्षे चातिसिता विमुक्तचिकुरा कर्त्री तथा खर्परं
हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नाऽपि सा वर्णिनी ।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्ती मुदा
नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया तथा सा सुरैः ॥
वामे कृष्णतनुस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं
प्रत्यालीढपदा कबन्धविगलद्रक्तं पिबन्ती मुदा ।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी
शक्तिः साऽपि परात् परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वज्रवैरोचनीये च कूर्चयुग्मं सफट् ठठः ।
ताराद्यैषा महाविद्या सर्वतेजोऽपहारिणी ॥
न्यासध्यानादिकं सर्वं षोडशीवत् समाचरेत् ।

मन्त्रान्तरम् ।

वियच्छ्रोत्रयुतं विन्दुनादयुक्तं ततः प्रिये ।
एकाक्षरी महाविद्या त्रैलोक्यवशकारिणी ॥
द्विठान्तैषा महाविद्या त्रैलोक्यमोहकारिणी ।
ताराद्या च भवत्येषा चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
न्यासध्यानादिकं सर्वं पूर्ववत् परिकीर्त्तितम् ।

अथ पुरश्चरणं (विश्वसारे)

लक्षमेकं जपं कुर्यात् पुरश्चरणकर्मणि ।
महाविद्याविषये च जपं लक्षप्रमाणकम् ॥
सर्वत्र सर्वतन्त्रेषु कथितं पद्मयोनिना ।

(रुद्रयामलेऽपि)

पुरश्चर्यां जपेल्लक्षं दशांशं जुहुयात् ततः ।
घृताक्तैर्विल्वकाष्ठैश्च होमकर्म समाचरेत् ॥
उदुम्बरसमिद्भिर्वा पालाशैर्वा समाचरेत् ।
अपामार्गसमिद्भिर्वा* होतव्यं मन्त्रसिद्धये ॥

(यामलान्तरेऽपि)

देवीं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षसङ्ख्यं हविष्यभुक् ।
जुहुयात् तद्दशांशेन विल्वकाष्ठैर्घृतप्लुतैः ॥

(वाराहीतन्त्रे तु)

शून्यागारे श्मशाने च वृषशून्ये शिवालये ।
त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं ततः सिद्धिर्भवेद्ध्रुवम्—इत्युक्तम् ॥

(गन्धर्वतन्त्रेऽपि)

दिवसे ब्रह्मचर्येण रात्रौ तु स्त्रीसहायवान् ।
मपञ्चकं पुरस्कृत्य महाशङ्खाक्षमालया ॥
जपेल्लक्षत्रयं देवि युगानुरूपतः कलौ ।
शतसाहस्रकं चान्यज्जपेच्छ्रद्धापरो नरः ॥
समाप्ते च त्रिलक्षे तु होमकर्म समाचरेत् ।
कलौ पापसमाकीर्णे सत्यधर्मविवर्जिते ॥
चतुर्गुणा क्रिया जप्या तेन सिद्धिर्न संशयः ।

दिवसे दक्षिणाचारेण रात्रौ वामाचारेण च पुरश्चरणविधिः कौलिकविषयः ।

---

* अपामार्गैः शमीभिर्वा इति २ पु० पा० ।

(मेरुतन्त्रे)

एवं पूजा प्रकर्त्तव्या जपेल्लक्षचतुष्टयम् ।
पालाशैर्बिल्वजैर्वाऽपि जुहुयात् कुसुमैः फलैः ॥
तर्पणादि तत कुर्यादेवं सिद्धो भवेन्मनुः ।

अत्र (विश्वसारो-) क्तषोडशाक्षरमन्त्रस्य पुरश्चरणमेकलक्षजपस्तन्त्रान्तरोक्तमन्त्रान्तराणां लक्षत्रयजपः । (मेरुतन्त्रो-) क्तसप्तदशाक्षरमन्त्रस्य लक्षचतुष्टयपरिमितो जप इति वदन्ति ।

(भूतभैरवे)

आदौ जप्त्वा भैरवस्य क्रोधस्यास्य मनुं जपेत् ॥
अस्थिमालां समादाय वज्रवैरोचनीमनुम् ।

क्रोधभैरवमन्त्रस्तत्रैवोक्तः ।

अथ क्रोधमनुं वक्ष्ये असाध्यं येन सिध्यति ।
बीजं हालाहलं गृह्य क्रोधबीजमतः परम् ॥
भयङ्करार्णमाभाष्यासिताङ्गं क्षतजत्विषम् ।
प्रलयाग्निमहाज्वालामाभाष्य मलुमुद्धरेत् ॥
एवमुच्चारितः क्रोधः स्वयमेव प्रसिध्यति ।
ततस्तु क्रोधमन्त्रेण षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥
विषं वज्रयुतं बोधि महाकालं न्यसेद्धृदि ।
विषं हरयुगं वज्रकूर्चाद्यं विन्यसेच्छिरः ॥
हालाहलं देहयुतं वज्रकालं न्यसेच्छिखाम् ।
विषमस्त्रयुतं वज्रमायुधं कवचं न्यसेत् ॥
ताराबीजयुतं वज्रं महाकालाय नेत्रयोः ।
विषं हनयुतं गृह्य दहगृह्य परान्वितम् ॥
क्रोधं वज्रयुतं तद्वत् सर्वदुष्टानथापरम् ।
ततो मारय वज्रास्त्रं दिग्बन्धान्तं षडङ्गकम् ॥

ध्यानमाह ।

तत्र मध्ये न्यसेद्भीमं तप्तज्वालासमाकुलम् ।
साट्टहासं महारौद्रं भिन्नाञ्जनचयोपमम् ॥
प्रत्यालीढं चतुर्बाहुं दक्षिणे *चक्रधारिणम् ।
तर्जनीं वामहस्तेन तीक्ष्णदंष्ट्राकरालिनम् ॥
कपालरत्नमुकुटं त्रैलोक्यस्य विनायकम् ।
आदित्यकोटिसंकाशमष्टनागविभूषितम् ॥
अपराजितपदाक्रान्तमुद्रावान् बलविष्टिभिः ।
अनामिकाद्वयं बद्ध्वा आकुञ्च्य तर्जनीद्वयम् ॥
कनिष्ठां मध्यमां चैव ज्येष्ठाङ्गुष्ठेन च क्रमात् ।
एवं मुद्राधरो भीमस्त्रैलोक्यासाध्यसाधकः ॥

अस्य मन्त्रस्य पुरश्चरणं तु प्रचण्डचण्डिकापुरश्चरणवत् ।

जपहोमविधानं च शिवशक्त्योः समं विदुः—इति वचनात्† ।

इति छिन्नमस्ताप्रकरणम् ।

## अथ धूमावतीविद्या ।

(महाथर्वणसंहितायाम्)

दान्तौ सवामकर्णेन्दुधूमावत्यग्निगेहिनी ।
अष्टाक्षरी महाविद्या भजतां सर्वसिद्धिदा ॥

(मेरुतन्त्रे)

पिप्पलादो मुनिश्छन्दो निवृज्ज्येष्ठाऽस्य देवता ।

---

* वज्रधारिणम् इति ४ पु० पा० ।

† रमा कामस्तथा लज्जा वाग्भवं वज्रवैपदम् ।
रोचनीये लज्जाद्वन्द्वं मन्त्रः स्वाहासमन्वितः ॥
इयं सा षोडशी प्रोक्ता सर्वकामफलप्रदा ।
कथिताः सकला विद्याः सारात् सारतराः शुभाः ॥
२ पु० इदं श्लोकद्वयमधिकं दृश्यते ।

षड्दीर्घबिन्दुयुक्तेन धकारेण षडङ्गकम् ॥
आद्यबीजद्वयान्तस्थैः षड्वर्णैर्न्यासमाचरेत् ।
अङ्गुष्ठादौ षडङ्गेषु पुनर्देवीं विचिन्तयेत् ॥

ध्यानं यथा ।

विवर्णा चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा ।
विमुक्तकुन्तला दीर्घा विधवा विरलद्विजा ॥
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा ।
शूर्पहस्ताऽतिरूक्षाक्षी धूतहस्ता त्वगन्विता ॥
प्रवृद्धरोमा तु भृशं जटिला कुटिलेक्षणा ।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं सदा कलहतत्परा ॥
एवंविधां सदा ध्यायेत् ततः कर्म समाचरेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेत् कृष्णचतुर्दश्यां शून्यागारे दिवा निशि ।
उपवास[illegible]वमेकाहात् सिद्धिमाप्नुयात् ॥
यद्वा श्मशाने विपिने जपेल्लक्षं तु वाग्यतः ।
सोष्णीष आर्द्रवासाश्च तेन मन्त्रः प्रसिध्यति ॥
होमश्चात्र घृतेनैव तर्पणादि ततश्चरेत् ।
अथ वा प्रजपेल्लक्षं श्मशाने विगताम्बरः ॥
निशाभोजी दशांशेन तिलैर्हवनमाचरेत् ।

अथ मन्त्रान्तरं तन्त्रान्तरे ।

धूँबीजत्रितयं प्रोच्य धुरयुग्मं समुच्चरेत् ।
धूमावतीपदं प्रोच्य क्रौँस्वाहा फट्समन्विता ॥
मन्त्रः प्राथमिकः प्रोक्तो द्वितीयं शृणु सादरम् ।
प्रणवं धूम्रबीजं च धूमावतिपदं वदेत् ॥

देवदत्तो धावतीति स्वाहान्तो मनुराडयम् ।
ऋषिः क्षपणकः ख्यातो गायत्री छन्द ईरितम् ॥
धूमावती देवता च धूँ बीजं बीजमीरितम् ।
स्वाहा शक्तिः समुच्चाटे विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥
धाँषट्कैस्तु षडङ्गानि ध्यानं शृणु वरानने ।
काकारूढाऽतिकृष्णाभा भिन्नदन्ता विरागिणी ॥
मुक्तकेशी सुधूम्राक्षी क्षुत्तृषार्त्ता रयातुरा ।
चञ्चला चातिकामार्त्ता क्लिष्टा पुष्टा पिशङ्गिका ॥
मलिना श्रमणी रक्ता व्यक्तगन्धा विरोधिनी ।
धृतशूर्पाग्रहस्ता च ध्येया धूमावती परा ॥

पुरश्चरणमाह ।

लक्षं जपेन्महेशानि जगदुच्चाटनं चरेत् ।

अथाघोरमन्त्रः (शारदायाम्)

अथाभिधास्ये विधिवदघोरास्त्रमनूत्तमम् ।
यस्य संस्मरणादेव सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥
"हुमन्तः स्तम्भने मन्त्रः क्रोमाकृष्टौ समासने ।
वषडन्तः संवरणे नमोऽन्तो विषमासने ॥
ग्रहचौररिपुध्वंसे हुँ क्रोमन्तो विधीयते ।
शक्तान्तश्चाखिलेष्टास्यै क्षौमन्तो मारणे भवेत् ॥
फडन्तो भूतसंहारे मन्त्रोऽयं कल्पपादपः ।

(ईश्वरकल्पे) तु प्रस्फुरद्वयं बन्धद्वयं च । अयं मन्त्र एकचत्वारिंशदक्षर उद्धृतः (पदार्थादर्शटीकायाम्)"

मायास्फुरद्वयं भूयः प्रस्फुरद्द्वितयं ततः ।
घोरघोरतरेत्यन्ते तनुरूपपदं पुनः ॥

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः केष्वप्यन्यपुस्तकेषु नोपलभ्यते ।

च्चटयुग्मं तदन्ते स्यात् प्रच्चट द्वितयं ततः ।
कहयुग्मं वमद्वन्द्वं* ततो बन्धयुगं पुनः ॥
घातयद्वितयं वर्म फडन्तः समुदाहृतः ।
एवं पञ्चाशदर्णोऽयमघोरास्त्रमहामनुः ॥
अघोरोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ।
अघोररुद्रः संदिष्टो देवता मन्त्रवित्तमैः ॥
हृदयं पञ्चभिः प्रोक्तं शिरः षड्भिरुदाहृतम् ।
शिखा दशभिराख्याता तावद्भिः कवचं मतम् ॥
वसुवर्णैः स्मृतं नेत्रमाशार्णैरस्त्रमीरितम् ।

ध्यानम् ।

सजलघनसमाभं भीमदंष्ट्रं त्रिनेत्रं
भुजगधरमघोरं रक्तवस्त्राङ्गरागम् ।
परशुडमरुखड्गाखेटकं बाणचापौ
त्रिशिखनरकपाले बिभ्रतं भावयामि ॥

अथास्य पुरश्चरणं तत्रैव ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं घृतसिक्तैस्तिलैः शुभैः ।
तद्दशांशं प्रजुहुयान्मन्त्री मन्त्रस्य सिद्धये ॥

इति धूमावतीप्रकरणम् ।

अथ बगलामुखीविद्या ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि स्तम्भनीं बगलामुखीम् ।
तारं मायां समुच्चार्य वदेच्च बगलामुखि ॥
तदग्रे सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ।
स्तम्भयेति पदं जिह्वां कीलयेति ततः परम् ॥

---

* वहयुग्मं वदद्वन्द्वम् इति २ पु० पा० ।

बुद्धिं विनाशय ह्रीँ ॐ स्वाहा षट्त्रिंशवर्णकः ।
नारायणो मुनिस्त्रिष्टुप्छन्दश्च वगलामुखी ॥
देवी बीजं तु हृल्लेखा स्वाहा शक्तिः समीरिता ।
विनियोगोऽस्य विख्यातः पुरुषार्थचतुष्टये ॥
हृल्लेखा हृदयं प्रोक्तं शिरश्च वगलामुखी ।
शिखा तु सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ॥
स्तम्भयेति च वर्मोक्तं जिह्वां कीलय नेत्रकम् ।
बुद्धिं विनाशयास्त्रं स्यात् षडङ्गन्यास ईरितः ॥

अथ ध्यानम् ।

गम्भीरां च मदोन्मत्तां तप्तकाञ्चनसन्निभाम् ।
चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ॥
मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वां च वज्रकम् ।
पीताम्बरधरां सान्द्रवृत्तपीनपयोधराम् ॥
हेमकुण्डलभूषां च पीतचन्द्रार्धशेखराम् ।
पीतभूषणभूषां च स्वर्णसिंहासनस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हरिद्राग्रथिता माला पीताम्बरधरः स्वयम् ।
पीतासनः स्मरेत् पीतमयुतं जपमाचरेत् ॥
दशांशेन कृतो होमः पीतद्रव्यैः प्रतर्पयेत् ।
सर्वं पीतोपचारेण मन्त्रः सिद्ध्यति मन्त्रिणः ॥

वज्रयोगिनीमिश्रकृतसंग्रहे तु ।

पीताम्बरधरो भूत्वा पूर्वाशाभिमुखस्थितः ।
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हरिद्राग्रन्थिमालया ॥
ब्रह्मचर्ययुतो नित्यं प्रयतो ध्यानतत्परः ।

प्रियङ्गुपायसेनापि पीतपुष्पैश्च होमयेत्—इत्युक्तम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं ( यामले )

वह्निहोनेन्द्रयुग्माया वगलामुखि सर्वयुक् ।
दुष्टानां वाचमित्युक्त्वा मुखं स्तम्भय कीर्त्तयेत् ॥
जिह्वां कीलय बुद्धिं च विनाशय पदं वदेत् ।
पूर्ववीजं ततस्तारं वह्निजायावधिर्भवेत् ॥
ताराधिका चतुस्त्रिंशदक्षरा वगलामुखी ।
नारायणो* मुनिश्छन्दः पङ्क्तिः श्रीवगलामुखी ॥
देवता मन्त्रगं बीजं शक्तिः पावकसुन्दरी ।
सर्वशत्रुमुखस्तम्भे विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गन्यास ईरितः ।

अथ ध्यानम् ।

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदी-
सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ।
†पीताम्बरां कनकभूषणमाल्यशोभां
देवीं भजामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ।
‡पदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

जपमाला च देवेशि हरिद्राग्रन्थिसम्भवा ।
पीतासनसमारूढः पीतध्यानपरायणः ॥

---

* नारदोऽस्य मुनिरिति क्वचित् पाठः ।

† पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीम् इत्यपि पाठो बहुत्र श्रूयते ।

‡ गदाभिघातेन इति २ पु० पा० ।

पीतपुष्पार्चनं नित्यमयुतं जपमाचरेत् ।
तद्दशांशकृतो होमः पीतद्रव्यैः सुशोभनैः ॥

अस्याः पुमान् मृत्युञ्जयस्तन्मन्त्रपुरश्चरणं च शिवप्रकरण एवोक्तम् ।

इति वगलामुखीप्रकरणम् ।

अथ मातङ्गीविद्या ।

( यामले )

अथ वक्ष्ये महादेवीं मातङ्गीं सर्वसिद्धिदाम् ।
अस्याः सेवनमात्रेण वाक्सिद्धिं लभते ध्रुवम् ॥
प्रणवं च ततो मायां कामबीजं च कूर्चकम् ।
मातङ्गी ङेयुता चास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिर्विराट्छन्द उदीरितम् ।
मातङ्गी देवता देवी सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ कुर्यान्मन्त्री समाहितः ।
षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां सद्रत्नसिंहासने
संस्थां रत्नविचित्रभूषणयुतां संक्षीणमध्यस्थलाम् ।
आपीनस्तनमण्डलां स्मितमुखीं ध्यायेद्दधन्तीं क्रमाद्-
वेदैर्बाहुभिरङ्कुशासिलतिके पाशं तथा खेटकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

पुरश्चरणकाले तु षट्सहस्रं जपेन्मनुम् ।
तद्दशांशं हुनेदाज्यैः शर्करामधुभिः सह ॥
ब्रह्मतरूद्भवैः काष्ठैः साधकः शक्तिभिः सह ।
एवं पुरस्क्रियां कृत्वा प्रयोगविधिमाचरेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं (मेरुतन्त्रे)

अथोच्छिष्टां प्रवक्ष्यामि मातङ्गीं गोकुवर्णकाम्।
नम उच्छिष्टचाण्डालि मातङ्गीति पदं वदेत् ॥
सर्ववशङ्करि स्वाहा मन्त्रोऽयं मोहयेज्जगत्।
छन्दो निवृत् सगायत्रं मुनी नारदतुम्बुरौ ॥
देवता चात्र मातङ्गी द्वित्रित्रित्रिरसाक्षिभिः।
अङ्गानि स्युर्मन्त्रवर्णैस्ततो ध्यायेद्धृदम्बुजे ॥

ध्यानं यथा।

कृष्णाम्बरां यावकार्द्रचरणामुन्नतस्तनीम्।
मुक्ताप्रवालमालाढ्यां शङ्खकुण्डलधारिणीम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि मातङ्गीमन्त्रमद्भुतम्।
कामिनी रञ्जिनी स्वाहाऽष्टाक्षरोऽयमुदीरितः ॥
ऋषिः संमोहनश्छन्दो निवृत् प्रोक्ताऽस्य देवता।
सर्वसंमोहिनी चाङ्गं द्विरावृत्तिपदैर्भवेत् ॥

अथ ध्यानम्

श्यामाङ्गीं वल्लकीं दोर्भ्यां वादयन्तीं सुभूषणाम्।
चन्द्रावतंसां विविधैर्गायनैर्मोहतीं जगत् ॥

अनयोः पुरश्चरणम्।

प्रजपेदयुतद्वन्द्वं दशांशं जुहुयात् ततः।
मधूकजैस्त्रिमध्वक्तैः सर्वं संमोहयेज्जगत् ॥

अथ राजमातङ्गीमन्त्रस्तत्रैव।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि चतुष्पञ्चाशदक्षरम्।
ॐ ह्रीँ नमश्च ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते ॥
जये च विजये गौर्यंषे गान्धारिपदं वदेत्।

त्रिभुवनवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषेति च ॥
वशङ्करि सुसु दुदु घेघे वावाऽग्निगेहिनी ।
अजो मुनिस्तथा छन्दो निवृद्गायत्रमीरितम् ॥
देवता राजमातङ्गी षडङ्गादि तु मायया ।

अथ ध्यानम् ।

"अमृतोदधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोहरे ।
स्वर्णप्राकारसंवीते मणिरत्नविनिर्मिते ॥
कदम्बविल्वकह्लारे कल्पवृक्षोपशोभिते ।
वेदिमध्ये सुखास्तीर्णे रत्नसिंहासने शुभे" ॥
अष्टपत्रं महापद्मं केशराढ्यं सकर्णिकम् ।
तन्मध्ये तु त्रिकोणं स्यादष्टपत्रं ततो बहिः ॥
पुनः षोडशपत्रं स्यात् तद्बाह्ये स्याच्चतुर्दलम् ।
वेदास्रं सचतुर्द्वारं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम् ॥
तस्य मध्ये सुखासीनां श्यामवर्णां शुचिस्मिताम् ।
कदम्बमालाभरणां पूजितां च सुरासुरैः ॥
प्रलम्बालकसंयुक्तां चन्द्ररेखावतंसिकाम् ।
ललाटे तिलकोपेतामीषत्प्रहसिताननाम् ॥
किञ्चित्स्वेदाम्बुमधुरललाटफलकोज्ज्वलाम् ।
वलीतरङ्गमध्याभां रोमराजीविराजिताम् ॥
सर्वाभरणसंयुक्तां मुक्ताहारविभूषिताम् ।
नानामणिगणोन्नद्धकटिसूत्रैरलङ्कृताम् ॥
वलयै रत्नखचितैः केयूरैर्मणिभूषितैः ।

---

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

भूषितां द्विभुजां बालां मदाघूर्णितलोचनाम् ॥
आपी[illegible]ण्डलाभोगसमुन्नतपयोधराम् ।
प्रलम्बवर्णाभरणां कर्णोत्तंसविराजिताम् ॥
तमालनीलां तरुणीं मधुमत्तां मतङ्गिनीम् ।
चतुःषष्टिकलारूपां पार्श्वस्थशुकसारिकाम् ॥
कोटिबालार्कसंकाशां जपाकुसुमसन्निभाम् ।
एवं वा पीतवर्णां वा ध्यायेन्मातङ्गिनीं पराम् ॥

"अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं होमयेत् तद्दशांशतः ।
बन्धूककुसुमैर्मन्त्री मधुरत्रयलोलितैः" ॥

अथ सुमुखीमन्त्रः (गुह्यातन्त्रे)

शृणु मन्त्रं महादेवि यथावत् कथयामि ते ।
दद्यादुच्छिष्टशब्दं तु तथा चाण्डालिनीति च ॥
सुमुखीति ततो देवीं कीर्त्तयेत् तदनन्तरम् ।
महापिशाचिनी तस्मान्मायाबीजमनन्तरम् ॥
विन्दुनादसमायुक्तं ठकारत्रितयं ततः ।
सविसर्गं महादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥
इयं विद्या महाविद्या सर्वपापप्रणाशिनी ।
स्वर्गदा मोक्षदा विद्या सर्वसौभाग्यदा* तथा ॥
सदोच्छिष्टमुखो भूत्वा स्मरेद्देवीं जयप्रदाम् ।
तदाऽऽचान्तो भवेद्देवि विनैवाचमने कृते ॥
दुर्भगा सुभगा नूनं दुःखिता सुखिनी भवेत् ।

---

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

* राज्यसौभाग्यदा इति २-४ पु० पा० ।

बन्ध्याऽपि लभते पुत्रं शतहायनजीवनम् ॥
दुर्बलो बलमाप्नोति मूर्खो विद्यामवाप्नुयात् ।
यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठात् तां तामवाप्नुयात् ॥
विधानं चात्र वक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ।
नारिदोषो न वा विघ्नो नाशौचं नियमो न च ॥
यस्य तिष्ठति मन्त्रोऽयं न च विघ्नैः स वाध्यते ।

तथा ।

अजो मुनिः समाख्यातश्छन्दो गायत्रमस्य तु ।
देवता सुमुखी प्रोक्ता मायया तु षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

शवोपरिसमासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम् ।
रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविभूषिताम् ॥
षोडशाब्दां च युवतीं पीनोन्नतपयोधराम् ।
कपालकर्त्रिकाहस्तां परज्योतिःस्वरूपिणीम् ॥
वामदक्षिणयोगेन ध्यायेन्मन्त्रविदुत्तमः ।
उच्छिष्टेन वलिं दत्वा जपेत् तद्गतमानसः ॥
उच्छिष्टेनैव कर्त्तव्यो जपोऽस्याः सिद्धिमिच्छता ।
उच्छिष्टजपमानस्य जायन्ते सर्वसिद्धयः ॥

अस्य मन्त्रस्य पुरश्चरणमष्टसहस्रजपः ।

येषां जपे च होमे च............... इत्यादिपूर्वोक्तवचनात् ।

अथ वश्यमातङ्गीमन्त्रः (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि वश्यमातङ्गिकामनुम् ।
ॐ राजमुखि राजाधिमुखि वश्यमुखीति च ॥
मायां श्रीँ क्लीँ देवदेवि महादेवि ततो वदेत् ।
देवाधिदेवि सर्वेति जनस्य मुखमुच्चरेत् ॥

मम वशं कुरु द्वन्द्वं स्वाहान्तोऽङ्कक्रुताणंकः ।
दिक्सप्तकृतवेदेषुमन्त्राणैरङ्गकल्पनम् ॥
विज्ञेयं राजमातङ्गीतुल्यं पूजाजपादिकम् ।
प्रयोगाँश्चापि जानीयाद्विशेषाद्‌शक्तत् त्वियम् ॥

मन्त्रान्तरमाह ।

माया नमो हिलिद्वन्द्वं चण्डमातङ्गिनीति च ।
स्वाहेति तिथिवर्णोऽस्या न्यासपूजादिकं भवेत् ॥
राजमातङ्गिकातुल्यं जपश्चायुतसङ्ख्यकः ।
घृतपायसहोमश्च प्रयोगाद्यं च पूर्ववत् ॥

अथ कर्णमातङ्गीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कर्णमातङ्गिकामनुम् ।
वाग्भवं हृदयं चाथ श्रीमातङ्गिपदं वदेत् ॥
अमोघे सत्यवादिनि मम कर्णेपदं ततः ।
अवतरपदं द्वेधा सत्यं कथय युग्मकम् ॥
एह्येहि श्रीँ च मातङ्ग्यै नमस्त्र्यब्ध्यर्णको मनुः ।
अङ्गानि वाग्भवेनात्र पूजाद्यं च कृताकृतम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपः पायसाद्यैः होमः सिद्धो भवेन्मनुः ।
कर्णे तु कथयेद्देवी पृच्छकस्य शुभाशुभम् ॥

इति मातङ्गीप्रकरणम् ।

अथ लक्ष्मीविद्या ।

(शारदायाम्)

अथ वक्ष्ये श्रियो मन्त्रान् श्रीसौभाग्यफलप्रदान् ।
यस्याः कटाक्षमात्रेण त्रैलोक्यमपि वर्धते ॥
वान्तं वह्निसमारूढं वामनेत्रेन्दुसंयुतम् ।

बीजमेतच्छ्रियः प्रोक्तं चिन्तारत्नमिवापरम् ॥
ऋषिर्भृगुर्निवृच्छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् ।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बविम्बललितां बन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

भानुलक्षं जपेन्मन्त्री दीक्षितो विजितेन्द्रियः ।
श्रियमभ्यर्चयेन्नित्यं सुगन्धिकुसुमादिभिः ॥
तत्सहस्रं च जुहुयात् कमलैर्मधुरोक्षितैः ।
जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुरान्वितैः ॥
वैल्वैः फलैर्वा जुहुयात् त्रिभिर्वा साधकोत्तमः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाग्भवं वनिता विष्णोर्माया मकरकेतनः ।
चतुर्बीजात्मको मन्त्रश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥
अङ्गानि कुर्याद्दीर्घाद्यैं रमाबीजेन तत्त्ववित् ।

अथ ध्यानम् ।

माणिक्यप्रतिमप्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्ताग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां सदा ।
हस्ताब्जैर्वरदानमब्जयुगलाभीतीर्दधानां हरेः
कान्तां काङ्क्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजाननाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

भानुलक्षं हविष्याशी जपेदन्ते सरोरुहैः ।

जुहुयादरुणैः फुल्लैस्तत्सहस्रं जितेन्द्रियः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

दीर्घायादिर्विसर्गान्तो ब्रह्मा भानुर्वसुन्धरा ।
वान्ते सिन्यै प्रिया वह्नेर्मनुः प्रोक्तो दशाक्षरः ॥
ऋषिर्दक्षो विराट् छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।
देव्यै हृदयमाख्यातं पद्मिन्यै शिर ईरितम् ॥
विष्णुपत्न्यै शिखा प्रोक्ता वरदायै तनुच्छदम् ।
अस्त्रं कमलरूपिण्यै नमोऽन्ताः प्रणवादिकाः ॥
अङ्गमन्त्राः समुद्दिष्टा ध्यायेद्देवीमनन्यधीः ।

अथ ध्यानम् ।

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती
दानं पद्मयुगाभयं च वपुषा सौदामिनीवल्लभा ।
मुक्तादामविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी
पायाद्वः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्ती हरिम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दशलक्षं जपेदेनं मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री मधुराक्तैः सरोरुहैः ॥

अथ माहलक्ष्मीमन्त्रस्तत्रैव ।

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा मकरकेतनः ।
तार्त्तीयं च जगत्पार्श्वो वह्निबीजसमुज्ज्वलः ॥
अर्घीशाढ्यो भृगुस्त्यै हृन्मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
महालक्ष्म्याः समुद्दिष्टस्ताराद्यः सर्वसिद्धिदः ॥
ऋषिर्विद्या समुद्दिष्टो गायत्री छन्द ईरितम् ।
देवता जगतामादिर्महालक्ष्मीः समीरिता ॥
हस्तौ संशोध्य मन्त्रेण तारादि हृदयान्तिकम् ।

बीजानां पञ्चकं न्यसेदङ्गुलीषु यथाक्रमम् ॥
मन्त्रशेषं न्यसेन्मन्त्री तलयोरुभयोरपि।
मूर्धादि चरणं यावन्मन्त्रेण व्यापकं चरेत् ॥
मूर्धाक्षिवक्त्रगुह्याङ्घ्रिः पञ्च बीजानि विन्यसेत्।
शेषान् न्यसेत् सप्तवर्णान् हृदये सप्तधातुषु ॥
अङ्गानि पञ्चभिर्बीजैरस्त्रं शिष्टाक्षरैर्भवेत्।
ज्ञानैश्वर्यादिभिर्युक्तैश्चतुर्थ्यन्तैः सजातिभिः ॥
ज्ञानमैश्वर्यशक्तिं च बलवीर्ये स्वतेजसा।
ज्ञानैश्वर्यादयः प्रोक्ताः षट् क्रमादङ्गयोजिताः ॥

ध्यानमाह।

एवं न्यस्तशरीरोऽसौ स्मरेदुद्यानमद्भुतम्।
चम्पकाशोकपुन्नागपाटलैरुपशोभितम् ॥
लवङ्गमाधवीविल्वदेवदारुनमेरुभिः।
मन्दारपारिजाताद्यैः कल्पवृक्षैः सुपुष्पितैः ॥
चन्दनैः कर्णिकारैश्च मातुलुङ्गैः सवञ्जुलैः।
दाडिमीलकुचाङ्कोलैः पूगैः कुरवकैरपि ॥
कदलीकुन्दमन्दारनारिकेलैरलङ्कृतम्।
अन्यैः सुगन्धिपुष्पाद्यैर्वृक्षखण्डैश्च मण्डितम् ॥
मालतीमल्लिकाजातिकेतकीशतपत्रकैः।
यावन्तीतुलसीनन्द्यावर्त्तैर्दमनकैरपि ॥
सर्वर्त्तुकुसुमोपेतैर्नमद्भिरुपशोभितम्।
मन्दमारुतसम्भिन्नं कुसुमामोददिङ्मुखम् ॥
तस्य मध्ये सदा फुल्लैः कुसुमोत्पलपङ्कजैः।
सौगन्धिकैश्च कह्लारैर्नवैः कुवलयैरपि ॥

हंससारसकारण्डभ्रमरैश्चक्रनामभिः ।
अन्यैः कलकलारावैर्विहङ्गैरुपशोभिते ॥
महासरसि तन्मध्ये पुलिनेऽतिमनोहरे ।
परितः पारिजाताद्यमण्डितं मणिकुट्टिमम् ॥
उद्यदादित्यसंकाशभास्वरं शशिशीतलम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारशोभितम् ॥
रत्नोपक्लप्तसंशोभिकपाटाष्टकसंयुतम् ।
नवरत्नसमाक्लप्तं तुङ्गगोपुरतोरणम् ॥
हेमदण्डं शिखालम्बि ध्वजावलिपुरस्कृतम् ।
नवरत्नसमाबद्धस्तम्भराजिविराजितम् ॥
सहस्रदीपसंयुक्तदीपदण्डविराजितम् ।
तप्तहाटकसंक्लप्तवातायनमनोहरम् ॥
नानारत्नांशुकोद्बद्धसुवर्णशतकोटिभिः ।
किङ्किणीमालिकायुक्तपताकाभिरलङ्कृतम् ॥
जातरूपमयै रत्नविचित्रैरतिविस्तृतैः ।
माणिक्यवज्रवैदूर्यस्वर्णमालावलीयुतैः ॥
अन्तरान्तरसम्बद्धरत्नैर्दृष्टिमनोहरैः ।
विचित्रैश्चित्रबद्धैश्च वितानैरुपशोभितम् ॥
सर्वरत्नसमायुक्तं हेमकुट्टिममुज्ज्वलम् ।
केतकीमालतीजातीचम्पकोत्पलकेसरैः ॥
मल्लिकातुलसीवाशानन्द्यावर्त्तकदम्बकैः ।
एतै रम्यैश्च कुसुमैरलङ्कृतमहीतलम् ॥
अब्जकाश्मीरकस्तूरीमृगनाभितमालकैः ।

चन्दनागुरुकर्पूरैरामोदितदिगन्तरम् ॥
एवं सञ्चिन्त्य मनसा मण्डपं सुमनोहरम्।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम् ॥
तस्याधस्तात् स्मरेन्मन्त्री रत्नसिंहासनं महत्।
तस्मिन् सञ्चिन्तयेद्देवीं महालक्ष्मीं मनोहराम् ॥
बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत्कोटीरहारोज्ज्वलां
रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शालैः करैर्मञ्जरीम्।
पद्मौ कौस्तुभरत्नमप्यविरतं सम्बिभ्रतीं सुस्मितां
फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत् परां देवताम् ॥
शिञ्जन्मञ्जीरसंशोभिपादाम्भोजविराजिताम्।
नवरत्नगणाकीर्णकाञ्चीदामविभूषिताम् ॥
मुक्तामाणिक्यवैदूर्यसम्बद्धोदरबन्धनाम्।
विभ्राजमानां मध्येन वलित्रितयशोभिताम् ॥
जाह्नवीसलिलावर्त्तशोभिनाभिविभूषिताम्।
पटीरपङ्ककर्पूरकुङ्कुमालङ्कृतस्तनीम् ॥
वारिवाहविनिर्मुक्तमुक्तादामगरीयसीम्।
बिभ्रतीमुत्तरासङ्गं दुकूलपरिकल्पितम् ॥
तप्तकाञ्चनसम्बद्धवैदूर्याङ्गदभूषणाम्।
पद्मरागस्फुरत्स्वर्णकङ्कणाढ्यकराम्बुजाम् ॥
माणिक्यशकलाबद्धमुद्रिकाभिरलङ्कृताम्।
तप्तहाटकसंक्लृप्तमालाग्रैवेयशोभिताम् ॥
विचित्रविविधाकल्पां कम्बुसंकाशकन्धराम्।
उद्यद्दिनकराकारमणिताटङ्कमण्डिताम् ॥

रत्नाङ्कितलसत्स्वर्णकर्णपूरोपशोभिताम् ।
जपाविद्रुमलावण्यललिताधरपल्लवाम् ॥
दाडिमीफलबीजाभदन्तपङ्क्तिविभूषिताम् ।
कलङ्ककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चन्द्रनिभाननाम् ॥
पुण्डरीकदलाकारनयनत्रयशोभिताम् ।
भ्रूलताजितकन्दर्पवरकार्मुकविभ्रमाम् ॥
विकसत्तिलपुष्पश्रीविजयोद्यतनासिकाम् ।
ललाटकान्तिविभवविजितार्धसुधाकराम् ॥
सान्द्रसौरभसंपन्नकस्तूरीतिलकाङ्किताम् ।
मत्तालिमालाविलसदलकाढ्यमुखाम्बुजाम् ॥
पारिजातप्रसूनश्रीवाहिधम्मिल्लबन्धनाम् ।
अनर्घरत्नघटितमुक्ताटङ्कितमस्तकाम् ॥
सर्वलावण्यवसतिं भवनं विभ्रमश्रियः ।
तेजसां जन्मभूमिं तां महालक्ष्मीं विचिन्तयेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा ततो देवीं हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
भानुलक्षं जपेन्मन्त्री दशांशं जुहुयात् तिलैः ॥
जुहुयात् श्रीफलैः पद्मैः प्रत्येकमयुतं ततः ।
तर्पयेत् सलिलैः शुद्धैः सुगन्धैरयुतद्वयम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

जपेद्भास्करलक्षं च नियताशी यतव्रतः ।
तद्दशांशं प्रजुहुयाद्घृतैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥
पद्मैः श्रीवृक्षफलैः प्रत्येकमयुतं हुनेत् ।
सुशीतैः शुचिभिस्तोयैस्तर्पयेदयुतद्वयम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

शम्भुपत्नी श्रिया रुद्धा कमौ भगवती मही ।
ब्रह्माऽऽदित्यो धरा दीर्घा लकारो भगवान् मरुत् ॥
प्रसीदयुगलं भूयः श्रीरुद्धा भुवनेश्वरी ।
महालक्ष्मी नमोऽन्तः स्यात् प्रणवादिरयं मनुः ॥
सप्तविंशत्यक्षराढ्यः प्रोक्तः सर्वसमृद्धिदः ।
कमले हृदयं प्रोक्तं शिरः स्यात् कमलालये ॥
शिखा प्रसीद तेनैव कवचं चतुरक्षरैः ।
अस्त्रमेतैः पदैः कुर्याच्छ्रीबीजपुटितैः पृथक् ॥

अथ ध्यानम् ।

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतीं सौन्दर्यवारां निधिं
कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम् ।
हस्ताब्जैर्वसुपात्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
मावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत् प्रियां शार्ङ्गिणः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेत् फलैर्बिल्वैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः ।
दशांशं संस्कृते वह्नौ प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना ॥

तन्त्रान्तरे ।

मन्दाक्षमिन्दिरारुद्धं त्र्यक्षरोऽयं महामनुः ।
हृदन्तः पञ्चवर्णोऽस्य सर्वमेकार्णवद्भवेत् ॥

अथ साम्राज्यलक्ष्मीमन्त्रः (मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये गणेशेन काशीराज्याप्तये मम ।
शाम्बादित्यस्य रक्षोदिग्भागे लक्ष्मीरुपासिता ॥
साम्राज्यलक्ष्मीर्विख्याता गतराज्यप्रदायिनी ।
लक्ष्मीविनायकस्तत्र प्रसिद्धोऽसौ गजाननः ॥

दक्षिणेनैव मार्गेण तस्याः सिद्धिर्न वामतः ।
सकारं च हकारं च कलरा वर्णपञ्चकम् ॥
ईकारस्वरसंयुक्तं प्रथमं कूटमुच्यते ।
हँ बीजं तु द्वितीयं स्यात् प्रोक्तोऽयं द्व्यक्षरो मनुः ॥
ऋषिर्हरिश्च गायत्री छन्दो लक्ष्मीश्च मोहिनी ।
साम्राज्यदा देवतोक्ता कूटं बीजं प्रकीर्त्तितम् ॥
शक्तिः श्रीँ च षडङ्गानि षड्भिर्दीर्घैः समाचरेत् ।

अथ ध्यानम् ।

अतशीपुष्पसंकाशां रत्नभूषणभूषिताम् ।
शङ्खचक्रगदापद्मशार्ङ्गबाणधरां करैः ॥
षड्भिः कराभ्यां देवेशीं वरदाभयशोभिताम् ।
एवमष्टभुजां ध्यात्वा त्रिलक्षं प्रजपेत् सुधीः ॥
तद्दशांशेन पद्मैस्तु हुनेत् साम्राज्यसिद्धये ।
एवमाराधयेल्लक्ष्मीं साम्राज्यं स्यादसंशयम् ॥

नारायणमन्त्रस्तु तत्प्रकरण एवोक्तः ।

इति लक्ष्मीविद्याप्रकरणम् ।

अथ नीलक्रमादयः ।

(शक्तिसङ्गमवीरतन्त्रसारसंग्रहेषु)

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि रहस्यातिरहस्यकम् ।
दशानामपि विद्यानां दश वै ये क्रमाः प्रभो ॥
पुरैव कथिताः स्वामिँस्तान् क्रमान् वद संप्रति ।

शिव उवाच ।

रहस्यातिरहस्यं च कथ्यते तव भक्तितः ।
महानीलक्रमेणैव कालिका सिद्धिदायिनी ॥

महानीलक्रमो देवि द्विविधः परिकीर्त्तितः ।
सकलो निष्कलश्चेति तं क्रमं शृणु पार्वति ॥
खड्गहस्तः शिरोन्यस्तः सर्वदा मुक्तकुन्तलः ।
सदा मांसासवोल्लासी विजयाघूर्णलोचनः ॥
सिन्दूरतिलकं भाले पाणौ तु मदिरारसम् ।
रात्रौ पर्यटनं चैव रात्रौ शक्तेः प्रपूजनम् ॥
योनिचुम्बनकं कर्म शक्तेरालिङ्गनं तथा ।
न करोति नरो यस्तु स कथं तव पूजकः ॥
ताम्बूलयोनिचक्रं च मुण्डमालां शवासनम् ।
सिन्दूरं खड्गकं चैव संविदासवयो रसम् ॥
एतान् विहाय यः कश्चित् कालीं साधितुमुद्यतः ।
इह क्षोभमवाप्नोति परत्र नरकं व्रजेत् ॥
कोट्यर्बुदयुगैर्देवि न हि सिध्यति कालिका ।
सिन्दूरविन्दुर्भ्रूमध्ये स्वयम्भूमुनिपत्रकम् ॥
रक्तचन्दनकं वाऽपि त्रिपुण्ड्रं च ततोपरि ।
कुर्वन् दले कज्जलस्य विन्दुर्देयो महेश्वरि ॥
महानीलक्रमे देवि तिलकः परिकोर्त्तितः ।
श्मशानशायी मांसाशी संविदानन्दमानसः ॥
स्त्रियं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् सर्वकालं जपं चरेत् ।
वेश्यारतः श्मशानस्थो मृदुचूडकसंयुतः ॥
दन्ताक्षमालया देवि गजदन्तेन मेरुणा ।
मालां कृत्वा जपेद्देवि सदा ताम्बूलचर्वकः ॥
कपालमालाभरणो रामाचुम्बनतत्परः ।

शक्त्यानन्दो नेत्रयुगे मुखे हाला गृहाङ्गणे ॥
वेश्या बालाकरे माला शक्तिलीला भगाम्बुजे ।
योनिसञ्चुम्बनं कृत्वा सर्वकाले जपं चरेत् ॥
शक्तेर्भगं नमस्कार्यं सर्वमेतच्चरान्तरम् ।
अधिकारी प्रहृष्टात्मा स्त्रीभक्तो विजितेन्द्रियः ॥
ईदृग्विधो नरो देवि महानीलक्रमो मतः ।
राजदन्तमयी माला द्विरदोष्ट्राश्वसम्भवा ॥
अशक्तानां निष्कलः स्यात् तं क्रमं शृणु पार्वति ।
पीताया दुग्धकं पित्वा सच्चिदानन्दमानसः ॥
स्फाटिकीं मालिकां कृत्वा विहारे जपमाचरेत् ।
दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न च ॥
न जपे कालनियमो महामन्त्रस्य साधने ।
यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तत्र धर्मस्तु तादृशः ॥
भ्रान्तिस्तत्र न कर्त्तव्या स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।
मृदु कोमलकं देवि चूडकं वाऽप्यचूडकम् ॥
शवं वीरासनं कृत्वा योनित्वगासनं च वा ।
कामरूपासनं देवि सुरतासनमेव च ॥
सिन्दूरासनकं देवि पर्वतासनमेव च ।
प्रयोगासनकं देवि महाप्रयोगासनं तथा ॥
श्रीमुण्डसुरतं वाऽपि श्रीवीरसुरतं च वा ।
पञ्चवीरासनं देवि सुरेन्द्रादिदिशां क्रमात् ॥

इति नीलक्रमः ।

अथ महाचीनक्रमस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि महाचीनक्रमं परम् ।

शिव उवाच ।

महाचीनक्रमो देवि कथ्यते सांप्रतं मया ।
महाचीनक्रमेणैव तारा शीघ्रफलप्रदा ॥
ब्रह्मचीनो वीरचीनो दिव्यचीनस्तृतीयकः ।
महाचीनो निष्कलश्च चीनः पञ्चविधो मतः ॥
महाचीनक्रमो देवि द्विविधः परिकीर्त्तितः ।
सकलो निष्कलश्चेति सकलो बौद्धगोचरः ॥
निष्कलो ब्राह्मणानां च द्वितीयः परिकीर्त्तितः ।

तथा ।

स्नानादि मानसं शौचं मानसः प्रवरो जपः ।
पूजनं मानसं दिव्यं मानसं तर्पणादिकम् ॥
मानसो नियमः प्रोक्तो मानसं दन्तधावनम् ।
सर्व एव शुभः कालो नाशुभो विद्यते क्वचित् ॥
न विशेषो दिवा रात्रौ न सन्ध्यायां महानिशि ।
शुद्धिं न कारयेदत्र निर्विकल्पं मनश्चरेत् ॥
नात्र शुद्धेरपेक्षाऽस्ति न चामेध्यादि दूषणम् ।
य एवं चिन्तयेन्मन्त्रं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥
गद्यपद्यमयी वाणी सभायां तस्य जायते ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभा मताः ॥
राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः ।
सर्वदा पूजयेद्देवीमस्नातः कृतभोजनः ॥

महानिश्यशून्ये देशे वलिं मन्त्रेण दापयेत् ।
स्त्रीद्वेषो नैव कर्त्तव्यो विशेषात् पूजनं स्त्रियः ॥
जपस्थाने महाशङ्खं निवेश्योर्ध्वे जपं चरेत् ।
स्त्रियं गच्छन् स्पृशन् पश्यन् यत्र कुत्राप्यचूडके ॥
भुक्त्वा ताम्बूलमन्यांश्च भक्ष्यद्रव्यान् यथारुचि ।
मांसं मत्स्यं दधि क्षौद्रं संविदासवयो रसम् ॥
भोज्यान्यशेषभक्ष्याणि दत्वा भुक्त्वाऽऽचरेज्जपम् ।
दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न च ॥
न जपे कालनियमो नार्चादिषु वलिष्वपि ।
स्वेच्छानियम उक्तोऽत्र महामन्त्रस्य साधने ॥
वस्त्रासनं गेहदेहस्पर्शास्पर्शादिवारिणा ।
तैलं संलाप्य देवेशि ताम्बूलं भक्षयन् सदा ॥
नानाम्बराणि सन्धार्य देहं वस्त्रेण मार्जयेत् ।
एवं स्नानं चरेद्देवि सर्वदा तद्गताशयः ॥
केशान् संवर्धयेद्देवि सर्वदा तैलभूषितः ।
नाधर्मो विद्यते सुभ्रु किं तु धर्मो महान् भवेत् ॥
स्वेच्छाचारोऽत्र कथितः प्रचरेद्धृष्टमानसः ।
कृतार्थमन्यमानस्तु सन्तोष्य निजमानसम् ॥
हरेर्नाम न गृह्णीयान्न स्पृशेत् तुलसीदलम् ।
वर्जयेद्बिल्वपत्रं च मरुं यत्नेन वर्जयेत् ॥
नान्यचिन्ता प्रकर्त्तव्या नान्यनिन्दा कदा चन ।
नान्यमन्त्रं जपेद्देवि निर्विकल्पः सदा भवेत् ॥
सद्यो मद्यं पिवेद्देवि मातङ्गीभिर्विहारवान् ।
योनिं चुम्बँल्लिहन् पश्यन् जपं कुर्यादनन्यधीः ॥

योनौ विचिन्त्य जप्तव्यं सिद्धिर्वत्सरमात्रतः ।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्यात् प्रजप्तैरपि कोटिभिः ॥
पुरश्चरणलक्षैश्च होमादीनां च कोटिभिः ।
भ्रूयुग्मे कुन्तले देवि सिन्दूरं तदनन्तरम् ॥
कुचन्दनं त्रिपुण्ड्रं च पङ्कजं वा सकेशरम् ।
मुण्डमाला गले धार्या कपालं पाणिसङ्गतम् ॥
इत्याचारपरो नित्यं महाचीनक्रमी भवेत् ।
कर्णनेत्रान्तरस्थो यो महाशङ्खः प्रकीर्त्तितः ॥
पञ्चाशन्मणिभिर्माला गोनरेभास्थिसम्भवा ।
मालां कुर्यान्महेशानि चाष्टसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
सैव तारा महेशानि नात्र कार्या विचारणा ।
यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तत्र धर्मस्तु तादृशः ॥
कृतार्थस्तेन जायेत स्वर्गो वा मोक्ष एव वा ।

( स्वच्छन्दभैरवतन्त्रे )

न शौचादिक्रियाः कार्याः स्मृतिशास्त्रप्रचोदिताः ।
एका लिङ्गे गुदे पञ्च इत्याद्या याः प्रकीर्त्तिताः ॥
न ताः कार्याः साधकेन्द्रैः यदीच्छेच्चिरजीवितम् ।

( सिद्धान्तसंग्रहेऽपि )

न देशकालनियमो भक्ष्यादिनियमो न हि ।
शौचादिनियमो नास्ति महामन्त्रस्य साधने ॥
दिवसे वा तथा रात्रौ रात्रिशेषे निशामुखे ।
मांसं भुक्त्वाऽसवं पीत्वा स्त्रियं गत्वा चरेज्जपम् ॥

( शक्तिसङ्गमे )

सकलस्तु मया प्रोक्तो निष्कलं शृणु पार्वति ।

मणिबन्धादधः पाणिं पादौ गुल्फादधः शिवे ॥
मुखं प्रक्षालयेद्देवि चीनस्नानमिदं भवेत् ।
जानुभ्यामवनौ गत्वा भूमौ मस्तकमानयेत् ॥
चीनमार्गे नमस्कारः कीर्त्तितस्तु मया तव ।
पूर्वक्रमस्य देवेशि क्रमः प्रतिनिधिर्मया ॥
स्नानदानादिकं कृत्वा तथा पूजादिकं प्रिये ।
तथा म्लानो न मे देहो न च पापं ममास्ति वै ॥
किं स्नानं कस्य चित् स्नानमस्नातः कृतभोजनः ।
सर्वमेव हृदम्भोजे मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥
मयि जाता मन्त्रसिद्धिर्मम देवा वरप्रदाः ।
तेजोरूपं जगत्सर्वं तारिणी तत्स्वरूपधृक् ॥
तत्तेजसा स्वस्थदेहं संभाव्य जपमाचरेत् ।
भ[illegible]ो भवेद्योगी महाकविः ॥
गुडार्द्रकरसेनैव सुरा तु ब्राह्मणस्य च ।
तदभावे जलं देवि संभाव्य पूजनं चरेत् ॥
तद्भावहृदयासन्नः सदा तद्गतमानसः ।
द्वन्द्वभावं परित्यज्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
ब्रह्मा चैव वशिष्ठश्च तथाऽन्ये च ऋषीश्वराः ।
[illegible]मार्गेण भजन्ति सततं शिवे ॥
ताराभक्ता महे[illegible] ब्राह्मणाः परिकीर्त्तिताः ।
ब्रह्मविद्या म[illegible]विद्या सर्वत्र दुर्लभा कलौ ॥
रहस्या[illegible]स्यं च गोप्तव्यं पशुसंकटे ।

इति महाचीनक्रमः ।

अथ दिव्यचीनक्रमस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

छिन्नमस्ताविधौ देवि क्रमं मे ब्रूहि सत्वरम् ।

शिव उवाच ।

दिव्यचीनक्रमेणैव छिन्नमस्ता वरप्रदा ।
क्रमद्वयं महेशानि पूर्वमेव प्रकाशितम् ॥
[illegible]तस्यास्तिलको देवि भ्रूमध्ये च कुचन्दनम् ।
तदन्ते रोचनापत्रैस्त्रिपुण्ड्रं दिव्यवर्णकैः ॥
श्मशानभस्म[illegible]न्दुं तु तन्मध्ये दापयेत् प्रिये ।
मुखे मुखं प्रदत्वा तु सर्वकालं जपेच्छिवे ॥
योनिचक्रं समालोक्य यत् किंचित् कुरुते नरः ।
तत् तदक्षयमाप्नोति छिन्नाविद्याप्रसादतः ॥
दिक्कालनियमो नास्ति स्थित्यादिनियमो न हि ।
पाताले कुहरे दुर्गे पर्वते तटिनीतटे ॥
अन्तरिक्षे तथा भूमौ सर्वत्र जपमाचरेत् ।
विशेषः कथितो देवि श[illegible]स्य पालकः ॥

इति दिव्यचीनक्रमः ।

अथ गन्धर्वक्रमः ।

देव्युवाच ।

गन्धर्वाख्यं क्रमं देव कथयस्व मयि प्रभो ।

शिव उवाच ।

गन्धर्वाख्यक्रमेणैव सुन्दरी सिद्धिदायिनी ।
गन्धर्वाख्यक्रमो देवि कथ्यते श्रृणु साम्प्रतम् ॥
भ्रूमध्ये कुङ्कुमं देवि तन्मध्ये मालयागुरु ।

अष्टगन्धत्रिपुण्ड्रस्य मध्ये कस्तूरिकान्वितम् ॥
सुगन्धिश्वेतलौहित्यपुष्पैः संभूषितो नरः ।
अष्टगन्धस्य धूपेन नानासौगन्ध्यभूषितः ॥
रक्तमाल्याम्बरधरो मुक्ताहारोपशोभितः ।
पूर्णाभिषिक्ते शिरसि तेन तत्र न मुण्डनम् ॥
सदा चोष्णोदकैः स्नायात् तदभावे यथोदकैः ।
गृहं चित्रैस्तु संचित्रं दर्पणोदरसन्निभम् ॥
वितानध्वजभूषाढ्यं घण्टानादोपशोभितम् ।
पञ्चवादित्रसंयुक्तं नानाघोषसमन्वितम् ॥
अन्तःसूक्ष्माम्बरैर्युक्तं स्वर्णपात्रादिरञ्जितम् ।
ग्रैवेयवलयाङ्गुल्यभूषणैर्भूषितः सदा ॥
नानामधुरभोज्यैश्च दुग्धपानैरनेककैः ।
नानाभोगेन युक्तोऽयं गन्धर्वाख्यक्रमो भवेत् ॥

इति गन्धर्वक्रमः ।

अथ भैरवक्रमः ।

इति संक्षेपतः प्रोक्तं भैरवाख्यं शृणु क्रमम् ।
स्वपुष्पक्रमयोगेन भैरवो भुवि दुर्लभा ॥
स्वपुष्पाख्यक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् ।
तरुणीं सुन्दरीं रम्यां तारुण्यामृतविग्रहाम् ॥
सदा रते साभिलाषां मैथुनोद्यतमानसाम् ।
गन्धद्रव्यसमायुक्तां समानीय महेश्वरि ॥
नग्नां तां च विधायादौ स्वयं नग्नो जपं चरेत् ।
परस्परालोकनं च कर्त्तव्यं च परस्परम् ॥

अविकारी यदा देवि साधनार्हो न चान्यथा ।
विकारे भावमाने च साधको नश्यति क्षणात् ॥
साऽपि चेद्देवदेवेशि सविकारा यदा भवेत् ।
पुष्पिणीमनुना देवि बलात् पुष्पं समानयेत् ॥
द्राविणीमनुना देवि बलाद्दृष्ट्या द्रवं नयेत् ।
केलिदोषवशाद्देवि नायं योगो भविष्यति ॥
तस्मात् पाशवकल्पेन बाला शस्ताऽधुना शिवे ।
बालायामुभयाचारो दक्षिणो मुख्य एव हि ॥

तथा ।

शीघ्रं च सिद्धिकामश्चेद्गवाक्षं योगमभ्यसेत् ।
यत्र स्त्रीणां समूहोऽस्ति नदीनदसमुद्रके ॥
यत्र स्नानं प्रकुर्वन्ति गवाक्षं तत्र कारयेत् ।
तमालोक्य प्रयत्नेन जपं कुर्यान्निरन्तरम् ॥
इति संक्षेपतः प्रोक्तं तिलकं शृणु पार्वति ।
वामहस्ततले यन्त्रं विलिख्य यत्नतः शिवे ॥
अवशिष्टेन तिलकं कारयेत् परमेश्वरि ।
भाले कस्तूरिकाविन्दुं मुनिपत्रं कुचन्दनम् ॥
तन्मध्ये श्वेतविन्दुं च केशादिपूर्ववद्भवेत् ।
दशविद्याविधौ देवि केशवर्धनमीरितम् ॥

इति भैरवक्रमः ।

अथ कमलाक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि कमलाक्रमनिर्णयम् ।

शिव उवाच ।

भ्रूमध्ये घुसृणं देवि सिन्दूरं तदनन्तरम् ।

श्वेतं त्रिपुण्ड्रं देवेशि तन्मध्ये केशरं शिवे ॥
स्नातः शुक्लाम्बरधरस्त्रिसन्ध्यं स्नानमाचरेत् ।
हविष्याशी भूमिशायी मधुरान्नप्रियो नरः ॥
भृगुवासरपर्यन्तं द्वितीयं भृगुवासरम् ।
प्रत्यहं पूजयेद्द देवि नानावादित्रनिस्वनैः ॥
दिनषोडशपर्यन्तं प्रत्यहं तु समाचरेत् ।
पुनस्तद्दिनमारभ्य तद्दिनान्तं महेश्वरि ॥
पूजयेत् प्रयतो नित्यं देवताभावतत्परः ।
प्रदक्षिणा प्रकर्त्तव्या कलाभावक्रमेण च ॥
दीपास्तत्र प्रदातव्याः कलावृद्धिक्रमेण च ।
ब्राह्मणान् भोजयेन्नित्यं कलाभा[illegible]ेण च ॥
इत्याचारपरः श्रीमान् विष्णुरूपो नरो भवेत् ।
राजचिह्नानि सर्वाणि प्रयतः पूजयेत् सदा ॥
सर्वसाम्राज्यलक्ष्म्यास्तु नाथो भूयान्न संशयः ।
धनदा तस्य गेहस्था राजा च किङ्करो भवेत् ॥

इति कमलाक्रमः ।

अथ ब्रह्ममार्गक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि ब्रह्ममार्गक्रमं शिव ।

शिव उवाच ।

वेश्यायाः कज्जलं देयं सिन्दूरेण त्रिपुण्ड्रकम् ।
हरिद्रा भ्रूयुगे देया श्वेतपत्रं समाचरेत् ॥
रक्तविन्दुं च तन्मध्ये सर्वदा तद्गतो भवेत् ।
भोजने शयने रात्रौ मैथुनं सर्वदा भवेत् ॥

उच्छिष्टहस्तो देवेशि उच्छिष्टेन बलिं हरेत्।
शक्त्युच्छिष्टं परोच्छिष्टं भोजनं सार्वकालिकम्॥
जपं कुर्यान्महेशानि रात्रावेव जपं चरेत्।
ताम्बूलभक्षी मांसाशी भुक्त्वा चार्च्चां च कारयेत्॥
उच्छिष्टहस्तः प्रजपेद्ब्रह्ममार्गः प्रकीर्त्तितः।

इति ब्रह्ममार्गक्रमः।

अथ महाराजक्रमः।

देव्युवाच।

महाराजक्रमं देव कथयस्व मम प्रभो।

शिव उवाच।

महाराजक्रमो देवि कथ्यते शृणु साम्प्रतम्।
नानाविचित्रसोपानमण्डिते चित्रमण्डपे॥
सौधाट्टालकसंशोभिवितानध्वजशोभिते।
नानोपवनसंयुक्ते हंसमायूरशोभिते॥
नानाविचित्रशब्देन गजवाजिविराजिते।
सर्वतो भद्रसंयुक्ते नानाभरणभूषिते॥
धूपामोदसमायुक्ते चित्रदीपैरलङ्कृते।
रत्नसिंहासने रम्ये रत्नाभरणभूषिते॥
जातीचम्पकपुन्नागकेतकीगन्धशोभिते।
कर्पूरागुरुकस्तूरीरोचनाकुङ्कमैर्युते॥
जटामांस्यादिसौगन्धलेपनैः परिभूषितः।
घण्टादिनादसंयुक्तः सर्वदा शुद्धमानसः॥
आनन्दमग्नहृदयो दिव्यवस्त्रैरलङ्कृतः।
दिव्यमालाम्बरधरो दिव्यभूषाविभूषितः॥

ताम्बूलपूर्णवदनो देवेन्द्र इव राजितः ।
वेदपात्रैर्नृत्यपात्रैर्भोगपात्रैर्निनादितः ॥
नृत्यगीतैश्च वादित्रैश्चतुर्विंशतिवादकैः ।
सङ्गीतरागतालैश्च ध्वनिभिश्च निनादितः ॥
नानादेशीयभाषाभिर्गद्यपद्यैरलङ्कृतः ।
नानाविचित्रभूषाभिर्भूषितः साधकोत्तमः ॥
समस्तराजचर्य्याभिर्मोहयन्राजनायिकाः ।
श्रीमहाराजमातङ्गी सर्वदेवप्रमोहिनी ॥
तस्यास्तु तिलकं देवि कथ्यते शृणु पार्वति ।
कुचन्दनं च भ्रूमध्ये गुरुसारस्तदन्तरे ॥
कस्तूरिकात्रिपुण्ड्रं च तन्मध्ये केशरं शिवे ।
महाराजक्रमो देवि कथितस्तु मया तव ॥
अथ वा देवदेवेशि स्वयं मन्त्रमयो भवेत् ।

इति महाराजक्रमः ।

अथ दिव्यभावक्रमः ।

देव्युवाच ।
वद श्रीभुवनेशान्याः क्रमं परमदुर्लभम् ।
शिव उवाच ।
दिव्यभावक्रमेणैव भुवना शीघ्रसिद्धिदा ।
हकारः शिवरूपः स्याद्रकारः पापनाशकः ॥
ईकारः कामरूपः स्यान्माया तेन प्रकीर्त्तिता ।
ब्रह्माण्डमेतद्देवेशि मायया वेष्टितं भवेत् ॥
यस्या मायां विना देवि न किञ्चित् प्रतिभासते ।
यद्भासरहितं किञ्चिन्न च तद्भासते क्वचित् ॥

यद्भासासहितं देवि जगदेतत् प्रभासते ।
यां विना तु महेशानि जगज्जडसमं भवेत् ॥
एवं क्रमेण देवेशि सदा तद्गतमानसः ।
त्रैलोक्यविजयी भूयान्नात्र कार्या विचारणा ॥
एतस्यास्तिलकं देवि कथ्यते यत्नतः शृणु ।
श्वेतचन्दनविन्दुं तु भ्रूमध्ये तु प्रलापयेत् ॥
गन्धसारं तदन्ते स्यात् त्रिपुण्ड्रं दिव्यवर्णकैः ।
रक्ताक्षतांश्च तन्मध्ये तेन सिद्धीश्वरो भवेत् ॥

इति दिव्यभावक्रमः ।

अथ धूम्रक्रमः ।

देव्युवाच ।

देवेश श्रोतुमिच्छामि धूमावत्याः क्रमं शिव ।

शिव उवाच ।

धूमावत्याः क्रमो देवि कथ्यते शृणु पार्वति ।
भ्रूमध्ये कज्जलं देवि भस्मविन्दुस्तदन्तरे ॥
त्रिपुण्ड्रं च ललाटे स्याच्छवभस्म तदन्तरे ।
कृष्णवस्त्राम्बरधरः कृष्णगन्धविभूषितः ॥
गन्धपुष्पेण संयुक्तः श्मशानासनसङ्गतः ।
धूम्रवर्णं जगत् सर्वं मन्त्री धूम्रमयो भवेत् ॥
काकपिच्छं चासनं स्यात् कृष्णद्रव्यं प्रधारयेत् ।
ब्रह्मचारी मिताहारो निर्विकल्पो जितेन्द्रियः ॥
सत्यवादी दृढाचारो भूशायी कुशविष्टरः ।
स्नानं त्रिषवणं कुर्यादुच्चाटनपरायणः ॥
स्वचित्तं काकवत् कृत्वा जगदुच्चाटयेद्ध्रुवम् ।

इत्याचारपरो भूयाद्धूम्रक्रमगतो भवेत् ॥

इति धूम्रक्रमः ।

अथ सौभाग्यक्रमस्तत्रैव ।

सौभाग्यार्चाक्रमेणैव बगला शीघ्रसिद्धिदा ।
पीताम्बरधरो मन्त्री पीतभूषणभूषितः ॥
पीतमाल्याम्बरधरः पीतगेहे समास्थितः ।
पीतद्रव्योपभोगी च पीतासनसमन्वितः ॥
पीतहोमो पीतपुष्पी पीतशक्तिसमन्वितः ।
रोचनां भ्रुवि संदद्यात् कुङ्कुमं मुनिपत्रकम् ॥
हरिद्रया त्रिपुण्ड्रं च तन्मध्ये खादिरं शिवे ।
हरिचन्दनधूपेन धूपितः परमेश्वरि ॥
सर्वाङ्गसुन्दरीं रम्यां सर्वावयवशोभिताम् ।
नवोढां पुष्पिणीं चैव प्रार्थयेद्विप्रकन्यकाम् ॥
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां कुमारिकाम् ।
अथ वा भौमवारे वा निशायां भृगुवासरे ॥
सुवासितेन तैलेन कुर्यादभ्यञ्जनं तथा ।
तूलिकातल्पमानीय आस्तीर्योदङ्मुखस्तदा ॥
तस्योपरि समास्तीर्य समन्त्रैर्जातिचम्पकैः ।
कर्पूरं चैव कस्तूरीमिश्रितं चन्दनं तथा ॥
सर्वाङ्गे लेपनं कुर्याल्लक्ष्मीसूक्तेन बुद्धिमान् ।
पर्यङ्कोपरि तां कन्यां चन्दनेन विलेपिताम् ॥
ध्रुवाद्यैरिति मन्त्रेण कन्यां दक्षिणतो मुखी ।
उन्मुखीं शयने कुर्याच्छ्रीसूक्तेन कुमारिकाम् ॥

तस्याः पादौ प्रसार्याथ गुप्तेनार्चनमाचरेत् ।
न्यस्त्वा षोढाद्वयं चैव वगलापञ्चकं न्यसेत् ॥
कन्यां चैव न्यसेद्देवं तत्तदङ्गानि संस्मरेत् ।
अनन्यजपुरं चैव मार्जयेन्मूलविद्यया ॥
गन्धद्वारेति मन्त्रेण कुर्यात् कस्तूरिलेपनम् ।
मूलमन्त्रेण चैतन्यपुष्पमालां समर्पयेत् ॥
निवेदयेद्द्रव्यशुद्धिं ततश्च जपमाचरेत् ।
प्रयोगः सिद्धिदः पुंसां मन्त्रसिद्धिकरः परः ॥
एतत्क्रमं विना देवि प्रयोगो न भवेत् क्व चित् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सिद्ध्यर्थी देवि भूतले ॥
अभिमानाष्टकं त्यक्त्वा त्यक्त्वा वै दूषणत्रयम् ।
त्यक्त्वा पञ्चेन्द्रियासक्तिं सौभाग्यक्रममाचरेत् ॥

इति सौभाग्यक्रमः ।

अथ दिव्यवीरपशुभावाः ।

(भावचूडामणौ)

देव्युवाच ।

भावस्तु त्रिविधो देव दिव्यवीरपशुक्रमात् ।
गुरवस्त्रिविधाश्चात्र तथैव मन्त्रदेवताः ॥
शक्तिमन्त्रो महादेव विशेषान्मन्त्रसिद्धिदः ।
आद्यभावो महादेव श्रेयान् सर्वसमृद्धिदः ॥
द्वितीयो मध्यमश्चैव तृतीयः सर्वनिन्दितः ।

सर्वनिन्दित इति ब्राह्मणेतरविषयः । ब्राह्मणस्य तु पशुभावान्यभावश्रयणे निन्दाश्रवणात् ।

तथा ।

लक्षजापात् तथा होमात् कायक्लेशादिविस्तरैः ।

न भावेन विना देव तन्त्रमन्त्राः फलप्रदाः ॥
किं वीरसाधनेनैव विश्वदृष्टिकुलाकुलैः ।
किं पीठपूजलेनैव किं कन्याभोजनादिभिः ॥
स्वयोषित्प्रीतिदानेन किं परेषां तथैव च ।
किं जितेन्द्रियभावेन किं कुलाचारकर्मणा ॥
यदि भावविशुद्धात्मा न स्यात् कुलपरायणः ।
भावेन लभते मुक्तिं भावेन कुलवर्धनम् ॥
भावेन कुलवृद्धिः स्याद्भावेन कुलशोभनम् ।
किं न्यासविस्तरेणैव किं तत्तच्छुद्धिविस्तरैः ।
किं तथा पूजनेनैव यदि भावो न जायते ।
केन वा पूज्यते विद्या न चेत् केन न जप्यते
फलाभावश्च देवेश भावाभावात् प्रजायते ।

तथा ।

प्रथमो दिव्यभावस्तु कथ्यते शृणु सादरम् ।
यद्वर्णदेवता यत्र तत्तेजःपुञ्जपूरितम् ॥
तेजोमयं जगत् सर्वं विभाव्य मूर्त्तिकल्पनम् ।
तत्तन्मूर्त्तिमये मन्त्रे स्वेन स्वेनैव वा पुनः ॥
आत्मानं तन्मयं दृष्ट्वा सर्वभावं तथैव च ।
तत्सर्वं योषिति ध्यात्वा चिन्तयेद्यतमानसः ।
अशेषकुलसंपन्ना नानाजातिसमुद्भवा ।
नानादेशोद्भवा वाऽपि गुणलावण्यसंयुता ॥
द्वितीयवत्सरादूर्ध्वं यावत् स्यादष्टमाब्दकम् ।
तावत् कुमारी विज्ञेया मन्त्रयन्त्रफलप्रदा ॥
कुमारीपूजनाच्चैव कुमारीभोजनादपि ।

एकद्वित्र्यादिबीजानां फलदा नात्र संशयः ॥
ताभ्यः पुष्पं फलं वाऽपि अनुलेपादिकं तथा।
बलिप्रियं च नैवेद्यं दत्वा तद्भावपूरितः ॥
दत्वा तदङ्ग आत्मानं बलिभावे विचेष्टितम्।
ताभिः प्रायः कथालापं क्रीडाकौतूहलादिकम् ॥
यथातथं तत्प्रियकृत् कृत्वा सिद्धीश्वरो भवेत्।
तस्मात् षोडशपर्यन्तं युवतीति प्रवक्ष्यते ॥
तत्र भावप्रकाशश्चेत् सद्भावः परमो मतः।
रक्षितव्याः प्रयत्नेन अक्षतास्ता न कारयेत् ॥
एष ते कथितो देव दिव्यभावः सुखावहः।
न देयो यस्य कस्यापि पशोर्गोप्यः प्रयत्नतः ॥

इति दिव्यभावः।

अथ वीरभावस्तत्रैव।

देव्युवाच।

वीरभावो महादेव कथ्यते शृणु भैरव।
निर्द्वन्द्वमानसो भूत्वा हृदा कामकला तनुः ॥
निशासु पूजा प्रवरा हेतुयुक्ता तथैव हि।
निजं कुलं समाधाय स्वयं भैरवरूपधृक् ॥
कुलं च भैरवीरूपं तद्गात्रे न्यासविस्तरम्।
विन्यसेत् केवलं न्यासं नवयोन्यात्मकं तथा ॥

नवयोन्यत्मकमिति श्रीविद्यापरम्।

प्रसूनतूलिकामध्ये पुष्पप्रकरसंयुते।
नानागन्धसमाकीर्णे कुलद्रव्येण यन्त्रकम् ॥
लिखित्वा पूजयेच्छक्तौ घटस्थापनपूर्वकम्।

स्ववामभागे षट्कोणं तन्मध्ये ब्रह्मरन्ध्रकम् ॥
लिखित्वा तत्र कुम्भं वै सौवर्णं राजतं तथा ।
ताम्रं भूमिमयं वाऽपि महालोहविवर्जितम् ॥
स्थापयेत् कलशाधारं कुम्भं सुगन्धिवासितम् ।
हेतुद्रव्यं ब्राह्मणादिभेदतः संप्रपूरयेत् ॥

ब्राह्मणादिभेदत इति क्षीराज्यमध्वासवरूपं ब्राह्मणादिभिः पूरणीयमित्यर्थः । एवं च वीरब्राह्मणस्य हेतुस्थाने क्षीरमेव च । पशोस्तु तदपि नेति बोध्यम् ।

तत्र यन्त्रं विलिख्यादौ यद्यत् कुलसमुद्भवम् ।
ध्यात्वेष्टदेवतां तत्र जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥
धेनुयोनी प्रदर्श्याथ प्रस्तुतं तद्विचेष्टितम् ।
दृष्ट्वाऽमृतं स्वपात्रं वै नृत्यन्ति योगिनीगणाः ॥
नृत्यन्ति भैरवाः सर्वे नृत्यन्ति मातरोऽपि च ।
इन्द्रादयः सुराः सर्वे नृत्यन्ति मधुलोलुपाः ॥
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या नृत्यन्ति हर्षतत्पराः ।
अर्घभाण्डं त्रिधा कृत्वा गुरवे चैकभागकम् ॥
एवं कुलाय वै दत्त्वा एकेन देवतर्पणम् ।
पीत्वा कुलरसं नानावस्त्रालङ्कारभूषणम् ॥
साक्षाद्यदि गुरुर्न स्यात् तदा तोये विसर्जयेत् ।
आनन्दरूपवान् भूत्वा पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
तत्तत्कल्पविधानेन तत्तद्यत्नेन पूजयेत् ।
विसर्जनं विधायान्ते स्वकुले योजयेत् ततः ॥
तद्बिम्बरसपानेन अमृतं भक्ष्यते मया ।
तच्चकोररसास्वादे सम्मदो मम जायते ॥
तत्फलग्रहणादेव मेरुशृङ्गावरोहणम् ।

लतालिङ्गनमात्रेण सुधाधौतकलेवरः ॥
मूलयोगे कृते तत्र जपेदष्टसहस्रकम्।
नित्यजाप्ये च होमे च यत्र सङ्ख्या न चोदिता ॥
तत्रेयं गणना प्रोक्ता अष्टोत्तरसहस्रकम्।
जलपूतं हविर्द्रव्यं गृहीत्वा तर्पयेत् ततः ॥
विधाय तर्पणं देव प्रदक्षिणमनुव्रजेत्।
स्तुत्वा प्रणम्य कल्पोक्तस्तवेन स्तावयेत् ततः ॥
इति वीरकुलं देव देववन्द्यं मनोहरम्।

(कालीकल्पे)

रात्रौ पर्यटनं चैव रात्रौ शक्तिं प्रपूजयेत्।
अकृत्वा कथमीशान मद्भक्तः कौलिको भवेत् ॥

(मेरुतन्त्रे)

कुलं तु गोपयेद्देवि नारिकेलरसाम्बुवत्।
गुरुं प्रकाशयेद्धीमान् मन्त्रं यत्नेन गोपयेत् ॥

(कुलार्णवे)

वेदशास्त्रपुराणानि स्पष्टा वेश्याङ्गना इव ।
इयं तु शाम्भवी विद्या गुप्ता कुलवधूरिव ॥
सुगुप्तं कौलिकाचारमनुगृह्णन्ति देवताः।
वाञ्छासिद्धिं प्रयच्छन्ति नाशयन्ति प्रकाशनात् ॥

(मेरौ)

न दिवा सेवयेन्नारीं तद्योनिं न निरीक्षयेत्।
स्त्रियं शतापराधां वा पुष्पेणापि न ताडयेत् ॥
दोषान् न गणयेत् स्त्रीणां गुणानेव प्रकाशयेत् ।

तथा।

कन्याः कुमारिका नग्ना उन्मत्ता अपि योषितः।

न निन्देत जुगुप्सेत न हसेन्नावमानयेत् ॥
एकवृक्षं श्मशानं च समूहं योषितामपि ।
नारीं च रक्तवसनां दृष्ट्वा वन्देत भक्तितः ॥

तथा ।

तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः कुलवृक्षेषु सर्वदा ।
तत्पत्रेषु न भोक्तव्यमर्कपत्रे विशेषतः ॥
न स्वपेत् कुलवृक्षाधो न चोपद्रवमाचरेत् ।
दृष्ट्वा भक्त्या नमस्कुर्याच्छेदयेन्न कदा च न ॥
श्लेष्मान्तककरञ्जार्कनिम्बाश्वत्थकदम्बकाः ।
विल्वो वटोऽदुम्बरश्च चिञ्चा चेति दश स्मृताः ॥
प्रायश्चित्तं भृगोः पातं सन्यासं व्रतधारणम् ।
तीर्थयात्राभिगमनं कौलः पञ्च विवर्जयेत् ॥

प्रायश्चित्तादिकं तन्त्रोक्तभिन्नम् ।

(रौद्रे)

वीरभावं महेशानि सर्वथा न प्रकाशयेत् ।

(वीरचूडामणौ)

पूजाकाले महेशानि यदि कोऽप्यत्र गच्छति ।
दर्शयेद्वैष्णावीं मुद्रां विष्णुन्यासं तथा स्तवम् ॥
अन्तः शाक्ता बहिः शैवाः सभायां वैष्णवा मताः ।
नानारूपधरा वीरा विचरन्ति महीतले ॥

(भावचूडामणौ)

यद्देशे विद्यते वीरस्तत्कुलं वाऽपि भैरव ।
न च मारीभयं तत्र न च राजभयादिकम् ॥
सुमङ्गलं सदा तत्र धनपुत्रविवर्धनम् ।
लक्ष्मीस्तत्र महादेव सुस्थिरा भवति ध्रुवम् ॥

मन्त्रः स्वप्नप्रबोधिन्या अवश्यं वृक्षमूलके ।
योजनीयः प्रयत्नेन न च विघ्नः प्रजायते ॥
नान्यवीरस्य तद्योग्यं ग्रहणैर्दैवतैरपि ।
योगिनीभिर्न लुप्तं च तन्न पापेन लिप्यते ॥
यत्र तत्र कुजे वारे श्मशानगमने कृते ।
पूजाफलं भवेत् तत्र सप्तवासरसम्मितम् ॥
चतुर्दश्यां गते तत्र पक्षपूजाफलं भवेत् ।
न गच्छेन्नार्यतः स्थाने पशुरेव न संशयः ॥
नास्त्यस्मादधिकं देव इति चिन्तापरायणः ।
मदेन द्रव्यभोक्ता च भवेत् कुलपरायणः ॥
साधके क्षोभमापन्ने मम क्षोभः प्रजायते ।
तस्माद्यत्नाद्वीरवरो भवेद्भोगयुतः सुखी ॥
भोगेन मोक्षमाप्नोति भोगेन कुलसाधनम् ।
विना हेतुमनास्वाद्य क्षोभयुक्तो महेश्वर ॥
न पूजा मम संपर्कं न ध्यानमनुचिन्तनम् ।
तस्माद्भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥
नात्र प्रच्युतिदोषोऽस्ति नापरं दोषभूषणम् ।
यद्यद्वदति निद्राति यत् करोति यदर्चति ॥
तत्सर्वं कुलरूपं च ध्यात्वा च विहरेत् सुखी ।
एकाकी निर्जने देशे श्मशाने पर्वते वने ॥
शून्यगेहे नदीतीरे निःसङ्गो विहरेन्मुदा ।
वीराणां जपकालस्तु सर्वकालः प्रशस्यते ॥
सर्वदेशे सर्वपीठे कर्त्तव्यं च न संशयः ।

यदि विप्रो भवेद्भ्रष्टः कुलधर्मपरायणः ॥
तदा तेन विधानेन कर्त्तव्यं कुलतोषणम् ।
अपरापुष्पगर्भे तु कुलस्थानं मनोहरम् ॥
सर्वदेवमुखं तत्र महाकामकलात्मकम् ।
हयारिकुसुमे देवः स्वयमस्ति सदाशिवः ॥
तन्मध्ये लघुमादाय पुष्पमध्ये तु चन्दनम् ।
रक्तं वा कुसुमं दत्वा ध्यात्वाऽऽत्मानं शिवात्मकम् ॥
योजयेच्छिवशक्त्योस्तु ऐक्यं संभावयेद्धिया ।
क्षणं विचिन्त्य तत्रैव संपूज्य परमेश्वरीम् ॥
जप्त्वा तदेव कुण्डाख्यं द्रव्यं परमदुर्लभम् ।
यत्रापराजितापुष्पं जपापुष्पं च भैरव ॥
करवीरे रक्तशुक्ले द्रोणपुष्पं च तिष्ठति ।
तत्र देवी वसेन्नित्यं तद्यन्त्रे पूजयेन्मम ॥
दत्ते चैव जपापुष्पे पट्टवस्त्रफलं लभेत् ।
ब्रह्महत्यादिकं पापं क्षणान्नश्यति निश्चितम् ॥
अपरायास्तु माहात्म्यं वक्तुं न हि महेश्वर ।
वीरसाधनकार्यं च कर्त्तव्यं वीरपूरुषैः ॥
दिव्यैरपि च कर्त्तव्यं पशुभिर्न च पामरैः ।
वरं पामरकार्यं च न पशोरिति निश्चितम् ॥
यद्यन्न मत् पुरा प्रोक्तं संकेतं मन्त्रसाधने ।
अञ्जनं गुटिकादि च कुर्याद्वीरो महाबलः ॥
दिव्ये वीरे न भेदोऽस्ति यद्भेदं तत् तु कथ्यते ।
शान्तो विनीतो मधुरः कलालावण्यसंयुतः ॥

दिव्यस्तु देववत् प्रायो वीरश्चोद्धतमानसः ।

(कुलरत्नावल्याम्)

दिव्यवीरौ सुरेशानि शक्तिसेवापरायणौ ।
वामिकौलिकभेदाभ्यां प्रत्येकं द्विविधौ स्मृतौ ॥

(भावचूडामणौ)

विभूतिभूषणैर्वाऽपि चन्दनैर्वा विलेपितः ।
आकारगोपनो वाऽपि त्यक्तो वा कुलभैरव ॥
रक्तचन्दनदिग्धो वा वैष्णवो वाऽप्यवैष्णवः ।
अपमाने तु पूजायां हृष्टः पुष्टः सदा भवेत् ॥
देवनिन्दापरो वाऽपि तत्र पूजापरोऽपि वा ।
पूजा च तत्तद्रहितः कुलाकुलमते स्थितः ॥
निजभावसमायुक्तो देववद्विरहेत् क्षितौ ।
स्वकुलान्ते पुरश्चर्या कार्या रात्रौ न चान्यथा ॥
वेदहीने द्विजे देव यथा न श्रुतिसंकथा ।
विष्णुभक्तिं विना देवीभक्तिर्न प्रभवेद्यथा ॥
शाक्तज्ञानं विना मुक्तौ यथा हास्याय कल्पते ।
गुरुं विना यथा तन्त्रे नाधिकारः कथं चन ॥
पतिहीना यथा नारी सर्वकर्मविवर्जिता ।
कुलं विना देवविधौ कदाऽपि मम साधने ॥
नाधिकारीति कौलेय तस्माद्भावपरो भवेत् ।
अविनीतं कुलं यस्य स क कथं मम पूजकः ॥
तस्माद्यत्नात् तथा कार्यं यथा स्याद्विनयान्वितम् ।
भावाभावे कुले शास्त्रे नाधिकारः कथं चन ॥
तेन भावविशुद्धश्च साधकः कौलिको भवेत् ।

इति वीरभावक्रमः ।

अथ पशुभावस्तत्रैव ।

देव्युवाच ।

पशुभावं प्रवक्ष्यामि शृणु वत्स समाहितः ।
यथाविधि पशोर्विद्यां गृहीत्वा भावतत्परः ॥
प्रथमं पूर्वसेवार्थं यत्नतः शुद्धिमाचरेत् ।
नमस्य भोजनं कुर्यान् न स्त्रियं मनसा स्मरेत् ॥
न परद्रव्यलोभी स्यान्न भोगे मानसं भजेत् ।
सिन्धुतीरे पर्वते वा कानने च सुरालये ॥
विल्वमूले विविक्ते च पुण्यक्षेत्रे च शोभने ।
न शूद्रदर्शनं कुर्यात् कौटिल्यं यत्नतस्त्यजेत् ॥
देवता शुभवर्णा तु ध्यातव्या सुसमाहितैः ।
त्रिसन्ध्यं देवपूजा तु त्रिसन्ध्यं जपमाचरेत् ॥
रात्रौ मन्त्रं च मालाश्च स्पृशेन्नैव कदा चन ।
न मन्त्रमुच्चरेद्भुक्त्वा मौनी स्यात् सर्वकर्मसु ॥
पर्वकाले स्त्रियं नैव गच्छेत् साधकसत्तमः ।
पुष्पं गन्धं जलं चैव स्वयमानीय पूजयेत् ॥
मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठीं परिवर्जयेत् ।
ऋतुकालं विना चापि न गच्छेत् स्त्रियमादरात् ॥
पुराणश्रवणे श्रद्धा वेदवेदार्थतत्परः ।
न रात्रौ भोजयेद्विद्वान् ताम्बूलं परमेश्वर ॥
गुरुणा यद्यदादिष्टं तत्सर्वं यत्नतश्चरेत् ।
स्वजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ॥
स्पृष्ट्वा तथा समाघ्राय पञ्चगव्येन शुध्यति ।
रक्तवस्त्रं न गृह्णीयाद्देवीभक्तिपरायणः ॥

विष्णुतन्त्रेषु कल्याणि तदनुष्ठानमेव च।
कार्यं वीरकथालापं न कुर्याद्वीरवन्दिते ॥
नित्यश्राद्धं गयाश्राद्धं सन्ध्यावन्दनमेव च।
तीर्थस्नानं पीठदेशगमनं धर्मतत्परः ॥

(मेरुतन्त्रे)

देवस्थाने गुरुस्थाने श्मशाने च चतुष्पथे।
पादुकासनविण्मूत्रमैथुनानि विवर्जयेत् ॥
प्रमत्तामन्त्यजां कन्यां पुष्पितां पतितस्तनीम्।
विरूपां वा मुक्तकेशीं कामार्त्तां च न निन्दयेत् ॥
कन्यायोनौ पशुक्रीडां दिग्वस्त्रां प्रकटस्तनीम्।
नालोकयेत् परद्रव्यं परदारांश्च वर्जयेत् ॥
धान्यगोगुरुदेवाग्निकुशपुस्तकसंमुखम्।
नैव प्रसारयेत् पादौ न चैतानि विलङ्घयेत् ॥
आलस्यमदसंमोहशापपैशून्यविग्रहान्।
असूयामात्मसन्मानं परनिन्दाश्च वर्जयेत् ॥

(भावचूडामणौ)

भावस्तु मानसो धर्मः शाब्दः स हि कथं भवेत्।
तस्माद्भावो न वक्तव्यो दिङ्मात्रं समुदाहृतम् ॥
यथेक्षुगुडमाधुर्यमशनैर्ज्ञायते प्रभो।
तथा भावविभावस्तु मनसा परिभाव्यते ॥

तन्त्रान्तरे।

उत्तमो दिव्यभावः स्याद्वीरभावस्तु मध्यमः।
पशुभावोऽवरः प्रोक्तो भावमेकं समाश्रयेत् ॥

इति पशुभावक्रमः।

अथ संप्रदायः।

(सिद्धान्तसंग्रहे)

संप्रदायानथो वच्मि गौडकाश्मीरकेरलान्।
सर्वार्थसिद्धिसंकल्पपूजापुष्पार्पणादनु॥
नैवेद्यान्ते च हवनं ताम्बूलान्ते वलिर्मतः।
पूजनं वामहस्तेन दक्षहस्तेन तर्पणम्॥
साक्षाद्दानं मकारणे हृदि देव्या विसर्जनम्।
गौडाक्षसप्रदायोऽयं सेवितो वामिभिः सदा॥
विनियोगादर्च्चनार्थं वलिः पीठार्च्चनादनु।
होमः पञ्चोपचारान्ते दक्षिणार्च्चनतर्पणे॥
गव्यं तु ताम्रपात्रस्थं वारुणी स्याद्घृतं विना।
लवणार्द्रकपिण[illegible]ण्डुमाषपञ्चकम्॥
लशुनं च महादेवि मांसप्रतिनिधिः स्मृतः।
मत्स्याभावे तु क्रमुकं ताम्बूलं यच्चदामिषम्॥
गुडाभावे तण्डुलं वा भर्जितं चणकादिकम्।
विलिखेत् पञ्चमाभावे शक्तिबीजं त्रिकोणकम्॥
वामोरौ साधको रक्तं चन्दनेन विधानवित्।
शक्तिं संपूज्य तत्रैव तद्गायत्रीं शतं जपेत्॥
स्वयम्भूकुसुमाभावे रक्तचन्दनकं क्षिपेत्।
हयारिकुसुमं शम्भुः शक्तिः प्रोक्ताऽपराजिता॥
तयोः समेलनोत्पन्नं गृह्णीयाच्च कुलामृतम्।

तथा।

ताम्रे गव्यादिपिण्याकं गृञ्जनं पायसं पयः।
एते तत्त्वानुकल्पाश्च सहस्रारे विसर्जनम्॥

काश्मीरसंप्रदायोऽसौ विज्ञेयः कौलिकप्रियः ।

पिण्याकं तिलकल्कः । गृञ्जनं लशुनम् ।

तथा ।

सङ्कल्पो देवताप्रीत्यै तत्त्वानां भावनैव हि ।
आत्मा विद्या शिवः सर्वः पूर्णश्चेति क्रमेण च ॥
पूजा पञ्चोपचारान्ते पूजान्ते च बलिर्भवेत् ।
पूजनं दक्षहस्तेन वामहस्तेन तर्पणम् ॥
होमः समस्तकर्मान्ते हृद्येवोद्वासनं स्मृतम् ।
केरलाख्यः संप्रदायो मुनिभिः समुपासितः ॥

इति संप्रदायक्रमः ।

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्र्यचित्रामृत-
स्रोतःशालिनि संनिबन्धनसरित्संभेदमभ्यर्हितम् ।
सन्मुक्तोपमयुक्तिभाजि नवमो रम्यस्तरङ्गोऽगमत्
सर्वोर्वीपतिनाथनिर्मितपुरश्चर्यार्णवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्यार्णवे दशमहाविद्यापुरश्चरणनिरूपणं नाम नवमस्तरङ्गः ।

# अथ सरस्वत्यादिमन्त्रास्तत्पुरश्चरणविशेषाश्च प्रदर्श्यन्ते ।

तथा च (शारदायाम्)

अद्रिर्वरुणसंरुद्धो दवाग्वादिनि ठद्वयम् ।
वागीश्वर्या दशार्णोऽयं मन्त्रो वाग्विभवप्रदः ॥
ऋषिः कण्वो विराट्छन्दो देवता वाक् समीरिता ।
शिरःश्रवणदृङ्नासावदनान्धुगुदेष्विमान् ॥
न्यासार्णान् प्राग्वदङ्गानि मातृकोक्तानि कल्पयेत् ।

अथ ध्यानम् ।

तरुणशकलमिन्दोर्बिभ्रती शुभ्रकान्तिः
कुचभरनमिताङ्गी संनिषण्णा सिताब्जे ।
निजकरकमलोद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः
सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् ततः ।
पुण्डरीकैः पयोऽभ्यक्तैस्तिलैर्वा मधुराप्लुतैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

हृदयान्ते भगवति वदशब्दयुगं ततः ।
वाग्देवि वह्निजायान्तं वाग्भवाद्यं समुद्धरेत् ॥
मनुं षोडशवर्णाढ्यं वागैश्वर्यफलप्रदम् ।
मनोः षड्भिः पदैः कुर्यात् षडङ्गं जातिसंयुतैः ॥

अथ ध्यानम् ।

शुभ्रां शुभ्रविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां

व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः।
बिभ्राणां कमलासनां कुचनतां वाग्देवतां सुस्मितां
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

हविष्याशी जपेत् सम्यग्वसुलक्षमनन्यधीः ।
दशांशं जुहुयादन्ते तिलैराज्यपरिप्लुतैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तारो माया धरो विन्दुः शक्तिस्तारं सरस्वती ।
ङेन्ता नत्यन्तिको मन्त्रः प्रोक्त एकादशाक्षरः ॥
ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवोर्मध्ये नवरन्ध्रेषु च क्रमात् ।
मन्त्रवर्णान् न्यसेन्मन्त्री वाग्भवेनाङ्गकल्पना ॥

अथ ध्यानम् ।

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां
चन्द्रार्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः सम्बिभ्रतीमादरात् ।
वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च तुङ्गस्तनीं
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हंसाधिरूढां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्द्वादशलक्षाणि तत्सहस्रं सिताम्बुजैः ।
नागचम्पकपुष्पैर्वा जुहुयात् साधकोत्तमः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

वाचस्पतेऽमृते भूयः प्लुवः प्लुवेति कीर्त्तयेत् ।
वागाद्यो मुनिभिः प्रोक्तो रुद्रसङ्ख्याक्षरो मनुः ॥
कुर्यादङ्गानि विधिवद्वागाद्यैः पञ्चभिः पदैः ।

अथ ध्यानम् ।

आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं

बिभ्राणा तरुणेन्दुबद्धमुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा ।
भालोन्मीलितलोचना कुचभराक्रान्ता भवद्भूतये
भूयाद्वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानाऽनिशम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रुद्रलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ।
मातृकाकल्पिते पीठे पूजयेत् तां यथा पुरा ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

तोयस्थं शयनं विष्णोः सकेवलचतुर्मुखम् ।
विन्द्वर्धीशयुतो वह्निविन्दुसव्योऽम्बुमान् भृगुः ॥
उक्तानि त्रीणि बीजानि सद्भिः सारस्वतार्थिनाम् ।
अङ्गानि कल्पयेद्बीजैद्विरुक्तैर्जातिसंयुतैः ॥

अथ ध्यानम् ।

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलालङ्कृतां बाहुभिः स्वै-
र्व्याख्यां वर्णाक्षमालां मणिमयकलशं पुस्तकं चोद्वहन्तीम् ।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविनमन्मध्यदेशामधीशां
वाचामीडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पायसेनाज्यसिक्तेन संस्कृते हव्यवाहने ॥

अथ चिन्तामणिसरस्वतीमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथादौ संप्रवक्ष्यामि चिन्तामणिसरस्वतीम् ।
तारं माया च हसरानैकाराढ्यान् सविन्दुकान् ॥
पुनर्मायां च तारं च वदेत् ङेन्तां सरस्वतीम् ।
हृदयान्तो भवार्णोऽयं मन्त्रस्तु परिकीर्त्तितः ॥
त्रिष्टुप्छन्दो मुनिः कण्वश्चिन्तामणिसरस्वती ।

देवता ह्सैँ च बीजं स्यात् ह्रीँ शक्तिस्त्वङ्गकल्पने ॥
स्वरसंपुटितैः कादिवर्गैः स्यादङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

हंसारूढां मौक्तिकाभां मन्दहास्येन्दुशेखराम् ।
वीणामृतघटाक्षस्रग्दीप्तहस्तां कजस्थिजाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् । 'जपेद्द्वादशलक्षक'मित्युक्त्वा–

सिताब्जै रविसाहस्रं हुनेद्वाऽथ च चम्पकैः ।

अथ पारिजातसरस्वतीमन्त्रः (दक्षिणामूर्त्तिसंहितायाम्)

संपत्प्रदाया भैरव्या वाग्भवं बीजमालिखेत् ।
तारेण परया देवी संपुटीकृत्य मन्त्रवित् ॥
सरस्वत्यै हृदन्तोऽयं रुद्रार्णो मनुरीरितः ।
ऋषिस्तद्दक्षिणामूर्त्तिर्गायत्री छन्द ईरितम् ॥
पारिजातेश्वरी वाणी देवता परिकीर्त्तिता ।
तृतीयं च द्वितीयं च बीजं शक्तिश्च तारकम् ॥
कीलकं परमेशानि महासारस्वतप्रदम् ।
षड्दीर्घस्वरसंभिन्नबीजेनाङ्गानि विन्यसेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

हंसारूढा वरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुरेखा ।
विद्यावीणामृतमयघटाक्षस्रजादीप्तहस्ता
शुभ्राब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात् ॥

अथ पुरश्चरणं तन्त्रान्तरे ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं ततो हुनेत् ।
किंशुकैश्चम्पकैर्वाऽपि तिलाज्यमधुलोलितैः ॥
नवाक्षरोऽपि यो मन्त्रस्तत्रादौ प्रणवस्ततः ।

संपत्प्रदावाग्भवस्ततो लज्जाबीजमिति ।

(शारदायाम्)

एवमुक्तेषु मन्त्रेषु दीक्षितो यतमानसः ।
एकं यो भजते भक्त्या स भवेद्भुक्तिमुक्तिभाक् ॥
सुसितैर्गन्धकुसुमैः पूजा सारस्वते विधौ ।
दूर्वाबीजाङ्कुरं पुष्पं राजवृक्षसमुद्भवम् ॥
उत्पलानि प्रशस्तानि सिन्धुवाराङ्कुराणि च ।
भजन् सरस्वतीं नित्यमेतानि परिवर्जयेत् ॥
आम्रातं गृञ्जनं बिम्बं करञ्जं लशुनं तथा ।
तैलं पलाण्डुं पिण्याकं साङ्गाष्टमपि भोजने ॥
सर्वं पर्युषितं त्याज्यं सदा सारस्वतार्थिना ।
नाचरेन्निशि ताम्बूलं स्त्रियं गच्छेद्दिवा न च ॥
न सन्ध्ययोः स्वपेज्जातु नाशुचिः किञ्चिदुच्चरेत् ।
प्रदोषे तु भवेन्मौनी दिग्वस्त्रां न विलोकयेत् ॥
न पुष्पितां स्त्रियं गच्छेन्न निन्देद्वामलोचनाम् ।
न मृषा वचनं ब्रूयान्नाक्रमेत् पुस्तकं सुधीः ॥
अक्षराढ्यानि पत्राणि नोपेक्षेत न लङ्घयेत् ।
चतुर्दश्यष्टमीपर्वप्रतिपद्ग्रहणेषु च ॥
संक्रमेषु च सर्वेषु विद्यां नैव पठेन्नरः ।
व्याख्याने संत्यजेन्निद्रामालस्यं जृम्भणां बुधः ॥
क्रोधं निष्ठीवनं तद्वन्नीचाङ्गस्पर्शनं तथा ।
मनुष्यसर्पमार्जारमण्डूकनकुलादयः ॥
अन्तरा यदि गच्छेयुस्तदा व्याख्यां परित्यजेत् ।
निशासु दीपभ्रंशे च पाठं सद्यः परित्यजेत् ॥

ज्ञात्वा दोषानिमान् सम्यग्भक्त्या यो भारतीं भजेत् ।
वाचां सिद्धिमवाप्नोति वाचस्पतिरिवापरः ॥

इति सरस्वतीप्रकरणम् ।

अथ त्वरितामन्त्रः ।

तत्रैव ।

ततोऽभिधास्ये त्वरितां त्वरितं फलदायिनीम् ।
तारो माया वर्मबीजमृद्धिरीशस्वरन्विता ॥
कूर्मस्तदन्तो भगवान् क्षस्त्रीँ दीर्घतनुच्छदम् ।
संवर्त्तो भगवान् माया फडन्तो द्वादशाक्षरः ॥
मुनिरर्जुन आख्यातो विराट् छन्दः समीरितम् ।
त्वरिता देवता प्रोक्ता पुरुषार्थफलप्रदा ॥

तथा ।

कूर्माद्यैः पञ्चभिर्वर्णैः पूर्वपूर्वविवर्जितैः ।
द्वाभ्यां द्वाभ्यां षडङ्गानि कल्पयेत् साधकोत्तमः ॥

अथ ध्यानम् ।

श्यामां वर्हिकलापशेखरयुतामाबद्धपर्णांशुकां
गुञ्जाहारलसत्पयोधरभरामष्टाहिपान् बिभ्रतीम् ।
ताटङ्काङ्गदमेखलां गुणरणन्मञ्जीरतां प्रापितां
कैरातीं वरदाभयोद्यतकरां देवीं त्रिनेत्रां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं संजप्य मन्त्रज्ञो मन्त्रमेनं जितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयाद्बिल्वैर्मधुराक्तैः समिद्वरैः ॥

तथा ।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री नारीनरनरेश्वरैः ।
मान्यते वत्सरादर्वाग्लक्ष्म्या जितधनेश्वरः ॥

इति त्वरितामन्त्रः ।

अथ नित्यक्लिन्नामन्त्रस्तत्रैव ।

तारो माया वाग्भवान्ते नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
वाङ्माया वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ॥
द्वाभ्यां द्वाभ्यां पुनर्द्वाभ्यां द्वाभ्यां पञ्चभिरक्षरैः ।
वाद्यं विना समस्तेनाप्यङ्गषट्कमथाचरेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

द्वीपं त्रिकोणविपुलं सुरद्रुममनोहरम् ।
कूजत्कोकिलनादाढ्यं मन्दमारुतसेवितम् ॥
भृङ्गपुष्पलताकीर्णमुद्यच्चन्द्रदिवाकरम् ।
स्मृत्वा सुधाब्धिमध्यस्थं तस्मिन् माणिक्यमण्डपे ॥
रत्नसिंहासने न्यस्तत्रिकोणोज्ज्वलकर्णिके ।
पद्मे संचिन्तयेद्देवीं साक्षात् त्रैलोक्यमोहिनीम् ॥

नित्यां भजे बालशशाङ्कचूडां
पाशाङ्कुशौ कल्पलतां कपालम् ।
हस्तैर्वहन्तीमरुणां त्रिनेत्रा-
मास्फालयन्तीं कलवल्लकीं ताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रमाज्येन जुहुयात् ततः ।

दशांशमिति शेषः ।

इति नित्यक्लिन्नामन्त्रः ।

अथान्नपूर्णामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि अन्नपूर्णामहामनुम् ।
ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ नमः प्रोक्त्वा भगवति पदं वदेत् ॥
माहेश्वरि चान्नपूर्णे स्वाहा विंशतिवर्णकः ।

छन्दोऽनुष्टब्मुनिर्ब्रह्मा ह्यन्नपूर्णा च देवता ॥
ह्रौँ बीजं चापि शक्तिः श्रीँ कीलकं क्लीँ प्रकीर्त्तितम् ।
षड्दीर्घयुक्तहृल्लेखा षडङ्गेषु प्रकोर्त्तिता ॥

अथ ध्यानम् ।

तप्तकाञ्चनसंकाशां बालेन्दुकृतशेखराम् ।
नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुङ्कुमारुणाम् ॥
चित्रवस्त्रपरीधानां मोनाक्षीं कलशस्तनीम् ।
नृत्यन्तमीशमनिशं दृष्ट्वाऽऽनन्दमयीं पराम् ॥
सानन्दमुखलोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम् ।
अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यां नमस्कृताम् ॥
दुग्धान्नभरितं पात्रं सरत्नं वामहस्तके ।
दक्षिणे तु करे देव्या दर्वीं ध्यायेत् सुवर्णजाम् ॥

पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेत् सनियमस्तद्दशांशेन होमयेत् ।
रम्यपायससर्पिर्भ्यामेवं भवति सिद्धिदा ॥

अथ मन्त्रान्तरं (शारदायाम्)

माया हृद्भगवत्यन्ते माहेश्वरि पदं ततः ।
अन्नपूर्णे ठयुगलं मनुः सप्तदशाक्षरः ॥
अङ्गानि मायया कुर्यात् ततो देवीं विचिन्तयेत् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्तां विचित्रवसनां नवचन्द्रचूडा-
मन्नप्रदाननिरतां स्तनभारनम्राम् ।
नृत्यन्तमिन्दुशकलाभरणं विलोक्य
हृष्टां भजे भगवतीं भवदुःखहर्त्रीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

यथाविधि जपेन्मन्त्रं वसु[illegible]कम् ।
साज्येनान्नेन जुहुयात् तद्दशांशमनन्तरैः ॥

इत्यन्नपूर्णामन्त्रः ।

अथ प्रत्यङ्गिरामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि परकृत्यानिवारिणीम् ।
देवीं प्रत्यङ्गिरां नाम सर्वापद्विनिवारिणीम् ॥
ॐ अँ कँ चँ तथा टँ तँ पँ ह्मँ भ्रौँ ह्रीँ समुच्चरेत् ।
हुँस उक्त्वा हुँ तथाऽस्त्रं स्वाहान्तं षोडशाक्षरः ॥
मुनिर्विधाता छन्दोष्णिग्देवताः षट् प्रकीर्त्तिताः ।
महावायुर्महापृथ्वी महाकाशस्तथैव च ॥
महासमुद्रनामा च महापर्वत एव च ।
महाग्निश्चेति हुँ बीजं ह्रीँ शक्तिः परिकीर्त्तिता ॥
लज्जया तु षडङ्गानि षड्दीर्घान्वितयाऽऽचरेत् ।
मन्त्रदेवीँस्ततो मन्त्री ध्यायेत् सुस्थिरमानसः ॥

अथ ध्यानम् ।

नानारत्नार्च्चिराक्रान्तं वृक्षाम्भःस्रवणैर्युतम् ।
व्याघ्रादिपशुभिर्व्याप्तं सानुयुक्तं गिरिं स्मरेत् ॥
मत्स्यकूर्मादिबीजाढ्यं नवरत्नसमन्वितम् ।
घनच्छायं सकल्लोलमकूपारं विचिन्तयेत् ॥
ज्वालावलीसमाक्रान्तं जगत्त्रितयमद्भुतम् ।
पीतवर्णं महावह्निं संस्मरेच्छत्रुशान्तये ॥
त्वरा समुत्थरावौघमलिनं रुद्धभूदिवम् ।

पवनं संस्मरेद्विश्वजीवनं प्राणरूपतः ॥
नदीपर्वतवृक्षादिकलिताग्राससंकुला ।
आधारभूता जगतो ध्येया पृथ्वीह मन्त्रिणा ॥
सूर्यादिग्रहनक्षत्रकालचक्रसमन्वितम् ।
निर्मलं गगनं ध्यायेत् प्राणिनामाश्रयः पदम् ॥

पुरश्चरणमाह ।

एवं षड्देवता ध्यात्वा सहस्राणि तु षोडश ।
जपेन्मन्त्रं दशांशेन षड्द्रव्यैर्होममाचरेत् ॥
व्रीहयस्तण्डुला आज्यं सर्षपाश्च यवास्तिलाः ।
एतैर्हुत्वा यथाभागं पीठे पूर्वोदिते यजेत् ॥

अथ मालामन्त्रस्तत्रैव ।

अथ प्रत्यङ्गिरामालामन्त्रः सिद्धः प्रकीर्त्यते ।
ॐ ह्रीँ नमः कृष्णवाससेशतेविश्वसहस्रहिम् ॥
सिनि सहस्रवदने महाबले पराजिते ।
प्रत्यङ्गिरे परसैन्यपरकर्मपदं वदेत् ॥
विध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनीति ततो वदेत् ।
सर्वभूतेति दमनि सर्वदेवान् वदेत् ततः ॥
बन्धयुग्मं सर्वविद्या श्छिन्धि क्षोभयद्वयम् ।
परयन्त्राणीति वदेत् स्फोटयद्वितयं ततः ॥
सर्वशृङ्खलाँस्त्रोटय त्रोटय ज्वल चोच्चरेत् ।
ज्वालाजिह्वे करालेति वदने प्रत्यमुच्चरेत् ॥
गिरे ह्रीँ नम इत्येष सपादशतवर्णवान् ।
ब्रह्माऽनुष्टुबमुनिश्छन्दो देवी प्रत्यङ्गिरा मता ॥
बीजशक्ती तारमाये कृत्यानाशेति योजनम् ।

षडङ्गानां विधिश्चात्र षड्दीर्घान्वितमायया ॥

अथ ध्यानम् ।

सिंहारूढातिकृष्णाङ्गीं ज्वालावक्त्रां भयङ्कराम् ।
शूलखड्गकरां वस्त्रे दधतीं नूतने भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिकाः ।
हुत्वा सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥
ग्रहभूतादिकारिष्टं सिञ्चेन्मन्त्रं जपन् जलैः ।
विनाशयेत् परकृतं यन्त्रमन्त्रादिसाधनम् ॥

" अथ मन्त्रान्तरं (सिद्धान्तसंग्रहे)

ॐ यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ।
तां ब्रह्मणाऽपनिर्नुद्मप्रत्यक् कर्त्तारमिच्छतु ॥
ह्रौँ मुन्याद्या विनियोगान्ता मलामन्त्रवदस्य तु ।
षडङ्गानि च पादेन पादार्धैश्चरणेन च ॥
कुर्याद्वेदादिषड्दीर्घहृल्लेखापुटितेन च ।
शिरोभ्रूमध्यवदनगलबाहुद्वयेष्वथ ॥
हृन्नाभिपार्श्वकट्यन्धुपादेषु पदशो न्यसेत् ।
व्यापकन्तं समस्तेन कृत्वा ध्यायेन्महेश्वरीम् ॥
खड्गचर्मधरां कृष्णां मुक्तकेशीं विवाससम् ।
दंष्ट्राकरालवदनां भीषाभां सर्वभूषणाम् ॥
ग्रसन्तीं वैरिणं ध्यायेत् प्रेरितां शिवतेजसा ।"

पुरश्चरणमाह ।

अयुतं प्रजपेदेनं मन्त्री प्रयतमानसः ।

---

" " एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ४ पु० अधिको दृश्यते ।

दशांशं जुहुयात पश्चादपामार्गेध्मराजिकाम् ॥
सर्पिषा च समायुक्तां ततः सिद्धो भवेन्मनुः ।
प्रयोगेषु जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं बुधः ॥
तावतैव तु होमेन परकृत्या विनश्यति ।

इति प्रत्यङ्गिरामन्त्रः ।

अथ कुब्जिकामन्त्रः ।

(कुलालिकाम्नायतन्त्रे)

श्रीकुब्जिकोवाच ।

कथं तु लघ्विकानाथ वद मन्त्रपदान्विताम् ।
सर्वज्ञां सर्वदा देव लक्षणेन समन्विताम् ॥
उवाच भैरवो ह्येवं लघ्विकां शृणु लघ्विके ।
किन्तु त्वया न वक्तव्या यावन्नादेशितः शिशुः ॥
चवेवीति प्रथमं पदं णिकिणिकि द्वितीयकम् ।
छीँ छाँ पदं तृतीयं च खिमुरघोअचतुर्थकम् ॥
मेनणञङेति पञ्चमं ह्रौँ ह्राँ ह्रीँ षष्ठकं पदम् ।
यै काब्जिककुश्री सप्तमं स्यैवगभ मोनाष्टमम् ॥
एषा सा समया देवी द्वात्रिंशाक्षरमालिनी ।
पञ्चप्रणवमाद्यन्तनियुक्ता लक्षणान्विता ॥
आदिकूटावसाने च द्विचत्वारिंशमालिनी ।
विलोमेनोच्चरेद्देवि गुरुवक्त्रोपदेशतः ॥
रेफसहमिदं कूटं विद्यायाः सप्तमं स्मृतम् ।
श्रीलोपे सन्नियोक्तव्यं जीवितं कुब्जिके मम ॥
स्वमनीषिकातोऽन्यथा सविद्धिष्टोमरोचिभिः ।
गुप्तं गुप्ततरं कार्यं योगिनीहृदयनन्दनम् ॥

यस्माद्ब्रह्मसारमित्येवं सर्वस्वं योगिनीकुले ।
अथ चेत् सर्वपीठेषु मातेयं समयात्मिका ॥
अस्याः स्मरणमात्रेण विह्वलं तु जगत्त्रयम् ।
जायते नात्र संदेह इति माता सुरक्षिता ॥
हृदयाद्यस्त्रपर्यन्तमेकोच्चारेण सुव्रते ।
सिद्धिमार्गे यथा ब्रूमि विलोमेन विलोमतः ॥

यस्त्राअ यैर्वाणाकक्को च्चेवि णिकिणिकि ययात्रत्रने केरि-ताह्मंमजलकु छाँ छीँ यत्त्रावकयैपारूहुबखीमुरघोअ मे नणञङ यैखाशि खेशिरर्वव ह्लीँ ह्लाँ ह्लौँ सेरशि यैपादीलकु यैकाब्जिकुश्री य-यादह्व यैलामत्कह्वत्यैवगभ मोन ।

पञ्चादशाक्षरं हृदयं शिरश्चैव त्रयोदश ।
शिखारुद्रक्षरा ज्ञेया कवचैकोनविंशतिः ॥
तिथिसङ्ख्या भवेन्नेत्रमस्त्रं चैव चतुर्दश ।
पञ्चप्रणव आद्यन्तो यथा विद्या तथाऽन्तिमा ॥
एतत्कौलिकभाषायां कथितं ते सप्रत्ययम् ।
सस्फुटं गुरुवक्त्रस्थं विलोमस्थं न सिध्यति ॥
कौलिकेऽदः समाख्यातं सिद्धमार्गे सुदुर्लभम् ।

अथ ध्यानं (परातन्त्रे)

वृषभे संस्थितं देवं स्वर्णरूपशोभितम् ।
एकवक्त्रं त्रिनेत्रं च भुजाष्टादशधारिणम् ॥
परशुं डमरुं बाणं खड्गमङ्कुशवज्रकम् ।
शङ्खं च वेणुवाद्यं च वरदं दक्षिणे करे ॥
वामे खट्वाङ्गशूलं च धनुः फलकपाशकम् ।

घण्टां कपालं वेणुं च अभयं भयनाशनम् ॥
पट्टेन बन्धितं जालुवामोरुस्था च कुब्जिका ।
एकवक्त्रा त्रिनेत्रा च करुणावरवर्णिता ॥
द्विभुजा वरदा देवी सिंहस्थाऽभयसव्यसु ।
नानाभरणभूषाङ्गी खण्डेन्दुकृतशेखरा ॥
वर्वरा केशपाशेन चारुपीनघनस्तनी ।
एवं येध्या कुजा माता पश्चिमाम्नायनायिका ॥

अथ पुरश्चरणम् । (कुलालिकाम्नायतन्त्रे)

अक्षराक्षरसन्तानं योजयेल्लक्षसङ्ख्यया ।
लघ्वीशगुणतुल्योऽसौ हर्त्ता कर्त्ता स्वयं प्रभुः ॥
खेचरीणां पदं सो हि पश्यति ह्यविचारतः ।
निराचारेण योगेन चिन्तयन्तो महेश्वरीम् ॥

इति कुब्जिकामन्त्रः ।

अथ गङ्गामन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये रुद्रशीर्षनिवासिन्याः परान् मनून् ।
तारो नमः शिवायै च नारायण्यै पदं वदेत् ॥
दशहरायै गङ्गायै स्वाहान्तो विंशदर्णकः ।
व्यासो मुनिः कृतिश्छन्दो गङ्गा देवी प्रकीर्त्तिता ॥
त्रिवह्निवेदबाणाग्निनेत्रवर्णैः षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वाभरणभूषिताम् ।
रत्नकुम्भसिताम्भोजवरदाभयसत्कराम् ॥
चामरैर्वीजमानां च श्वेतच्छत्रोपशोभिताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेद्दशांशेन जुहुयात् सघृतैस्तिलैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथान्यं संप्रवक्ष्यामि वामाचाराघनाशनम् ।
बहिर्यजनकर्त्तारः शिद्धाः स्युर्यत्प्रभावतः ॥
तारो नमो भगवति वाग्भवं च हिलिद्वयम् ।
मिलिद्वयं च गङ्गे मां पावयद्वितयं वदेत् ॥
स्वाहान्तस्तारको वर्णो मनुः पापप्रणाशनः ।
ईश्वरोऽस्य मुनिश्छन्दोऽमितं गङ्गा च देवता ॥
रामवेदाङ्गवह्न्यङ्गनेत्रार्णैरङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्ताम्बरां रक्तवर्णां शूलकुम्भवराभयान् ।
करैः संदधतीं स्मेरां कच्छपस्थां सुरादिभिः ॥
तद्रूपाभिः स्वपापस्य नाशाय सुनिषेविताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेद्धोमः प्रोक्तः पद्मैर्दशांशतः ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री मरुदादिकनिर्जले ॥
देशे गत्वा जलार्थं तु पुरश्चर्यां समाचरेत् ।
होमादिसर्वं निर्वृत्य गङ्गामावाहयेत् ततः ॥
तत्र कूपादिकं कृत्वा भवेत् तदमृतोपमम् ।
कल्पस्थायितयाऽगाधं समस्तगदनाशनम् ॥

तथा ।

इयमादिमसप्तार्णं त्यक्त्वोक्ता तु नखाक्षरी ।
प्राग्वन्मुन्यादिकं बाणवेदत्रित्रित्रिबाहुभिः ॥
मन्त्रार्णैः स्युः षडङ्गानि पुरश्चर्यार्णलक्षकम् ।

होमद्रव्यादिकं प्राग्वत् सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥
प्रयोगं जलमध्ये तु स्थित्वा जप्त्वाऽयुतं मनुम्।
त्र्यहादवर्षाकालेऽपि वृष्टिर्भवति भूयसी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव।

तारो हिलिमिलिद्वन्द्वे गङ्गे देवि नमो मनुः।
तिथिवर्णोऽस्य मुन्यादिः पूजा पूर्ववदीरिता ॥
त्रिद्वित्र्यक्षिकृताब्ध्यर्णैः षडङ्गविधिरीरितः।
एतस्य भजनाज्जन्तोर्नातीर्थे मरणं भवेत् ॥

पुनर्मन्त्रान्तरमाह।

तारो लज्जा रमा हार्दं ततो भगवती पदम्।
सम्बुध्यन्तं गङ्गदयिते नमो हुँ तथाऽस्त्रकम् ॥
अष्टादशार्णमन्त्रोऽयं मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम्।

इति गङ्गामन्त्रः।

अथ मणिकर्णिकामन्त्रः।

तत्रैव।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मणिकर्णीमनुद्वयम्।
तरो वाक् ह्रीँ रमा कामस्तारोऽयं मणिकर्णिके ॥
नम ॐ तिथिवर्णोऽयं मन्त्रः परमदुर्लभः।
मुनिर्व्यासोऽतिशक्करी छन्दः स्यान्मणिकर्णिका ॥
देवता चन्द्रनेत्राक्षिद्वीषुत्र्यर्णैः षडङ्गकम्।

अथ ध्यानम्।

बीजपूरं दक्षहस्ते वामेन्दीवरमालिका।
बद्धाञ्जलिः श्वेतवस्त्रा त्र्यक्षा चन्द्रनिभानना ॥
पश्चिमाभिमुखी स्मेरा पद्मस्था पद्ममालिका।
नानालङ्कारभूषाढ्या ध्येया श्रीमणिकर्णिका ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
पुण्डरीकैस्त्रिमध्वक्तैर्यजेत् तां गङ्गया समम् ॥

इति मणिकर्णिकामन्त्रः ।

अथ वाग्मतीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वाग्मत्याश्च मनुद्वयम् ।
वाग्बीजं प्रथमो मन्त्रो नारदोऽस्य मतो मुनिः ॥
छन्दोऽनुष्टुब्देवता तु वाग्मती परिकीर्त्तिता ।
बीजपूर्वैश्च षड्दीर्घैः षडङ्गविधिरीरितः ॥

अथ ध्यानम् ।

श्वेताम्बरां श्वेतवर्णां श्वेतगन्धानुलेपनाम् ।
सुधाकुम्भं च पद्मं च वीणां पुस्तकमेव च ॥
करैर्दधन्तीं मीनस्थां मुक्ताभरणभूषिताम् ।
एवं ध्यात्वा कर्णिकायां यजेद्देवीं षडस्रके ॥
रुद्रधारां मणिमतीं फल्गुं विष्णुमतीं तथा ।
प्रभावतीं भानुमतीं भूपुरे तु दिगीश्वरान् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षत्रयंजपेन्मन्त्रं पञ्चखाद्यैस्तथा हुनेत् ।
तर्पणादि ततः कृत्वा सिद्धो मन्त्रः प्रजायते ॥
सद्योजातस्य बालस्य जिह्वायां बीजमालिखेत् ।
मधुना स्वर्णलेखन्या सोऽष्टवर्षः कविर्भवेत् ॥
वाग्मत्यां वाऽथ गङ्गायां पुरश्चर्यां करोति यः ।
द्वितीयामप्रतिग्राही भिक्षाशी चाथ मौनवान् ॥

ब्रह्मचारी भूमिशायी श्वेताम्बधरः शुचिः ।
वाक्सिद्धिं लभतेऽवश्यं दाता भोक्ता त्वयाचकः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

रमात्रपावाग्बीजानि वदेद्दुङेऽन्ता च वाग्मती ।
नमो ममेति च पदे धारणां च ततो धियम् ॥
वाचमद्भुतां प्रदेहि स्वाहान्तस्तत्त्ववर्णकः ।
मुन्यादिकं तथा पूजा पुरश्चर्या च पूर्ववत् ॥

इति वाग्मतीमन्त्रः ।

अथ चन्द्रमन्त्रः ।

( शारदायाम् )

अथोच्यते चन्द्रमसो मनुः सर्वसमृद्धिदः ।
खड्गीशस्थो भृगुर्विन्दुमनुः स्वरसमन्वितः ॥
सोमाय हृदयान्तोऽयं मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ।
ऋषिरुक्तो भृगुश्छन्दः पङ्क्तिः सोमोऽस्य देवता ॥
दीर्घभाजा स्वबीजेन मनोरङ्गक्रिया मता ।

अथ ध्यानम् ।

कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं पूर्णेन्दुविम्बाननं
मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तं तमः ।
हस्ताभ्यां कुमुदं वरं च दधतं नीलालकोद्भासितं
स्वस्याङ्कस्थमृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धिं भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

रसलक्षं जपेन्मन्त्रं साधको विजितेन्द्रियः ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात् पायसेन ससर्पिषा ॥

अथ मन्त्रान्तरं ( मेरुतन्त्रे )

ॐ आँ श्रीँ श्रुँ सविन्दुः स सोमायेत्यग्निगेहिनी ।

दशाक्षरश्चन्द्रमन्त्रो जप्यश्चायं नृपायुतम् ॥
होमादिकप्रयोगाँश्च सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

इति चन्द्रमन्त्रः ।

अथ भौममन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथ भौममनुं वक्ष्ये सर्वरोगनिवारणम् ।
अँ च अङ्गारको ङेऽन्तो हृदन्तश्चाष्टवर्णकः ॥
ऋष्याद्या ब्रह्मगायत्री भूमिपुत्राः प्रकर्त्तिताः ।
अङ्गषट्कं त्वस्य मनोर्निजबीजेन संमतम् ॥

अथ ध्यानम् ।

नमाम्यङ्गारकं रक्तं रक्ताम्बरविभूषणम् ।
जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षाष्टकं जपः प्रोक्तः खदिरोद्भवकैर्हुनेत् ।
साज्यैः संतर्पणं रक्तचन्दनाद्यैः समाचरेत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये भूमिमन्त्रस्य सिद्धिदम् ।
ॐ हाँ हँसः खँ ख इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥
मुनिर्विरूपो गायत्री छन्दो देवो धरात्मजः ।
षड्भिर्वर्णैः षडङ्गानि मनोः कुर्वीत साधकः ॥

अथ ध्यानम् ।

जवाकुसुमसंकाशं शक्तिं शूलं गदां वरम् ।
मेषसंस्थं रक्तवस्त्रं तं वन्देऽहं धरात्मजम् ॥

अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षजपः ।

रसलक्षं जपेद्धोमं समिद्भिः खदिरस्य च ।

इति तत्रैवोक्तत्वात् ।

मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ क्राँ क्रीँ क्रौँ सविन्दुः सकुजायेत्यग्निगेहिनी ।
दशाक्षरो भौममन्त्रो जप्यश्चायं नवायुतः ॥

मन्त्रान्तरमाह ।

ॐ श्रीँ क्लीँ ह्रीँ समुच्चार्य ङेऽन्तो भौमो हृदन्तकः ।
दशाक्षरो मनुः प्रोक्तो विरूपाक्षो मुनिर्मतः ॥
गायत्री छन्द उदितं देवता मङ्गलो भवेत् ।
ह्रीँ बीजँ श्रीँ च शक्तिः स्यात् कीलकं क्लीँ प्रकत्तिंतम् ॥
कालादिकं समुच्चार्य नियोग ऋणनाशने ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन अङ्गुल्यादिषडङ्गकम् ॥

ध्यानम् ।

ततो ध्यायेद्रक्तवर्णं रक्तमाल्यांशुकावृतम् ।
कण्ठे कमलमालाढ्यं करयोः शक्तिशूलकम् ॥
मङ्गलानां मङ्गलं च सर्वकामफलप्रदम् ।

पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं जुहुयात् करवीरजैः ।
जवाप्रसूनैः पुरुभिर्मधुरत्रितयान्वितैः ॥
रक्तचन्दनगन्धाढ्यैर्यजेदरुणभूषणम् ।
विधिना भूमितनयं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥

इति कुजमन्त्रः ।

अथ भौममन्त्रः ।

त ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि बुधमन्त्रं महाद्भुतम् ।
बुं ङेऽन्तं बुधशब्दं च हृदयान्तः षडर्णकः ॥
बुधमन्त्रोऽस्य मुन्याद्या ब्रह्मपङ्क्तिबुधा मताः ।

षडङ्गानि स्वबीजेन विन्यस्यैवं विचिन्तयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

वन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम् ।
जानुस्थवामहस्ताब्जं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

प्रजपेद्वर्णसाहस्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ब्राँ ब्रीँ ब्रूँ सबिन्दुः सबुधायेत्यग्निगेहिनी ।
दशाक्षरः सौम्यमन्त्रो जपो लक्षैकसङ्ख्यया ॥

इति बुधमन्त्रः ।

अथ बृहस्पतिमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि गुरुमन्त्रं गुरुत्वकृत् ।
बृँ बृहस्पतये हृच्च मन्त्रश्चाष्टाक्षरो मतः ॥
छन्दोऽनुष्टुब्मुनिर्ब्रह्मा देवः प्रोक्तो बृहस्पतिः ।
बृँ बीजं पतये शक्तिर्बीजेनैवाङ्गकल्पनम् ॥

अथ ध्यानम् ।

सुवर्णाभं पीतवस्त्रं रक्तस्वर्णाम्बरादिकम् ।
किरन्तं दक्षहस्तेन तद्राशिं वामपाणिना ॥
स्पृशन्तं सम्यगपरं विपणौ कनकादिकम् ।
नानालङ्कारशोभाढ्यं विद्यासागरपारगम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपित्वाऽशीतिसाहस्रं हुत्वा धेनुघृतेन वा ।
धर्माधर्मादिपीठे तं पूजयेदङ्गदिग्यकैः ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ ज्राँ ज्रीँ ज्रूँ सबिन्दुः सचतुर्थ्यन्तो बृहस्पतिः ।

वह्निश्रीविश्ववर्णोऽयं जप्यः पञ्चदशायुतम् ॥

इति बृहस्पतिमन्त्रः।

अथ शुक्रमन्त्रः।

तत्रैव।

वस्त्रं मे देहि शुक्राय हृदयान्तः शुमादिकः।
एकादशाक्षरो मन्त्रो विराट् छन्द उदाहृतम् ॥
ब्रह्मा मुनिर्देवता तु शुक्रो दैत्यादिपूजितः।
षड्भिः पदैः षडङ्गानि ततो देवं विचिन्तयेत् ॥

अथ ध्यानम्।

शुक्रं नमाम्यापणस्थं मुक्ताभरणभूषिणम्।
स्वर्णवासोरत्नधाराविमुग्धान्तःकरद्वयम् ॥

अथ पुरश्चरणम्।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं जुहुयाद्घृतैः।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव।

ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रौँ सविन्दुः सशुक्रायेत्यग्निगेहिनी।
दशाक्षरः शुक्रमन्त्रो जप्योऽयं द्वादशायुतम् ॥
उदुम्बरसमिद्भिश्च होमयेत् सकलापदः।
भूपैः कृता विनश्यन्ति स्त्रीसौख्यमुपजायते ॥

इति शुक्रमन्त्रः।

अथ शनैश्चरमन्त्रः।

तत्रैव।

शनैश्चराय हृदयं शमाद्यश्चाष्टवर्णकः।
मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रशनैश्चरसमाह्वयाः ॥
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गानि समाचरेत्।

अथ ध्यानम्।

वन्दे शनैश्चरं वक्रदंष्ट्रं नीलविभूषणम्।

वामजानुस्थितं वामकरं दक्षे वरं दधत् ॥

'(मार्त्तण्डभैरवतन्त्रे)

नीलाद्रिशोभाञ्चितदिव्यमूर्त्तिः खड्गी त्रिदण्डी शरचापहस्तः

शम्भुर्महाकालशनिः पुरारिर्जयत्यशेषासुरनाशकारी ॥

इति ध्यानान्तरमुक्तम् ।'

अथ पुरश्चरणं (मेरौ)

जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ।

षडङ्गग्रहदिक्पालसायुधैः परिपूजनम् ॥

न शनैश्चरभक्तानामापदो न दरिद्रता ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ प्राँ प्रीँ प्रौँ स इत्युक्त्वा शनैश्चरपदं वदेत् ।

ङेऽन्तं स्वाहा द्वादशार्णो जपः प्रयुतसंमतः ॥

हुनेच्छमीसमिद्भिश्च क्लीवाः सर्वेऽस्य वश्यगाः ।

इति शनैश्चरमन्त्रः ।

अथ राहुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

अपरं तु मनुं वक्ष्ये राहवे नम उच्चरेत् ।

राँ पूर्वकः षडर्णोऽयं वर्णैरेवाङ्गकल्पनम् ॥

मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रराहवः परिकीर्त्तिताः ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे राहुं धूम्रवर्णं सर्वकायं कृताञ्जलिम् ।

विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कार*मन्वहम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्रं तु होमयेद्गोघृतेन च ।

---

' ' एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः ५ पुस्तक एवोपलभ्यते ।

* मण्डितम्-इति २-३-४ पु० पा० ।

ग्रहाशाधिपशस्त्रैश्च पूजावृत्तिरुदीरिता ॥
राहोरुपासको भूपः संग्रामे विजयी भवेत् ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ साँ सीँ सौँ सबिन्दुः सराहवे त्वग्निगेहिनी ।
दशाक्षरो राहुमन्त्रो जप्यश्चायं दशायुतः ॥
दूर्वाभिर्होमयित्वा च द्विजान् संतर्प्य सिध्यते ।

इति राहुमन्त्रः ।

अथ केतुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

कँ केतवे हृदित्येवं केतुमन्त्रः षडर्णकः ।
ब्रह्मा मुनिर्मतश्छन्दः पङ्क्तिः केतुश्च देवता ॥
कँ बीजं वँ तु शक्तिः स्याद्बीजेनैव षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रविभूषितम् ।
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं साभयेतरपाणिकम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद्घृतैः ।

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ प्राँ प्रीँ प्रौँ सबिन्दुः सकेतवे वह्निगेहिनी ।
दशाक्षरः केतुमन्त्रो जप्योऽयं द्वादशायुतम् ॥
होमः कुशैः प्रकर्त्तव्यो घृताक्तैस्तर्पणादि च ।
उपासकानामेतस्य केतवोऽग्रे चलन्ति हि ॥

इति केतुमन्त्रः ।

अथ ग्रहमातृकामन्त्राः ।

तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि ग्रहमातृसुसाधनम् ।

ग्रहमातरि तुष्टायां किं ग्रहैर्दुरितैरपि ॥
ग्रहमातरि तुष्टायां सुग्रहैः किं प्रयोजनम् ।
मङ्गला पिङ्गला धन्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥
उल्का सिद्धा संकटा च विकटा गर्भपालिका ।
रुद्रनक्षत्रतश्चाष्टौ जन्मधिष्ण्यक्रमाद्दशाः ॥
फलं नामानुरूपं स्यादेकोपचयतो द्वयोः ।
पिङ्गला सूर्यजननी महाधिव्याधिकारिणी ॥
तुष्टा चेच्छत्रुवर्गस्य रुष्टा कुर्याच्च साधके ।
ब्जें बीजं तु समुच्चार्य पिङ्गले वैरिवारिणि ॥
प्रसीद फडिति प्रोक्तस्त्रयोऽग्निशक्तिवर्णकः ।
दीर्घषट्कयुजा पूर्वबीजेन च षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

पिङ्गवर्णां पिङ्गकेशीं पिङ्गनेत्रां धनुःशरान् ।
हस्ताभ्यां दधतीं पद्मयुगलं तां भजाम्यहम् ॥
अथ पूजाविधिं वक्ष्ये सर्वासामेव तन्त्रतः ।
जवापुष्पाणि शस्तानि धूपो गुग्गुलसम्भवः ॥
घृतप्रदीपो मधुरा नैवेद्याः पायसादयः ।
अलङ्कारास्तथा रक्तास्तथा वस्त्राणि चन्दनम् ॥
स्वर्णालङ्करणैश्चापि सद्द्रव्यैर्बहुपञ्चकैः ।
तर्पयेत् परमेशानि तत्तन्मन्त्रैः सहस्रधा ॥
सुवर्णपत्रे निश्छिद्रे हस्तायामे मनोरमे ।
कृत्वा यन्त्रं तथोक्तं तु योगिनीं तत्र पूजयेत् ॥
तत्तन्मन्त्रवरं जप्त्वा विघ्नशान्त्यै सहस्रशः ।

सप्ताहेन प्रजायेत त्रिविधोत्पातवारणम् ॥
ततश्च कुण्डं विधिवत् कृत्वा च चतुरस्रकम् ।
अथ वा स्थण्डिले शुद्धे सुलिप्ते गोमयाम्बुभिः ॥
चतुर्हस्तप्रमाणेन योजयेत् स्थिरमानसः ।
योगिन्यग्निं तु संस्थाप्य कृत्वा पूर्वोदिताः क्रियाः ॥
अन्यासां दशवारं तु विरुद्धायाः सहस्रधा ।
विल्वपत्रैस्तत्फलैश्च कमलैर्नागकेशरैः ॥
जुहुयात् पायसान्नेन तथैव कुलवस्तुना ।
सहस्रमयुतं वाऽपि लक्षं वा कामनाक्रमात् ॥
अथ पूजां प्रवक्ष्यामि मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ।
इच्छां ज्ञानं क्रियां शक्तिं त्रिषु कोणेषु पूजयेत् ॥
मन्मथान् पञ्च तदधः पञ्चकोणेषु पूजयेत् ।
षडङ्गं पूजयेत् पश्चादष्टपत्रेऽन्ययोगिनीः ॥
तद्बाह्यभूपुरे लोकपालानस्त्राणि पूजयेत् ।
पूजाप्रकारो होमश्च सर्वासामयमेव हि ॥
विशेषः पुनरत्रास्ति शत्रूच्छेदाभिचारके ।
खड्गचर्मधरामुग्रां ध्यायेत् षड्भुजधारिणीम् ॥
गरुडासनमासीनां वैरिनिग्रहकारिकाम् ।
लक्षमेकं प्रजप्यादौ जपेल्लक्षं हि तर्पयेत् ॥
सर्वशत्रुविनाशः स्याद्दुःखं नाप्नोति कुत्रचित् ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि चन्द्रमातुश्च साधनम् ॥
मायाद्यो वह्निजायान्तो मङ्गले मङ्गलालये ।
एकादशाक्षरो मन्त्रो मङ्गलायाः प्रकीर्त्तितः ॥

कृत्वाऽऽद्येन षडङ्गानि दीर्घषट्कयुजा तथा ।
ध्यायेदेनां त्रिनयनामुद्यदादित्यसन्निभाम् ॥
दरस्मेरमुखाम्भोजां सिन्दूरसुन्दुराधराम् ।
पद्मद्वयं धनुर्बाणान् दधतीं भुजपल्लवैः ॥
सगुञ्जन्मञ्जुमञ्जीरकाञ्चीगुणविराजिताम् ।
एवं ध्यात्वा महेशानि पूर्ववत् परिपूजयेत् ॥
ततो लब्धमनुं जप्त्वा तारमायापुरःसरम् ।
योगिनीक्षेत्रवटुकगणाधिपबलिं हरेत् ॥
सर्वासामेव पूजान्ते मङ्गलैव प्रसीदति ।

अथ पुरश्चरणमाह ।

योगिन्यास्तु प्रसादार्थं वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ।
दुर्योगिन्यनुकूलार्थं जपेत् तत्सङ्ख्यकायुतम् ॥
अदृष्टप्रतिबद्धस्य शुभायास्तु फलस्य च ।
प्राप्तये प्रजपेत् तावत्सहस्रं प्रत्यहं जपम् ॥
प्रकर्त्तव्यो वर्णशतं यावद्दृष्टा तु योगिनी ।
तुष्टाया वर्णदशकं रोगिणं चाभिमन्त्रयेत् ॥
वर्णतुल्येन मन्त्रेण यस्याः सेवापरो भवेत् ।
तस्याः पीडानिवृत्तिः स्याद्वर्णाभ्यन्तर्गतैर्दिनैः ॥
एवं विधिर्नवानां तु विज्ञेयः सुरसत्तमाः ।
योगिनी तुल्यफलदा वाममार्गे च दक्षिणे ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि भ्रामरीं भौममातरम् ।
क्षीँ भ्रामरि पदं चोक्त्वा जय तान्मे अधीश्वरि ॥
भ्रामय क्रौँ षोडशार्णो मन्त्रोऽस्याः परिकीर्त्तितः ।

पिङ्गलावत् सर्वमस्याः सिद्धये शर्करान् दश ॥
मन्त्रयित्वाऽनया मार्गे दशदिक्षु च संत्यजेत् ।
प्रातस्ततो व्रजेन्मार्गं मार्गस्थाः सर्व एव हि ॥
सर्वे मोहं समायान्ति व्याघ्राः सर्पाश्च तस्कराः ।
शुल्किनो दुष्टभूपाश्च नित्यमेवं समाचरेत् ॥
उपानत्कतले यस्य लिखित्वा नाम च व्रजेत् ।
योजनैकं जपेन्मन्त्रं स भ्रमेच्च वसुन्धराम् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि भद्रिकां बुधमातरम् ।
ह्लूँ बीजं तोयभूयोगाज्जातमादौ समुच्चरेत् ॥
भद्रिके मे मम भद्रं देहीति च पदं पुनः ।
वदेच्च परभद्राणि नाशय द्वितयं ततः ॥
स्वाहान्तो जिनवर्णोऽयं भद्रिकाया मनुर्मतः ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ॥
मङ्गलावच्छुभानां स्याद्ध्यानं दुष्फलदायिनी ।
पिङ्गलावत् समुद्दिष्टं जपाद्यं प्रोक्तवर्त्मना ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि धन्याख्यां गुरुमातरम् ।
श्रीधनदे समुच्चार्य धन्ये स्वाहाऽष्टवर्णकः ॥
षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन षडङ्गविधिरीरितः ।
नास्ति धन्यासमा काचिदिह लोके फलप्रदा ॥
पुरश्चर्यात्रयं कृत्वा प्राग्जन्मार्जितपातकम् ।
संस्तम्भ्य धन्या ददते धन्यत्वं साधकाय तु ॥
बृहस्पतीश्वरात् पश्चात् काश्यां धन्यां विलोकयेत् ।
पुरश्चर्यां तत्र कृत्वा वैश्यो धन्यः प्रजायते ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि सिद्धां शुक्रस्य मातरम् ।
ह्रीँ सिद्धे मे सर्वमानं समुक्त्वा साधयद्वयम् ॥
हृदयान्तो मित्रवर्णः सिद्धाया मनुरीरितः ।
बीजेनैव षडङ्गानि जपाद्यं प्रोक्तवच्चरेत् ॥
नास्ति सिद्धोपासकानां कर्मासिद्धिस्तु कुत्रचित् ।
उपासका ये सिद्धायाः येनाम्नायेन जायते ॥
तदाम्नायकदेवानां पाकेऽस्याः सर्वमेव हि ।
षट्कर्म सिद्ध्यते तस्य मनोराराधनं विना ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि चोक्त्वा मन्दस्य मातरम् ।
ॐ मम रोगं नाशय भञ्जयैकादशाक्षरः ॥
सर्वरोगापहो मन्त्रो मार्जनात् सप्तधस्ततः ।
उल्कामन्त्रो यस्य सिद्धो न गदास्तस्य मन्दिरे ॥
शीतलायां महामार्यां महिषं लक्षणान्वितम् ।
उल्काप्रीत्यै तमुत्सृज्य नगरे भ्रामयेत् पुनः ॥
नानावाद्यैः परिवृतं वस्त्रादिभिरलङ्कृतम् ।
उत्सृजेत् तं यमाशायामुपद्रवशमो भवेत् ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि संकटां राहुमातरम् ।
ह्रीँ संकटे च रोगं मे परमं नाशयद्वयम् ॥
षोडशार्णस्तु मन्त्रोऽयं सर्वदुःखापनोदनः ।
कारागृहे जपेल्लक्षं बन्धमोक्षः प्रजायते ॥
वीरेश्वरादुदक् काश्यां संकटा यत्र संस्थिता ।
तत्र षोडशलक्षाणि जप्त्वा होमस्तु दूर्वया ॥
तस्य सिद्धो भवेन्मन्त्रस्तन्मुखाद्यदि निःसरेत् ।

अमुकस्यामुकं कष्टं गतं तद्गतमेव हि ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि विकटां केतुमातरम्।
तारो नमो भगवति विकटे वीरपालिके॥
प्रसीदयुगलं मन्त्रः प्रकृत्यर्णः प्रकीर्त्तितः।
काश्यां वीरेश्वरासन्ना पश्चिमे विकटा स्थिता ॥
तत्र मन्त्रमिमं जप्त्वा ग्रहतप्ताश्च बालकाः।
उदरं चापि बन्ध्यायाः प्रसवत्यास्तथा शिरः ॥
पित्रादिभिस्त्यक्तबालास्तथा मातृविवर्जिताः।
साधकस्य करस्पृष्टा नीरोगाश्चिरजीविनः ॥

इति ग्रहमातृकामन्त्राः।

अथ दिक्पालमन्त्राः।

तत्रादौ शक्रमन्त्र उक्तस्तत्रैव।

इमिन्द्राय नमश्चेति शक्रमन्त्रः षडक्षरः।
पङ्क्तिश्छन्दो मुनिर्ब्रह्मा देव इन्द्रः प्रकीर्त्तितः ॥
मायेति शक्तिँ रिँ बीजं बीजेनैव षडङ्गकम्।

अथ ध्यानम्।

पीतवर्णं सहस्राक्षं वज्रपद्मकरं विभुम्।
सर्वालङ्कारसंयुक्तं नौमीन्द्रं दिक्पतीश्वरम् ॥

अस्य पुरश्चरणणं तत्रैव।

प्रजपेल्लक्षमेकं तु तिलाज्याभ्यां हुनेत् ततः।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगं कर्त्तुमर्हति ॥

अथाग्निमन्त्रः (शारदायाम्)

व्याहृतित्रयमग्नेः स्याज्जातवेद इहावह।
सर्वकर्माणि संभाष्य साधयाग्निप्रियः ततः ॥
ताराद्योऽयं मनुः प्रोक्तः पञ्चविंशतिवर्णवान्।

ऋषिर्भृगुर्भवेच्छन्दो गायत्रं देवताऽनलः ॥
विभक्तः पञ्चभिः षड्भिश्चतुर्भिः पञ्चभिस्त्रिभिः ।
द्वाभ्यामङ्गक्रिया प्रोक्ता वर्णैर्मूलमनोः क्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

अंसासक्तसुवर्णमाल्यमरुणस्रक्चन्दनालङ्कृतं
ज्वालापुञ्जजटाकलापविलसन्मौलिं सुमुक्ताम्बरम् ।
शक्तिस्वस्तिकदर्भमुष्टिकजपस्रक्स्रुक्स्रुवाभीवरान्
तद्दोर्भिर्बिभ्रतमञ्चितत्रिनयनं रक्ताभमग्निं भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

गुरोर्लब्धमनुर्मन्त्री चतुर्दश्यामुपोषितः ।
जपेद्भानुसहस्राणि शुद्धाचारो जितेन्द्रियः ॥
अमावास्यादिने विप्रान् भोजयेन्मधुरोत्तरैः ।
भक्ष्यैर्भोज्यैर्यथाशक्ति दद्यात् तेभ्योऽत्र दक्षिणाम् ॥
भुक्त्वा भोगं समानीय होमद्रव्याणि शोधयेत् ।
अपरं दिनमारभ्य होमं कुर्यादतन्द्रितः ॥
क्रमाद्वटसमिद्व्रीहितिलराजीहविर्घृतैः ।
प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयादनिशं सुधीः ॥
दशाहमेवं निर्वर्त्य विधानेन विधानवित् ।
दत्वा पूर्णाहुतिं सम्यगेकादश्यां द्विजोतमान् ॥
संपूज्य तर्पयेद्वित्तैर्यथाविभवमादरात् ।
गुरवे दक्षिणां दद्यादरुणां गां पयस्विनीम् ॥
वासांसि धनधान्यादि दत्वा संप्रीणयेद्गुरुम् ।

अथ यमन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

ॐ क्रौँ ह्रौँ आँ च तद्बीजं ङेऽन्तं वैवस्वतं वदेत् ।

धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमो वदेत् ॥
चतुर्विंशतिवर्णोऽयं यममन्त्रोऽखिलेष्टदः ।
सिद्धीषिष्विषवह्नियुग्माणैः षडङ्गानि स्मरेद्यमम् ॥
मेघश्यामं प्रसन्नास्यं नानालङ्कारसंयुतम् ।
महिषस्थं दण्डधरं संस्तुतं पितृभिर्वृतम् ॥
नानारूपधरैर्दूतैः श्वेतवस्त्रं भजेद्यमम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेदाज्यान्वितैस्तिलैः ।

अथ नैर्ऋतमन्त्रस्तत्रैव ।

ॐ क्षँ निर्ऋतये रक्षाधिपतये पदं वदेत् ।
धूम्रवर्णाय खड्गेति हस्ताय प्रेतवाहनः ॥
ङेऽन्तस्ततश्च हृदयं त्रिंशदर्णो मनुर्मतः ।
ॐ क्षमाद्यैर्हृदन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥

ध्यानम् ।

किरीटिनं च पिङ्गाक्षं धूम्राभं प्रेतवाहनम् ।
नानारक्षोगणैः सेव्यं खड्गचर्मधरं भजे ॥

पुरश्चरणं तत्रैव ।

जपेत् त्रिंशत्सहस्राणि गुञ्जाज्याभ्यां हुनेत् पुनः ।

अथ वरुणमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं वरुणदैवतम् ।
तारं वँ वरुणायेति जलाधिपतये वदेत् ॥
वदेच्च शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय संवदेत् ।
मकरेति वाहनाय नम एकत्रिवर्णकः ॥
त्रिष्टुप्छन्दो वशिष्ठर्षिर्देवता वरुणो मतः ।
ॐ वमाद्यैर्नमोऽन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ॥

ध्यानम् ।

श्वेतांशुकं दधद्धस्तैः पाशाङ्कुशवराभयान् ।
स्वच्छारविन्दवसतिर्मुक्ताभरणभूषितः ॥
तुन्दिलश्च प्रसन्नास्यो वरुणो निधिदोऽस्तु मे ।

पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्रं तु होमः पद्माक्षकैर्मतः ।

अथ वायुमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वायुमन्त्रं महाद्भुतम् ।
तारं यँ वायवे प्राणाधिपतये पदं वदेत् ॥
कृष्णवर्णायाङ्कुशेति हस्ताय मृगवाहना- ।
य नमो गोद्विवर्णोऽयं वायोर्मन्त्र उदोरितः ॥
गणकोऽस्य मुनिश्छन्दो निवृद्वायुश्च देवता ।
पञ्चाङ्गानि मनोरस्य ॐ यँ बीजादिकैः पदैः ॥

ध्यानम् ।

कृष्णवर्णं धावमानं मृगस्थं वेगवत्तरम् ।
पाशाङ्कुशकरं प्रेतकृत्यापरिमलान्वितम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेद्वर्णसहस्राणि लाजाज्याभ्यां च होमयेत् ।
सिद्धमन्त्रस्तु तत्कालं भवेद्भूमौ बलाधिकः ॥

अथ कुवेरमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि राजराजमनून् शुभान् ।
यक्षाय च कुवेराय वदेद्वैश्रवणाय च ॥
धनधान्याधिपतये धनधान्यपदं वदेत् ।
समृद्धिं मे देहि वदेद्वापयाग्निप्रियान्तकः ॥
पञ्चत्रिंशद्वर्णमितो विश्रवा मुनिरीरितः ।

छन्दस्तु बृहती त्र्यब्धीष्वष्टाष्टाङ्गैः षडङ्गकम् ॥

ध्यानम् ।

गारुत्मतनिभं शान्तं मुकुटादिविभूषितम् ।
वरं गदां च दधतं तुन्दिलं यक्षसेवितम् ॥

पुरश्चरणम् ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात् तिलैः ।
धर्मादिपीठे प्रयजेदङ्गलोकेशहेतिभिः ॥
शिवालये जपेन्मन्त्रमयुतं धनवृद्धये ।
विल्वमूलोपविष्टेन जप्तो लक्षं धनर्द्धिदः ॥
अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये ॐ श्रीँ ॐ ह्रीँ समुच्चरेत् ।
श्रीँ ह्रीँ क्लीँ श्रीँ क्लीँ च वित्तेश्वराय नम इत्यपि ॥
षोडशार्णोऽस्य मुन्यादि प्राग्वत् त्रिद्विद्विनेत्रकैः ।
पञ्चाक्षिभ्यां षडङ्गं स्याद्ध्यानपूजादि पूर्ववत् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

अथ मन्त्रान्तरं वक्ष्ये कुबेरस्य गजाक्षरम् ।
तारो वैश्रवणायेति स्वाहा पञ्चाङ्गमत्र तु ॥
स्वाहान्तैः प्रणवाद्यैस्तु पञ्चभिर्मन्त्रवर्णकैः ।

ध्यानमाह ।

धनपूर्णं स्वर्णकुम्भं तथा रत्नकरण्डकम् ।
हस्ताभ्यां बिभ्रतं खर्वकरपादं च तुन्दिलम् ॥
धराधस्ताद्रत्नपीठोपविष्टं सस्मिताननम् ।

पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेद्धोमः पूजा प्राग्वन्महाधनी ।
सेवनादस्य भवति यक्षिण्याद्यास्तथा वशाः ॥

अथेशानमन्त्रस्तत्रैव ।

प्रणवं हंसमुच्चार्य ईशानाय वदेत् ततः ।

विद्याधिपतये चेति स्फटिकेति वदेत् ततः ॥
वर्णाय शूलहस्ताय ङेऽन्तश्च वृषवाहनः ।
नमोऽन्त एकत्रिंशद्भिर्वर्णैर्मन्त्र उदाहृतः ॥
ॐ हमाद्यैर्नमोऽन्तैश्च पञ्चाङ्गं पञ्चभिः पदैः ।
शक्तीनां मन्त्रो ये च ता विद्याः परिकीर्त्तिताः ॥
पुरुषाणां च ते मन्त्रा विद्यास्तु पुरुषं विना ।
भवन्ति नैव फलदा यथा नारी नरं विना ॥
पुंसां योगो यत्र नोक्तस्तत्रैशानं प्रयोजयेत् ।

अस्य पुरश्चरणमष्टसहस्रजपस्तन्त्रान्तरे प्रोक्तः ।

अथ ब्रह्ममन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मणो मन्त्रमुत्तमम् ।
तारं पाशं ब्रह्मणे च लोकाधिपतये वदेत् ॥
रक्तवर्णायोर्ध्वलोकपालकाय वदेत् ततः ।
पद्महस्ताय च पदं ङेऽन्तं स्याद्धंसवाहनः ॥
नमोऽन्तो बाणरामार्णो मन्त्रोऽयं परिकीर्त्तितः ।
तारपाशादिकैः षड्भिः पदैरङ्गहृदन्तकैः ॥
नास्य पूजा तु मच्छापाज्जपोऽस्य परिकीर्त्तितः ।
वर्णलक्षजपादेव निग्रहानुग्रहक्षमः ॥
दशपत्रे यजेदेनं प्रागीशान्तदले सुराः ।
न तत्र मम शापोऽस्ति शापः केवलपूजने ॥

अथानन्तमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि शेषस्य मनुमद्भुतम् ।
तारं मायामनन्ताय नागाधिपतये वदेत् ॥
गौरवर्णायातलादिसप्तलोकेश्वराय च ।

चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नमोऽन्तकः ॥
एवं चत्वारिंशदर्णो मन्त्रोऽनन्तस्य कीर्त्तितः ।
मन्त्रं प्रतिचतुर्दश्यां चतुर्दशशतं जपेत् ॥
दुग्धं हुनेदिन्द्रविप्रान् भोजयेच्च चतुर्दश ।
कुर्याच्चतुर्दशीं भक्त्या धनधान्ययुतो भवेत् ॥
राज्यभ्रष्टो लभेद्राज्यं विद्याकामस्तु पण्डितः ।
भाद्रशुक्लचतुर्दश्यां विशेषात् पूजनं मतम् ॥

इति दिक्पालप्रकरणम् ।

अथ गायत्रीपुरश्चरणादि ।

(मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्यामि मन्त्रेशीं गायत्रीं वेदमातरम् ।
यया तु सगुणं ब्रह्म गीयते प्रतिपाद्यते ॥
निर्गुणं यां विना मुक्तिर्न कस्यापि प्रजायते ।
महामायास्वरूपायां महाकालः स्वयं यजेत् ॥
यत्प्रभावादहं त्वं च जातकाल इवापरः ।

सगुणब्रह्मेति । सूर्यमण्डलमध्यस्थगुणत्रयात्मकतेजोरूपमित्यर्थः ।
तदुक्तं (बृहत्सिद्धान्तसारे)

अदित्यमण्डलगतं यत् तेजस्त्रिगुणात्मकम् ।
तदेतत् सगुणं ब्रह्म ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्—इति ॥

निर्गुणमिति । गुणत्रयोपाधिरहितमित्यर्थः ।

यां विनेति । गुणब्रह्माभिधानद्वारा निर्गुणब्रह्मप्रतिपादिकाया अस्या एव मुक्तिहेतुत्वादिति भावः ।

(शारदायाम्)

प्रणवाद्या व्याहृतयः सप्त स्युस्तत्पदादिकाः ।
चतुर्विंशत्यक्षरात्मा गायत्री शिरसाऽन्विता ॥
सर्ववेदोद्धृतः सारो मन्त्रोऽयं समुदाहृतः ।

ब्रह्मा देव्यादिगायत्री परमात्मा समीरिताः ॥
ऋष्याद्याः प्रणवस्यैते मुनिभिः परिकीर्त्तिताः ।
यमदग्निभरद्वाजभृगुगौतमकाश्यपान् ॥
विश्वामित्रवशिष्ठाख्यौ व्याहृतीनामृषीन् विदुः ।
गायत्र्युष्णिगथानुष्टुब्बृहतीपङ्क्तयः पुनः ॥
त्रिष्टुब्जगत्यौ छन्दांसि कथितानि मनीषिभिः ।
सप्तार्चिरनिलं सूर्यो वाक्पतिर्वरुणो वृषः ॥
विश्वे देवाः क्रमादासां देवताः परिकीर्त्तिताः ।

(मेरुतन्त्रे)

गायत्र्या मुनिराख्यातो विश्वामित्रोऽतितापसः ।
गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता सविता स्मृता ॥

तन्त्रान्तरे ।

अग्निर्मुखं शिरो ब्रह्मा हृद्विष्णुरलिकं शिवः ।
साङ्ख्यायनश्च गोत्रं स्यात् त्रैलोक्यं चरणत्रयम् ॥

(शारदायाम्)

शिरसोऽस्या मुनिर्ब्रह्मा छन्दो देव्यादिका स्मृता ।
गायत्री परमात्मा तु देवता कथिता बुधैः ॥

(मेरुतन्त्रे)

व्याहृतिः सप्तभूराढ्या हृन्मुखांसोरुयुग्मके ।
जठरे च क्रमात् न्यसेन्न्यासोऽयं प्रथमः स्मृतः ॥
पादाङ्गुल्याद्यसन्धौ च सन्धौ स्याद्गुल्फपादयोः ।
गुल्फजान्वोस्तथा सन्धौ तथा जानूरुसन्धिषु ॥
लिङ्गे नाभौ च हृदये कण्ठे वर्णान्न्यसेत् क्रमात् ।
कराङ्गुलीमूलसन्धौ मणिबन्धे च कूर्परे ॥
भुजमूले मुखे नासिकायां चापि कपोलयोः ।

नेत्रकर्णभ्रूशिरसि चूडाधोवामकर्णके ॥
दक्षकर्णे मुखे मस्तके च वर्णान् क्रमान् न्यसेत् ।
गायत्र्या अक्षरन्यासो द्वितीयः संप्रकीर्त्तितः ॥
पदानि दश गायत्र्याः शिरोभ्रूमध्यदृङ्मुखे ।
कण्ठहृन्नाभिगुह्येषु जान्वोरङ्घ्र्योरथ न्यसेत् ॥
शिरोदेशे तु गायत्र्याः शिरोन्यासस्तृतीयकः ।
हृदयं ब्रह्मणे प्रोक्तं विष्णवे शिर ईरितम् ॥
शिखा रुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम् ।
नेत्रं सदाशिवायोक्तमस्त्रं सर्वात्मने स्मृतम् ॥
अयं षडङ्गन्यासस्तु चतुर्थः परिकीर्त्तितः ।
पज्जानुकटिनाभौ च हृदये कण्ठभालयोः ॥
क्रमाद्व्याहृतयो न्यस्याः परब्रह्मेति शीर्षकम् ।
पुनर्व्याहृतिन्यासोऽयं पञ्चमः परिकीर्त्तितः ॥
तत्सवितुर्हृदयाय वरेण्यं शिरसे तथा ।
भर्गो देवस्य च शिखा धीमहि कवचं स्मृतम् ॥
धियो यो नो नेत्रमुक्तमस्त्रं शेषेण कीर्त्तितम् ।
अयं न्यासस्तु षष्ठः स्यात् षडेते पापहारकाः ॥
प्राणायामत्रयं कृत्वा ततो ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानं यथा ।

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकुशाञ्छुभ्रं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

ध्यानान्तरमुक्तं तन्त्रान्तरे ।

ब्रह्माणी चतुराननाऽक्षवलयं कुम्भं करैः स्रुक्स्रुवौ
बिभ्राणारुणकान्तिरिन्दुवदना ऋग्रूपिणी बालिका ।
हंसारोहणकेलिरम्बरमणेर्बिम्बाञ्चिताभूषिता
गायत्री हृदि भाविता भवतु नः सम्पत्समृद्ध्यै सदा ॥
मध्याह्ने चान्यसन्ध्यायां ध्यानभेदमथ ब्रुवे ।

तथा ।

रुद्राणी नवयौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा
खट्वाङ्गत्रिशिखाक्षसूत्रवलयाभीतीर्दधानाऽम्बिका ।
विद्युत्पुञ्जजटाकलापविलसद्बालेन्दुमौलिः सदा
सावित्री वृषवाहनासिततनुर्ध्येया यजूरूपिणी ॥
वृद्धा नीलघनप्रभापरिलसत्पीताम्बराभूषिता
दिव्यैराभरणैरथाङ्गकमले शङ्खं गदां बिभ्रती ।
तार्क्ष्यस्कन्धगतासमस्तजगदाराध्या परा वैष्णवी
ध्येया चैव सरस्वती भगवती सामस्वरूपा सदा ॥

अस्याः पूजायन्त्रमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

पद्ममष्टदलं लेख्यं ह्रीँ कारं कर्णिकास्थितम् ।
द्वौ द्वौ स्वरौ दिग्विदिशं प्रतिपत्रे समालिखेत् ॥
किञ्जल्केषु तदग्रेषु गायत्र्यर्णाँस्त्रिशस्त्रिशः ।
तद्बहिर्वृत्तयुगलान्तराले तु समालिखेत् ॥
ककाराद्याँस्तथोमापोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म- ।
भूर्भुवः सुवरोमिति यन्त्रे सर्वार्थसिद्धिदम् ॥

(शारदायाम्)

प्राणायामं पुरा कृत्वा गायत्रीं सन्ध्ययोर्जपेत् ।

सप्तव्याहृतिसंयुक्तां गायत्रीं शिरसाऽन्विताम् ॥
त्रिरुच्चरं धिया प्राणान् धारयेद्यमानसः ।
प्राणायामोऽयमाख्यातः समस्तदुरितापहः ॥
व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं दीक्षितो जपेत् ।

अथास्याः पूजाविधिः (मेरुतन्त्रे)

ततस्तु पूजयेद्देवीं दशावरणसंयुताम् ।
आदौ संपूज्य देवेशीं कोणाग्रे पूजयेत् ततः ॥
त्रिकोणस्याग्निकोणात् तु प्रादक्षिण्येन देवताः ।
ब्राह्मीं माहेश्वरीं वैष्णवीमिति प्रश[illegible]ः ॥
तस्याग्रतस्त्वष्टदिक्षु क्रमादष्टौ प्रपूजयेत् ।
आदित्यमुखाँश्च रविं प्रज्ञां भानुं प्रभां तथा ॥
भास्करं चापि सन्ध्यां च द्वितीयावरणं त्विदम् ।
ततोऽर्चयेदष्टदलकेशरेष्वङ्गषट्ककम् ॥
गायत्र्याश्च तृतीयोक्तं दलमध्ये यजेदिमाः ।
प्रल्हादिनीं प्रभां नित्यां विश्वम्भरां विलासिनीम् ॥
प्रभावतीं जयां शान्तां चतुर्थावरणं त्विदम् ।
ततो यजेद्दलाग्रेषु कान्तिं दुर्गां सरस्वतीम् ॥
विश्वरूपां विशालां च ईशानीं व्यापिनीं क्रमात् ।
विमलां च प्रोक्तमिदं पञ्चमावृत्तिपूजनम् ॥
तदग्रिमे त्वष्टदले एताः पूज्याश्च शक्तयः ।
तमोऽपहारिणीं सूक्ष्मां विश्वयोनिं जयावहाम् ॥
पद्मालयां परां शोभां पद्मरूपां तु षष्ठकम् ।
भवेदावरणं चाग्रे ब्राह्मयाद्याः सप्त मातरः ॥
अष्टमा त्वरुणा प्रोक्ता सप्तमावरणं त्विदम् ।

रविः सितः कुजो राहुः शनिश्चन्द्रो बुधो गुरुः ॥
अष्टमावरणं चैतच्चतुरस्रे दिगष्टके ।
दिक्पाला नवमे प्रोक्तास्तदस्त्राणि च दिग्मिते ॥
एवं सपूजयेद्देवीं तस्या मुद्राः प्रदर्शयेत् ।

मुद्रास्तु तत्रैवोक्ताः ।

गायत्र्या अथ वक्ष्यन्ते चतुर्विंशतिमुद्रिकाः ।
जपादौ दर्शयेत् तासां देवताश्च तथा फलम् ॥
सुमुखं संहतौ हस्तावुत्तनाकुञ्चिताङ्गुली ।
प्रल्हादिनी तत्र शक्तिः साधकानन्ददायिनी ॥
संपुटौ पद्मकोशाभौ करावन्योन्यसंहतौ ।
तस्य शक्तिर्नित्यविश्वा विश्वस्यापि प्रियङ्करी ॥
विततं संहतौ हस्तावुत्तानावायताङ्गुली ।
हृदया नाम तच्छक्तिः सर्वेषां हृदयङ्गमा ॥
विस्तीर्णं संहतौ पाणी मिथो मुक्ताङ्गुलिद्वयम् ।
शक्तिस्तु विमला तस्याः प्रभावादनघो भवेत् ॥
द्विमुखाख्या हस्तयोस्तु सम्मुखं सक्तयोर्द्वयोः ।
कनिष्ठयोरेव योगः शक्तिस्तस्याः सदा विधा ॥
त्रिमुखाख्या हस्तयुग्मं संसक्तानामिकाद्वयम् ।
संयुक्तं शेषमङ्गुल्यो भिन्नाः शक्तिः प्रभाती ॥
चतुर्मुखा हस्तयुग्मं संसक्तं मध्यमायुतिः ।
शेषाङ्गुल्यस्तु संभिन्ना लोला शक्तिः प्रकीर्त्तिता ॥
मुद्रा पञ्चमुखी तद्वत् तर्जन्योर्यत्र संयुतिः ।
अपराङ्गुलयो भिन्नाः शक्तिः शान्तिश्च शान्तिकृत् ॥
भवेत् षण्मुखमुद्रा सा संपूर्णाङ्गुलियोजनम् ।

कनिष्ठाद्वितयं हित्वा शक्तिर्दुर्गा प्रकीर्त्तिता ॥
अधोमुखं नाम मुद्रा न्युब्जौ हस्तावधोमुखौ ।
आकुञ्चिताग्रौ संयुक्तौ शक्तिरस्याः सरस्वती ॥
व्यापिकाञ्जलिकं नाम मुद्रा हस्तौ तु तादृशौ ।
विशेषोऽत्र तु चोत्तानौ विश्वरूपाऽत्र देवता ॥
शकटं नाम मुद्रा सा बद्धाग्राङ्गुलिकौ करौ ।
अधोमुखौ बद्धमुष्टी विशाखा शक्तिरत्र तु ॥
यमपाशं बद्धमुष्ट्योः करयोर्ग्रन्थिते यदा ।
तर्जन्यौ तत्र तलगे वामा ज्ञेयाऽत्र देवता ॥
ग्रन्थिताख्याऽन्योन्यसन्धिलग्नाश्चाङ्गुलयो यदि ।
उत्तानौ चोच्छ्रिताङ्गुष्ठा वामा शक्तिः समीरिता ॥
सम्मुखोन्मुखमुद्रा तु सम्बद्धोर्ध्वाङ्गुली करौ ।
दक्षिणाधोमुखो वाम ऊर्ध्वमाप्यायनी भवेत् ॥
विलम्बा नाम सा मुद्रा चोत्तानोन्नतकोटिकौ ।
यस्यां करौ तु विमला तस्याः शक्तिः प्रकीर्त्तिता ॥
मुष्टिकं तु यदा मुष्टी भवतोऽन्योन्यसंयुते ।
उत्तानौ तु करौ तत्र शक्तिः प्रोक्ता तमोमयी ॥
मत्स्यस्तु सम्मुखीभूतौ युक्तानामकनिष्ठिकौ ।
ऊर्ध्वसंयुक्तवक्राङ्गयः शेषाः शक्तिर्हिरण्मयी ॥
कूर्मस्त्वधोमुखो वामस्तादृग्दक्षेण पृष्ठके ।
समाक्रान्तस्तस्य शक्तिः सूक्ष्मा सूक्ष्मार्थसाधिनी ॥
वाराही दक्षिणस्योर्ध्वं वाममुत्तानकं करम् ।
स्थापयित्वाऽधोमुखं तन्नामयेद्विश्वयोनिका ॥

सिंहाक्रान्तं नाम मुद्रा हस्तौ चेदायताङ्गुली ।
दत्तौ श्रवणयोरूर्ध्वं शक्तिरस्या जयावहा ॥
महाक्रान्तं नाम मुद्रा प्राग्वदाकुञ्चिताग्रकौ ।
करौ कर्णस्थितौ शक्तिः प्रोक्ता पद्मालयाभिधा ॥
मुद्गरं किं चिदूर्ध्वं तु गतयोर्वामतर्जनी ।
धृता दक्षिणहस्तेन परा शोभाऽत्र देवता ॥
पल्लवाख्या भवेन्मुद्रा त्वङ्गुल्यः पल्लवीकृताः ।
देव्यग्रे दर्शयेच्छक्तिर्गदारूपीति कीर्त्यते ॥

अथ पुरश्चरणं तत्रैव ।

चतुर्विंशतिलक्षाणि पुरश्चरणमुच्यते ।
क्षीरौदनतिला- दूर्वाः सिद्धौदनसमिद्वराः ॥
पृथक् सहस्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ।
तर्पणादि ततः कृत्वा गुरून् संतोष्य यत्नतः ॥
प्रयोगानाचरेद्विद्वान्स्वानुज्ञापुरःसरम् ।

इति गायत्रीपुरश्चरणविधिः ।

अथ व्याहृतीनां व्याख्या ।

( प्रपञ्चसारे )

भूःपदाद्या व्याहृतयो भूशब्दस्तदि वर्त्तते ।
तत्पदं सदिति प्रोक्तं षण्मात्रत्वात् तु भूरतः ॥
भूतत्त्वात् कारणत्वाच्च भुवःशब्दस्य सङ्गतिः ।
सर्वश्रीकरणात् स्वार्थतया च स्वरितीरितः ॥
महत्त्वाच्च महःशब्दो महस्तेन समीरितः ।
तदेव सर्वजननात् तस्मात् तु व्याहृतिर्जनः ॥
तपो ज्ञानतया चैव तथा तापतया स्मृतम् ।

सत्यं परत्वादात्मत्वादनन्तज्ञानतः स्वयम् ॥

व्याहृतीनां प्रणवैक्यमुक्तं तत्रैव ।

प्रणवस्य व्याहृतीनामन्तःसम्बन्ध उच्यते ।
अकारो भूरुकारस्तु भुवो मार्णः स्वरीरितः ॥
विन्दुर्महस्तथा नादो जनः शक्तिस्तपः स्मृतम् ।
शान्तिः सत्यमिति प्रोक्तं सत् तत् परतरं पदम् ॥

अथ गायत्रीव्याख्या पूर्वकं प्रणवस्याहृषोणां गायत्र्यैक्यमुक्तं तत्रैव ।

प्रणवस्य व्याहृतीनां गायत्र्यैक्यमथोच्यते ।
अत्रापि तत्पदं पूर्वं प्रोक्तं तदनुवर्ण्यते ॥
तद्वद्धिति [illegible]मनेनाखिलवस्तुनः ।
सृष्ट्यादिकारणं तेजोरूपमादित्यमण्डले ॥
अभिधेयं सदानन्दं परं ब्रह्माभिधीयते ।
यत् तत् सवितुरित्युक्तं षष्ठ्येकवचनात्मकम् ॥
धातोरिति समुत्पन्नं प्राणिप्रसववाचकात् ।
सर्वासां प्राणिजातानामिति प्रसवितुः सदा ॥
वरेण्यं वरणीयत्वात् सेवनीयतया तथा ।
भजनीयतया सर्वैः प्रार्थनीयतया स्मृतम् ॥
पूर्वस्याष्टाक्षरस्यैवं व्याहृतिर्भूरिति स्मृता ।
पापस्य भर्जनाद्भर्गो भक्तस्निग्धतया तथा ॥
देवस्य वृष्टिदानादिगुणयुक्तस्य नित्यशः ।
प्रभुत्वेन प्रकाशेन दीप्यमानस्य वा तथा ॥
ध्यै-चिन्तायामतो धातोर्निष्पन्नं धीमहीत्यदः ।
निगमाद्येन *दिव्येन विद्यारूपेण चक्षुषा ॥

* देवेशि इति ४ पु० पा० ।

दृश्यो हिरण्मयो देव आदित्ये नित्यसंस्थितः ।
हीनतारहितं तेजो यस्य स्यात् स हिरण्मयः ॥
यः सूक्ष्मः सोऽहमित्येवं चिन्तयामः सदैव हि ।
द्वितीयाष्टाक्षरस्यैव व्याहृतिर्भुव ईरिता ॥
धियो बुद्धिर्मनोरस्य च्छान्दसत्वात् समीरितम् ।
कृतश्च लिङ्गव्यत्यासः सूत्रात् सुप्तिङुपग्रहात् ॥
यत् तु तेजोनिरुपमं सर्वदेवमयात्मकम् ।
भजतां पापनाशस्य हेतुभूततयोच्यते ॥
न इति प्रोक्त आदेशः षष्ठ्यसौ युष्मदस्मदोः ।
तस्मादस्माकमित्यर्थः प्रार्थनायां प्रचोदयात् ॥
तृतीयाष्टाक्षरस्यापि व्याहृतिः स्वरितीरिता ।
एवं दश पदान्यस्यास्त्रयश्चाष्टाक्षराः स्मृताः ॥
षडक्षराश्च चत्वारः स्युश्चतुर्विंशदक्षराः ।
इत्थम्भूतं यदेतस्य देवस्य सवितुर्विभोः ॥
वरेण्यं भजतां पापविनाशनकरं परम् ।
भर्गोऽस्माभिरभिध्यातं धियस्तन्नः प्रचोदयात् ॥
उक्तैवमत्र गायत्री पुनस्तच्छिर उच्यते ।
आपो ज्योती रस इति सोमाग्न्योस्तेज उच्यते ॥
तदात्मकं जगत् सर्वं रसस्तेजोद्वयं स्मृतम् ।
अमृतं तदनाशित्वाद्बृहत्वाद्ब्रह्म गद्यते ॥
यदानन्दात्मकं ब्रह्म सत्यज्ञानादिलक्षणम् ।
तद्भूर्भुवः स्वरित्युक्तं सोऽहमित्योमुदाहृतम् ॥
एतत् तु वेदवत् स्यात् तु वेदस्य शिर उच्यते ।

लक्षणैरिति निर्दिष्टो वेदसारेषु निष्ठितः ॥
फलार्थी फलमाप्नोति मोक्षार्थी मोक्षमृच्छति ।

इति व्याहृतीनां व्याख्या ।

अथ प्रणवमन्त्रः ।

(प्रपञ्चसारे)

अथ प्रणवसंज्ञकं प्रतिवदामि मन्त्रं वरं
सजापमपि सार्चनं सहुतकॢप्ति सोपासनम् ।
अशेषदुरितापहं विविधकामकल्पद्रुमं
विमुक्तिफलसिद्धिदं विमलमानसैः सेवितम् ॥
आद्यः स्वरः समेतोऽमरेण सधसप्तमश्च विन्दुयुतः ।
प्रोक्तः स्यात् प्रणवोऽत्र त्रिमात्रिकः सर्वमन्त्रसमवायी ॥
मन्त्रस्यास्य मुनिः प्रजापतिरथ च्छन्दश्च देव्यादिका
गायत्री गदिता जगत्सु परमात्माख्यस्तथा देवता ।
अक्लीवैर्युगमध्यगध्रुवयुतैरङ्गानि कुर्यात् स्वरै-
र्मन्त्री जातियुतैश्च सत्यरहितैर्वा व्याहृतीभिः क्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

विष्णुं भास्वत्किरीटा*ङ्गदवलयगलाकल्पहारोदराङ्घ्रि-
श्रोणीभूषं सुराजन्मणिमकरमहाकुण्डलामण्डिताङ्गम् ।
हस्तोद्यच्चक्रशङ्खाम्बुजगदममलं पीतकौशेयवासो-
विद्योतद्भासमुद्यद्दिनकरसदृशं पद्मसंस्थं नमामि ॥

अस्य पुरश्चरणं कोटिजपः ।

तदुक्तं तत्रैव ।

दीक्षितो मनुमिमं शतलक्षं संजपेत् प्रतिहुनेच्च दशांशम् ।
पायसैर्घृतयुतैश्च तदन्ते विप्रभूरुहभवाः समिधो वा ॥

---

* भास्वत्कलापा—इति० ४ पु० पा० ।

सर्पिःपायसशालीतिलसमिधाज्यै हि योऽनले जुहुयात् ।
ऐहिकपारत्रिकमपि स तु लभते वाञ्छितं फलं न चिरात् ॥

पूजाविधिमुक्त्वा-

इत्थं मन्त्री तारमनुर्जाप्यहुतार्चा-
भेदैरङ्गीकृत्य च युञ्ज्यादपि योगान् ।
यैः संलब्ध्वा चेह समग्रां श्रियमन्ते
विष्णोर्धाम प्राप्य स योगी लभते सत् ॥

इति प्रणवपुरश्चरणम् ।

अथ वैदिकमृत्युञ्जयमन्त्रः ।

(मेरुतन्त्रे)

मृत्योर्भयं तु सर्वेषां सर्वदा सर्वकर्मसु ।
तस्मिन् जिते तु देवादिमोक्षान्तं साधयेज्जनः ।
तदर्थं संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं मृत्युञ्जयाभिधम् ॥
उपासना तस्य न स्याद्दंशेऽल्पायुश्च रोगभाक् ।
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ॥
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।
वशिष्ठोऽस्य मुनिश्छन्दोऽनुष्टुब्देवस्त्रियम्बकः ॥
त्रिचतुर्वसुगोपश्चत्रिभिर्वर्णैः षडङ्गकम् ।

ध्यानमाह ।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम् ।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशसंस्थं शिवं
स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे ॥

पुरश्चरणम् ।

जपेल्लक्षमिमं मन्त्रमेवं ध्यायेजितेन्द्रियः ।

जुहुयाद्दशभिर्द्रव्यैरयुतं घृतसंप्लुतैः ॥

दशद्रव्याणि तत्रैवोक्तानि ।

विल्वं पलाशं खदिरं वटं च तिलसर्षपौ ।
पायसं दधि दूर्वां च तथैकेन सहस्रकम् ॥
तर्पयित्वाऽभिषिञ्चयाथ ब्राह्मणाँस्तोषयेद्गुरुम् ।
एवं कृते प्रयोगार्हो जायतेऽयं महामनुः ॥

इति वैदिकमृत्युञ्जयपुरश्चरणम्

अथ रुद्राध्यायपुरश्चरणविधिः

तत्रैव ।

श्रीविष्णुरुवाच ।

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ।
कालस्त्वमसि लोकानां महामाया त्वियं परा ॥
आवयोः के तुष्टिकरा मन्त्राः सूक्तानि तद्वद ।
येन भुक्तिश्च मुक्तिश्च क्लेशो नैव च नैव च ॥

श्रीशिव उवाच ।

विष्णो गोप्यं त्वया पृष्टं न वाच्यं तान्त्रिके द्विजे ।
तन्त्रे मे तामसं रूपं त्वया पृष्टं तु सात्त्विके ॥
भोगमोक्षैकनिलयं चतुर्वेदोत्तमोत्तमम् ।
मन्त्रं स्तोत्रेश्वरं तन्मे जानीहि शतरुद्रियम् ॥
छन्दांस्यनुष्टुबादीनि अघोरोऽस्य मुनिर्मतः ।
देवताऽस्य भवेद्रुद्र आदित्यः परपूरुषः ॥

(पद्धतौ)

श्रीरुद्रप्रीतये शतरुद्रियजपे विनियोगः ।

अथ कराङ्गन्यासौ तत्रैव ।

ॐ अग्निहोत्रात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ दर्शपौर्णमासात्मने तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ चातुर्मास्यात्मने मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ निरूढपशुबन्धात्मने अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ ज्योतिष्टोमात्मने कनिष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ चत्वारिंशच्छतसहस्रात्मने करतलपृष्ठाभ्यां नमः ।

एवं हृदयादिन्यासः ।

महान्यासस्तु विस्तरभयादुपेक्षितः ।

अथ ध्यानम् ।

आपातालनभःस्थलान्तभुवनब्रह्माण्डपाविस्फुर-
ज्ज्योतिस्फाटिकलिङ्गमौलिविलसत्पूर्णेन्दुवान्तामृतैः ।
आस्तोकाप्लुतमेकमीशमनिशं रुद्रानुवाकान् जपन्
ध्यायेदीप्सितसिद्धयेऽद्भुतपदं विप्रोऽभिषिञ्चेच्छिवम् ॥

(मेरुतन्त्रे)

पार्थिवोक्तप्रकारेण लिङ्गपूजां ततश्चरेत् ।

आराधितो मनुष्यैस्त्वं सिद्धैर्देवासुरादिभिः ॥

आराधयामि भक्त्या त्वां मां गृहाण महेश्वर ।

आत्वावहन्तु हरयः सचेतसश्चेतैरश्वैः सह केतुमद्भिः ।
वाताजवैर्बलवद्भिर्मनोजवैरायाहि शीघ्रं मम हव्याय शर्वो नमः ।

एतु ते रुद्रभावसं तेन परो मूजवतोऽतीहि अवततधन्वा पिनाकवसः कृत्तिवासा अहिंसन्नः शिवोऽतीहि ।

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्यां आविवेश ।

प्रसन्नो भव देवेश सुमुखो भव शङ्कर ।
शान्तो भवस्व चात्र त्वं मम चाभिमुखो भव ॥

स्वामिन् सर्वजगन्नाथ यावत् पूजावसानकम्।
तावत् त्वं प्रीतिभावेन लिङ्गेऽस्मिन् सन्निधो भव॥
अभिषेकं ततः कुर्यादमृतैः पञ्चभिः क्रमात्।
पश्चाच्छुद्धोदकेनाथ ततः पूजनमाचरेत्॥
रौद्रीं धारां ततः कुर्यात् प्रोच्यते तद्विधानकम्।
नमस्ते रुद्राग्नाविष्णु इत्यध्यायद्वयेन च॥
आवर्त्तनमिति प्रोक्तं गङ्गास्नानफलप्रदम्।
आवर्त्तनाभिषेकं तु यः कुर्यात् प्रत्यहं नरः॥
तस्य दैनन्दिनं पापं दैवजं नाशमाप्नुयात्।
सन्ध्यावन्दनतः क्षीणं तच्चेत् प्राग्जन्मजं हरेत्॥
एकः पाठो नमस्तस्य अनुवाकः परस्य च।
एवं भवा नमस्ते स्युरग्नाविष्णुस्तथैककम्॥
इयं रुद्री समाख्याता रौद्रपापनिकृन्तनी।
अनया प्रत्यहं यस्तु कुर्याल्लिङ्गेऽभिषेचनम्॥
जन्मजन्मकृतं पापं वर्षे वर्षे प्रणश्यति।
सप्तजन्मकृते पापे नष्टे लक्ष्मीर्विवर्धते॥
वंशश्च स्थिरतामेति यशो याति दिगन्तरम्।
सूते चास्य यथा रूपं तथा तोये प्रणश्यति॥
रुद्रीभिरेकादशभिर्लघुरुद्रः प्रकीर्त्तितः।
अनेन सिक्तं यैर्लिङ्गं ते न पश्यन्ति भास्करिम्॥
एकादशभिरेतैस्तु महारुद्रः प्रकीर्त्तितः।
निर्धनानां द्विजानां च महापातकनाशनः॥
अनेन विहितो होमः सोमयागफलं स्मृतम्।

अनधिकारादीक्षायां कलौ पक्षस्त्वयं मतः ॥
एकादशमहारुद्रैरतिरुद्रः प्रकीर्त्तितः ।

तथा ।

शाखायां यस्य तु यथा स्वाध्यायौ पठितावुभौ ।
पठनीयौ तथा तेन शाखाभेदं न कारयेत् ॥
न रुद्रो यस्य शाखायां तैत्तिरीयं पठेत् स तु ।
शाखा तु यजमानस्य ब्राह्मणद्वारतः कृते ॥
अथ वा तैत्तिरीया स्यान्नान्या शाखा प्रयुज्यते ।
शाखामिश्रं कृतं कर्म यजमानं विनाशयेत् ॥
धनलोभात् परार्थं यो विप्रो मामभिषिञ्चति ।
स तु चाण्डालवज्ज्ञेयो निर्धनः सप्तजन्मसु ॥
कुटुम्बिना तु यत्नेन धनार्थं यच्च पूजनम् ।
कृते चेज्जपदानाभ्यां तद्दशांशोऽस्य निष्कृतिः ॥

तथा ।

रुद्रो न यस्य शाखायां परिशिष्टान्वितं स तु ।
पठेद्रुद्रं तैत्तिरीयं लुप्तशाखस्तमेव हि ॥
मन्त्रः प्रयोगसहितो रुद्राध्यायोऽथ वक्ष्यते ।
असंस्कृताय नो वाच्यं तान्त्रिकाय कदा च न ॥

तत्रादौ ।

ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव-इत्यारभ्य माहिꣳसीः पुरुषं जगत्-इत्यन्तानां पुरश्चरणप्रयोगः ।

दशलक्षं जपेद्विद्वानृच एता जितेन्द्रियः ।
लक्षमेकं प्रजुहुयात् प्रत्यृचं योऽञ्जलिप्रभम् ॥
यवगोधूमकं क्षौद्रतिलाज्यदधिसंयुतम् ।
यत्किञ्चित् कार्यमुद्दिश्य तस्य सिद्धिः प्रजायते ॥

एवमेव सहस्रं चेदेकादशदिनं हुनेत् ।
ग्रामगं [illegible] नश्यते नात्र संशयः ॥
कुमारमरकं ग्रामे द्वादशाहेन नश्यति ।
होमः पञ्चदशाहं तु राष्ट्रोपद्रवनाशनः ॥
होमाद्विंशतिरात्रेण देशोपद्रवनाशनम् ।
पृथिव्युपद्रवो नश्येन्मासमात्रेण होमतः ॥
गवामुपद्रवे जाते गोष्ठमध्ये तदा हुनेत् ।
वैकङ्कतसमिद्भिर्वाऽयुतं शान्तिः प्रजायते ॥
अयुतद्वयहोमेन महाशान्तिर्भवेद्ध्रुवम् ।

शिवेन वचसा-इत्यादि ।

जपेदयुतसङ्ख्याकं शापमोक्षः प्रजायते ।
शिशिरे तु जले प्रातर्लक्षं जप्त्वा सुखी भवेत् ॥

अध्यवोचत्-इति ।

लक्षमेकं पुरश्चर्या होमः स्याच्छ्वेतसर्षपैः ।
व्याधिसंक्रामणी चेयं प्रयोगान्तरमुच्यते ॥
सप्ताभिमन्त्रितान् कृत्वा सर्षपानातुरस्य तु ।
चतुर्दिक्षु क्षिपेद्रक्षा दशदिग्भ्यः प्रजायते ॥
सप्ताभिमन्त्रितान् कृत्वा पथि गच्छँस्तु सर्षपान् ।
दशदिक्षु क्षिपेन्नित्यं पथि क्षेमः प्रजायते ॥
ब्रह्मराक्षसयक्षाद्यैः पिशाचप्रेतभूतकैः ।
आविष्टसर्षपैस्ताड्यः सप्तवाराभिमन्त्रितैः ॥
पुनः पुनर्मन्त्रपाठपूर्वकं ते धनार्थिनः ।
धनं गृहीत्वा गच्छन्ति करे तं द्रुतमेव च ॥

शिखामाक्रम्य च यजेत् ताडयेद्गौरसर्षपैः ।
रात्रिं समस्तां स्कन्दादिग्रहपीडा विनश्यति ॥
अनेन मन्त्रयित्वा तु दद्याच्छास्त्रोक्तमौषधम् ।
तत्कालं तद्गुणाय स्याद्न्यथाऽसौ यथाविधि ॥
अभिमन्त्र्य जलं दद्यात् सर्वसत्त्वभवां रुजम् ।
हरेत् सर्वग्रहाणां च सर्षपैस्ताडनात् तथा ॥
सर्वभूतोद्भवां पोडां भस्मधारणतो जयेत् ।
दिवसे च तथा रात्रौ त्रिशूलमभिमन्त्रयेत् ॥
सहस्रैकं सहस्रकं क्षिपेन्नागह्रदे तु तत् ।
त्रिशूलं बान्धवोपेता नाशं गच्छन्ति पन्नगाः ॥
भस्माभिमन्त्रितं कृत्वा पन्नगाक्रान्तमन्दिरे ।
क्षिपेत् तत्तालशब्देन पन्नगोत्सादनं भवेत् ॥

असौ यस्ताम्र-इत्यादि ।

उदयास्तमये सूर्यमेताभ्यामुपतिष्ठते ।
अष्टोत्तरशतं त्र्यब्दमक्षयान्नोद्भवो भवेत् ॥
सहस्रमभिजप्तेन क्षीरेण स्नापयेच्छिवम् ।
अब्दैकेन प्रसन्नः स्याद्घृतस्नानाच्च वर्षणम् ॥
अतसीनां तु पुष्पाणि हुनेदयुतसङ्ख्यया ।
अवशो वश्यतां याति सविता वरदो भवेत् ॥
अर्कवृक्षोद्भवैर्दुग्धैराप्लुतानां तु होमयेत् ।
अयुतं चार्कसमिधां सक्तुं च सजलं ददेत् ॥
होमान्ते भगवान् सूर्यो वृष्टिं मुञ्चति नान्यथा ।
मन्त्रद्वयं तु भजतामिष्टां सिद्धिं प्रयच्छति ॥

नमोऽस्तु नीलग्रीवाय—इत्यादि ।

स्थण्डिलस्योपयुक्तं तु *कृत्वा सघृतपायसम् ।
कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशी ॥
प्रत्यहं स्नापयेत् तावत् सहस्रेणाभिमन्त्रितम् ।
निवेदयेत् तद्देवाय कार्षापणसहस्रकम् ॥
सोद्यमाज्जायते लाभः सिद्धे मन्त्रे न संशयः ।
असिद्धे तु तदर्धं स्यात् सूर्यकान्तदृषद्यपि ॥
निवेदनात् पुनर्लाभो लक्षमेकं पुरस्कृतिः ।
होमस्तु पायसघृतैरनाख्येयः प्रयोगवान् ॥

प्रमुञ्च धन्वस्त्वम्—इत्यादि ।

आभिः षड्भिस्त्वायुधानि मन्त्रयेच्च सहस्रकम् ।
बन्धयित्वा तानि रणे गच्छेत् गच्छन्ति शत्रवः ॥
जुहुयादयुतं गर्भकण्टक्या द्वेषकामुकः ।
गुडं मुखेन चोत्थाप्यं शत्रोर्नाम स्मरन् जपेत् ॥
जपाख्यस्यासनेनैव शत्रुमुत्सादयेद्धटात् ।
संपूर्णाहं जपन्नेव नगरं ग्राममेव च ॥
उत्सादयेच्च राजानमहोरात्रं जपन्निति ।
राजपुत्रं दिनार्धेन क्षत्रियं त्रिलवेन च ॥
चतुर्भागेन वैश्यं च षड्भागेनैकजातिकम् ।
पलाशाश्वत्थविल्वानामपामार्गस्य च क्रमात् ॥
विप्रादिवश्यकामस्तु दधिक्षौद्रघृतान्विताः ।
हुनेदयुतसङ्ख्याकाः समिधः कार्यसिद्धये ॥

---

* कृशरम्—इति २-३ पु० पा० ।

हीनवर्णान् वशीकर्त्तुं वरुणार्ककवेतसाम् ।
साखोटकाँश्च जुहुयाद्दृष्ट्वा विप्रादिवृत्तिकान् ॥
सौगन्धिकान्युत्पलानि कुमुदानि प्रयच्छति ।
स्वयम्भुलिङ्गे लक्षं तु चन्दनाक्तानि भक्तितः ॥
राज्यभ्रष्टो भवेद्राजा षड्भिर्मन्त्रैः पृथक् पृथक् ।
धनार्थी प्राप्नुयाद्वित्तं शक्नुवन्निति पूजयेत् ॥
लक्षमेकं तिलानां यः पृथङ्मन्त्रैः शिवोपरि ।
आरोपयेत् स शत्रूणां सदा मूर्धनि तिष्ठति ॥
अयुतं राजवृक्षस्य समिधो होमयेत् तु यः ।
रणे राजकुले द्यूते स शत्रुं त्वरितं जयेत् ॥
गुग्गुलं षट्सहस्रं यो दक्षिणामूर्त्तिसन्निधौ ।
यत्कार्यार्थं हुनेत् तस्य सिद्धिः शीघ्रं प्रजायते ॥
असाध्यस्यापि सिद्धिः स्याद्धुत्वा चाष्टसहस्रकम् ।
यथा महानसे सिद्धमन्नं च जुहुयात् तथा ॥
सहस्राष्टकमेतस्य द्रव्यं भवति चाक्षयम् ।
एका ऋक् परिशिष्टस्य एतस्याग्रे प्रचक्षते ॥

नमस्ते अस्तु भगवन्—इति ।

अयुतं यो जपेदेतां घृताक्तैर्विल्वपत्रकैः ।
प्रतिनामसहस्रं तु हुत्वा स्याल्लोकवन्दितः ॥

नमो हिरण्यवाहवे—इत्यादि ।

पुरश्चरणमेतस्य सहस्राष्टकमीरितम् ।
यः संग्रामगतस्तस्य कौशल्यार्थमिदं जपेत् ॥
जपप्रभावाच्छस्त्राद्यैः सोऽरिभिर्नैव बाध्यते ।

सुतायार्हन्यासपूर्वं पशिरिष्टं निगद्यते ॥

नमो रोहिताय स्थपतये—इति ।

सहस्रपञ्चकं चास्य पुरश्चरणमुच्यते ।
एतज्जप्तुर्भयं नास्ति व्याघ्रचौरादिजं वने ॥

नमः सहमानाय निव्याधिन—इत्यादि ।

सहस्राष्टकमेतस्य पुरश्चरणमुच्यते ।
व्रणादेस्तीव्रपीडाया नाशकोऽस्य जपः स्मृतः ॥

नम इषुमद्भ्यो—इत्यादि ।

सहस्रनवकं तावत् पुरश्चरणमस्य तु ।
सेनायाश्चतुरङ्गानां शान्तये प्रजपेदिदम् ॥

नम आव्याधिनीभ्यो—इत्यादि ।

पुरश्चरणमेतस्य सहस्राणां तु षोडश ।
दुष्टग्रहबलिं दत्वा जप्त्वा च तं निरामयः ॥

नमो भवाय च—इत्यादि ।

पुरश्चर्यायुतं चास्य विभवार्थं प्रयोजयेत् ।
त्रिसन्ध्यासु पठेदेतद्भवेद्धर्षेण भाग्यवान् ॥

नमो ग्र्याय—इत्यादि ।

सहस्रपञ्चकं तावत् पुरश्चरणमुच्यत्ते ।
गणस्याग्रत्वमाप्नोति मन्यते च परैरपि ॥

नमो ज्येष्ठाय च—इत्यादि ।

सहस्रदशकं तावत् पुरश्चरणमुच्यते ।
ज्ञातृश्रेष्ठत्वमाप्नोति जप्ते तस्य न संशयः ॥

नम आशुषेणाय—इत्यादि ।

पुरश्चर्या तु निर्दिष्टा सहस्राणां तु पञ्चकम् ।
जप्त्वा नश्यति खञ्जत्वं पादुकासिद्धिमाप्नुयात् ॥

नमो दुन्दुभ्याय–इत्यादि ।

अयुतद्वितयं चास्य पुरश्चरणमुच्यते ।
संग्रामजयकृच्चायमनुवाकः प्रकीर्त्तितः ॥

नमः कूप्याय च–इत्यादि ।

षट्सहस्रं पुरश्चर्या ग्रहेणाधिष्ठितो निधिः ।
अभिमन्त्रितमेतेन तोयं तन्निधिमोचकम् ॥

नमः सोमाय च –इत्यादि ।

पुरश्चर्याऽयुतमिता जपेदष्टोत्तरं शतम् ।
त्रिकालं भस्मतोयं च भक्षयेल्लेपयेत् तथा ॥
मासत्रयाद्राजयक्ष्मा किलासश्वित्रमण्डलः ।
नश्येद्देहो भवेद्दिव्यः क्षुद्ररोगा दिनत्रयात् ॥

नमस्तीर्थ्याय च–इत्यादि ।

षट्सहस्रं पुरश्चर्या षण्मासं तीर्थगो जपेत् ।
यथोक्तं तत् तीर्थफलं भुञ्जते चेह जन्मनि ॥

मम इरिण्याय च–इत्यादि ।

सहस्रनवकं तावत् पुरश्चरणमुच्यते ।
धातुवादो राजतस्तु सिध्यते तत्प्रभावतः ॥
अत्रास्ति परिशिष्टस्यानुवाक एक एव हि ।
रजस्याय च चैतस्य नमोऽन्तस्याग्रतः पठेत् ॥

नमो नन्दिकाय च–इत्यादि ।

सहस्राष्टकमेतस्य पुरश्चरणमुच्यते ।

बालग्रहा विनश्यन्ति बर्हिपिच्छौघमार्जनात् ॥

नम ऊर्व्याय च—इत्यादि ।

पुरश्चर्यासहस्राणां चतुष्टयमुदाहृतम् ।
अभिमन्त्र्य जलं देयं शोकशान्त्यै तु शोकिने ॥

नमो वः किरिकेभ्य—इत्यादि ।

तिलहोमेनायुतेन कार्षापणसहस्रकम् ।
उद्यमाद्वाऽथ भूपालात् प्राप्नुयाद्वर्षमध्यतः ॥
अपामार्गस्य समिधाऽयुतं हुत्वा रसापतिः ।
सहस्रस्वर्णतुल्यस्य स्वस्य सिद्धिः सकृद्भवेत् ॥
गुग्गुलुप्रतिमां कृत्वा क्षुरेणोत्कर्त्तयेच्च ताम् ।
जुहुयादष्टसाहस्रं लभेत् कन्यामलङ्कृताम् ॥
एवं कृत्वाऽथ वा होमं धनार्थी जपपूर्वकम् ।
सुवर्णानां तु शतकं प्राप्नुयाद्वर्षमध्यतः ॥
हुनेद्वोसफखण्डानि चैकादशसहस्रकम् ।
घृत्ताक्तानि लभेन्मासाद्भाव एकादशैव हि ॥
पुरश्चरणपूर्वं तु लक्षैकं तिलतण्डुलान् ।
यो हुनेत् तस्य गेहे तु राज्यलक्ष्मीः स्वयं वसेत् ॥
एवं च तिलधान्याभ्यां होमाल्लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ।
शतपुष्पमयीं कृत्वा प्रतिमां राजरूपकाम् ॥
सहस्रं जुहुयाद्राजा वशोऽवश्यं प्रजायते ।
पद्मोत्पलानां लक्षं तु हुत्वा भूयः श्रियं लभेत् ॥
चणकप्रतिमालक्षं होमयेद्गुग्गुलैर्वटीम् ।
स्मृतसामन्तराज्यं स प्राप्नोत्येव न चान्यथा ॥

हुनेद्बिल्वसमिद्भिस्तु दक्षिणामूर्त्तिसन्निधौ ।
लक्षमेकं तदा राष्ट्रं सामन्तस्य लभेद्ध्रुवम् ॥
महाच्चतुष्पथे स्थाप्यं लिङ्गं वल्मीकमृद्भवम् ।
स्नापयेत् पञ्चगव्येन रुद्राध्यायेन मन्त्रयेत् ॥
मानस्तोकेन मन्त्रेण चाभिषिञ्चेन्निवेद्यकम् ।
सघृतं पायसं दद्याद्भूतेभ्यश्च तथा वलिम् ॥
एवं मासत्रयं कृत्वा महदैश्वर्यमाप्नुयात् ।
पलं वाऽर्धपलं वाऽपि दक्षिणमूर्त्तिसन्निधौ ॥
श्वेताम्बरां चूर्णयित्वा स्थापयेत् ताम्रपात्रके ।
आलोड्य कपिलाज्येन प्रदेशिन्याऽभिमन्त्रितम् ॥
सहस्राष्टकमेतेन मन्त्रेण प्रपिबेदथ ।
भवेत् तस्याप्रतिहतं वाक्यं सर्वत्र निश्चितम् ॥
उदुम्बरस्य समिधो दध्यक्ताश्चायुतं हुनेत् ।
स्वामी बहुगवां स स्यात् क्षीयन्ते नास्य धेनवः ॥
विल्वानां तु घृताक्तानां हुनेदष्टसहस्रकम् ।
सुवर्णाष्टकमाप्नोति ह्यसिद्धो रजताष्टकम् ॥
विल्वाभावे त्वामलकं तदभावे उदुम्बरम् ।
तस्याभावे हैमवती तदभावे विभीतकम् ॥
श्रीखण्डगोघृताक्तानां पद्मानां लक्षमेककम् ।
हुनेद्यस्तस्य लक्ष्मीस्तु स्वयमेवोपतिष्ठते ॥

द्रापे अन्धसस्पते-इत्यादि ।

अनेन जुहुयादाज्यमयुतान्नियुतावधि ।
अक्षयाण्यस्य वासांसि भवन्ति च तथा तथा ॥

याते रुद्र-इत्यादि ।

उर्णा ग्राह्या जीवदवेस्तनूस्तनूर्विहाय च ।
एकादशशरं कुर्यात् सूत्रमेकैकसूत्रकम् ॥
सहस्रमभिमन्त्र्याथैकादश ग्रन्थयः स्मृताः ।
एवं संपूज्य तां रज्जुं धूपं दत्वा च बन्धयेत् ॥
वामहस्ते तु गर्भिण्या बद्धं सा सुखतः सुवेत् ।
दक्षे बालकहस्ते तु सुखं तिष्ठति बालकः ॥
धनिको बाहुमूले वा कण्ठे वा धारयेदिदम् ।
कदा चिदुत्तमर्णस्य भयं तस्य न जायते ॥

इमाꣳरुद्राय-इत्यादि ।

अष्टोत्तरसहस्रं तु प्रत्यहं जुहुयात् तिलान् ।
अयाचितं धनं तेन लोकेभ्य उपलभ्यते ॥
यश्च दूर्वाप्रवालानां घृताक्तमयुतं हुनेत् ।
महाज्वरोपघातेऽपि मृतकल्पः स जीवति ॥
माक्षिकपायसाज्याशी अयुतं जुहुयाच्छुचिः ।
महाग्रहज्वरादिभ्योऽभिचाराच्च प्रमुच्यते ॥
वैकङ्कतानामयुतं समिधानां घृतैर्हुनेत् ।
ज्वरादिकभवा पीडा सद्य एव विनश्यति ॥
द्रव्याद्यर्थं यदा केचिन्मृदुभिरभिभूयते ।
तदा तुषान् प्रजुहुयादयुतं सुखमेधते ॥
वैकङ्कतीश्च समिध औदुम्बरीस्तिलाँस्तथा ।
अनेन जुहुयाल्लक्षं सर्वशान्तिकरं स्मृतम् ॥
गवां वाऽन्यपशूनां वा ह्युपघाते तु तत्स्थले ।

अग्निं संस्थाप्य जुहुयाद्वैकङ्कतीर्दधिप्लुताः ॥
अयुतं तस्य शान्तिः स्यात् पालाशानां तथाऽयुतम् ।
घृताक्तानां प्रजुहुयान्महाज्वरमुखा ग्रहाः ॥
राक्षसा भूतवेतालाः प्रेताश्चापि पिशाचकाः ।
जनं चापि गजं चाश्वं मुक्त्वा गच्छन्ति दूरतः ॥
जनानां जननं यस्मिन् गेहे भवति भूरिशः ।
मरणं वाऽथ हानिर्वा तत्र शान्तिरुदीर्यते ॥
घृताक्तानां तिलानां तु जुहुयादयुतं द्विजः ।
यस्मिन् देशे महामारी व्याघ्रादीनां भयं च वा ॥
देवरक्षोभयं यत्र तत्र शान्तिं वदाम्यहम् ।
पुरस्य मध्यभागे तु वह्निस्थापनमाचरेत् ॥
चतुर्दिक्षु च सन्नद्धा गुप्ताश्चत्वार एव हि ।
नराः स्थाप्यास्ततः कर्म सावधानः समाचरेत् ॥
अष्टोत्तरसहस्रं तु घृताक्तान् जुहुयात् तिलान् ।
ततोऽर्धरात्रसमये चौदनं सघृतं तिलान् ॥
पिष्टं माषौदनं चापि कृशरं परमान्नकम् ।
सुप्ते जनपदे दद्यात् स्थाने स्थाने ततो बलिम् ॥
पलाशपत्रे रुद्रेभ्यो रक्षोभ्यस्तदनन्तरम् ।
कुर्यादेवं पक्षमेकं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥

मृडानो रुद्र—इत्यादि ।

सहस्रं प्रजपेत् तोये तीरे संपूजयेच्छिवम् ।
यावद्दूरे भवेदिष्टस्त्रिधाहावाञ्छिलिष्यति ॥

मानो महान्तम्—इत्यादि ।

परिजनस्य बालानामारोग्यार्थं तिलान् हुनेत् ।
अयुतं शीतलादिभ्य आरोग्यं जायते द्रुतम् ॥

मानस्तोके—इत्यादि ।

मानस्तोकं महाकल्पं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।
कथयिष्यामि मुनये देवानां कार्यसिद्धये ॥
अतिकृच्छ्रेण कृच्छ्रेण तथा चान्द्रायणेन च ।
आदौ संशोध्य चात्मानं पूतकायो जपं चरेत् ॥
जपन्नेतत् तु भुञ्जीत शाकं वा यावकं पयः ।
भिक्षां वा जपतस्तस्य भवेदयुतसङ्ख्यकम् ॥
सहस्रमात्रं होमः स्यात् प्रयोगार्हो भवेन्मनुः ।
प्रयोगान्ते त्वहोरात्रं जपः कार्यो निरन्तरम् ॥
तद्दशांशेन जुहुयादौदुम्बरीर्घृतान्विताः ।
महाव्याहृतिभिः पश्चात् तावदेवं घृतं हुनेत् ॥
संस्रावभागं संप्राश्य प्रयोगैर्न क्षयं व्रजेत् ।
पुनः कर्म प्रकुर्वीत प्रायश्चित्तं पुनः पुनः ॥
स्नायाच्च तीक्ष्णतैलेन सप्तधा मन्त्रितेन च ।
मारणादिप्रयोगानां भवेत् पातकमोचनम् ॥
ब्रह्मवर्चसकामस्तु हुनेदष्टसहस्रकम् ।
घृताक्तानां च समिधामसाध्यः सर्वकर्मसु ॥
पद्मानां तु घृताक्तानां दशरात्रमुपोषितः ।
अयुतं जुहुयाल्लक्ष्मीकामो वा शिवदर्शने ॥
अपामार्गोद्भवानां च तण्डुलानां तथाऽयुतम् ।
हुनेद्दधिघृताक्तानां सर्वार्थस्य समृद्धये ॥

गोसहस्रस्य लाभाय जुहुयाद्गोसफेन च ।
आज्याहुतीनां च तथा सहस्राष्टकमादरात् ॥
उपोषितो दशाहानि हुनेद्बिल्वफलानि च ।
अयुतं च घृताक्तानि लभेदष्टसहस्रकम् ॥
सिद्धे मन्त्रे सुवर्णानि न सिद्धे रजतानि तु ।
भार्याऽमुको मे भवतु एतदर्थं हुनेच्छुचिः ॥
जातीपुष्पाणि चाज्येन मधुना संयुतानि च ।
कपिला तु यदाऽसूतवृषभा वा सिताऽपि गौः ॥
आद्यं दुग्धं गृहीत्वाऽस्याः श्रपयेत् तेन वै चरुम् ।
अष्टोत्तरशतं हुत्वा तथा वाऽष्टसहस्रकम् ॥
मन्त्रयित्वा चरुं तच्च सपत्नीकः प्रभक्षयेत् ।
आयुष्मतो दृढान् पुत्रान् जनयेन्नात्र संशयः ॥
दूर्वाप्रवालान् जुहुयाद्दधिक्षौद्रघृतान्वितान् ।
आयुःकामोऽष्टसाहस्रं चिरमायुः स विन्दति ॥
दधिक्षौद्रघृताक्तानां पुष्पाणां कुशकाशयोः ।
सहस्राण्यष्ट जुहुयादिच्छेत् क्षुद्रान् यदा पशून् ॥
त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा गच्छेन्महाचतुष्पथे ।
लिप्त्वा भूमिं गोमयेन तद्वदेव घृतं मुखे ॥
पूजयित्वा हुनेद्भूमावष्टोत्तरसहस्रकम् ।
कर्मणाऽनेन नृपतिर्भवेद्द्वयो न संशयः ॥
सप्ताभिमन्त्रितं तीक्ष्णतैलं तेन करद्वयम् ।
सम्यक् प्लुतस्तेन स्पृष्टो यो ह्यसौ वशगो भवेत् ॥
ब्रह्मवर्चसकामस्तु दधिक्षौद्रघृतान्विताः ।

विल्वस्य समिधो हुत्वा लक्षं तेजोनिधिर्भवेत् ॥
औदुम्बरीश्च जुहुयाद्दधिक्षौद्रघृतान्विताः ।
अयुतं चान्नकामस्तु लभेदन्नं तथा बहु ॥
अर्थकामः पलाशस्य समिधो घृतसंयुताः ।
लक्षं हुनेत् तस्य धनमक्षयं जायते सदा ॥
अपामार्गस्य समिधः कटुतैलसमन्विताः ।
हुनेदष्टौ सहस्राणि शत्रोरुच्चाटनं भवेत् ॥

उच्चाटनं तु देशादिभ्यः प्रवासनम् ।

सर्वोपद्रवनाशार्थं गृहीत्वा सतशर्कराः ।
मन्त्रयित्वा सहस्रं तु चतुर्दिक्षु क्षिपेत् ततः ॥
ऊर्ध्वाधस्तस्य निकटे सर्वोपद्रवनाशनम् ।
एवं कृत्वा व्रजेन्मार्गे चौरव्याघ्रभयं हरेत् ॥

आरात् ते गोघ्न-इत्यादि ।

महाभये समुत्पन्ने व्याघ्रचौरभयादिषु ।
चतस्रर्चः स्मरेच्चित्ते तत्तद्भयविनाशकाः ॥

विकिरि-इत्यादि ।

जपेदयुतसङ्ख्याकं विरोधे तु महाजनैः ।
राज्ञा वोपशमं याति प्रीतिश्चापि प्रजायते ॥

सहस्राणि-इत्यादि ।

यदा तु महतां मृत्युर्नृपतेर्वा उपद्रवः ।
तदा होमं प्रकुर्वीत वैकङ्कतसमिद्वरैः ॥
ओदुम्बरीभिः शाल्मल्या तिलैर्वाऽपि यवैरपि ।
प्रत्येकमेकादशधा चाभिमन्त्र्य ततो बलिम् ॥
कृशरं वा पायसं वा ततो भूतानि चार्चयेत् ।

दद्याद्विडालमांसस्य बलिं नश्यन्त्युपद्रवाः ॥

सहस्राणि सहस्रशो ये रुद्रा-इत्यादि ।

जपेदेता नव ऋचः परिशिष्टसमन्विताः ।
भवन्ति भोगदास्तेन हीना ज्ञानप्रदा मताः ॥

नमो रुद्रेभ्य -इत्यादि ।

मध्याह्ने चायुतं साज्यान् जुहुयात् तु सकण्टकान् ।
प्रत्यङ्गिराया मन्त्रस्य कर्म कुर्यादयं मनुः ॥
मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण नमस्तेऽस्य समापनम् ।
तैत्तिरीयेऽन्यशाखायां परिशिष्टानि सप्त च ॥
सद्योजातादयः पञ्च त्र्यम्बकं च यजामहे ।
तथा च त्वरितो रुद्र एतन्नमकमुच्यते ॥

अग्नाविष्णू-इत्यादि ।

नित्यं सन्ध्यावन्दनान्ते तिष्ठन् कालत्रये जपेत् ।
अष्टोत्तरसहस्रं तु षण्मासं सत्यवाग्भवेत् ॥

वाजश्च मे प्रसवश्च मे-इत्यादि ।

एतैः सप्तानुवाकैस्तु पवमानादिपञ्चभिः ।
आज्याहुतिसहस्रं तु हुत्वा तोये प्रविश्य च ॥
शतं जपेदक्षिरोगः कदाचिन्नैव जायते ।
जातस्य च प्रशान्तिः स्यान्नेत्रतेजोऽभिवर्धते ॥

इध्मश्च मे बर्हिश्च म-इत्यादि ।

एतावान्रुद्र आख्यातः सर्वकामफलप्रदः ।
विस्वरोऽनक्षरः पाठः कृतस्तद्दोषशान्तये ॥

इडादेवहूः-इत्यादि ।

परिशिष्टं जपेदेतदेष रुद्रविधिः स्मृतः ।

अभिषिञ्चेत् पौष्टिकार्थं शान्तिकामस्तु होमयेत् ॥
सिद्धिकामो जपेदेवमक्षराणां तु सङ्ख्यया ।
इहैव वज्रदेहोऽसौ शिव एव न चापरः ॥
पद तुल्यावृत्तिजपाद्वाक्सिद्धिरुपजायते ।
वाक्यतुल्यावृत्तिजपात् पापं सर्वं विनश्यति ॥
ऋचां सङ्ख्याजपात् सर्वं क्षुद्रपापं विनश्यति ।
अनुवाकसमं जप्त्वा दुष्टग्रहरुजं जयेत् ॥

इति रुद्राध्यायपुरश्चरणप्रयोगः ।

अथ गणेशसूक्तपुरश्चरणम् ।

तत्रैव ।

अथ विष्णो प्रवक्ष्यामि सूक्तं गणपतेः परम् ।
यत् साधनं विना सर्वमन्त्रा विघ्नैस्तु विघ्निताः ॥
तस्मादादौ गणेशानं प्रसाद्य पुनराचरेत् ।
निद्राऽऽलस्यं क्षुधा क्रोधो लोभो मोहो मनोभवः ॥
गणनाथानर्च्चकानामेते विघ्नकराः स्मृताः ।
विधानपूर्वकं तस्मात् तत्सूक्तमुपदिश्यते ॥
तज्जापकानां कार्याणि स्युरप्रतिहतानि च ।
द्वादशार्च्चस्य सूक्तस्य गणेशस्य महात्मनः ॥
ऋषिर्गृत्समदाख्यो हि गणकः परिकीर्त्तितः ।
आद्यानां त्रि-ऋचानां तु छन्दस्त्रिष्टुप् प्रकीर्त्तितम् ॥
उत्तराणां नवानां च गायत्रं छन्द उच्यते ।
महागणपतिश्चास्य दैवतं परिकीर्त्तितम् ॥
विनियोगः कीर्त्तनीयो यथाकार्यानुसारतः ।

गणानां त्वा गणपतिंं-इत्यादि ।

गणानां त्वा निषुसीद त्वेषं गणं तथैव च ।
अनून इन्द्र विम्नहि न हित्वा शूलमेव च ॥
अङ्गुष्ठाग्रात् समारभ्य करपृष्ठादिषु न्यसेत् ।
गणानां त्वेति षड्भिश्च हृदयादिषडङ्गकम् ॥
एवं न्यासद्वयं कृत्वा षड्भिर्व्यापकं चरेत् ।

न्यासान्तराणि पूजाविधानं चोक्त्वा पुरश्चरणमाह ।

एकविंत्सहस्रं तु सूक्तस्यैषा पुरस्क्रिया ।
जपाद्दशांशहोमस्तु पायसेन घृतेन तु ॥
शर्करापञ्चखाद्यैश्च कुसुमैः करवीजैः ।
विल्वपत्रैरिक्षुदण्डैर्दाडिमीकदलीफलैः ॥
मोदकैर्लड्डुकैश्चैव घृतपक्वैर्मनोहरैः ।
अलाभे सर्वद्रव्याणां जुहुयात् तिलसर्पिषा ॥
होमस्य दशमांशेन गोपयोभिश्च तर्पयेत् ।
अथ वेक्षुरसेनैव तदभावे गुडोदकम् ॥
तर्पणस्य दशांशेन मार्जयेच्छुद्धवारिभिः ।
मार्जनस्य दशांशेन ब्राह्मणान् भोजयेद्बहून् ॥
पायसैः पञ्चखाद्यैश्च मोदकैः सिद्धलड्डुकैः ।
अपूपमण्डकाद्यैश्च सघृतैः शर्करान्वितैः ॥
सहकाररसैः सार्धं तथा च कदलीफलैः ।
एवं सिद्धे तु सूक्ते तु यत् फलं तन्निगद्यते ॥
महदैश्वर्यमतुलं प्रज्ञां विद्यां यशो बलम् ।
वाक्सिद्धिं समवाप्नोति चान्ते ब्रह्मपदं व्रजेत् ॥

इति गणेशसूक्तपुरश्चरणविधिः ।

### अथ पुरुषसूक्तविधिः ।

(मेरुतन्त्रे)

वक्ष्ये पुरुषसूक्तस्य विधिं तत्रैव गोपितम् ।
आनुष्टुबस्य सूक्तस्य त्रिष्टुबं तस्य दैवतम् ॥
पुरुषो यो जगद्बीजमृषिर्नारायणः स्मृतः ।
स्नात्वा यथोक्तविधिना प्राङ्मुखः शुद्धमानसः ॥
प्रथमां विन्यसेद्वामे द्वितीयां दक्षिणे करे ।
तृतीयां वामपादे तु चतुर्थीं दक्षिणे न्यसेत् ॥
वामजानौ पञ्चमीं च षष्ठीं जानुनि दक्षिणे ।
सप्तमीं वामकट्यां तु अष्टमीं दक्षिणे कटौ ॥
नवमीं नाभिदेशे तु दशमीं हृदये न्यसेत् ।
एकादशीं कण्ठदेशे द्वादशीं वामबाहुके ॥
त्रयोदशीं दक्षभुजे मुखदेशे चतुर्दशीम् ।
अक्ष्णोः पञ्चदशीं चैव षोडशीं मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥
एवं न्यासविधिं कृत्वा पश्चात् पूजां समाचरेत् ।
अप्स्वग्नौ हृदये सूर्ये स्थण्डिले प्रतिमासु च ॥
षट्स्वेतेषु हरेः सम्यगर्च्चने योग्यतोच्यते ।
आपो ह्यायतनं तस्य तस्मात् तासु सदा हरिः ॥
अग्नौ क्रियावतां विष्णुर्योगिनां हृदये हरिः ।
पण्डितानां हरिः सूर्यः स्थण्डिले भावितात्मनाम् ॥
प्रतिमास्वल्पबुद्धीनां षट्प्रकाराश्च ताः स्मृताः ।
अकृत्रिमाः कृत्रिमाश्च अचलाश्च चलाचलाः ॥
निर्जीवाश्च सजीवाश्च तासां वक्ष्यामि लक्षणम् ।
अकृत्रिमा च द्विविधा शालग्रामोऽतिपावनः ॥

तदभावे द्वारकायाश्चक्रं तद्वच्च पावनम् ।
कृत्रिमा दशधा प्रोक्ता श्रेष्ठास्ताः पूर्वपूर्वतः ॥
स्याद्रत्नखचिता त्वाद्या स्वर्णजा रूप्यजाऽपि च ।
ताम्रजा पीत्तलोजाता स्फाटिका रक्तशोतजा ॥
कोष्ठजा मृत्तिकाजाता चित्ररूपेति च क्रमात् ।
अचलाः क्षेत्ररूपास्तु हरिद्वारं यथा गया ॥
देवताभिः कृता यास्तु मूर्त्तयस्ताश्चलाचलाः ।
जगन्नाथो वेङ्कटेशः पाण्डुरङ्गादयस्तु ते ॥
सजीवा ब्राह्मणा गावो निर्जीवः पिप्पलः स्मृतः ।
मन्त्रन्यासं पुरा कुर्यात् स्वदेहे देवतासु च ॥
गायत्र्येक्षरन्यस्ताङ्गः पूजयेद्विष्णुमव्ययम् ।
आद्ययाऽऽवाहयेद्देवमृचा तु पुरुषोत्तमम् ॥
द्वितोययाऽऽसनं दाद्यात् पाद्यं दद्यात् तृतीयया ।
अर्घ्यं चतुर्थ्या दातव्यं पञ्चम्याऽऽचमनीयकम् ॥
षष्ठ्या स्नानं प्रकुर्वीत सप्तम्या वस्त्रमेव च ।
यज्ञोपवीतमष्टम्या नवम्या चानुलेपनम् ॥
पुष्पं दशम्या दातव्यमेकादश्या तु धूपकम् ।
द्वादश्या दीपिकं दद्यात् त्रयोदश्या निवेदनम् ॥
चतुर्दश्या नमस्कारं पञ्चदश्या प्रदक्षिणम् ।
स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनीयकम् ॥
दक्षिणां च यथाशक्त्या षोडश्या तु प्रदापयेत् ।
ततः प्रदक्षिणं कृत्वा जपं कुर्वन् समाहितः ॥
यथाशक्ति जपित्वा तु सूक्तं तस्मै निवेदयेत् ।

देवस्य दक्षिणे पार्श्वे कुण्डं स्थण्डिलमेव च ॥
कारयेत् प्रथमेनैव द्वितीयेन तु प्रोक्षणम् ।
तृतीयेनाग्निमादध्याच्चतुर्थेन समिन्धनम् ॥
पञ्चमेनाज्यश्रयणं चरोश्च श्रयणं तथा ।
षष्ठेनैवाग्निमध्ये तु कल्पयेत् पद्ममासनम् ॥
चिन्तयेद्देवदेवेशं कालानलसमप्रभम् ।
ततो गन्धं च पुष्पं च धूपदीपनिवेदनम् ॥
अनुज्ञाप्य ततः कुर्यात् समस्यादि यथाक्रमम् ।
समिधस्तावतीः पूर्वं जुहुयादभिघारिताः ॥
ततो घृतेन जुहुयाच्चरुणा च ततः पुनः ।
एवं हुत्वा ततश्चैनमनुज्ञाप्य यथाक्रमम् ॥
अग्नेर्भगवतस्तस्य समीपे स्तोत्रमुच्चरेत् ।
नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ॥
नमोऽस्तु ते हृषीकेश महापुरुषपूर्वज ।
देवानां दानवानां च सामान्यमधिदैवतम् ॥
सर्वदा चरणद्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव ।
एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा ॥
अव्यक्तश्चानुमन्ता च गुणमायासमावृतः ।
संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ॥
त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ।
न ते रूपं न चाकारो नायुधानि च नास्पदम् ॥
तथाऽपि पुरुषाकारो भक्तानां च प्रकाशने ।
नैव किञ्चित् परोक्षं ते न प्रत्यक्षोऽसि कस्य चित् ॥

न च किञ्चिदसाध्यं ते न च साध्योऽसि कस्य चित्
कार्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम् ॥
योगिनां परमा सिद्धिः परमं ते पदं विदुः ।
अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन् महाभये ॥
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने परमं पदम् ।
कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत ॥
शरीरे च गतश्चासि वर्त्तते मे महद्भयम् ।
त्वत्पादकमलादन्यन्न मे जन्मान्तरेष्वपि ॥
विज्ञानं यदिदं प्राप्य यदिदं स्थानमर्जितम् ।
जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदस्य परिक्षयः ॥
दुर्गतावपि जातस्य त्वं गतो मे मनोरथः ।
यदि नाशं न विन्देत तावताऽस्मि कृती सदा ॥
कामये विष्णुपादौ तु सर्वजन्मसु केवलम् ।
पुरुषस्य हरेः सूक्तं स्वर्ग्यं धन्यं यशस्करम् ॥
आत्मज्ञानमिदं पुण्यं योगज्ञानमिदं परम् ।
एवं स्तुत्वा हव्यवाहं ततः पश्चाद्विसर्जयेत् ॥
अनेनैव न निष्पापो जायते मनुजो यदा ।
प्राग्वद्धुत्वा पावयेत प्रयोगानारभेत् ततः ॥
शुक्लपक्षे शुभे वारे सुनक्षत्रे सुगोचरे ।
दम्पत्योरुपवासः स्यादेकादश्यां सुरालये ॥
द्वादश्यां पुत्रकामाय चरुं कुर्वीत वैष्णवम् ।
ऋग्भिः षोडशभिः सम्यगर्चयित्वा जनार्दनम् ॥
चरुं पुरुषसूक्तेन प्राशयेत् पुत्रकाम्यया ।

प्राप्नुयाद्वैष्णवं पुत्रमचिरात् सन्ततिक्षमम् ॥
द्वादशीं द्वादशीं सम्यक् पयसा निर्वपेच्चरुम् ।
यो जुहोति सहस्रं स याति विष्णोः परं पदम् ॥
मार्गशीर्षादिमासेषु क्रमात् पूज्यश्च केशवः ।
नारायणो माधवश्च गोविन्दो विष्णुरेव च ॥
मधुसूदन उक्तस्त्रिविक्रमो वामनस्तथा ।
श्रीधरश्च हृषीकेशः पद्मनाभो जनार्दनः ॥
पूजयित्वा जपेत् सूक्तं शतमष्टाधिकं ततः ।
होमं च पूर्ववत् कुर्यात् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
अपुत्रा मृतपुत्रा या या च कन्याप्रसूर्भवेत् ।
तस्या यथा सुपुत्रः स्यात् तमुपायं ब्रवीम्यहम् ॥
समिधोऽश्वत्थवृक्षस्य प्रत्यृचं जुहुयाच्छतम् ।
अष्टाधिकं च सघृतमुपतिष्ठेद्धुताशनम् ॥
पुनर्विष्णुं पूजयित्वा घृतहोमं समाचरेत् ।
अष्टोत्तरशतं कुर्यात् प्रत्यृचं वाग्यतः शुचिः ॥
संपाताज्यं स्थापयित्वा तन्नार्यै प्राशनाय च ।
दद्यात् सा च पतिं विष्णुं नमस्कृत्य प्रभक्षयेत् ॥
तर्पयेच्च द्विजान् सम्यग्लघ्वाशी संविशेत् क्षपाम् ।
परं सप्तप्रवर्त्तेनावश्यं गर्भवती भवेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

अरण्ये निवसेन्नित्यं त्रिकालं स्नानमाचरेत् ।
जपेदष्टोत्तरशतं सूक्तमेतत् त्रिकालकम् ॥
मासमेकं फलाहारो मासमद्भिश्च तर्पयेत् ।

आदित्यमुपतिष्ठेत मूलेनानेन नित्यशः ॥
आज्यं हुत्वा दशशतं त्रिभिर्वर्षैर्जपेद्दिने ।
तद्भक्तस्तन्मना युक्तो दशवर्षाण्यनन्यभाक् ॥
साक्षात् पश्यति देवं तं नारायणमनामयम् ।

इति पुरुषसूक्तपुरश्चरणम् ।

अथ श्रीसूक्तविधिः ।

तत्रैव ।

अथ सर्वोत्तमं वक्ष्ये श्रीसूक्तं सविधानकम् ।
कलौ दारिद्र्यनाशाय नान्यत् किञ्चिन्नृणां तथा ॥

हिरण्यवर्णाम्—इत्यादि ।

हिरण्यवर्णामित्यस्य ऋचो लक्ष्मीमुनिर्मतः ।
चतुर्दशानां शेषाणामानन्दः कर्दमस्तथा ॥
चिक्लीतलक्ष्मीतनयाश्चत्वारो मुनयो मताः ।
हृदयादितिसृणां च छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
कांसोऽस्मितत्त्वोर्बृहती चन्द्रावादित्यवर्णयोः ।
त्रिष्टुप्छन्द उपैतु मां देवाद्यष्ट-ऋचामपि ॥
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं ताम्म आहव इत्यृचः ।
प्रस्तारः पङ्क्तिरुद्दिष्टो देवते श्रीविभावसू ॥
व्यञ्जनानि तु बीजानि स्वराः शक्तय ईरिताः ।
बिन्दवः कीलकं प्रोक्तमङ्गुष्ठादिषडङ्गकम् ॥
हिरण्या च तथा तन्द्रा तृतीया रजतप्रभा ।
हिरण्यस्रक् हिरण्याक्षा तथा हिरण्यवर्णिका ॥
एताभिर्ङेनमोऽन्ताभिः प्रकुर्यादङ्गकल्पनम् ।

अथ ध्यानम् ।

अरुणनलिनसंस्था तद्रजःपुञ्जवर्णा
करकमलधृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा च ।
मणिमुकुटविचित्रालङ्कृताकल्पजालै-
र्भवतु भुवनमाता सन्ततं श्रीः श्रिये नः ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

परिषिञ्चेत् त्रिशो नित्यं सूक्तैस्तैः स्नानकर्मणि ।
आदित्याभिमुखो जप्याद्यावत् तावच्च तर्पयेत् ॥
शुक्लाद्यां तिथिमारभ्य यावदेकादशी भवेत् ।
तावद्द्वादशसाहस्रं जपेन्निश्चलमानसः ॥
ब्रह्मचर्यरतः शुद्धवस्त्रदन्तादिकः सुधीः ।
पद्मैस्त्रिमधुरोपेतैर्घृताक्तेन पयोऽन्धसा ॥
श्रीसमिद्भिः सर्पिषा च प्रत्येकं त्रिशतं हुनेत् ।
द्वादश्यां द्वादशैवाऽथ सद्विप्राँश्चापि भोजयेत् ॥
तेन सिद्धो भवेन्मन्त्रो नात्र कार्या विचारणा ।
कुन्दमन्दारकुमुदमालतीपद्मकेतकम् ॥
नन्द्यावर्त्ताह्वयं जाती कल्हारं चम्पकं तथा ।
रक्तोत्पलादिपुष्पाणि लक्ष्म्याश्चातिप्रियाणि हि ॥
त्रिवारमन्वहं मन्त्री जुहुयाच्च यथाविधि ।
षण्मासं यः करोत्येवं स स्याल्लक्ष्मीपतिः स्वयम् ॥

इति श्रीसूक्तपुरश्चरणम् ।

अथ नवग्रहाणां वैदिकमन्त्राः ।

तत्रैव ।

तत्र भास्करमन्त्रस्य हिरण्यस्तूपको मुनिः ।

त्रिष्टुप् छन्दो देवता च सविता परिकीर्त्तितः ॥

आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ।

अङ्गुष्ठादिषडङ्गानि षड्दीर्घान्वितयोच्चरेत् ।
भुवनेश्याऽथ मन्त्रस्य पदन्यासं समाचरेत् ॥
ओसूक्तोक्त-ऋचास्थाने ततो ध्यायेद्दिवाकरम् ।

ध्यानं यथा ।

पद्मासनं पद्मकरं पद्मगर्भसमद्युतिम् ।
किरीटिनं सकेयूरं मण्डितं रक्तच्छत्रिणम् ॥
रथारूढं तस्य सव्ये त्वधिदेवाग्न्यधिष्ठितम् ।
प्रत्यधिदेवेश्वरेण सव्ये युक्तं च प्राङ्मुखम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः ।
होमतुल्यो जपः कार्यस्त्वधिप्रत्यधिदैवतः ॥
करवीरादिकुसुमै रक्तचन्दनमिश्रितैः ।
दूर्वाङ्कुरैरक्षतैश्च तर्पणं स्याद्दिनेशितुः ॥

अथ चन्द्रमन्त्रः ।

अथ वक्ष्ये चन्द्रमन्त्रं गौतमोऽस्य मुनिर्मतः ।
गायत्रीछन्द इत्युक्तं सोमो देवः प्रकीर्त्तितः ॥

अथायस्व समेतु विश्वतः सोमवृष्णियं भवावाजस्य सङ्गथे ।

षड्दीर्घं विन्दुयुक्तेन सकारेण षडङ्गकम् ।

अथ ध्यानम् ।

किरीटिनं श्वेतवस्त्रं दशाश्वं श्वेतभूषणम् ।
पाशपाणिं द्विबाहुं तमत्रिगोत्रसमुद्भवम् ॥

जातं यवनदेशे च श्वेतगन्धानुलेपनम् ।
अनुष्टुप् छन्दसं चात्रेयर्षं श्वेतातपत्रकम् ॥
श्वेतध्वजपताकाढ्यं केयूरमणिशोभितम् ।
स्थिरीकृतं रथारूढमधिदैवततोययुक् ॥
उमाप्रत्यधिदेवेन वायव्याभिमुखस्थितम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं सर्वश्वेतेष्वयं विधिः ।

अथ भौममन्त्रः ।

भौममन्त्रं प्रवक्ष्यामि विरूपोऽस्य मुनिर्मतः ।
अङ्गारको देवताऽत्र गायत्री छन्द ईरितम् ॥

अग्निर्मूर्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयं । अपा ँ रेता ँ सिजिन्वति ॥

अँ बीजेन षडङ्गानि चाङ्गुलीन्यास एव च ।
रुद्रस्थानेषु कर्त्तव्यः पदन्यासो द्वितीयकः ॥

अथ ध्यानम् ।

रक्ताम्बरं रक्तवर्णं रक्तगन्धानुलेपनम् ।
रक्तपुष्पैः पूज्यमानं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥
वराभयगदाशूलहस्तं मेषोपरिस्थितम् ।
वशिष्ठगोत्रसम्भूतं यमदग्न्यार्षकं कुजम् ॥
जगतीछन्दसं रक्तं रक्तध्वजपताकिनम् ।
अवन्तीदेशसम्भूतं ध्यात्वा देवं प्रपूजयेत् ॥
रक्तचन्दनसंमिश्रतण्डुलैस्त्र्यस्त्रके कृते ।
अङ्कुले क्ष्माधिदेवेन युक्ते षाण्मातुरेण च ॥
युते प्रत्यधिदेवेन तत्रावाह्य प्रपूजयेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं मधुरत्रयसंयुताः ।
स्वादिर्यः समिधो होमे तर्पणाद्यं च सूर्यवत् ॥

अथ बुधमन्त्रः ।

बुधमन्त्रं प्रवक्ष्यामि बौद्धस्तस्य मुनिर्मतः ।
त्रिष्टुप् छन्दो देवताऽस्य बुधो बुद्धिप्रदो मतः ॥

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृह्येन मिष्टापूर्त्ते स सृजेथामयं च ।
पुनः कृण्वꣳस्त्वा पितरं युवानमन्वा ताꣳसीत्वयितन्तुमेतम् ॥

बुँबीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ।
पीताम्बरं पीतवर्णं पीतगन्धानुलेपनम् ॥
पीतपुष्पैः पुज्यमानं खड्गचर्मगदावरान् ।
हस्तैर्दधन्तं सिंहस्थं चात्रिगोत्रसमुद्भवम् ॥
भारद्वाजार्षकं जातं मगधे च किरीटिनम् ।
बृहतीछन्दसं पीतच्छत्रध्वजपताकिनम् ॥
केयूरमणिशोभाढ्यमधिदेवेन विष्णुना ।
तेन प्रत्यधिदेवेन युक्तं ज्ञं चिन्तयाम्यहम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत् तस्य दशांशतः ।
अपामार्गसमिद्भिश्च तर्पणादि ततश्चरेत् ॥

अथ बृहस्पतिमन्त्रः ।

मन्त्रं बृहस्पतेर्वक्ष्ये मुनिर्बृत्समदो मतः ।
त्रिष्टुप् छन्दो देवपतिवन्दितस्तस्य देवता ॥

बृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।

बृँ बीजेन षडङ्गानि न्यासमन्त्रं समाचरेत् ।
ध्यानमस्य प्रवक्ष्यामि वरदण्डाक्षसूत्रकम् ॥
कमण्डलुं दधद्धस्तैः पीतवर्णं किरीटिनम् ।
वशिष्ठार्षं सिन्धुदेशभवं पीताम्बरावृतम् ॥
अनुष्टुप्छन्दसं चाङ्गिरसगोत्रं किरीटिनम् ।
पीतध्वजपताकाढ्यं पीतच्छत्रानुलेपनम् ॥
केयूराङ्गदशोभाढ्यमधिदेवेन्द्रसंयुतम् ।
ब्रह्मप्रत्यधिदेवेन युतं संचिन्त्य चाह्वयेत् ॥

पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमस्त्रिमधुरान्वितैः ।
पिप्पलस्य समिद्भिः स्यात् तर्पणं पीतपञ्चभिः ॥

अथ शुक्रमन्त्रः ।

शुक्रमन्त्रं प्रवक्ष्यामि भारद्वाजो मुनिर्मतः ।
त्रिष्टुप् छन्दो निगदितं दैत्याचार्यस्तु देवता ॥
शुक्रं ते अन्यद्यजतं ते अन्यद्युपुरूषे अहनी द्यौरिवासि ।
विश्वाहि माया अवसि स्वधावो भद्रा ते पूषन्निहरातिरस्तु ॥
शुँ बीजेन षडङ्गानि कृत्वा ध्यानं समाचरेत् ।

ध्यानमाह ।

शुक्लाम्बरं शुक्लवर्णं शुक्लगन्धानुलेपनम् ।
शुक्लपुष्पैः पूज्यमानं शौनकार्षं किरीटिनम् ॥
चतुर्भुजं दण्डधरं च साक्षसूत्रकमण्डलुम् ।
पङ्क्तिश्छन्दश्च वरदं तथा कीकरदेशजम् ॥
श्वेतच्छत्रध्वजपताकिनं भार्गवगोत्रजम् ।
सकेयूरं रथारूढं श्वेताभरणभूषितम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेत् त्रिमधुरान्वितैः ।
उदुम्बरसमिद्भिश्च तर्पणादि तु चन्द्रवत् ॥

अथ शनिमन्त्रः ।

शनिमन्त्रं प्रवक्ष्यामि सिन्धुद्वीपो मुनिर्मतः ।
गायत्रीछन्द इत्युक्तं देवता तु शनैश्चरः ॥

शन्नो देवीरभीष्टये आपो भवन्तु पीतये शन्नोरभिस्रवन्तु नः ।

शँ बीजेन षडङ्गानि कुर्याद्ध्यानं ततश्चरेत् ।
बाणाशनं शूलधरमिन्द्रनीलसमद्युतिम् ॥
सौराष्ट्रदेशजं प्रोक्तं वरदं गृध्रवाहनम् ।
भृग्वर्षं काश्यपे गोत्रे जातं चापि किरीटिनम् ॥
कृष्णाम्बरं कृष्णवर्णं कृष्णगन्धानुलेपनम् ।
गायत्रीछन्दसं कृष्णवर्णाभरणभूषितम् ॥
केयूरिणं मुकुटिनं कृष्णध्वजपताकिनम् ।
प्रजापत्यधिदेवेन सहितं रथमास्थितम् ॥
पद्मप्रत्यधिदेवेन युक्तं ध्यात्वा समर्चयेत् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

सकस्तूर्यथ तैश्चायःकालद्व्यङ्गुलमण्डले ।
होमः समीसमिद्भिः स्यादायसार्घेन तर्पणम् ॥
कृष्णपुष्पैश्चन्दनं तु कालीयं चागुरुर्भवेत् ।

अथ राहुमन्त्रः ।

राहोर्मन्त्रं प्रवक्ष्यामि वामदेवो मुनिर्मतः ।
गायत्री छन्द इत्युक्तं सैंहिकेयश्च देवता ॥

कयानश्चित्र आभुवदूती सदा वृधः सखाकया सच्चिष्ठया वृता ।

राँ बीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ।
करालवदनं खड्गचर्मशूलधरं वहन् ॥
कृष्णाम्बरं कृष्णवर्णं कृष्णगन्धानुलेपनम् ।
कृष्णपुष्पैः पूज्यमानं केयूरमुकुटान्वितम् ॥
पूर्वदेशे समुत्पन्नं क्रूरमाङ्गिरसार्षकम् ।
पाटलागोत्रसम्भूतमनुष्टुप्छन्दसं ग्रहम् ॥
कृष्णच्छत्रं रथारूढं कृष्णध्वजपताकिनम् ।
सर्पाधिदैवतं पैत्रकालप्रत्यधिदैवतम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

इत्थं संचिन्त्य नैर्ऋत्ये सूर्पाकारे तु मण्डले ।
द्वादशाङ्गुलविस्तीर्णे चाह्वयेच्छ्यामलाक्षतैः ॥
दूर्वाभिर्मधुराक्ताभिस्तस्य होमो विधीयते ।
तर्पणीयादिभिर्द्रव्यैः कौलिकाँस्तर्पयेद्द्विजान् ॥

अथ केतुमन्त्रः ।

तत्रैव ।

केतुमन्त्रं प्रवक्ष्यामि मधुच्छन्दो मुनिर्मतः ।
देवताः केतवः प्रोक्ता गायत्रं छन्द ईरितम् ॥
केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्या अपेशसे समुषद्भिरजायथाः ।
कँ बीजेन षडङ्गानि ध्यानमस्य निरूप्यते ।
धूम्राक्षिबाहवः पाशधराश्च विकृताननाः ॥
किरीटिनो गृध्रवाहा मध्यदेशोद्भवा दृढाः ।
चित्राम्बराश्चित्रवर्णाश्चित्रगन्धानुलेपनाः ॥
नानाछन्दस्कका गौतमार्षा जैमिनिगोत्रजाः ।
कृष्णपिङ्गध्वजपताकिनो मुकुटिनस्तथा ॥

केयूरिणो रथारूढाः शूरा ब्रह्मादिदेवताः ।
चित्रगुप्तप्रत्यधिदेवताश्चात्र विचिन्तयेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं कुशा होमे प्रकीर्त्तिताः ।
मधुरत्रयसंयुक्ताश्चित्रद्रव्यैः प्रतर्पयेत् ॥

इति नवग्रहाणां वैदिकमन्त्राः ।

अथाग्निदुर्गामन्त्रः ।

तत्रैव ।

सर्वार्थसाधकं वक्ष्ये संग्रामविजयप्रदम् ।
जलन्धरवधायाहं यत् स्मरामि शृणुष्व तत् ॥

जातवेदसे सुनवामसोमम रातीयतो निदहाति वेदः स नः परिषदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ।

त्रिष्टुप् छन्दो मुनिश्चास्य मरीचिः काश्यपो मतः ।
देवता जातवेदोऽग्निः षडङ्गानि समाचरेत् ॥
नवागषट्सप्तनागसप्तभिर्मन्त्रवर्णकैः ।

अथ ध्यानम् ।

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटकलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्रदरासिखेटविशिखान् पाशाङ्कुशौ तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां स्मरेत् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

मन्त्रवर्णसहस्राणि जपेद्धोमं पृथक् पृथक् ।
वेदवेदाब्धिसङ्ख्याकं तिलसिद्धार्थचित्रजैः ॥
मूलैश्च समिधाभिश्च वटोदुम्बरपिप्पलैः ।
अर्कप्लक्षोद्भवैश्चापि घृतेन हविषाऽन्नकैः ॥

सर्वैर्घृताक्तैर्जुहुयात् तिलैश्चान्ते घृताहुतिः ।
ततः संतर्प्य सतिलैः कृत्वा चात्माभिषेचनम् ॥
समाराध्य वरान् देवाँस्तोषयेद्गुरुमात्मनः ।

इत्यग्निदुर्गामन्त्रपुरश्चरणम् ।

वैदिकमन्त्रपुरश्चरणोपयुक्तवैदिकहोमविधिस्तु विस्तरभयान्नेह लिख्यते ।

अथ होमद्रव्यप्रमाणानि ।

(शारदायाम्)

अथात्र होमद्रव्याणां प्रमाणमभिधीयते ।
कर्षमात्रं घृतं होमे शुक्तिमात्रं पयः स्मृतम् ॥
उक्तानि पञ्च द्रव्याणि तत्समानि मनीषिभिः ।
तत्समं मधुदुग्धान्नमक्षमात्रमुदाहृतम् ॥
दधि प्रसृतिमात्रं स्याल्लाजाः स्युर्मुष्टिसम्मिताः ।
पृथुकास्तत्प्रमाणाः स्युः सक्तवोऽपि तथा मताः ॥
गुडं पलार्धमानं स्याच्छर्कराऽपि तथा मता ।
ग्रासार्धं चरुमानं स्यादिक्षुः पर्वावधिर्मतः ॥
एकैकं पत्रपुष्पाणि तथाऽपूपानि कल्पयेत् ।
कदलीफलनारङ्गफलान्येकैकशो विदुः ॥
मातुलुङ्गं चतुःखण्डं पनसं दशधा कृतम् ।
अष्टधा नारिकेलानि खण्डितानि विदुर्बुधाः ॥
त्रिधा कृत्तं फलं वैल्वं कपित्थं खण्डितं त्रिधा ।
फलान्यन्यान्यखण्डानि समिधः स्युर्दशाङ्गुलाः ॥
दूर्वात्रयं समुद्दिष्टं गुडुची चतुरङ्गुला ।
व्रीहयो मुष्टिमानाः स्युर्मुद्गमाषयवा अपि ॥
तण्डुलाः स्युश्चतुर्थांशाः कोद्रवा मुष्टिसम्मिताः ।

गोधूमरक्तकलमा विहिता मुष्टिमानतः ॥
तिलाश्चुलुकमानाः स्युः सर्षपास्तत्प्रमाणतः ।
शुक्तिप्रमाणं लवणं मरीचान्यपि विंशतिः ॥
पुरं वदरमानं स्याद्रामठं तत्समं स्मृतम् ।
चन्दनागुरुकर्पूरकस्तूरीकुङ्कुमानि च ॥
तिन्तिडी बीजमानानि समुद्दिष्टानि देशिकैः ।

कर्षादिलक्षणान्युक्तानि (स्कान्दे)

गुञ्जाभिर्दशभिर्माषः शाणो माषचतुष्टयम् ।
द्वौ शाणौ वटकः कोलो वदरं क्षुद्रवस्तथा ॥
तौ द्वौ पाणितलं कर्षः सुवर्णः केवलं ग्रहः ।
पिचुर्विडालपदकं तिन्दोऽक्षश्च तद्द्वयम् ॥
शुक्तिरष्टमिका ते द्वे पलं निष्कचतुर्थिका ।
मुष्टिमात्रं प्रकुञ्चोऽथ द्वे पले प्रसृतिस्तथा—इति ॥

अगस्त्येन तु ।

गुञ्जाभिः पञ्चभिश्चैको माषकः परिकीर्त्तितः ।
भवेत् षोदशभिर्माषैः सुवर्णः कर्ष एव च ॥
पलं सुवर्णाश्चत्वारः पञ्च वाऽपि प्रकीर्त्तितम्—इत्युक्तम् ।

एतन्मतेऽशीतिगुञ्जाभिरेकः कर्षः स एव सुवर्णोऽपि । पृथुकाश्चिपीटकाः । गुडुची लताविशेषः । पुरं गुग्गुलुः । रामठं हिङ्गु । सोमः शम्भुः ।

अनुक्ते तु हविर्द्रव्ये तिलाज्यं हविरुच्यते ।
अनुक्ते चाञ्जनद्रव्ये घृतमेवाञ्जनं विदुः ॥
सङ्ख्यानुक्तौ सहस्रं स्याद्द्रव्यानुक्तौ घृतं तथा ।
समिधानुक्तविषये पालाश्यः परिकीर्त्तिताः ॥

तथा ।

लाजादिहोमो हस्तेन साङ्गुलेन विधीयते ।

समित्पुष्पफलादीनां होमः स्यान्मृगमुद्रया ॥
द्रवद्रव्यैः श्रुवः प्रोक्तो मन्त्रतन्त्रविशारदैः ।

इति होमद्रव्यप्रमाणानि ।

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्र्यचित्रामृत-
स्रोतःशालिनि संनिबन्धनसरित्संभेदमभ्यर्हितम् ।
सन्मुक्तोपमयुक्तिभाजि दशमो रम्यस्तरङ्गोऽगमत्
सर्वोर्वीपतिनेतृनिर्मितपुरश्चर्यार्णवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्यार्णवे सरस्वत्यादिमन्त्रपुरश्चरणपूर्वकगायत्र्यादिवैदिकमन्त्रपुरश्चरणनिरूपणं नाम दशमस्तरङ्गः ।

# अथ दुर्गामन्त्रभेदास्तत्पुरश्चरणविशेषाश्च निरूप्यन्ते ।

तथा च (शारदातिलके)

ततो दुर्गामनुं वक्ष्ये दृष्टादृष्टफलप्रदम् ।
माया त्रिः कर्णबीजाढ्यो भूयोऽसौ सर्गवान् भवेत् ॥
पश्चान्तकः प्रतिष्ठावान् मारुतो भौतिकासनः ।
तारादिहृदयान्तोऽयं मन्त्रो वस्वक्षरात्मकः ॥
ऋषिश्च नारदश्छन्दो गायत्रं देवता मनोः ।
दुर्गा समीरिता सद्भिर्दुरितापन्निवारिणी ॥
नमस्कारवियुक्तेन मूलमन्त्रेण साधकः ।
द्रामाद्यैः सह कुर्वीत षडङ्गानि यथाविधि ॥

अथ ध्यानम् ।

सिंहस्था शशिशेखरामरकतप्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः
शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ।
आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीरणन्नूपुरा
दुर्गादुर्गतिहारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्कुण्डला ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं तिलैर्मधुरलोलितैः ।
पयोऽन्धसा वा जुहुयात् तत्सहस्रं जितेन्द्रियः ॥

इति दुर्गामन्त्रः ।

अथ महिषमर्दिनीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

भान्तं वियत्सनयनं श्वेतो मर्दिनि ठद्वयम् ।

अष्टाक्षरी समाख्याता विद्या महिषमर्दिनी ॥

अयं मन्त्रो मायाप्रणवाद्यन्यतमबीजाढ्यो नवाक्षरो भवति ।

तदुक्तं (कुलचूडामणिविश्वसारादौ)

त्रैलोक्यबीजभूतान्ते सम्बोधनपदं ततः ।
सृष्टिसंहारकौ वर्णौ विद्यामहिषमर्दिनी ॥
प्रणवाद्यां जपेद्विद्यां मायाढ्यां वा जपेत् सुधीः ।
बधूबीजादिकां वाऽपि कवचाढ्यां जपेत् तथा ॥

(शारदायाम्)

महिषहिंसिके हुँ फट् हृदयं परिकीर्त्तितम् ।
महिषशत्रो सार्षि हुँ फट् शिरोऽङ्गं समुदाहृतम् ॥
महिषं द्वेषय द्वन्द्वं हुँ फडन्तः शिखामनुः ।
महिषं हनयुग्मान्ते देवि हुँ फट् तनुच्छदम् ॥
महिषान्ते सूदिनि हुँ फडन्तं शस्त्रमीरितम् ।
मन्त्रैरेतैर्जातियुक्तैः पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥

अथ ध्यानम् ।

गारुडोपलसन्निभां मणिमौलिकुण्डलमण्डितां
नौमि भालविलोचनां महिषोत्तमाङ्गनिषेदुषीम् ।
चक्रशङ्खकृपाणखेटकबाणकार्मुकशूलकां-
स्तर्जनीमपि बिभ्रतीं निजबाहुभिः शशिशेखराम् ॥

पुरश्चरणम् ।

अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रैस्तिलैः शुभैः ।

जुहुयादिति शेषः ।

इति महिषमर्दिनीमन्त्रः ।

अथ शूलिनीमन्त्रः ।

तत्रैव ।

ज्वलज्वलपदस्यान्ते शूलिनीति पदं वदेत् ।

दुष्टग्रहं हुमन्त्रान्ते वह्निजायावधिर्मनुः ॥
पञ्चभिर्दशभिः प्रोक्तो ग्रहशत्रुविनाशनः ।
ऋषिर्दीर्घतया प्रोक्तः ककुच्छन्द उदाहृतम् ॥
शूलिनी देवता प्रोक्ता समस्तसुरवन्दिता ।
दुर्गे हृद्वरदे शीर्षं विन्ध्यवासिनि तच्छिखा ॥
असुरान्ते मर्दिनी स्याद्युद्धपूर्वप्रिये पुनः ।
त्रासयद्वितयं वर्म देवसिद्धसुपूजिते ॥
नन्दिनी स्याद्रक्षयुगं महायोगेश्वरी क्रमात् ।
शूलिन्याद्या हुँ फडन्ताः पञ्चाङ्गमनवः स्मृताः ॥

अथ ध्यानम् ।

अध्यारूढां मृगेन्द्रं सजलजलधरश्यामलां हस्तपद्मैः
शूलं बाणं कृपाणीमरिजलजगदाचापपाशान् वहन्तीम् ।
चन्द्रोत्तंसां त्रिनेत्रां चतसृभिरसिना खेटकान् बिभ्रतीभिः
कन्याभिः सेव्यमानां प्रतिभटभयदां शूलिनीं भावयामि ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

मनुमेनं जपेन्मन्त्री वर्णलक्षं विचक्षणः ।
सर्पिषाऽऽज्येन होमस्तु तद्दशांशमितो भवेत् ॥

इति शूलिनीमन्त्रः ।

अथ *वनदुर्गामन्त्रः ।

उत्तिष्ठपदमाभाष्य पुरुषि स्यात् पदं ततः ।
पिलामहः सनेत्रे नः स्वपिषि स्याद्भयं च मे ॥
समुपस्थितमुच्चार्य यदि शक्यमनन्तरम् ।
अशक्यं वा पुनस्तन्मे वदेद्भगवतिं ततः ॥

* प्रायः सर्वेषु पुस्तकेषु वनदुर्गेत्यत्र नवदुर्गेत्युपलभ्यते ।

शमयाग्निवधूः सप्तत्रिंशद्वर्णात्मको मनुः ।
ऋषिरारण्यकश्छन्दोऽप्यत्यनुष्टुबुदाहृतम् ॥
देवता वनदुर्गा स्यात् सर्वदुर्गविमोचनी ।
षड्भिश्चतुर्भिरष्टाभिरष्टाभिः षड्भिरिन्द्रियैः ॥
मन्त्राणैरङ्गक्लप्तिः स्याज्जातियुक्तैर्यथाक्रमम् ।

अथ ध्यानम् ।

सौवर्णाम्बुजमध्यगां त्रिनयनां सौदामिनीसन्निभां
शङ्खं चक्रवराभयानि दधतीमिन्दोः कलां बिभ्रतीम् ।
ग्रैवेयाङ्गदहारकुण्डलधरामाखण्डलाद्यैः स्तुतां
ध्यायेद्विन्ध्यनिवासिनीं शशिमुखीं पार्श्वस्थपञ्चाननाम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षचतुष्कं तद्दशांशतः ।
जुहुयाद्धविषा मन्त्री शालिभिः सर्पिषा तिलैः ॥

इति वनदुर्गामन्त्रः ।

अथ नवदुर्गात्मकचामुण्डामन्त्रः ।

( मेरुतन्त्रे )

अथातः संप्रवक्ष्यामि चामुण्डाया महामनुम् ।
नवदुर्गात्मकं यस्य सेवनाद्भुक्तिमुक्तयः ॥
सुरथो यत्प्रसादेन राज्यं प्राप्याभवन्मनुः ।
संसारबन्धनिर्णाशि ज्ञानमाप्तं समाधिना ॥
मार्कण्डेयपुराणोक्तं चरितत्रितयं स्तवः ।
जपाद्यस्य फलं दद्यात् तं मनुं वच्मि साम्प्रतम् ॥
[illegible]मबीजानि चामुण्डायै पदं वदेत् ।
विच्चे नवार्णमन्त्रोऽयं शक्तिमन्त्रोत्तमोत्तमः ॥
ब्रह्मविष्णुमहेशास्तु मुनयोऽस्य प्रकीर्त्तिताः ।

गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च छन्दस्त्रयमुदीरितम् ॥
देवताऽस्य महाकाली महालक्ष्मीः सरस्वती ।
नन्दा शाकम्भरी भीमा शक्तित्रयमुदाहृतम् ॥
तिस्रोऽस्य शक्तयो दुर्गा भ्रामरी रक्तदन्तिका ।
अग्निवायुभगास्तत्त्वं प्राग्वदृष्यादिकं न्यसेत् ॥

तथा ।

ततः षडङ्गं कुर्वीत विभक्तैर्मूलवर्णकैः ।
एकैकेनैकेन चैकेन चतुर्भिर्युग्मकेन च ॥
नमस्तेनैव मन्त्रेण कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।

अथ ध्यानम् ।

ततो देवीत्रयं ध्यायेत् कालिकाध्यानमुच्यते ।
दशास्यां दशपादां च दशहस्तां विधिस्तुताम् ॥
इन्द्रनीलद्युतिं खड्गं चक्रं शङ्खं शिरः शरान् ।
दक्षहस्तेषु दधतीं गदां शूलं भुशुण्डिकाम् ॥
परिघं च धनुर्वामे दधतीं ब्रह्मसंस्तुताम् ।
मधुकैटभनाशार्थं सालङ्कारां त्रिवीक्षणाम् ॥

तन्त्रान्तरेऽपि ।

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघान् शूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौच्छयिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥

इति चामुण्डामन्त्रः ।

अथ महालक्ष्मीध्यानम् ।

( मेरुतन्त्रे )

ततो ध्यायेन्महालक्ष्मीं महिषासुरमर्दिनीम् ।

समस्तदेवतातेजोजातां पद्मासनस्थिताम् ॥
अष्टादशभुजामक्षमालां पद्मं च शायकान् ।
खड्गं वज्रं गदां चक्रं दक्षहस्ते कमण्डलुम् ॥
शङ्खं च दधतीं वामे शक्तिं च परशुं धनुः ।
चर्मदण्डौ सुरापात्रं घण्टां पाशं त्रिशूलकम् ॥

अन्यत्रापि ।

अक्षस्त्रक्परशू गदेषुकुलिशान् पद्मं धनुः कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥

अथ सरस्वतीध्यानम् ।

(मेरुतन्त्रे)

सरस्वतीं ततो ध्यायेच्छरच्चन्द्रसमप्रभाम् ।
शङ्खं च मुशलं चक्रं बाणान् दक्षेषु बिभ्रतीम् ॥
घण्टां शूलं हलं चापं वामहस्तेषु बिभ्रतीम् ।
गौरीदेहसमुद्भूतां नृणामानन्ददायिनीम् ॥
आधारभूतां जगतः शुम्भादिकविमर्दिनीम् ।
अधिष्ठात्रीं तृतीयस्य चरित्रस्य स्मरेत् सदा ॥

तन्त्रान्तरेऽपि ।

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुशले चक्रं धनुः शायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुशुक्लप्रभाम् ।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

सितपक्षतिमारभ्य चाष्टम्यन्तमिषस्य यः ।

जपेल्लक्षं मनुं होमं खाद्यैस्त्रिमधुराप्लुतैः ॥
प्रत्यहं पूजयेद्देवीं चण्डीमाद्यन्तयोः पठेत् ।
विप्रान् गुरून् समाराध्य वाञ्छितं लभते द्रुतम् ॥

अथ जयदुर्गामन्त्रः ।

(शारदायाम्)

तारो दुर्गेयुगं [illegible]ढान्तौ सलोचनौ ।
ह्रिठान्ता जयदुर्गेयं विद्या वेद्या दशाक्षरी ॥
तारादिदुर्गे हृदयं दुर्गे शिर इतीरितम् ।
दुर्गायै स्याच्छिखा वर्म भूतरक्षिणि कीर्त्तितम् ॥
तारादिदुर्गेयुगलं रक्षिण्यस्त्रमुदीरितम् ।

अथ ध्यानम् ।

कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं [illegible] ।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः

अथ पुरश्चरणम् ।

*बाणलक्षं जपेन्मन्त्वं घृतेन जुहुयात् ततः ।
दशांशं संस्कृते वह्नौ ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥

इति दुर्गाप्रकरणम् ।

अथ दुर्गोत्सवविधिः प्रदर्श्यते ।

(बृहत्सिद्धान्तसारे)

आश्विनस्य सिते पक्षे नानाविधमहोत्सवैः ।
प्रसादयेयुः श्रीदुर्गां चतुर्वर्गफलार्थिनः ॥

(कालिकापुराणे)

दुर्गातन्त्रेण मन्त्रेण कुर्युर्दुर्गामहोत्सवम् ।

---

* वर्णलक्षमिति क चित् पाठः ।

महानवम्यां शरदि वलिदानं नृपादयः ॥
आश्विनस्य तु या शुक्ला भवेद्दुर्गाष्टमी तिथिः ।
मूर्त्तिभेदैर्महादेवी पूजां गृह्णाति भूतये ॥
कन्यासंस्थे रवौ वत्स शुक्लामारभ्य नन्दकाम् ।
अयाची त्वथ नक्ताशी एकाशी त्वथ* वाय्वदः ॥
प्रातःस्नायी जितद्वन्द्वस्त्रिकालं शिवपूजकः ।

महानवम्यामिति ।

तदुक्तं (देवीपुराणे)

आश्विने शुक्लपक्षे तु सप्तम्यादितिथित्रये ।
महाशब्दः प्रयोक्तव्यो नान्यत्रेति विनिश्चयः ॥

आरभ्येति । शुक्लां प्रतिपदमारभ्येत्यर्थः । अन्नद इति । ब्राह्मणान् भोजयित्वेत्यर्थः । वाय्वद इति पाठे तु वायुभक्ष इत्यर्थः । जितद्वन्द्व इति । शीतोष्णादिसहिष्णुरित्यर्थः । शिवपूजक इत्यत्र एकशेषो बोद्धव्यः ।

(रुद्रयामले)

एकोत्तराभिवृद्ध्या तु नवमी यावदेव हि ।
चण्डीपाठं जपेच्चैव जापयेद्वा विधानतः ॥

तथा ।

एवं चतुर्वेदविदो विप्रान् सर्वान् प्रसादयेत् ।
तेषां च वरणं कार्यं वेदपारायणाय वै ॥

तन्त्रान्तरे ।

वीररात्र्यादिषु श्रेष्ठा महारात्रिर्महेश्वरि ।
उपोष्य पूजयेत् तेषां दुर्गां दुर्गार्त्तिनाशिनीम् ॥

वीररात्र्यादयः प्रोक्ताः (शक्तिसङ्गमे)

वीररात्रिर्महारात्रिः कालरात्रिस्तथैव च ।
महारात्रिर्घोररात्रिः क्रोधरात्रिस्तथैव च ॥

---

* त्वथ वाऽन्नद इति वा० पा० ।

तथैव चाञ्चला रात्रिस्ताराराात्रिस्तथैव च ।
शिवरात्रिर्दिव्यरात्रिर्दारुणा च यथाक्रमात् ॥
कथ्यते परमेशानि शृणु सावहिता भव ।
चतुर्दश्यां संक्रमे च कुलर्क्षे कुलवासरैः ॥
अर्धरात्रे यथायोगो वीररात्रिः प्रकीर्त्तिता ।
शुक्लाष्टमी चाश्विनस्य नवरात्रं तु तस्य वै ॥
महारात्रिर्महेशानि कालरात्रिं शृणु प्रिये ।
दीपोत्सवचतुर्दश्यां त्वमाया योग एव तु ॥
कालरात्रिर्महेशानि ताराकालीप्रियङ्करी ।
जन्माष्टमी महेशानि मोहरात्रिः प्रकीर्त्तिता ॥

तथा ।

चैत्रे मासि नवम्यां च शुक्लपक्षे तु भूसुते ।
क्रोधरात्रिर्महेशानि तारारूपा भविष्यति ॥
मासि मार्गशिरे प्राप्ते कृष्णाष्टम्यां महेश्वरि ।
महाकालस्वरूपा च घोररात्रिः प्रकीर्त्तिता ॥
प्राप्ते फाल्गुनके मासे कृष्णैकादशिका तु या ।
भृगुभौमयुता चेत् स्यादचलारात्रिरीरिता ॥
ज्यैष्ठी या दशमी शुद्धा भृगुवासरसंयुता ।
दशयोगसमायुक्ता तारा चैकादशी यदि ॥
सा तिथिर्दिव्यरात्रिश्च कीर्त्तिता परमेश्वरि ।
ज्यैष्ठी या दशमी शुद्धा दशयोगसमन्विता ॥
वटुकस्य तिथिः प्रोक्ता वटुकोत्पत्तिकारिणी ।
अमा भौमसमायुक्ता संक्रमेण समन्विता ॥
कुल-ऋक्षसमायुक्ता ग्रहणं यदि चेद्भवेत् ।

ताराराात्रिस्तु संप्रोक्ता भाग्यादेव तु लभ्यते ॥
फाल्गुने कृष्णपक्षे तु ह्यर्धरात्रे भृगोः शिवे ।
शिवरात्रिस्तु संजाता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥
अमा भृगुसमायुक्ता सूर्यग्रहणयुग्यदि ।
अपराह्णे यदा योगो मृतसंजीविनी तिथिः ॥
स्नानदानादिहोमान्तमनन्तफलदं भवेत् ।
अष्टमी चैत्रमासीया संक्रमेण समन्विता ॥
सिद्धिरात्रिरिति ख्याता ताराकालीसमा कलौ ।
तृतीया माधवे शुद्धा कुलवारर्क्षसंयुता ॥
दारुणा कीर्त्तिता देवी सर्वसिद्धीश्वरी परा ।

कुलवारादयश्च ।

रविश्चन्द्रो गुरुः सौरिश्चत्वारस्तेऽकुला मताः ।
भौमशुक्रौ कुलाख्यौ तु बुधवारः कुलाकुलः ॥
द्वितीया दशमी षष्ठी कुलाकुलमुदाहृतम् ।
विषमश्चाकुलाः सर्वाः शेषाश्च तिथयः कुलाः ॥
वारुणार्द्राभिजिन्मूलं कुलाकुलमुदाहृतम् ।
कुलानि समधिष्ण्यानि शेषभान्यकुलानि च ॥

इति ( रुद्रायामले ) प्रोक्ताः

तथा ।

अष्टमी प्रतिमासं तु कृष्णपक्षस्य पार्वति ।
भौमयुक्ता तथा ऋक्षयुक्ता वा केवला च वा ॥
देवीरात्रिरिति ख्याता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।

ऋक्षयुक्ता कुलर्क्षयुक्ता ।

तथा ।

बुधाष्टमी महेशानि प्रतिमासं तु या भवेत् ।

विष्णुरात्रिरिति ख्याता भाद्रे मासि विशेषतः ॥

तत्रैव (नवरात्रनिर्णये)

नवशक्तिसमायुक्तं नवरात्रं तदुच्यते ।
एकैव देवदेवेशि नवधा परिनिष्ठिता ॥
शयनं बोधनाख्यं च नवरात्रं द्विधा भवेत् ।
शयनं चैत्रमासीयमाश्विनस्थं च बोधनम् ॥
द्वयोस्तु समुपोष्यैव सर्वसिद्धिं लभेन्नरः ।
निराहारी फलाहारी त्वेकभक्तो जलव्रतः ॥
नक्तभोजी हविष्याशी यथाशक्ति समाचरेत् ।

अथ देवीपूजोपयुक्तमण्डपलक्षणं (देवीपुराणे)

ऐशाने पूर्वभागे वा सिद्ध्यर्थं मनसः प्रियम् ।
देवीगृहं प्रकर्त्तव्यं सर्वलक्षणलक्षितम् ॥
दश द्वादश वाऽऽरभ्य यावद्धस्तशतं भवेत् ।

(भविष्योत्तरे)

दुर्गागृहं प्रकर्त्तव्यं चतुरस्रं सुशोभनम् ।
रहस्यं स्वस्तिकाद्यैश्च चर्चितं वस्त्रमण्डितम् ॥
दीपमालापरिक्षिप्तं द्वारदामोपशोभितम् ।
गोरमृद्गोमयाभ्यां च लिप्तं शस्तं समीरितम् ॥
तन्मध्ये वेदिका कार्या चतुर्हस्ता समा शुभा ।
तस्यां सिंहासनं सौम्यं कम्बलाजिनसंयुतम् ॥
तत्र दुर्गां प्रतिष्ठाप्य सर्वलक्षणसंयुताम् ।
सर्वदेवमयीं प्रौढयौवनोन्मादशालिनीम् ॥
भुजैश्चतुर्भी रुचिरैर्दशभिर्वा विभूषिताम् ।
तप्तहाटकवर्णाङ्गीं त्रिनेत्रां शशिशेखराम् ॥

पीताम्बरपरीधानां नीलकौशेयसंयुताम् ।
ग्रैवेयहारकेयूरनूपुराभरणान्विताम् ॥
नानारत्नविचित्रेण मुकुटेन विराजिताम् ।
अनेककुसुमाकीर्णकपर्देन विराजिताम् ॥
नितम्बबिम्बसन्नद्धकिङ्किणीक्वणनादिनीम् ।
शूलचक्रदण्डशक्तिवज्रचापासिधारिणीम् ॥
घण्टाक्षमालाकरकपानपात्रलसत्कराम् ।
तदग्रे छिन्नशिरसं महिषं रुधिराप्लुतम् ॥
निःसृतार्धतनुं कण्ठनालाच्चर्मासिधारिणम् ।
देवीकरधृतग्रीवं शूलेनोरसि ताडितम् ॥
दैत्यं करालदंष्ट्रास्यं विद्युत्कपिशमूर्धजम् ।
नागपाशेन विक्षिप्तं हर्यक्षेणाभिविद्रुतम् ॥
वमद्रुधिरवक्त्रेण धुन्वतोऽर्धं शटारुषा ।
ऊर्ध्वलाङ्गूलदण्डेन देव्यधिष्ठानशोभिना ॥
सर्वतो मातृचक्रेण सेव्यमानां सुरैस्तथा ।
पूजयेत् प्रयतो देवीं नरो नियममास्थितः ॥

स्थापने विशेष उक्तो (देवीपुराणे)

याम्यास्या शुभदा दुर्गा पूर्वास्या जयवर्धिनी ।
पश्चिमाभिमुखो नित्यं न स्थाप्या सौम्यदिङ्मुखी-इति ॥

(मत्स्यपुराणे-)कदशभुजाध्यानं यथा ।

कात्यायन्याः प्रवक्ष्यामि मूर्त्तिं दशभुजां तथा ।
त्रयाणामपि देवानां धर्मकामार्थकारिणीम् ॥
जटाजूटसमायुक्तामर्धेन्दुकृतलक्षणाम् ।
नेत्रत्रयसमायुक्तां पद्मेन्दुसदृशाननाम् ॥

अतसीपुष्पवर्णाभां सुप्रतिष्ठां सुलोचनाम् ।
नवयौवनसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम् ॥
सुचारुदशनां तद्वत्पीनोन्नतपयोधराम् ।
त्रिभङ्गस्थानसंस्थानां महिषासुरमर्दिनीम् ॥
त्रिशूलं दक्षिणे दद्यात् खड्गं चक्रं क्रमादधः ।
तीक्ष्णं बाणं तथा शक्तिं वामतोऽपि निबोधत ॥
खेटकं पूर्णचापं च पाशमङ्कुशमूर्ध्वतः ।
घण्टां वा परशुं चापि वामतः सन्निवेशयेत् ॥
अधस्तान्महिषं तद्वद्विशिरस्कं प्रदर्शयेत् ।
शिरश्छेदोद्भवं तद्वद्दानवं खड्गपाणिनम्* ॥
सपाशं वामहस्तेन धृतकेशं च दुर्गया ।
वमद्रुधिरवक्त्रं च देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत् ॥
देव्यास्तु दक्षिणं पादं समं सिंहोपरिस्थितम् ।
किञ्चिदूर्ध्वं तथा वाममङ्गुष्ठं महिषोपरि ॥
स्तूयमानं च तद्रूपममरैः सन्निवेशयेत् ।

अथ षोडशभुजाध्यानम् (कालिकापुराणे)

योगनिद्रा महामाया जगद्धात्री जगन्मयी ।
भुजैः षोडशभिर्युक्ता भद्रकालीति विश्रुता ॥
क्षीरोदस्योत्तरे तीरे बिभ्रती विपुलां तनुम् ।
अतसीपुष्पवर्णाभा ज्वलत्काञ्चनकुण्डला ॥
जटाजूटसखण्डेन्दुमुकुटत्रयभूषिता ।
नागहारेण सहिता स्वर्णहारविभूषिता ॥

---

* खड्गपाणिकमित्यत्र खड्गपाणिनमिति सर्वपुस्तकेषूपलभ्यते ।

शूलं खड्गं च शङ्खं च चक्रं बाणं तथैव च ।
शक्तिं वज्रं च दण्डं च नित्यं दक्षिणबाहुभिः ॥
बिभ्रती सततं देवी विकाशिनयनोज्ज्वला ।
खेटकं चर्म चापं च पाशं चाङ्कुशमेव च ॥
घण्टां परशुं मुशलं बिभ्रती वामपाणिभिः ।
सिंहस्था नयनै रक्तवर्णैस्त्रिभिरभिज्ज्वला ॥
शूलेन महिषं भित्त्वा तिष्ठन्ती परमेश्वरी ।
वामपादेन चाक्रम्य तत्र देवी जगन्मयी ॥

अष्टादशभुजाध्यानं प्रागेवोक्तम् ।
अथ चण्डिकाध्यानं तत्रैव ।

धम्मिल्लसंयतकचा विधोश्चाधोमुखीं कलाम् ।
केशान्ते तिलकस्योर्ध्वे दधती सुमनोहरा ॥
मणिकुण्डलसंघृष्टगण्डा मुकुटमण्डिता ।
सज्ज्योतिःकर्णपूराभ्यां कर्णावापूर्य सङ्गता ॥
सुवर्णमणिमाणिक्यनागहारविराजिता ।
सदा सुगन्धिभिः पद्मैरम्लानैरतिसुन्दरी ॥
मालां बिभर्त्ति ग्रीवायां रत्नकेयूरधारिणी ।
मृणालायतवृत्तैस्तु बाहुभिः कोमलैः शुभैः ॥
राजन्ती कञ्चुकोपेता पीनोन्नतपयोधरा ।
क्षीणमध्या पीतवस्त्रा त्रिवलीमध्यभूषिता ॥
शूलं वज्रं च बाणं च खड्गं शक्तिं तथैव च ।
ऊर्ध्वादिक्रमतो देवी दधती वामपाणिभिः ॥
सिंहस्योपरि तिष्ठन्ती व्याघ्रचर्मणि कौशिकी ।
बिभ्रती रूपमतुलं सुरासुरमोहनम् ॥

अथ सर्वमङ्गलाध्यानं (देवीपुराणे)

ब्रह्मोवाच ।

अवतारे समासेन कथिता सर्वमङ्गला ।
प्रतिमालक्षणं सम्यक् कथयामि यथा भवेत् ॥
सिंहपद्मासना सौम्या जटामुकुटमण्डिता ।
शूलाक्षसूत्रवरदा कमण्डलुकरा शुभा ॥
चतुर्भुजा समाख्याता तथा चाष्टभुजां शृणु ।
वरदं चाभयं खड्गमक्षसूत्रं च दक्षिणे ॥
दर्पणं शूलचापं च चतुर्थे खेटकं भवेत् ।
एवं चाष्टभुजा देवी मङ्गला सर्वमङ्गला ॥

अथ देवीबोधनकालनिर्णयः । तत्रैकस्या एव महिषमर्दिन्या अष्टादशभुजादिध्यानभेदेन बोधनकाल उक्तो (महाथर्वणसंहितायाम्)

अष्टादशभुजा दुर्गा उग्रचण्डेति या स्मृता ।
सैवेयं षोडशभुजा भद्रकालीति गीयते ॥
दशभिर्बाहुभिर्युक्ता सैव कात्यायनी स्मृता ।
भिन्नध्याना कल्पभेदान्महिषासुरमर्दिनी ॥
कालभेदे बोधनीया सा दुर्गोत्सवकर्मणि ।
आश्विनासितपक्षे तु दिवा सम्पूज्य भक्तितः ॥
खड्गे नवम्यामार्द्रायामुग्रचण्डां प्रबोधयेत् ।

'आश्विनासितपक्ष' इति पौर्णमास्यन्ताश्विनकृष्णपक्ष इत्यर्थः ।

तथा च ।

आर्द्रानक्षत्रयुक्तायां पूर्णमास्यन्ताश्विनकृष्णनवम्यामुग्रचण्डां दिवा खड्गे संपूज्य प्रबोधयेदिति वाक्यार्थः ।

(लिङ्गपुराणे देवीपुराणेऽपि)

यदा त्वष्टादशभुजां महामायां प्रपूजयेत् ।
कन्यायां कृष्णपक्षे तु पूजयित्वाऽऽर्द्रभे दिवा ॥

नवम्यां बोधयेद्देवीं गीतवादित्रनिःस्वनैः ।
शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु देवीकेशविमोचनम् ॥
प्रातरेव तु पञ्चम्यां स्नापयेयुः शुभैर्जलैः ।
सप्तम्यां पत्रिकापूजा अष्टम्यां चाभ्युपोषणम् ॥
पूजा च जागरश्चैव नवम्यां विधिवद्बलिः ।
संप्रेषणं दशम्यां तु क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ॥

(महाकालसंहितायामपि)

येऽष्टादशभुजां देवीमुग्रचण्डाभिधां प्रिये ।
पिपूजयिषवो मर्त्यास्तदुपासकतामिताः ॥
तथाऽश्विननवम्यां वै कृष्णायां सुसमाहिताः ।
करवाले बोधयेयुर्मध्याह्ने शङ्खनिः स्वनैः—इति ॥

मध्याह्नस्तु पञ्चधा विभक्तदिनतृतीयांशः ।

अह्नस्तु प्रथमो भागः प्रातःकाल इति स्मृतः ।
द्वितीयः सङ्गवः प्रोक्तो मध्याह्नस्तु तृतीयकः ॥
अपराह्णश्चतुर्थः स्यात् सायाह्नः पञ्चमः स्मृतः—इति वचनात् ।

शङ्खनिःस्वनैरित्युपलक्षणम् । शङ्खादिनानाविधवाद्यनिःस्वनैरित्यर्थः ।

अत्र यस्मिन् दिने नवम्यां दिवार्द्रालाभस्तत्रैव बोधनं कार्यम् । दिनद्वये नवम्यां दिवार्द्रालाभे तु युग्मविधिवाक्यबलादष्टमीविद्धायामेव नवम्यां बोधनं कार्यम् । एवमार्द्राया अलाभेऽपि युग्मादरेणैव व्यवस्थेति वर्षक्रियाकौमुदीकृतः ।

वस्तुतस्तु—

मध्याह्ने शङ्खनिःस्वनैः—इति महाकालवचनान्मध्याह्नस्य बोधनकालत्वप्रतीतेस्तद्व्याप्त्यैव निर्णयः ।

कर्मणो यस्य यः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः—इति बृहद्याज्ञवल्क्योक्तेः । दिनद्वये मध्याह्नव्याप्तौ तदव्याप्तौ नक्षत्रेण निर्णयः । नक्षत्रस्य दिनद्वये प्राप्तावप्राप्तौ च युग्मादरः ।

युग्मवाक्यान्युक्तानि (निगमे)

युग्माग्नियुगभूतानां षण्मुन्योर्वसुरन्ध्रयोः ।

रुद्रेण द्वादशीयुक्ता चतुर्दश्या च पूर्णिमा ॥
प्रतिपदा त्वमावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम् ।
व्यस्तमेतन्महादोषं प्रवदन्ति मनीषिणः—इति ।

अत्र युग्मादिरन्ध्रान्ताः शब्दा द्वितीयादिनवम्यन्ततिथिवाचकाः । रुद्र एकादशी । शेषं स्पष्टम् ।

यद्यपि युग्माग्नीत्यादिवाक्यानि शुक्लपक्षपरतयोक्तानि ( निर्णयामृतादौ ) पूर्णिमाया अमाप्रतिपद्युग्मस्य च कृष्णपक्षेऽसम्भवादिति । तथाऽपि पूर्वविद्धैव नवमी पक्षयोरुभयोरपीति माधवोक्तेः ।

कृष्णपक्षेऽपि नवम्यष्टमीयुतैव ग्राह्या ।

निबन्धव्याख्याकृतस्तु । चतुर्दश्या च पूर्णिमा—इत्यत्र त्रयोदश्या चतुर्दशी—इति पाठस्य स्मृत्यन्तरे श्रवणादेतानि युग्मवाक्यानि पक्षद्वयपराणीत्याहुः ।

निर्णयसिन्धुकृतोऽपि अमा प्रतिपद्युग्मात् कृष्णपक्षलिङ्गात् पक्षद्वयपरमिदं तत्तद्विशेषवाक्यैः कृष्णे तिथिविशेषेऽपीष्यत इति व्याजहुः ।

पूजयित्वाऽऽर्द्रभे दिवा—इत्यार्द्रानक्षत्रयोगाभिधानं तु नक्षत्रयोगस्य प्रशस्ततया सम्भवाभिप्रायम् ।

तथा च मध्याह्नव्यापिन्यां नवम्यां सति सम्भवे आर्द्रानक्षत्रयुक्तायां बोधनं कुर्यादिति निष्कर्षः ।

तिथिनक्षत्रयोर्योगे द्वयोरेवानुपालनम् ।
योगाभावे तिथिर्ग्राह्या देव्याः पूजनकर्मणि—इति निर्णयसिन्धुधृतदेवलोक्तेः ।

तत्तन्नक्षत्रयोगस्तु फलाधिक्याय कल्पते ।
भानामलाभे तु पुनः प्रशस्ता केवला तिथिः—इति महाकालवचनाच्च ।

निर्णयामृतकृतस्तु—

पूजयित्वेति पूजनक्रियायाः समानकर्तृकयोः पूर्वकाल इति क्त्वाप्रत्ययस्य नवम्यां बोधयेदिति बोधनक्रियाकालान्नवमीरूपात् पूर्वकालेऽष्टमीरूपे विधानात् क्त्वाप्रत्ययसामर्थ्यादेवाष्टम्यां पूजनं नवम्यां बोधनमित्याहुः ।

पूजयित्वाऽष्टमीदिने—इति * निर्णयसिन्धौ स्थितम् ।

---

* क्वाचित्कः पाठः—इति ४ पु० पा० ।

यत् तु आर्द्रानक्षत्रयुक्तायामष्टम्यां पूजनं नवम्यां प्रबोध इति मतं तत् तुच्छम् ।

आश्विनासितपक्षस्य नवमी या शिवर्क्षयुक् ।

बोधयित्वेश्वरीं तस्यां शरदर्च्चनमारभेत्—इति नवम्यामेवार्द्रा-नक्षत्रयोगस्य महाकालेनाभिहितत्वात् ।

एवमाश्विनकृष्णनवमीमारभ्याश्विनशुक्लनवमीपर्यन्तमुत्सवोऽष्टादशभुजापक्षः ।

अथ षोडशभुजापक्षः । (महाथर्वणसंहितायाम्)

इषे शुक्लप्रतिपदि भुजैः षोडशभिर्युताम् ।

बोधयित्वा भद्रकालीं नवम्यन्तं प्रपूजयेत् ॥

(महाकालसंहितायामपि)

प्रतिपद्येव शुक्लायां बोधयित्वा सुरेश्वरीम् ।

अभ्यर्च्चयेन्नवाहानि तन्त्रपौराणिकक्रमैः ॥

केवलपौराणिकक्रमेणोत्सवे कर्त्तव्ये तु आश्विनकृष्णचतुर्दश्यामेव षोडशभुजाया बोधनं कार्यम् ।

तदुक्तं (कौमुद्यां लिङ्गपुराणे च) ।

यदा तु षोडशभुजां महामायां प्रपूजयेत् ।

दुर्गातन्त्रेण मन्त्रेण विशेषं तत्र वै शृणु ॥

कन्यायां कृष्णपक्षे तु एकादश्यामुपोषितः ।

द्वादश्यामेकभक्तं च नक्तं कुर्यात् परेऽहनि ॥

चतुर्दश्यां महामायां बोधयित्वा विधानतः ।

गीतवादित्रनिर्घोषैर्नानानैवेद्यवेदनैः ॥

अयाचितं बुधः कुर्यादुपवासं परेऽहनि ।

एवमेव व्रतं कुर्याद्यावद्वै नवमी भवेत्—इति ॥

कलशस्थापनं तु प्रतिपद्येवोक्तं (यामले)

प्रतिपद्येव कर्त्तव्यं कलशस्थापनं तथा—इति ।

तृतीयपक्षे तु सप्तम्यां कलशस्थापनं वक्ष्यते ।

अथाश्विनशुक्लप्रतिपन्निर्णीयते । सा च दुर्गोत्सवोपवासादिषु परविद्धा ग्राह्या ।

या चाश्वयुजि मासे स्यात् प्रतिपद्भद्रयाऽन्विता ।
शुक्ला ममार्चनं तस्यां शतयज्ञफलप्रदम् ॥

इति (देवीपुराणे) परविद्धायाः प्राशस्त्यविधानात् ।

पूर्वविद्धा तु या शुक्ला भवेत् प्रतिपदाश्विनी ।
नवरात्रव्रतं तस्यां न कार्यं शुभमिच्छता ॥
देशभङ्गो भवेत् तत्र दुर्भिक्षं चोपजायते ।
नन्दायां दर्शयुक्तायां यत्र स्यान्मम पूजनम् ॥

इति (मार्कण्डेयदेवीपुराणयोः) पूर्वविद्धानिषेधाच्च ।

(रुद्रयामले)

अमायुक्ता सदा चैव प्रतिपन्निन्दिता मता ।
तत्र न स्थापयेत् कुम्भं दुर्भिक्षं जायते ध्रुवम् ॥
प्रतिपत् सद्द्वितीया तु कुम्भारोपनकर्मणि ।

(कल्पतरुः)

कुहूकाष्ठोपसंयुक्तां वर्जयेत् प्रतिपत्तिथिम् ।
राज्यनाशाय सा प्रोक्ता निन्दतं तत्र पूजनम् ॥

(देवीपुराणे)

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि चण्डिकापूजनक्रमम् ।
आश्विनस्य सिते पक्षे प्रतिपत् सुशुभे दिने—इत्युपक्रम्य ॥
शुद्धे तिथौ प्रकर्त्तव्यं प्रतिपच्चोर्ध्वगामिनी ।
आद्यास्तु नाडिकास्त्यक्त्वा षोडश द्वादशापि वा ॥
अपराह्णे च कर्त्तव्यं शुद्धसन्ततिकाङ्क्षिभिः ।

अपराह्णे योगिन्याः प्राशस्त्यं तु द्वितीयदिने प्रतिपदोऽभावे बोध्यम् । तत्रैव (उड्डामरतन्त्रे) च देवीवचनम् ।

अमायुक्ता न कर्त्तव्या प्रतिपत् पूजने मम ।
मुहूर्त्तमात्रा कर्त्तव्या द्वितीयादिगुणान्विता ॥

आद्याः षोडश नाडीस्तु लब्ध्वा यः कुरुते नरः ।
कलशस्थापनं तत्र अरिष्टं जायते ध्रुवम् ॥

(शक्तिसङ्गमे)

घटिकाः षोडश त्याज्या आद्याः प्रतिपदस्तु याः ।
कलशस्थापनं कुर्यात् कल्याणं जायते तदा ॥

तथा ।

अमायुक्ता न कर्त्तव्या प्रतिपत् कालिकार्च्चने ।

(स्कान्दे)

वर्जनीया प्रयत्नेन अमायुक्ता तु पार्थिव ।
द्वितीयादिगुणैर्युक्ता प्रतिपत् सर्वकामदा ॥

(देवीपुराणे) देवीवचः ।

यो मां पूजयते भक्त्या द्वितीयादिगुणान्विताम् ।
शरत्प्रतिपदं ज्ञात्वा सोऽश्नुते सुखमव्ययम् ॥
यदि कुर्यादमायुक्तप्रतिपत्स्थापनं मम ।
तस्य शापायुतं दत्वा वंशनाशं करोम्यहम् ॥
आग्रहात् कुरुते यस्तु प्रथमे स्थापनं मम ।
तस्य सम्पद्विनाशः स्याज्ज्येष्ठपुत्रश्च नश्यति ॥
अमायुक्ता न कर्त्तव्या प्रतिपच्चण्डिकार्च्चने ।
धनार्थिभिर्विशेषेण वंशहानिश्च जायते ॥
न दर्शकलया युक्ता प्रतिपच्चण्डिकार्च्चने ।
उदये द्विमुहूर्त्ताऽपि ग्राह्या सोदयगामिनी ॥

अन्यत्रापि ।

परविद्धा च या शुद्धा भवेत् प्रतिपदाश्विनी ।
तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यादमायुक्तां विवर्जयेत्—इति ॥

नन्वेतानि वाक्यानि—

प्रतिपदा त्वमावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम्–इति ।

एतद्युग्मवाक्यविरुद्धानीति चेन्न । युग्मवाक्यस्यैतत्प्रतिपदभिन्नप्रतिपद्विषयत्वात् ।

*अत एवोक्तं (देवीपुराणे)

शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।

सा कार्योदयगामिन्यां न तत्र तिथियुग्मता–इति ॥

न च–

संपूज्य नवदुर्गां च नक्तं कुर्यात् समाहितः ।

नवरात्राभिधं कर्म नक्तव्रतमिदं स्मृतम् ॥

इति (स्कान्दात्) अस्य नवरात्रव्रतस्य नक्तव्रतत्वे सिद्धे–

नक्तव्रतेषु सर्वेषु रात्रियोगः प्रशस्यते ।

इति वचनात् पूर्वविद्धैव ग्राह्येति वाच्यम् ।

अमायुक्ता न कर्त्तव्या इत्यादिविशेषवचनैर्निषेधात् ।

किञ्च न केवलं नक्तव्रतमेतत् ।

एवं च विन्ध्यवासिन्यां नवरात्रोपवासतः ।

एकभक्तेन नक्तेन †तथैवायाचितेन च ॥

पूजनीया जनैर्देवी स्थाने स्थाने पुरे पुरे ।

(हेमाद्रौ भविष्ये) व्रतचतुष्टयस्योक्तत्वात्‡ ।

अत एवोक्तं कमलाकरभट्टैः पाक्षिकनक्तानुवादोऽयमिति§ ।

अत्र केचित् (रुद्रयामलदेवीपुराणादि–)वचनेषु कलशस्थापनश्रुतेस्तदेव प्रथमदिने निषिद्धं न तूपवासादि तस्य प्रतिपदा त्वमावास्या–इति युग्मवाक्यात् ।

शुक्लपक्षे दर्शविद्धा इति माधवोक्तेश्च पूर्वदिने प्राप्तेऽस्य बाधे प्रमाणाभावादित्याहुः ।

वस्तुतस्तु–

---

* तदुक्तं नन्दिकेश्वरपुराणे इति ४ पु० पा० ।

† स्वशक्त्यायाचितं नरः इति ४ पु० पा० ।

‡ नानाव्रताभिधानात् इति ४ पु० पा० ।

§ अत्रोपवासादिबहुकर्माभिधानेऽपि देवीपूजनमेव प्रधानमिति रहस्यविदः इति ४ पु० पा० ।

अत्र देवीपूजायाः प्राधान्येन पूर्वदिने तस्या निषेधात् तदङ्गोपवासादावपि परैव ग्राह्येति युक्तम्।

अत एवोक्तं देवलेन।

व्रतोपसनियमे घटिकैकाऽपि या भवेत्।

सा तिथिस्तद्दिने पूज्या विपरीता तु पैतृके–इति॥

अत्र घटिकाशब्दो मुहूर्त्तपर इति गौडाः।

कमलाकरभट्टास्तु–

घटिकैकेति मुहूर्त्तमात्रा कर्तव्येति च द्विमुहूर्त्तस्तुतिः। तेनौदयिकी प्रतिपद्द्विमुहूर्त्ता ग्राह्या। अन्यथा द्विमुहूर्त्तविधेर्वैयर्थ्यापत्तेः।

यदा तु पूर्वदिने संपूर्णा शुद्धा भूत्वा परदिने वर्धते तदा संपूर्णत्वादमायोगाभावाच्च पूर्वैव ग्राह्या।

यानि च द्वितीयायोगनिषेधकानि वचनानि केचित् पठन्ति तान्यपि शुद्धाधिकनिषेधपराणीत्याहुः।

द्विमुहूर्त्तवचसोऽपि त्रिमुहूर्त्तस्तावकत्वात् परदिने यदि प्रतिपन्मुहूर्त्तत्रयान्न्यूना तदा दर्शयुक्ताऽपि पूर्वैव ग्राह्येति समयप्रकाशकृतः।

वस्तुतस्तु–

त्रिमुहूर्त्तविधिर्मुख्यः। द्विमुहूर्त्तविधिस्त्वनुकल्पः।

द्विमुहूर्त्ताऽपि कर्त्तव्येति दक्षेणापि–शब्दस्योक्तत्वात्*।

परदिने प्रतिपदोऽभावे त्वमायुक्ताऽपि सा ग्राह्या।

अमायुक्ताऽपि कर्तव्या यदि न स्यात् परेऽहनि।

इति निबन्धव्याख्यालिखितवचनात्†।

अत्र केचित्।

वृद्धौ समाप्तिरष्टम्यां ह्रासेऽमाप्रतिपन्निशि।

प्रारम्भो ‡नवचण्ड्यास्तु नवरात्रमतोऽर्थवत्॥

---

* एवं प्रकृतेऽपि उदये द्विमुर्त्ताऽपीत्यपि–शब्दोक्तेर्द्विमुर्त्तविधिरनुकल्पो बोध्यः इति ४ पु० पा०।

† ग्रन्थान्तरोदाहृतानि दर्शयुक्तप्रतिपद्विधायकानि वचनान्येतद्विषयाण्येव इति ४ पु० पा०।

‡ नवरात्रस्य ४ पु० पा०।

इति (निर्णयसिन्धु-) धृत (देवीपुराणोक्त-) वचनान्नवरात्रशब्दो नवाहोरात्रपरः* ।

अमायुक्तप्रतिपन्निषेधकानि वाक्यानि तु तिथिह्रासाभावविषयाणीत्याहुः ।

अयं च नेपालदेशसम्प्रदायः ।

वस्तुतस्तु-

न रात्रौ स्थापनं कार्यं न च कुम्भाभिषेचनम् ।

इति (मत्स्य-)पुराणीयवचनेन रात्रौ कलशस्थापनादिनिषेधात् प्रारम्भो नवचण्ड्यास्त्विति पूजनादेरपूर्वकत्वाभिधानाच्च नवभिर्दिनैर्नवावृत्तिचण्डीपाठविषयमेतद्वचनम् ।

नवरात्रशब्दस्तु नवतिथिपर एव ।

प्रारम्भो नवरात्रस्य इत्यादौ तु कर्मणि लाक्षणिकः । तस्य नवाहोरात्रपरत्वे तु तिथिह्रासवृद्ध्योर्न्यूनाधिकत्वापत्तेः ।

अत एवोक्तं ( निर्णयामृते देवीपुराणे च )

तिथिवृद्धौ तिथिह्रासे नवरात्रमपार्थकम् ।
अष्टरात्रेण दोषोऽयं नवरात्रतिथिक्षये ॥
अष्टरात्रेण दोषो हि पूर्णां मुक्त्वा तु पूजनम् ।
तिथिह्रासेऽपि कर्त्तव्यं प्रतिपद्याश्विने सिते-इति ॥

प्रतिपदि चित्रावैधृतियोगनिषेध उक्तस्तत्रैव ।

त्वाष्ट्रवैधृतियुक्ता चेत् प्रतिपच्चण्डिकार्च्चने ।
तयोरन्तर्विधातव्यं कलशारोपणं गृहे-इति ॥

तथा ।

आश्विने प्रतिपत् पूर्णा शुद्धा या तु भवेन्नृप ।
आरभ्यं नवरात्रं स्याद्धित्वा चित्रां च वैधृतिम् ॥

यदा तु चित्रावैधृत्योः परिहारेण प्रतिपन्न लभ्यते तदा कात्यायनः ।

प्रतिपद्याश्विने मासि नरो वैधृतिचित्रयोः ।

---

* इति ( निर्णयसिन्धु-) धृत ( देवीपुराणो-) क्तवचनात् ।
तिथेः क्षये तथा वृद्धौ पूर्ववेधो न दूष्यति ।
इति तान्त्रिकवचनाच्च इति ४पु० पा० ।

आद्यपादौ परित्यज्य प्रारभेन्नवरात्रकम् ॥

( रुद्रयामलेऽपि )

वैधृतौ पुत्रनाशः स्याच्चित्रायां धननाशनम् ।
तस्मान्न स्थापयेत् कुम्भं चित्रायां वैधृतौ तथा ॥
सम्पूर्णा प्रतिपद्देवि चित्रायुक्ता यदा भवेत् ।
वैधृत्या वाऽपि युक्ता स्यात् तदा मध्यन्दिने रवौ ॥
अभिजित् तु मुहूर्त्तं यत् तत्र स्थापनमिष्यते ।

( भविष्ये )

चित्रावैधृतिसम्पूर्णा प्रतिपच्चेद्भवेन्नृप ।
त्याज्या ह्यंशास्त्रयस्त्वाद्यास्तुरीयांशे तु पूजनम् ॥

चित्रादियुक्ताऽपि द्वितीयायुता चेन्न दुष्टेत्युक्तं (दुर्गोत्सवे)

भद्रान्विता चेत् प्रतिपत् तु लभ्यते विरुद्धयोगैरपि सङ्गता सती ।
सा वै पराह्णे विबुधैर्विधेया श्रीपुत्रराज्यादिविवृद्धिहेतुः-इति ॥

अथ यववपनविधिः (रुद्रयामले)

स्नानं माङ्गलिकं कृत्वा ततो देवीं प्रपूजयेत् ।
शुभाभिर्मृत्तिकाभिश्च पूर्वं कृत्वा तु वेदिकाम् ॥
यवान् वै वापयेत् तत्र गोधूमैश्चापि संयुतान् ।

तन्त्रान्तरे ।

वालुका गृह्य यत्नेन नदीनदसमुद्भवाः ।
वेदीं कुर्यात् प्रयत्नेन चतुरस्रां शुभावहाम् ॥
द्विहस्ता चोत्तमा वेदी मध्यमा सार्धहस्तका ।
अधमा हस्तमात्रा च न्यूनाधिक्यं न कारयेत् ॥
भूरसीति पठेन्मन्त्रं देवीं संस्पृश्य मानवः ।
अपामग्निं समुच्चार्य प्रोक्षयेच्चन्दनाम्भसा ॥
तन्मध्ये विलिखेन्मन्त्रं जयदुर्गाख्यमुत्तमम् ।

तत्रावाह्य यजेद्देवीमष्टादशभुजां पराम् ॥
पञ्चोपचारैः संपूज्य दिक्पालाँश्चापि पूजयेत् ।
पश्चान्नवार्णमनुना पूजयेदस्त्रमातृकाम् ॥
संशोध्य यवराशिं च यवोऽसीति मनुं पठन् ।
प्रक्षिपेद्वेदिकामध्ये वक्ष्यमाणमनुं जपन् ॥
ॐ यव त्वं यवरूपोऽसि यज्ञार्थे निर्मितो विधेः ।
देवानां तृप्तिकृद्यस्मात् तस्मात् त्वं वरदो भव ॥
जयन्ती मङ्गलाकाली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥

तथा ।

भेरीमृदङ्गडमरूघण्टापटहनिःस्वनैः ।
महोत्सवं प्रकुर्वीत यवारोपणकर्मणि ॥
प्रसूते च दशम्यां वै भद्राभद्रं विचारयेत् ।

विचारस्त्वन्यत्र ।

सम्यक् समुद्गता दीर्घा ऋजवश्चाङ्कुराः शुभाः ।
अनुद्गताः कुण्ठिताद्या ह्रस्वाः शुष्काश्च भङ्गुराः ।
कीटाखुभुक्ताः शटिताः विषमाश्चाशुभाः स्मृताः ॥

संग्रहान्तरलिखितविचारान्तरं तु प्रमाणाभासमूलकत्वादुपेक्षितम् ।

( रुद्रयामले )

तत्र संस्थापयेत् कुम्भं विधिना मन्त्रपूर्वकम् ।
सौवर्णं राजतं वाऽपि ताम्रं मृण्मयमेव वा ॥

( मात्स्ये )

न रात्रौ स्थापयेत् कुम्भं न च कुम्भाभिषेचनम् ।

विष्णुः ।

भास्करोदयमारभ्य यावत् तु दश नाडिकाः ।

प्रातःकाल इति प्रोक्तः स्थापनारोपणादिषु ॥

कलशस्थापनविधिस्तु दशभुजापक्षे वक्ष्यते (वैष्णवीकल्पे)

नैमित्तिकोक्तविधिना नवाहानि प्रपूजयेत् ।
उपोषणं तथाऽष्टम्यां प्रभूतवलिदानकम् ॥
नवम्यामाचरेद्धीमान् दशम्यां तु विसर्जयेत् ।

पुत्रिणा तु महाष्टम्यामुपवासो न कार्यः ।

उपवासं महाष्टम्यां पुत्रवान् न समाचरेत् ॥
यथा तथा संयतात्मा व्रती देवीं प्रपूजयेत् ।

इति (कालिकापुराणात्) नवम्यां प्रभूतवलिदानमित्यनेनाष्टम्यादौ पूजाङ्गवलिदानमायाति ।

अष्टम्यां वलिदानेन पुत्रनाशो भवेद्ध्रुवम् ।

इति नामशून्यं वचनं केचित् पठन्ति । तत्र मूलं मृग्यम् । समूलत्वाभिधाने तु प्रभूतवलिदाननिषेधकमिति मन्तव्यम् । पूजावलिदानविसर्जनादिविधिस्त्वग्रे व्यक्तीभविष्यति ।

अथ दशभुजापक्षः (कालिकापुराणे)

बोधयेद्विल्वशाखासु षष्ठ्यां देवीं फलेषु च ।
सप्तम्यां विल्वशाखां तामाहृत्य प्रतिपूजयेत् ॥
पुनः पूजां तथाऽष्टम्यां विशेषेण समाचरेत् ।
जागरं च स्वयं कुर्याद्वलिदानं महानिशि ॥
प्रभूतवलिदानं च नवम्यां विधिवच्चरेत् ।
जपहोमसमायुक्तो भोजयेद्वै कुमारिकाः ॥
ध्यायेद्दशभुजां देवीं दुर्गातन्त्रेण पूजयेत् ।
विसर्जनं दशम्यां तु कुर्याद्वै शावरोत्सवैः ॥

फलेषु इति । फलयुक्तासु शाखास्वित्यर्थः । दुर्गातन्त्रेणेति दुर्गातन्त्रसंज्ञकेन पूर्वोक्तजयदुर्गामन्त्रेणेत्यर्थः । शावरोत्सवैरिति । शवरोचितवेशभाषाधूलिकर्दमविक्षेपादिभिरित्यग्रे स्फुटीभविष्यति । षष्ठ्यां च सायाह्ने सन्ध्यायां वा बोधनं कार्यम् ।

सायाह्ने विल्वशाखायां षष्ठ्यां देवीं प्रबोधयेत् ।

इति महाकालोक्तेः ।

षष्ठ्यां विल्वतरौ बोधं सायंसन्ध्यासु कारयेत् ।

इति (भविष्यपुराणाच्च)

पञ्चधा विभक्तदिनपञ्चमांशः सायाह्नः । सन्ध्या तु दिनरात्र्योः सन्धौ मुहूर्त्तः ।

(देवीपुराणे)

ज्येष्ठानक्षत्रयुक्तायां षष्ठ्यां विल्वाभिमन्त्रणम् ।

सप्तम्यां मूलयुक्तायां पत्रिकायाः प्रवेशनम् ॥

इति नक्षत्रयोगे फलातिशयः ।

मूलाभावेऽपि सप्तम्यां केवलायां प्रवेशयेत् ।

इति (नन्दिकेश्वरपुराणात्)

एवं च ।

ज्यैष्ठायामेव सम्बोध्य मूलेनैव प्रवेशयेत् ।

पूर्वोत्तराभ्यां सम्पूज्य श्रवणान्ते विसर्जयेत् ॥

इत्यादौ सर्वत्रापि तिथिनक्षत्रयोगे फलभूयस्त्वं वेदितव्यम् । पूर्वोत्तराभ्यामिति । पूर्वाषाढान्वितायामष्टम्यामुत्तराषाढान्वितायां नवम्यामित्यर्थः । नक्षत्रानुरोधेन पत्रिकाप्रवेशनं विसर्जनं च रात्रौ न कर्त्तव्यम् ।

ऋक्षयोगानुरोधेन रात्रौ पत्रीप्रवेशनम् ।

विसर्जनं चरेद्यस्तु सराष्ट्रः स विनश्यति ॥

इति (दुर्गाभक्तितरङ्गिणी-) लिखितवचनात् ।

तथा च ।

अन्त्यपादे निशाभागे श्रवणस्य यदा भवेत् ।

तदा देव्याः समुत्थानं दशम्यां दिनभागतः ॥

इति वचनात् श्रवणान्ते विसर्जयेत् इत्यादिवचनानुरोधेन रात्रौ विसर्जनं न कार्यमिति तत्रैवोक्तम् । अत्र दिनत्रये तिथित्रयविहितपूजात्रयं प्रायिकं कदा चित् तिथिह्रासवशाद्द्व्यहयां पूजात्रयं कदा चित् तिथिवृद्धिवशाद्दिनचतुष्टयेन पूजात्रयं तिथित्रयलाभे तु निर्विवादैव व्यवस्था ।

व्रती प्रपूजयेद्देवीं सप्तम्यादिदिनत्रये ।

द्वाभ्यां चतुरहोभिर्वा ह्रासवृद्धिवशात् तिथेः ॥

इति (भविष्य-) वचनात्

अस्मिन् पक्षेऽपि प्रतिपदादिदिनकृत्यान्युक्तानि ( भविष्ये )

केशसंस्कारद्रव्याणि प्रदद्यात् प्रतिपत्तिथौ।
पट्टडोरं द्वितीयायां केशसंयमहेतवे ॥
दर्पणं च तृतीयायां सिन्दूरालक्तकं तथा।
मधुपर्कं चतुर्थ्यां तु तिलकं नेत्रमण्डनम् ॥
पञ्चम्यामङ्गरागं च शक्त्याऽलङ्करणानि च।
षष्ठ्यां विल्वतरौ बोधं सायंसन्ध्यासु कारयेत्–इति ॥

अत्र च पत्रिकाप्रवेशात् पूर्वेद्युः सायंकाले षष्ठ्यभावे तत्पूर्वदिनेऽधिवासनं कार्यम्। षष्ठ्याः सायंकालेऽत्यन्तासत्त्वे त्वधिवासनलोपः।

षष्ठ्यां सायं प्रकुर्वीत विल्ववृक्षेऽधिवासनम्।

इति ( कल्पतरु– ) वचनादिति। एवं देवीबोधनेऽपि व्यवस्था।

वस्तुतस्तु–

अनेकतन्त्रबोधितकर्त्तव्यताकस्य देवीबोधनस्यावश्यकतया यस्मिन् दिने सायंसमये षष्ठीलाभस्तत्रैव बोधनम्। उभयदिने सन्ध्यायां षष्ठीलाभे तु युग्मादरेण व्यवस्था। दिनद्वये सन्ध्यायां षष्ठ्यभावे तु प्रदोषादिसमये षष्ठ्यामिति कौमुदीकृन्मतमेवादरणीयम्। गौणकालव्याप्तेः सत्त्वात्।

तदुक्तम्।

स्वकालादुत्तरः कालो गौणः स्यात् पूर्वकर्मणः–इति।

अत एव सायं श्रुतिः फलार्थातिशयार्था न तु कर्मलोपः कार्यं इत्याचार्यचूडामणिः।

प्रदोषस्तु–

त्रिमुहूर्त्तः प्रदोषः स्याद्भानावस्तं गते सति।

इति ( मदनरत्ने ) व्यासेनोक्तः।

वत्सेन तु–

प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते–इत्युक्तम्।

एवं च पत्रिकाप्रवेशादौ सप्तम्युदयव्यापिन्येव ग्राह्या न तु षण्मुन्योरिति युग्मवाक्यात् पूर्वविद्धा।

युगाद्या वर्षवृद्धिश्च सप्तमी पार्वतीप्रिया।
रवेरुदयमिच्छन्ती न तत्र तिथियुग्मता ॥

इति (कृत्यतत्त्वार्णव-) लिखितवचनात् ।

भगवत्याः प्रवेशादिविसर्गान्ताश्च याः क्रियाः ।

तिथावुदयगामिन्यां सर्वास्ताः कारयेद्बुधः ॥

इति (तिथितत्त्व-) लिखित-(नन्दिकेश्वरपुराणाच्च)

अधिवासनं तु पत्रिकाप्रवेशाव्यवहितपूर्वदिन एव सायंकाले षष्ठ्यभावेऽपि कार्यम् ।

ज्येष्ठा वा यदि वा षष्ठी सायंकाले न चेद्भवेत् ।

सायमेव तथाऽपि स्याद्बिल्ववृक्षेऽधिवासनम् ॥

पूर्वां षष्ठीं सनक्षत्रां सायं प्राप्तामपि त्यजेत्–इति ।

तथा च ज्योतिःशास्त्रम् ।

पूर्वाह्णे नवपत्रिका शुभकरी सर्वार्थसिद्धिप्रदा

आरोग्यं धनदा करोति विजयं चण्डीप्रवेशे शुभा ।

मध्याह्ने न च पीडनं क्षयकरी नृणामघोरावहा

सायाह्ने वधबन्धमादिकलहं सर्वक्षतिं दास्यति ॥

सप्तम्यामस्तगायां यदि विशति गृहं पत्रिका श्रीफलाद्या

राज्ञः सप्ताङ्गराज्यं जनसुखसहितं हन्ति मूलानुरोधात् ।

तस्मात् सूर्योदयस्थां नरपतिशुभदां सप्तमीं प्राप्य देवीं

भूपालो वेशयेत् तां सकलजनहितां राक्षसर्क्षं विहाय ॥

मत्स्यसूक्तवचनात् ।

पत्रीप्रवेशात् पूर्वेद्युः सायाह्ने बिल्ववासिनीम् ।

चण्डीमामन्त्रयेद्विद्वान्नात्र षष्ठीपुरस्क्रिया ॥

इति (ब्रह्माण्डपुराणाच्च)

बिल्वनिमन्त्रणपत्रिकाप्रवेशादिविधिरग्रे वक्ष्यते ।

एकाहपक्षोऽपि (कालिकापुराणे)

यस्त्वेकस्यामथाष्टम्यां नवम्यामथ साधकः ।

पूजयेद्वरदां देवीं महाविभवविस्तरैः–इति ॥

(रुद्रयामले)

मूलनक्षत्रमारभ्य पूजनीया सरस्वती ।
पूजयेत् प्रत्यहं देवीं यावद्वैष्णवमृक्षकम् ॥
नाध्यापयेन्न च लिखेन्नाधीयीत कदा चन ।
पुस्तके स्थापिते देवि विद्याकामो द्विजोत्तमः ॥

(संग्रहे)

आश्विनस्य सिते पक्षे मेधाकामः सरस्वतीम् ।
मूलेनावाहयेद्देवीं श्रवणेन विसर्जयेत् ॥

अथ महाष्टमी निर्णीयते । सा च पूजोपवासादिषु परयुता ग्राह्या । वसुरन्ध्रयोरिति युग्मवाक्यात् ।

शुक्लपक्षेऽष्टमी चैव शुक्लपक्षे चतुर्दशी ।
पूर्वविद्धा न कर्त्तव्या कर्त्तव्या परसंयुता ॥

इति (ब्रह्मवैवर्त्ताच्च)

तथा च (स्मृतिसंग्रहे)

शरन्महाष्टमी पूज्या नवमीसंयुता सदा ।
सप्तमीसंयुता नित्यं शोकसन्तापकारिणी ॥
जम्भेन सप्तमीयुक्ता पूजिता तु महाष्टमी ।
इन्द्रेण निहतो जम्भस्तस्माद्दानवपुङ्गवः ॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सप्तमीमिश्रिताऽष्टमी ।
वर्जनीया प्रविज्ञाय मनुजैः शुभकाङ्क्षिभिः ॥
सप्तमीं शल्यसंयुक्तां मोहादज्ञानतोऽपि वा ।
महाष्टमीं प्रकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ॥
सप्तमी कलया यत्र परतश्चाष्टमी भवेत् ।
तेन शल्यमिदं प्रोक्तं पुत्रपौत्रक्षयप्रदम् ॥

तथा ।

पुत्रान् हन्ति पशून् हन्ति हन्ति राष्ट्रं सराजकम् ।
हन्ति जातानजातांश्च सप्तमीसहिताऽष्टमी ॥

(निर्णयामृते) स्मृत्यन्तरवचनम् ।

नाष्टमी सप्तमीयुक्ता सप्तमी नाष्टमीयुता ।
नवम्या सह कार्या स्यादष्टमी सर्वथा बुधैः ॥

तत्रैव ।

अष्टमी नवमीयुक्ता महोत्साहो महोत्सवः ।

इति (देवीपुराणे)

सप्तमी वेधसंयुक्ता यैः कृता तु महाष्टमी ।
पुत्रदारधनैर्हीना भ्रमन्तीह पिशाचवत् ॥

(भोजराजीये)

उमाया नवमी प्रोक्ता हरस्य तिथिरष्टमी ।
द्वयोरैक्ये महापुण्या उमामाहेश्वरी तिथिः ॥

(मदनरत्ने स्मृतिसमुच्चये)

सप्तमी शल्यसंविद्धा वर्जनीया महाष्टमी ।
स्तोकाऽपि सा महापुण्या यस्यां सूर्योदयो भवेत् ॥

स्तोकाऽपीति घटिकामात्राऽपीत्यर्थः । अत एव घटिकामात्राऽप्यष्टम्यौदयिकी ग्राह्या ।

व्रतोपवासनियमे घटिकैकाऽपि या भवेत् ।

इति देवलोक्तेरिति निर्णयसिन्धुकृतः । गौडा अप्येवमेवाहुः ।

एवं च सप्तमीवेधः कलारूपोऽप्यष्टमीवर्जनप्रयोजको न तु त्रिमुहूर्त्तेति द्रष्टव्यम् ।

समयप्रकाशादिग्रन्थकारास्तु त्रिमुहूर्त्ताऽष्टम्येव सप्तमी वर्जनप्रयोजिका न तु ततो न्यूना । स्तोकाऽपीत्यादीनि वचनान्यत्रयवद्वारा त्रिमुहूर्त्तं स्तुवन्ति तेनाष्टमी परदिने यदि मुहूर्त्तत्रयान्न्यूना तदा सप्तमीयुता पूर्वैव ग्राह्येत्याहुः ।

कलाकाष्ठा घटिकामुहूर्त्तद्विमुहूर्त्तवचांसि त्रिमुहूर्त्तप्रशंसापराणीति निबन्धव्याख्याकारोऽपि बभाण ।

यत् तु—

महाष्टम्याश्विने मासि शुक्ला कल्याणकारिणी ।
सप्तम्याऽपि युता कार्या मूलेन तु विशेषतः ॥

इति वचनं तत् परदिनेऽष्टम्यभावविषयम् ।
तदुक्तं (निर्णयामृते देवीपुराणे)

उत्तरास्तिथयो यत्र क्षयं यान्ति नराधिप ।
तदा पूर्वाष्टमीं कुर्यादन्यथा त्वशुभं भवेत्-इति ॥

यच्च-

यदाऽष्टमीं तु सम्प्राप्य ह्यस्तं याति दिवाकरः ।
तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यान्न कुर्यादपरेऽहनि ॥
दुर्भिक्षं तत्र जानीयान्नवम्यां यत्र पूज्यते ।

इति परदिनेऽष्टमीसत्त्वेऽपि पूर्वविद्धाविधायकं वचनं तत् परदिने नवम्यभावविषयम्।

यदा सूर्योदये न स्यान्नवमी चापरेऽहनि ।
तदाऽष्टमीं प्रकुर्वीत सप्तम्या सहितां नृप ॥

इति (स्मृतिसंग्रहात्)
यत् तु-

सप्तम्यामुदिते सूर्ये परतो याऽष्टमी भवेत् ।
तत्र दुर्गोत्सवं कुर्यान्न कुर्यादपरेऽहनि ॥

इति परविद्धाष्टमीनिषेधकविश्वरूपनिबन्धवचनं तदाश्विनकृष्णपक्षनवम्यां विहिते देवीबोधने तदङ्गत्वेन कृष्णाष्टम्यां क्रियमाणदेवीपूजाविषयम् ।

कृष्णपक्षेऽष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी ।
पूर्वविद्धा तु कर्त्तव्या परविद्धा न कुत्र चित् ॥
उपवसादिकार्येषु एष धर्मः सनातनः ।

इति कृष्णाष्टम्याः परविद्धाया एव प्राशस्त्यविधानादिति* निबन्धव्याख्याकृतः । निर्णयामृतेऽप्येवमाह ।
यानि च-

---

* इत्यापस्तम्बवचनेन कृष्णाष्टम्याः पूर्वविद्धाया एव विधानादिति । इति ४ पु० पा० ।

अहं भद्रा च भद्राऽहं नावयोरन्तरं क्वचित् ।
सर्वसिद्धिं प्रदास्यामि भद्रायामर्चिताऽप्यहम् ॥

तथा ।

महाष्टम्यां भगवती भद्रायामपि पूजिता ।
ददाति चायुरारोग्यं यतो भद्रास्वरूपिणी ॥

इत्यादीनि (देवीपुराण-) वचनानि तानि तु विष्टिकरणमध्ये पूजाविधानार्थानि ।

विष्टिं त्यक्त्वा महाष्टम्यां मम पूजां करोति यः ।
तस्य पूजाफलं न स्यात् तेनाहमवमानिता ॥

इति देवीवाक्यात् ।

भद्रायां भद्रकाल्याश्च मध्ये स्यादर्चनक्रिया ।
तस्माद्वै सप्तमीविद्धा कार्या दुर्गाष्टमी बुधैः ॥

इति वचनं तु पूर्वदिनेऽष्टम्यभावविषयमिति सर्वसम्मतम् ।
महाष्टमी भौमवारान्विता चेदतिप्रशस्ता ।
तदुक्तं (मदनरत्ने)

अष्टम्यामुदिते सूर्ये दिनान्ते नवमी भवेत् ।
कुजवारो भवेत् तत्र पूजनीया प्रयत्नतः-इति ॥

मूलयुक्तेयमतिप्रशस्तेत्युक्तं (स्कान्दे)

महाष्टमी मूलयुक्ता त्रैलोक्येऽपि सुदुर्लभा-इति ।

मूलयुक्ताऽपि सप्तमीविद्धा चेत् त्याज्यैवेत्युक्तं (दुर्गोत्सवे)

मूलेनापि हि संयुक्ता सदा त्याज्याऽष्टमी बुधैः ।
लेशमात्रेण सप्तम्या अपि स्याद्यदि दूषिता-इति ॥

यदा तु पूर्वदिने सम्पूर्णा सती परदिने वर्धते तदा संपूर्णत्वात् सप्तमी योगाभावाच्च पूर्वैव ग्राह्या न तूत्तरा ।

षष्टिदण्डात्मिकायाश्च तिथेर्निष्क्रमणे परे ।
अकर्मण्यं तिथिमलं भवेदेकादशीं विना-इति स्मार्त्तवचनात् ॥

एवं च-

सप्तमी कलया युक्ता वर्जनीया महाष्टमी ।

इत्यादिवाक्यैः पूर्वविद्धाया निषेधात् परविद्धैव महाष्टमीति सिद्धम् ।
शुद्धायां तु न कश्चित् संदेहः ।
के चित् तु–

तत्राष्टम्यां भद्रकाली दक्षयज्ञविनाशिनी ।
प्रादुर्भूता महाघोरा योगिनीकोटिभिः सह ॥
अतोऽर्थं पूजनीया सा तस्मिन्नहनि मानवैः ।
त्रिसन्ध्यं पूजयेद्देवीं जपस्तोत्रपरायणः ॥

इत्यादिवाक्यविहितायां दिवातनपूजायां परविद्धाऽष्टमी ग्राह्या ।

आश्विनस्य सिते पक्षे या तु स्यात् तिथिरष्टमी ।
तस्यां रात्रौ पूजनीया महाविभवविस्तरैः ॥

इत्यादिवचनप्राप्तायां रात्रिपूजायां त्वष्टम्यां रात्रियोग एवादरणीयः ।

कर्मणो यस्य यः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः ।
तया कर्माणि कुर्वीत ह्रासवृद्धी न कारणम् ॥

इति वचनादित्याहुः । महाष्टमीकृत्यमग्रे वक्ष्यते ।
अथ महानवमी निर्णीयते । सा च पूर्वयुता ग्राह्या वसुरन्ध्रयोरिति युग्मवाक्यात् ।

अष्टम्या सहिता कार्या सा महानवमी तिथिः ।

इति ( बृहत्सिद्धान्तसाराच्च )

अष्टम्या सहिता रिक्ता न कदा चित् परायुता ।

इति * ( लघुतिथिनिर्णये मत्स्यपुराणाच्च )
पैठीनसिरपि ।

प्रतिपन्नवमी चैव कर्त्तव्या संमुखी तिथिः ।

संमुखी सायाह्नव्यापिनी ।
( ब्रह्मवैवर्त्ते )

अष्टम्या नवमी विद्धा कर्त्तव्या फलकाङ्क्षिभिः ।

( पाद्मे )

अष्टमी नवमीयुक्ता नवमी चाष्टमीयुता ।

---

* लघुतिथिनिर्णये यमपुराणे इति ४ पु० पा० ।

(मात्स्ये)

अष्टम्या सहिता रिक्ता प्रकर्त्तव्या सदा बुधैः ।
पूर्णायुक्तां तदा कुर्यात् का चिन्नास्त्यष्टमीयुता ॥

(*हेमाद्रौ पाद्मे)

श्रावणी दुर्गनवमी दूर्वा चैव हुताशनी ।
पूर्वविद्धा च कर्त्तव्या शिवरात्री बलेर्दिनम् ॥

(भविष्ये)

अश्वयुक् शुक्लपक्षे तु याऽष्टमी मूलसंयुता ।
सा महानवमी नाम त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ॥

अष्टमीमूलाभ्यां युक्तेत्यर्थः । मूलेत्युपलक्षणम् ।

तथा च (मदनरत्ने लैङ्गे)

दुर्गापूजासु नवमी मूलाद्यृक्षत्रयान्विता ।
महती कीर्त्तिता तस्यां दुर्गां महिषमर्दिनीम् ॥

पूजयेदिति शेषः ।

अष्टम्या नवमी विद्धा नवम्या चाष्टमी तथा ।
मूलादिभत्रयेणाद्या त्रैलोक्येऽपि प्रपूजिता—इति ॥

अत्र मुहूर्त्तत्रयात्मको वेधो वेदितव्यः ।

तदाह पैठीनसिः ।

पक्षद्वयेऽपि तिथयस्तिथिं पूर्वां तथोत्तराम् ।
त्रिभिर्मुहूर्त्तैर्विध्यन्ति सामान्योऽयं विधिः स्मृतः—इति ॥

यद्यपि—

उदिते दैवतं भानौ पित्र्यं चास्तमिते रवौ ।
द्विस्त्रिर्मुहूर्त्तमह्नो यः सा तिथिर्हव्यकव्ययोः ॥

इति (हेमाद्रौ विष्णुधर्मे) मुहूर्त्तद्वयात्माऽपि वेध उक्तस्तथाऽपि प्रातरेव सः ।
सायं तु त्रिमुहूर्त्त एव वेधः ।

---

* यद्यपि यमपुराणादिवचनानि नवमीसामान्यपराणि तथाऽपि प्रकृताविरुद्धतया निबन्धव्याख्यायामुदाहृतानि ।

तथा च इत्यन्यथा पा० ४ पु० ।

तदुक्तं (स्कान्दे)

यां तिथिं समनुप्राप्य यात्यस्तं पद्मिनीपतिः ।
सा तिथिस्तद्दिने प्रोक्ता त्रिमुहूर्त्तैव या भवेत्-इति ॥

सूर्योदयेऽपि द्विमुहूर्त्तत्वमनुकल्प एव ।

द्विमुहूर्त्ताऽपि कर्त्तव्या या तिथिर्वृद्धिगामिनी ।

इति दक्षेणापि-शब्दग्रहणात् ।
निर्णयसिन्धुकृतोऽपि त्रिमुहूर्त्तयोगे पूर्वा नवमी पूर्वोक्तवचनात् ।

न कुर्यान्नवमीं तात दशम्या तु कदा चन ।

इति (स्कान्दे) परानिषेधाच्च । त्रिमुहूर्त्तयोगाभावे तु निषिद्धाऽपि परैव ग्राह्या ।

व्रतोपवासनियमे घटिकैकाऽपि या भवेत् ।
सा कार्योदयगामिन्याम् ... ... ... ॥

इत्यादिवचनानि नवमीभिन्नतिथिपराणि नवम्यां विशेषोक्तेरित्याहुः ।
यद्यप्येवं निर्णयः प्रामाणिकैः कृतस्तथाऽपि ।

तत्राश्वयुक्तनवमी मुहूर्त्तं वा कला यदि ।
सा तिथिः सकला ज्ञेया लक्ष्मीविद्याजयार्थिभिः ॥

इति (सौरपुराणात्)

अष्टम्यामुदिते सूर्ये दिनान्ते नवमी भवेत् ।
प्रभाते वलिदाने तु कियन्मात्राऽपि लभ्यते ॥
नवम्यां तत्र सम्पूज्य दुर्गां दुर्गार्त्तिनाशिनीम् ।

इति (सिद्धान्तसंग्रहो-)दाहृतवचनात् ।

सूर्योदये परं रिक्ता पूर्णा स्यात् परतो यदि ।
वलिदानं प्रकर्त्तव्यं तस्मिन् देशे शुभावहम् ॥
वलिदाने कृतेऽष्टम्यां *पुत्रभङ्गो भवेन्नृप ।

इति (देवीपुराणाच्च) वलिदाने परविद्धायाः प्राशस्त्यमेवावगन्तव्यम् । उपवासे तु पूर्वैव पूर्वोक्तवचननिचयात् ।

---

* राष्ट्रभङ्गो-इति ४ पु० पा० ।

एकादशी च नवमी दिशा विद्धा भवेद्यदि ।
तदा वर्ज्या प्रयत्नेन गङ्गाम्भः सुरया यथा ॥
नवमी दशमी चैव नोपोष्या परसंयुता ।

इति (पाद्मब्रह्मवैवर्त्तयोः) उपवासे परानिषेधाच्च । पूजाङ्गवलिदानमष्टम्यामपि कर्त्तव्यम् ।

अष्टम्यामधिकं देयं सप्तमीवलिदानतः ।

इति महाकालोक्तेः ।

किन्तु प्रभूतवलिदानं तत्र निषिद्धम् ।

प्रभूतवलिदानं तु न कुर्यान्नवमीं विना ।

इति भैरवोक्तेः ।

नवम्यामुदयव्यापिन्यां प्रभूतवलिदानमुक्तं (भविष्ये)

एवं हृष्टैर्निशां नीत्वा प्रभाते अरुणोदये ।
घातयेन्महिषान् मेषान् रटतो नतकन्धरान् ॥
शतमर्धशतं वाऽपि तदर्धं वा यथेच्छया-इति ।

निशामष्टमीरात्रिम् । अरुणोदयः सूर्योदय इत्यर्थः ।

सूर्योदये नवम्यां तु दद्याद्बलिमतन्द्रितः ।

इति तन्त्रान्तरसंवादात् ।

अरुणो भास्करेऽपि स्यात् ... ... ... ।

इति (अमरकोषाच्च)

यानि तु-

नन्दायां ज्वलते वह्निः पूर्णायां पशुघातनम् ।
भद्रायां गोकुलक्रीडा राज्यनाशाय जायते ॥
नवम्यामपराह्णे तु वलिदानं प्रशस्यते ।
दशमीं वर्जयेत् तत्र नात्र कार्या विचारणा ॥

इत्यादीनि (ब्रह्मवैवर्त्तादि-) वचनानि तानि शुद्धाधिकनिषेधपराणीति दिक् ।

नवमीकृत्यमग्रे वक्ष्यते ।

अथ विजयादशमी निर्णीयते । सा च देवीविसर्जनव्यतिरिक्तकर्मसु तारकोदयव्यापिनी ग्राह्या ।

ईषत्सन्ध्यामतिक्रान्तः किञ्चदुद्भिन्नतारकः ।
विजयो नाम कालोऽयं सर्वकार्यार्थसिद्धिदः ॥

इति (ज्योतिर्निबन्धे) नारदवचनात् ।
दिनद्वये नक्षत्रोदयव्यापिन्या दशम्याः सत्त्वे पूर्वा ।

या पूर्णा नवमीयुक्ता तस्यां पूज्याऽपराजिता ।
क्षेमार्थं विजयार्थं च पूर्वोक्तविधिना नरैः ॥
नवमीशेषयुक्तायां दशम्यामपराजिता ।
ददाति विजयं देवी पूजिता जयवर्धिनी ॥

इति (हेमाद्रौ स्कन्दात्) निर्णयसिन्धुमते तूत्तरा ।

दशम्यां तु नरैः सम्यक् पूजनीयाऽपराजिता ।
ऐशानीं दिशमाश्रित्य चापराह्णे प्रयत्नतः ॥

इति (स्कान्दात्) अपराह्णव्याप्तेराधिक्यात् । असत्त्वे तु एकादशमुहूर्तव्यापिनी ग्राह्या ।

आश्विने शुक्लपक्षे तु या भवेद्दशमी तिथिः ।
एकादशमुहूर्त्ता सा ग्राह्या श्रवणसंयुता—इति धौम्योक्तेः ॥
आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां सर्वरात्रिषु ।
सायंकाले शुभा यात्रा दिवा वा विजयक्षणे ॥
एकादशो मुहूर्त्तोऽपि विजयः परिकीर्तितः ।
तत्र सर्वैर्विधातव्या यात्रा विजयकाङ्क्षिभिः ॥

इति भृगुवचनाच्च ।
दिनद्वये तद्व्याप्तौ पूर्वतारकोदयव्याप्तेराधिक्यात् ।
यदा तु परदिने स्वल्पाऽपि श्रवणयुक्ता तदा यात्रायां परैवोपादेया ।

उदये दशमी किंचित् संपूर्णैकादशी यदि ।
श्रवणर्क्षं यदा काले सा तिथिर्विजयाभिधा ॥
श्रवणर्क्षे तु पूर्णायां काकुत्स्थः प्रस्थितो यतः ।

उल्लङ्घयेयुः सीमानं तद्दिनर्क्षे ततो नराः ॥

इति (हेमाद्रौ) काश्यपोक्तेः।

एवमुक्तलक्षणाया दशम्याः परदिने सत्त्वे देवीविसर्जनेऽपि परैव ग्राह्या।

* प्रातरेव दशम्यां च श्रवणर्क्षे विसर्जने।

विसर्जनं तु तद्दुष्टं लक्ष्मीविद्या बलक्षयम् ॥

(तिथिनिर्णये देवीपुराणे) पूर्वानिषेधात्।

अत एव नारदः।

सूर्योदये यदा राजन् दृश्यते दशमी तिथिः।

आश्विने मासि शुक्ले तु विजयां तां विदुर्बुधाः ॥

इति श्रवणान्वितायां दशम्यां केवलायामेव दशम्यां वा विसर्जनं कार्यम्।

तत्तन्नक्षत्रयोगे तु फलभूमा प्रजायते।

नक्षत्राणामलाभे तु केवलायां तिथौ चरेत् ॥

इति महाकालोक्तेः।

तिथिः शरीरं तिथिरेव कारणं तिथिः प्रमाणं तिथिरेव साधनम्।

इति लल्लवचनाच्च।

परदिने दशम्यसत्त्वे तु पूर्वदिन एव दशमीभागे विसर्जनं कार्यम्।

सम्प्रेषणं दशम्यां तु क्रीडाकौतुकमङ्गलैः।

इति (नन्दिकेश्वरपुराणात्)

स्थापनविसर्जनयोर्लग्नमाह।

क्रूरे च स्थापयेद्देवीं चरलग्ने तु चालयेत्।

(महाकालसंहितायाम्)

शरदर्चाविधौ देव्याः स्थापनं च विसर्जनम्।

चरलग्ने चरांशे वा कुर्यात् सर्वसमृद्धये ॥

अन्यलग्नेऽन्यांशके वा विपरीतफलप्रदम्।

इत्युक्तं तन्त्रान्तरे।

ततो विसर्जयेद्देवीं स्तुत्वा नत्वा पुनः पुनः।

---

* नवम्यां दशमी मिश्रा नापि देवीविसर्जनम् इति २-३-५ पु० पा०।

श्रवणस्यान्तिमे पादे दशम्यां शावरोत्सवैः ॥

श्रवणानुरोधेन रात्रौ विसर्जनं न कर्त्तव्यमिति प्रागेवोक्तम् ।
( तिथितत्त्वे देवीपुराणे )

प्रातरावाहयेद्देवीं प्रातरेव प्रवेशयेत् ।

प्रातरेव च सम्पूज्य प्रातरेव विसर्जयेत् ॥

एतद्विसर्जनं परविद्धायामिति ज्ञेयम् ।
तथा ।

वर्षे वर्षे विधातव्यं स्थापनं च विसर्जनम् ।

तन्त्रान्तरे ।

ततोऽपराह्ने सम्पूज्य श्रवणे चापराजिताम् ।

प्रस्थानं नृपतिः कुर्यात् सामात्यबलवाहनः ॥

एतयोर्विधिरग्रे वक्ष्यते ।

प्रस्थानं च दशमीमुल्लङ्घ्य एकादशीभागे न कार्यम् ।

दशमीं यः समुलङ्घ्य प्रस्थानं कुरुते नृपः ।

तस्य तं वत्सरं राज्ये न क्वापि विजयो भवेत् ॥

इति ( निर्णयामृते स्कान्दात् )

उदये दशमी किञ्चित्–इत्यादिकाश्यपोक्तेस्तु दशम्याः कर्मकालव्याप्तिरपि नापेक्षितेति प्रतिभाति तेनेदं स्कान्दवचनं श्रवणशून्यदशमीविषयम् ।

इति दशमीनिर्णयः ।

अथाशौचे विशेषो ( विश्वरूपनिबन्धे )

आश्विनस्य सिते पक्षे प्रारब्धे नवरात्रके ।

शावे शौचे समुत्पन्ने क्रियाः कार्याः कथं बुधैः ॥

सूतके वर्त्तमाने च तत्रोत्पन्नं यदा भवेत् ।

देवीपूजा प्रकर्त्तव्या पशुयज्ञविधानतः ॥

सूतके पूजनं प्रोक्तं दानं चैव विशेषतः ।

देवीमुद्दिश्य कर्त्तव्यं तत्र दोषो न विद्यते ॥

विष्णुः ।

व्रते यज्ञे विवाहे च श्राद्धे होमेऽर्चने जपे ।

प्रारब्धे सूतकं न स्यादनारब्धे तु सूतकम् ॥

तन्त्रेऽपि ।

सूतकेऽत्र समुत्पन्ने प्रारब्धं न त्यजेद्बुधः—इति ।

प्रारब्ध इति आरम्भश्चात्र सङ्कल्परूपः ।

सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः ... ... ... ... ।

इति विष्णूक्तेः ।

आरब्धे स्वयमेव देवीपूजादि कुर्यात् । अनारब्धे त्वग्निहोत्रादिवत् कारयितव्यमिति सर्वंतत्र । रजस्वलाऽन्येन कारयेदिति विशेषवचनाभावात् ।

तदुक्तं (मात्स्ये)

अन्तरा तु रजोयोगे पूजामन्येन कारयेत्—इति ।

तत्र पूजादिकं प्रवृत्तिरूपं कर्म पुत्रादिद्वारा निर्वाह्यम् । उपवासादिकं स्वयमेव कर्त्तव्यं निवृत्तावशौचस्याकिञ्चित्करत्वात् ।

तत्राहाङ्गिराः ।

नियमस्था यदा नारी प्रपश्येदन्तरा रजः ।

उपोष्यैव तु ता रात्रीः स्नात्वा शेषं चरेद्व्रतम्—इति ॥

अत्र पारणाहे सूतकादिप्राप्तौ तदतिक्रम्य पारणं कुर्यादिति केचित् तदसत् ।

सूतके पारणं कुर्यान्नवम्यां होमपूर्वकम् ।

तदन्ते भोजयेद्विप्रान् दानं दद्याच्च शक्तितः ॥

इति (रुद्रयामलो-)क्तवचनेन सूतकेऽपि पारणविधानात् । गौडाख्यसम्प्रदायमभिप्रेत्य नवम्यामित्युक्तेः ।

तदुक्तं (प्रकटयोगिनीमते)

गौडाख्यसम्प्रदाये तु नवम्यां पारणं भवेत् ।

वर्जयेत् तां दिशा विद्धां काश्मीरे सैव शोभना ॥

कैरलाख्ये सम्प्रदाये दशम्यामेव पारणमिति (शक्तिसङ्गमे-)ऽप्येवम् । सैव शोभनेति काश्मीरसम्प्रदाये दशमीविद्धैव नवमी प्रशस्तेत्यर्थः । गौडसम्प्रदायिभिस्तु नवम्यां दशमीयुक्तायां पारणं न कार्यम् ।

यो मोहाद्दशमीवेधे नवम्यां चण्डिकां यजेत् ।

पारणं च प्रकुर्याद्वै तस्य पुण्यं निरर्थकम्—इति तत्रैवोक्तम् ॥

यजननिषेधस्तु पूर्वदिने कर्माहंनवमीलाभे वेदितव्यः। दशम्यां पारणं कुर्यात्-इति मुण्डमालावचनं तु पुरश्चरणविषयम्। सम्प्रदायप्रभेदप्रयुक्तेतिकर्त्तव्यताभेदास्तु नवमतरङ्गे स्फुटोक्ताः*।

निर्णयसिन्धुकृतस्तु नवम्यां पारणं विधायकान्येतदादिवचनानि निर्मूलान्येव समूलत्वाभिमाने तु लोहाभिसारिकपराणि तस्याष्टमीपर्यन्तमेवोक्तेः।

नवरात्रव्रतस्य नवमीपर्यन्तकर्त्तव्यताकतया दशम्यामेव नियमपारणा कार्येत्याहुः।

अथेयं शारदी पूजा नित्या। अकरणे प्रत्यवायश्रवणादिति केचित्।

शरदागमनिमित्तकत्वान्नैमित्तिकीत्यन्ये।

नानाविधफलश्रुतेः काम्येत्यपरे।

वस्तुतस्तु-

नित्यकाम्यरूपेयं न तु नैमित्तिकी।

अन्यथा कार्यमात्रं प्रति कालस्य हेतुतया नित्यस्यापि कर्मणो नैमित्तिकत्वापत्तेरित्युक्तं (महाकालसंहितायाम्)

यथा।

अधुना कथयिष्यामि सरहस्यं विशेषतः।
शारदीयां च वासन्तीमर्चां नानाफलप्रदाम्॥
मनीषिणो विदधति विचारानत्र भूयशः।
स्मृत्यध्वचारिणः सर्वे कौलिकाः सर्व एव च॥
त्रैविध्यमध्ये किंरूपाः भवतीयं समर्हणा।
यस्याकरणतः पापं जायते नित्यमेव तत्॥
विधानाद्यस्य च फलं जायते काम्यमेव तत्।
अननुष्ठानतो यस्य पापमुत्पद्यते परम्॥
विधानाच्च फलं वाऽपि तन्नैमित्तिकमुच्यते।
इयं या शारदी पूजा कथ्यते सा किमात्मिका॥
केचित् काम्यां वदन्त्येनां केचिन्नैमित्तिकीमपि।
पूर्वं फलश्रवणतः शरदागमनात् परे॥

---

* द्रष्टव्यमस्यैव ग्रन्थस्य पृ० ८६६।

नित्यामेनामेव केचिद्वदन्ति कुलमार्गगाः ।

तथा ।

त्रिपुरघ्नाय यद्वाक्यं पुरोवाच सुरेश्वरो ।
शारदीयामिमां पूजां न करिष्यन्ति ये नराः ॥
ते पतिष्यन्ति निरये पापाः पूजापहारकाः ।
इत्यादिवाक्यान्नित्यत्वमभिधानादथ श्रुतेः ॥
घटते काम्यता चास्यास्तत्र हेतुं वदामि ते ।
अत्रापि चण्डिकावक्त्राम्बुजोद्भूतसुधासमम् ॥
वचः कलय कल्याणि काम्यताप्रतिपादकम् ।
शरत्कालीनपूजां ये कर्त्तारो भक्तिभाविताः ॥
तेषां दारान् सुतान् भोगं वित्तमारोग्यमुन्नतिम् ।
तुष्टा दास्याम्यहं शम्भो स्वर्लोके वसतिं सदा ॥
इत्थं नानाफलोल्लेखश्रवणात् काम्यताऽपि च ।
शरदागमनं हेतुमुपन्यस्यास्य ये बुधाः ॥
नैमित्तिकत्वं ब्रुवते न ते पण्डितबुद्धयः ।
कालो न स्यादुपादानकारणं कस्य वस्तुनः ॥
तदागमनहेतुत्वे नित्यस्यापि न नित्यता ।
अकृते जायते नैनः कृते च न भवेत् फलम् ॥
नैमित्तिकस्येदृशं हि ब्रुवाणैर्लक्षणं प्रिये ।
फलाव्याधायके किं नो दृश्येते वचने उभे ॥
तस्मादत्र हि विज्ञेयं नित्यकाम्यत्वमीश्वरि ।
यथा च शारदीयार्चा वासन्त्यर्चा तथैव च ॥
नानयोर्विद्यते भेदः स्वल्पोऽपि निगमादिषु ।

शारदोत्सवनिदानमाह ।

आसीत् पूर्वं महापूजा वासन्त्येव जगत्त्रये ।
रामरावणयोर्युद्धे जाते त्रेतायुगान्तरे ॥
कालिकाङ्गीतकृत्त्वेन हन्तुं रामोऽशकन्न तम् ।
ततो वै चिन्तितो भूत्वा ब्रह्मा सुरगणैर्वृतः ॥
कालिकां बोधयामास हिमालयकृतालयाम् ।
त्वदुपासकयोर्देवि युध्यतोर्घोरमाहवे ॥
अस्त्रशिक्षां लाघवं च समागत्यावलोकय ।
एवमभ्यर्थिता देवी अकाले बोधिता तथा ॥
जगाम ब्रह्मणा सार्धं लङ्कां द्रष्टुं रणं तयोः ।
शुक्लप्रतिपदीषस्य प्राप्ता तं देशमीश्वरी ॥
सप्तरात्रं निराहारं महद्युद्धमहर्निशम् ।
तयोर्दिव्यास्त्रप्रयोगसंहारपरयोरभूत् ॥
रामः शशाक नो हन्तुं राक्षसं काल्युपासकम् ।
स चापि नाशकद्रामं स्वयं विष्णुमुपागतम् ॥
समीक्ष्य राक्षसो बाहुबलं देवीं तुतोष ह ।
स्वभक्त इति कृत्वाऽस्मिन् पक्षपातं चकार च ॥
रक्षस्यनुग्रहं दृष्ट्वा ब्रह्मा सर्वैः सुरैः सह ।
संतुष्टाव स्तवैर्दिव्यैर्भक्त्या प्रणतकन्धरः ॥
काकूक्त्या प्रणिपातैश्च नमस्कारैः स्तवैरपि ।
तुष्टा ब्रह्माणमूचे सा हृत्स्थं वत्स वरं वृणु ॥
वरं वव्रे ततः सार्धं त्रिदशैश्च चतुर्मुखः ।
त्वत्पादयोर्भक्तमपि त्यजैनं दुष्टराक्षसम् ॥
मय्यनुग्रहलेशेन विष्णोर्मान्यतयाऽपि च ।

कृपादृष्ट्या च देवेषु धर्मसंस्थापनाय च ॥
त्रिलोकी जायतां सुस्था देवाः सन्तु मखाशिनः ।
तपस्तपन्तु मुनयश्चातुर्वर्ण्यं प्रवर्त्तताम् ॥
एष वीरजिताँल्लोकाञ्छक्रपूतश्च गच्छतु ।
पूजां प्रवर्त्तयिष्यामि तव देव्यमरैः सह ॥
तिथिमाद्यां समारभ्य यावद्रक्षोवधो भवेत् ।
दिनानि नव ते पूजा भविष्यति जगत्त्रये ॥
नवम्यां निहते वीरे रावणे विश्वकण्टके ।
प्रीतिमुत्पादयिष्यामः प्रभूतवलिभिस्तव ॥
अपरेऽह्नि दशम्यां ते नीराजनमहोत्सवम् ।
गीतैर्नृत्यैस्तथा वाद्यैर्जलकर्दमकेलिभिः ॥
अश्लीलवेशवचनैः शस्त्रास्त्ररचनैरपि ।
रथद्विरदवाहानां सज्जनाविधिभिस्तथा ॥
सुराः प्रवर्त्तयिष्यन्ति मनुष्याश्च महीतले ।
भक्तोऽयं रावणो यद्वत् पादयोस्तव कालिके ॥
रामो भविष्यति तथा सदैव तव पूजकः ।
मन्त्रः कोऽपि च ते देवि रामोपासितसंज्ञया ॥
सद्यस्तव प्रीतिकरः ख्यातिं जगति यास्यति ।
इत्युक्त्वा ब्रह्मणा काली बभूवास्य पराङ्मुखी ॥
ततो जघान दिव्यास्त्रै राघवो रावणं रणे ।
तत आरभ्य देवेशि शारदार्चा प्रवर्त्तिता ॥
अत एव द्वयो कार्या वासन्ती शारदी तथा ।
केषांचिदपि वासन्त्यां मतभेदो न विद्यते ॥

शारद्यां तु त्रयो भेदाः कथ्यन्ते ते मयाऽधुना ।
आश्विनाशितपक्षस्य नवमी या शिवर्क्षयुक् ॥
बोधयित्वेश्वरीं तस्यां शरदर्च्चनमाचरेत् ।
यावत् स्यान्नवमी शुक्ला तावत् पूजा प्रवर्त्तते ॥
इत्येकः पक्ष उदितो द्वितीयमवधारय ।
प्रतिपद्येव शुक्लायां बोधयित्वा सुरेश्वरीम् ॥
अभ्यर्च्चयेन्नवाहानि तन्त्रपौराणिकक्रमैः ।
उदीरितो द्वितीयोऽयं तृतीयं कथयाम्यथ ॥
सायाह्ने विल्वशाखायां षष्ठ्यां देवीं प्रबोधयेत् ।
प्रातः प्रवर्त्तते पूजा सप्तम्यादिदिनत्रये ॥
त्रैविध्य ईदृश्यर्च्चाया विवदन्ते मिथो बुधाः ।
ब्रवीमि तत्र सिद्धान्तं छिन्नं येन तमो भवेत् ॥
रम्भकल्पे पुरा देवी रम्भासुरतनूद्भवम् ।
अष्टादशभुजा भूत्वा महाघोरतराकृतिः ॥
उग्रचण्डा स्वरूपेण जघान महिषासुरम् ।
सितेन करवालेन मृतमेनं जहौ तथा ॥
पतितं च क्षितावस्य व्यशीर्यत कलेवरम् ।
नीललोहितकल्पे तु पुनरेव व्यजायत ॥
उद्वेगकृद्देवतानां तथा यज्ञविनाशकृत् ।
इति कृत्वा महामाया भद्रकाली वपुर्धरा ॥
सम्भूय षोडशभुजा विशिषेण शितेन हि ।
अवधीत् तं पुनश्चापि तत्याज गलितं भुवि ॥
श्वेतवाराहकल्पादावजायत पुनः स हि ।

जैगीषव्यप्रसादेन पूर्वजातिस्मरोऽभवत् ॥
वारद्वयं हतं ज्ञात्वा देव्यात्मानं पुराऽसुरः ।
स्वीत्रध्यतां च विज्ञाय स्वस्यामुष्यां जनावपि ॥
कात्यायनमुनेः शापात् स्वप्नदर्शनतोऽपि च ।
एकान्ते भक्तिमास्थाय त्रिविधां महिषासुरः ॥
आराधयामास कालीं स्वोदर्कपरिशुद्धये ।
दिव्यद्वादशसाहस्रवर्षानन्तरमीश्वरी ॥
प्रत्यक्षमागता तस्य वरं वृण्विति चाब्रवीत् ।
ततोऽसुरः स ऊचे तां निरीक्ष्य पुरतः स्थिताम् ॥
वरं पश्चाद्ग्रहीष्यामि देवि त्वत्तो मनोगतम् ।
आदौ मे संशयं छिन्धि जागरूकं हृदि स्थितम् ॥
वारद्वयं मामवधीः सुरारिरणमूर्धनि ।
धृत्वा कां कामाकृतिं त्वमघोरामथ भीषणाम् ॥
जन्मन्यस्मिन्नपि पुनः केनाकारेण कालिके ।
मां हनिष्यसि दुर्वृत्तं निखिलामरकण्टकम् ॥
निशम्येदृग्वचस्तस्य विहस्य जगदम्बिका ।
चालयन्ती शिरः किञ्चिदुवाच मधुराक्षरम् ॥
मदीयतादृशाकारदर्शनेन फलं तव ।
किं भविष्यति दैत्येन्द्र किन्तु त्रासमवाप्स्यसि ॥
दिदृक्षसे चेदथ तां करालामाकृतिं मम ।
पश्येत्युक्त्वा जगद्धात्री विहाय ललितं वपुः ॥
उग्रचण्डा तनूरूपं दर्शयामास दानवम् ।
ज्वालाकरालवदनमष्टादशभुजान्वितम् ॥

दिव्यशस्त्रास्त्रकलितं मुण्डमालाभयङ्करम् ।
विदीर्णसृक्कयुगलं घोरदंष्ट्रातिभीषणम् ॥
चलत्सौदामिनीतुल्यरसनं नाददारुणम् ।
तद्रूपं दितिजो वीक्ष्य न्यमीलयत लोचने ॥
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रत्युवाच च कालिकाम् ।
घोरमीदृशमाकारं न शक्नोमि तवेक्षितुम् ॥
त्रैलोक्यत्रासनं रूपं देवि संहर संहर ।
इत्युक्ताऽसुरराजेन पुनः सा प्राकृतं वपुः ॥
कृत्वा तं दर्शयामास ततः सुस्थो बभूव सः ।
भद्रकाली वपुर्भूत्वा पुनः सा परमेश्वरी ॥
निरीक्षयामास रूपं द्वितीयं जीवनापहम् ।
तद्रूपदर्शनेऽप्येष पुनस्त्रासमुपेयिवान् ॥
तस्यापि परिवृत्तौ स प्राकृतः सम्बभूव ह ।
गतभीरथ तां देवीमुवाच दितिजाधिपः ॥
ईदृशाकारधारिण्या कथं देवि त्वया सह ।
समरे योद्धुमशकमहं वरमदोद्धतः ॥
गरुत्मता सह यथा डुण्डुभस्य रणस्पृहा ।
दावाग्निना पतङ्गानां तिमिरस्य च भास्वता ॥
मृगाणां हरिणा चैव द्रुमाणां वायुना तथा ।
भेकानामहिना चापि प्राणिनां शमनेन च ॥
तद्वद्भवत्या समं मे कथमासीन्महाव्रणः ।
यदतीतमतीतं तदिदानीं ते वरत्रयम् ॥
वृणेऽहं मम तद्देहि मनोरथपदातिगम् ।

एकं सौम्याकारधरा भूत्वाऽस्मिन् जन्मनीश्वरि ॥
त्वं मां वधिष्यसि त्राण हेतोरध्वरभोजिनाम् ।
द्वितीयं ते मच्छिरसि वामपादाम्बुजं सदा ॥
स्थास्यति प्राणयुक्तस्य पश्यतस्त्वन्मुखच्छविम् ।
तृतीयं देवि यज्ञस्य भागं प्राप्नोमि कं चन ॥
इत्येवमुक्ते महिषे वचनेन सुरारिणा ।
उवाच सस्मितं देवी भक्तिप्रणतकन्धरम् ॥
दैत्येन्द्र शृणु मद्वाक्यं यथार्थं मधुराक्षरम् ।
रम्भासुरस्ते जनकस्तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ॥
शङ्करं तोषयामास रम्भकल्पे हिमालये ।
वच उचे हरस्तुष्टो महाभाग वरं वृणु ॥
हित्वा सोऽन्यवरं वव्रे भवान् पुत्रो भवत्विति ।
भक्त्या नियन्त्रितः कार्यगतित्वात् स महेश्वरः ॥
वरं ददौ स आत्मानं पुत्राकृतमनुष्ठ्य हि ।
तस्माज्जातो हि महिषीगर्भे त्वं काममोहितात् ॥
साक्षात् त्वं रुद्र एवासि न सामान्या हराकृतिः ।

तथा ।

शिवस्त्वं वरदानेन रम्भस्य सुततां गतः ।
मन्वन्तरत्रयं साग्रं भुक्तवाँश्च जगत्त्रयम् ॥
अतः परं न वस्तव्यं त्वया दितिजदेहिना ।
स्वपुरं प्रति गन्तव्यं मम लोकादधः स्थितम् ॥
कात्यायनस्य शापाच्च शिरश्छेदनहेतुकात् ।
युक्तकाले स्थास्यति नो भक्तिरेतादृशी तव ॥
कपोतशापादीदृक्षादित्युक्ताः पञ्च हेतवः ।

महिषायेदृशं दत्वा वरमुक्त्वा पुरा कथाम् ॥
सपद्यन्तर्दधे काली वर्षासु चपला यथा ।
देव्यामन्तर्हितायां स सर्वं विस्मृतवान् क्षणात् ॥
बभूव पूर्ववद्दुष्टो यज्ञदेवद्विजन्मनाम् ।
प्रणष्टा भक्तिरस्यापि देव्यामव्यभिचारिणी ॥
पूर्वदत्तमतिर्भ्रष्टा ज्ञानमन्तर्हितं चरेत् ।
इति ते कथितो देवि वृतान्तः पूर्वसम्भवः ॥
सिद्धान्तमनयोर्बोद्धुं रीत्या शक्त्या विचक्षणात् ।
सिद्धान्तनिर्णयकृते कथिताऽऽख्यायिकाऽप्यसौ ॥
इयं हि शारदी पूजा मूर्त्तिभेदात् त्रिधा मता ।
तत्तद्रूव्यमधिष्ठाय नृणां गृह्णाति सार्च्चनम् ॥
येऽष्टादशभुजां देवीमुग्रचण्डाभिधां प्रिये ।
पिपूजयिषवो मर्त्यास्तदुपासकतामिताः ॥
तथाऽऽश्विननवम्यां वै कृष्णायां सुसमाहिताः ।
करवाले बोधयेयुर्मध्याह्ने शङ्खनिःस्वनैः ॥
खगानजान् वा महिषानेणान् वाऽन्यवलीनपि ।
रीतिं संकलितां कृत्वा दद्युः षोडशवासरान् ॥
एषाऽऽद्या महिषालम्भकर्त्तृपूजाविधिर्मतः ।
अथ माध्यमिकः पक्ष इषस्याद्यतिथौ सिते ॥
प्रातः पटहनिःस्वानैः सढक्कानकगोमुखैः ।
ईश्वरीं षोडशभुजां भद्रकालीति नामिकाम् ॥
सम्बोध्य ये पूजयेयुर्दिनानि नव वै प्रिये ।
अपूपमोदकप्रायवलिसंकलितक्रमैः ॥

तृतीयः पक्ष ईदृक्ष उदितस्त्रिपुरारिणा ।
अश्वयुक्सितषष्ठ्यां वै शाखायां विल्वशाखिनः ॥
सायंकाले बोधयित्वा वाद्यैरुच्चावचोद्धतैः ।
दुर्गादेवीमर्च्चयीत सप्तम्यादिदिनत्रये ॥
दशबाहुधरां देवीं महासौन्दर्यशालिनीम् ।
रीतिसंकलिते पात्रे विल्वपत्रस्य कीर्त्तिता ॥
अथ वा करवीरस्य शक्त्या च महिषाजयोः ।
स्वस्वशक्त्यनुसारेण सर्वमन्यत् प्रकीर्त्तितम् ॥
होमो जपः कुमार्यर्चा साधकानां च भोजनम् ।
उपोषणमथो मौनं प्रभूतफलहेतवे ॥
हननात् खड्गबाणाभ्यां तत्र तत्र तु बोधनम् ।
आविर्भावो विल्वतरोरत्र बोधनमाचरेत् ॥
तत्तन्नक्षत्रलाभे तु फलभूमा प्रजायते ।
नक्षत्राणामलाभे तु केवलायां तिथौ चरेत् ॥
सत्यां शक्तौ चतुर्थ्यां वै देव्याः केशं विमोचयेत् ।
तत्र पूजा विधातव्या महाविभवविस्तरैः ॥
उद्वर्त्तनं कण्टकिकां केशबन्धनडोरकम् ।
नखरञ्जं शलाकां च सिन्दूरालक्तकज्जलम् ॥
सुगन्धितैलोष्णजलपिष्टातामलकादिकम् ।
दद्याद्देव्यै विशेषेण भक्तिभावेन पार्वति ॥
पूजायाः कथितं चात्र द्वैविध्यं मुनिपुङ्गवैः ।
पौराणिकं तान्त्रिकं च कालिकाप्रीतिसिद्धये ॥
श्रुतध्वजाय प्राङ्नन्दिकेश्वरेण यदीरितम् ।

तद्दै बहुलविस्तारं शारदीयार्च्चनं मतम् ॥
यद्देव्या स्वयमाख्यातं कपिलाय महर्षये ।
तन्नातिबहुलं नातिस्वल्पं मध्यममुच्यते ॥
यदौर्वेण समाख्यातं सगराय महीभृते ।
तद्विज्ञेयं सुरेशानि कनीयः शरदर्च्चनम् ॥
तान्त्रिकं बहुतन्त्रोक्तं सर्वैः स्वस्वमतागतम् ।
यो येनैव क्रमेणैतां शरदर्च्चां वरानने ॥
विधत्ते स समाप्नोति फलं तत्तत्क्रमेण हि ।
इयं हि पूजा द्विविधा पौराणी तान्त्रिकी तथा ॥
तान्त्रिके कौलिकी रीतिः पुराणे वैदिकी मता ।
यद्येभ्यो रोचते देवि प्रतिनन्दति ते हि तत् ॥
अथ पूजा प्रकर्त्तव्या केषु केषु स्थलेषु हि ।
तत्रोत्तरं ते वदामि शृणुष्वावहिता सती ॥
तैजसे प्रतिमा यन्त्रेऽथ वा माहेयदारवे ।
शैलेय अथ वा देवि धातवे गिरिसम्भवे ॥
विल्ववृक्षपत्रिका च घटः पूर्ववदीरितः ।
गोमयेनोपलिप्तं वा स्थण्डिलं जगदीश्वरि ॥
सिन्दूराङ्के मण्डलं वा शूलखड्गशरास्तथा ।
पुस्तकं वा चित्रपटं सर्वतोभद्र एव वा ॥
अनादिपीठं च तथा शिवलिङ्गं तथैव च ।
जलमग्निस्तथा खातनृकरोटिस्थलं शुभम् ॥
एवमादीनि चान्यानि स्थानान्यर्च्चनहेतवे ।
पत्रिकाश्च परिज्ञेयाः कदलीविल्वदाडिमाः ॥

हरिद्राशोककच्वौ च जयन्ती धान्यमालिनी ।

(भविष्येऽपि)

रम्भा कची हरिद्रा च जयन्ती विल्वदाडिमौ ।
अशोको मानकश्चैव धान्यानि नव पत्रिकाः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

एकाशीतिपदं चक्रं सर्वतोभद्रमण्डलम् ।
भित्तौ चित्रीकृता देवी पूजिता फलदायिनी ॥
अष्टम्यां तु विशेषेण पूजा कार्याऽत्र पार्वति ।
प्रभूतवलिदानं तु नवम्यां होम एव च ॥
अष्टमीनवमीसन्धौ विशेषात् पूजनं चरेत् ।
नवम्यां वलिदानानु कुमारीपूजनं तथा ॥
दिनत्रयेऽपि च महादेव्याः स्नानं प्रकल्पयेत् ।

तथा ।

उपवासं तथा कुर्यादष्टम्यां कालिकामुदे ।
सिद्ध्यर्थं स्वाभिलाषाणां तथाऽन्येषां च शर्मणाम् ॥
किन्तु पुत्री न कुर्वीत कृते पुत्रो विनश्यति ।
स्त्र्युपयोगीनि वस्तूनि रचनादीनि यानि हि ॥
तानि देव्यै प्रदेयानि विभवाद्यनुरूपतः ।
तिथौ शुक्लप्रतिपदि कृत्वोपक्रममीश्वरि ॥
षष्ठेऽह्नि सायंसमये कृतनित्यक्रियो दिवा ।
बोधयेद्बिल्वशाखायां देशिकः परमेश्वरीम् ॥
सङ्कल्पं पुरतः कृत्वा स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।
सराशिमासपक्षस्य तिथेरुल्लिखनक्रमात् ॥
सगोत्रनामोच्चरणं यजमानो विधाय हि ।

दुर्गाबोधनकर्माहं करिष्ये इति कीर्त्तयेत् ॥
भूतशुद्धिं ततः कृत्वा षडङ्गं सर्षि तत्परम् ।
आवाह्य विल्वशाखायामथ वा मूर्त्तिपीठयोः ॥
उपचारैः षोडशभिर्मूलमन्त्रेण देशिकः ।
पूजयित्वा जगद्धात्रीमर्धमस्तमिते रवौ ॥
विल्ववृक्षं च सम्पूज्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।
शङ्खतूर्यनिनादैश्च मुरजध्वनिगीतिभिः ॥
बोधयेत् स्तुतिसंलापैर्वन्दीव वसुधाधिपम् ।
प्रोच्यमानं समुच्चार्य मन्त्रं संचालयेच्छिवाम् ॥
तारमैधे शाकिनी च कूटं स्वप्नावतं तथा ।
विसन्धिभगवत्युक्त्वोत्तिष्ठ इयमुदीरयेत् ॥
निद्रां जहि युगं चापि प्रतिबुध्यस्व च इयम् ।
मम शत्रून् हन द्वन्द्वं पातय द्वितयं तथा ॥
लज्जा रमा डाकिनी च फट्स्वाहा तदनन्तरम् ।

तारः प्रणवः । मैधं वाग्भवम् । शाकिनी फ्रेँ । स्वप्नावतीकूटम् ख्लीँ । डाकिनी ख्फ्रेँ ।
तत्रान्तरे तु श्लोकरूपा मन्त्रा उक्ताः ।

यथा ।

रावणस्य वधार्थाय रामस्यानुग्रहाय च ।
अकाले ब्रह्मणा बोधो देव्यास्त्वयि कृतः पुरा ॥
अहमप्याश्विने षष्ठ्यां सायाह्ने बोधयामि वै ।
शक्रेणापि च सम्बोध्य राज्यं प्राप्तं सुरालये ॥
तस्मादहं त्वां प्रति बोधयामि विभूतिराज्यप्रतिपत्तिहेतोः ।
यथैव रामेण हतो दशास्यस्तथैव शत्रुं विनिपातयामि-इति ॥

तथा ।

षष्ठ्यां सायं प्रकुर्वीत विल्ववृक्षेऽधिवासनम् ।

( महाकालसंहितायाम् )

रजन्याद्ये मुहूर्त्ते तु चण्डिकामधिवासयेत् ।
सुगन्धितैलपाताभ्यां पञ्चभिर्गन्धजातिभिः ॥
पुष्पजातिविशेषैश्च तावद्भिरधिवासयेत् ।
सर्वमाङ्गल्यवस्तूनि विधायैकत्र भाजने ॥
प्रशस्तवदनं देव्याः कारयेत् तदनन्तरम् ।
समांसमीनसिद्धान्नवलिं भूतेभ्य उत्सृजेत् ॥
गीतवाद्यैश्च नाद्यैश्च नमस्कारैश्च जागरैः ।
देवीं सन्तोष्य वचनैर्व्याजस्तुत्याद्यनिन्दनैः ॥
सिद्धार्थकैर्मन्त्रपाठपूर्वं रक्षां विधाय च ।
पूर्ववत् सर्वमाभाष्य मासपक्षतिथिक्रमैः ॥
शरत्कालीनपूजाङ्गं ततश्च कृत्यपत्रिकाः ।
अथ वा प्रतिमापीठयन्त्रस्थापनकर्मणि ॥
दुर्गादेव्या गन्धपुष्पपट्टवासस्त्रगादिभिः ।
अधिवासनकर्माहं कुर्वीयेत्यभिजल्प्य वै ॥
पूर्ववद्भूतशुद्धिं च सर्षिं करषडङ्गकम् ।
प्राणायामत्रयं चापि कृत्वाऽर्घस्थापनं चरेत् ॥
गणेशमथ दिक्पालान् मातृग्राहाँस्तथैव च ।
वटुकान् क्षेत्रपालाँश्च द्वाराध्यक्षाँश्च योगिनीः ॥
शक्त्योपचारैः सम्पूज्य पत्रिकापीठमूर्त्तिषु ।
आवाह्य देवीमिष्टां च मूलमन्त्रोपचारकैः ॥
शताहरिद्रातैलानि एकीकृत्य समानि हि ।
चैतन्यकमलालज्जागन्धचारेरुडस्त्वकम् ॥

उच्चार्य दद्यादलिके शिरस्यपि च पादयोः।
ततः कुङ्कुमकर्पूरकस्तूरीमलयोद्भवैः॥
एकीकृतैर्डाकिनीहृन्मन्त्रैस्तान्येव भूषयेत्।
बिल्वपत्रजवापद्मकरवीरापराजिताः॥
एकीकृत्यार्पयेन्मूर्ध्नि वदन्मदनमस्तके।
माल्यैरापूरयेद्यन्त्रं प्रतिमां पत्रिकामपि॥
शङ्खोनोसवदौ क्रौडौ मृत्तिकामलयोद्भवः।
गोरोचनाधान्यदूर्वादृषत्सिन्दूरकज्जलम्॥
हरिद्रास्वस्तिकालक्तदध्यक्षतफलाम्बुजम्।
धूपदीपौ मधुघृतं कुमारीकरतन्तवः॥
घनसारो मृगमदं कक्कोलं कुङ्कुमं तथा।
महौषधिगणाः सिद्धार्थफलं स्वर्णमणी तथा॥
रौप्यं व्याघ्रनखोऽम्भोजं विष्णुक्रान्ताऽपराजिता।
एवमादीनि माङ्गल्यद्रव्याण्युक्तानि यानि वै॥
एकस्मिन् भाजने तानि एकीकृत्य पृथक् पृथक्।
देव्याः शिरो वक्षसि च तारमैधत्रपाशिरः॥
प्रोच्चरन् समनुत्तोल्य त्रिवारं स्पर्शयेच्छनैः।
भूतादिभ्यो वलिं दद्यात् तत्तद्बीजं पुरः स्मरन्॥
तत्तन्नामाभ्यसन्तं च सन्धिनैष वलिर्नमः।
दशदिक्षु क्षिपेच्चापि राजिकाश्वेतसर्षपौ॥
ताराद्रक्षयुगं चास्त्रं शिरः कूर्चोऽन्तिमे तथा।
* वर्णैश्चतुर्भिः संवेष्ट्य तांश्च कल्माषतन्तुभिः॥

* बाणैरिति ४-५ पु० पा०।

अस्त्राण्यस्याः पुरः कृत्वा जागृयात् सकलां निशाम् ।

इति षष्ठीकृत्यम् ।

अथ सप्तमीकृत्यं तत्रैव ।

अथो उषसि सप्तम्यां कृतनित्यक्रियो बुधः ।
पूर्ववद्बिल्वशाखायां देवीमभ्यर्च्य मानवः ॥
शितां गृहीत्वा छुरिकां मन्त्रमेनं समुच्चरेत् ।
फलद्वययुतां शाखां छिन्द्याद्बिल्वस्य साधकः ॥
चैतन्यं प्रणवं माया रोषरावौ च डाकिनी ।
इमां शाखां छिन्धि युगं छेदय द्वितयं तथा ॥
अस्त्रयुग्मं शिरश्चापि गृहीत्वा तां करद्वये ।
बद्धाञ्जलिश्चतुर्मन्त्रान् पठेत् पौराणिकान् प्रिये ॥
मेरुमण्डलकैलाशहिमवच्छिखरे गिरौ ।
जातः श्रीफलवृक्षस्त्वमम्बिकायाः सदा प्रियः ॥
श्रीशैले शिखरे जातः श्रीफलः श्रीनिकेतनः ।
नेतव्योऽसि मया गच्छ पूज्यो दुर्गास्वरूपतः ॥
बिल्ववृक्ष महाभाग सदा त्वं शङ्करप्रिय ।
गृहीत्वा तव शाखां हि देवीपूजां करोम्यहम् ॥
शाखाछेदोद्भवं दुःखं न च कार्यं त्वया तरो ।
देवैर्गृहीत्वा शाखां ते पूजिताऽम्बेति विश्रुतिः ॥
पुनरन्यत् पद्यरूपं मन्त्रं ब्रूयाच्च साधकः ।
पुत्रायुर्धनवृद्ध्यर्थं नेष्यामि त्वामुमाप्रियाम् ॥
बिल्वशाखां समाश्रित्य राज्यं देवि प्रयच्छ मे ।
आगच्छ चण्डिके देवि सर्वकल्याणहेतवे ॥
कात्यायनि गृहाणार्च्चां नमस्ते शङ्करप्रिये ।

ततः पूर्वोदिताश्चान्या आहरेदष्ट पत्रिकाः ॥

तन्त्रान्तरे ।

पत्रिकास्ताः समानीय गीतवाद्यपुरःसरम् ।
ब्रह्मघोषादिभिः सार्धं नीत्वाऽन्यस्येद्गृहाङ्गणे ॥

(महाकालसंहितायाम्)

ता एकीकृत्य लतयाऽपराजितसमाह्वया ।
संवेष्ट्य वसनेनापि पूजासङ्कल्पमाचरेत् ॥
पूर्ववत् सर्वमुच्चार्य पत्रिकापीठमूर्त्तितः ।
ततश्च स्थापनमहं करिष्ये इति कीर्त्तयेत् ॥
पत्रिकायां तथा मूर्त्तौ खड्गे वा *यन्त्रमूर्त्तयोः ।
देवीमावाह्य सम्पूज्य विल्वपत्राञ्जलित्रयम् ॥
दत्त्वा शक्तौ प्रकुर्वीत देव्याः स्नानं महोत्तरम् ।
तद्धै पौराणवैदिक्यमपि संकीर्त्तयामि ते ॥
शक्तौ दिनत्रयं कुर्यादशक्तौ तु दिनद्वयम् ।
सर्वाभावे नवम्यां तु स्नानमावश्यकं मतम् ॥
कुर्यादत्रापि सङ्कल्पं काम्यमेतद्यतः प्रिये ।
शतजन्मकृतात् पापान्मोचने प्रथमं स्मृतम् ॥
तथा चाष्टसहस्राब्दावच्छिन्नपदतः खलु ।
दुर्गालोकस्थितिरिति शतयज्ञफलाप्तियुक् ॥
नवाऽपि पत्रिका शुद्धतोयेन स्नापयेत् ततः ।
प्रत्येकं तत्तदाख्याभिर्मूर्त्तौ नाम्ना धियाऽपि च ॥
मन्त्राणां पद्यरूपाणामादौ तारस्वपा स्मरः ।
रमा मेधं रावरौषौ डाकिन्यष्ट च वै नव ॥

* यन्त्रकुम्भयोः-इति २-५ पु० पा० ।

प्रत्येकं देवि देयानि तान्विकस्नापनक्रमे ।
कदलीतरुसंस्थाऽसि शम्भुवक्षःस्थलस्थिते ॥
स्नापयाम्यद्य पत्रि त्वां नमस्ते हरवल्लभे ।
कच्चित् त्वं स्थावरीभूता सद्यः सिद्धिविधायिनी ॥
दुर्गारूपेण सर्वत्र स्नानेन विजयं कुरु ।
हरिद्रे हर दुःखानि शङ्करस्य सदा प्रिये ॥
रुद्ररूपाऽसि देवि त्वं सर्वशान्तिं प्रयच्छ मे ।
जयन्ती जयरूपाऽसि जगतां जयकारिणी ॥
स्थापयामीह देवि त्वां जयं देहि गृहे मम ।
श्रीफल श्रीनिकतोऽसि सदा विजयवर्धन ॥
देहि मे धर्मकामार्थान् प्रसन्नो भव सर्वदा ।
दाडिम्यघप्रणाशाय क्षुन्नाशाय तथा नृणाम् ॥
निर्मिताऽसि पुरा धात्रा प्रसीद त्वमुमाप्रिये ।
स्थिरा भव सदा लोके दुर्गेशोकविनाशिनि ॥
मया त्वं पूजिता नित्यं स्थिरा भव हरप्रिये ।
ब्राह्मेषु मानो मानेषु माननीयः सुरासुरैः ॥
स्नापयामि महादेवीं मानं देहि नमोऽस्तु ते ।
लक्ष्मीस्त्वं धान्यरूपाऽसि प्राणिनां प्राणदायिनी ॥
स्थिराऽत्यन्तं हि नो भूत्वा गृहे कामप्रदा भव ।
ततो द्वित्रिनदीतोयं कृत्वा कलशगर्भगम् ॥
चन्दनालोडितं चापि स्नापयेत् तेन चण्डिकाम् ।
शीता चालकनन्दा च चक्षुर्भद्रादृषद्वती ॥
तुङ्गभद्रा कृष्णवर्णा पयोष्णी नर्मदा तथा ।

तापी भीमरथी सिप्रा *वितस्तैरावती तथा ॥
गोदावरी विपासा च शतद्रुः सिन्धुरेव ।
चर्मण्वती च कावेरो ताम्रपर्णी महानदी ॥
करतोया बाहुदा च शोणा वेत्रवती तथा ।
देविका भैरवः कोका गोमतो चोत्पलावती ॥
आत्रेयी भारती गङ्गा यमुना च सरस्वती ।
सरयूर्गण्डकी चापि †श्वेतगन्धा च कौशिकी ॥
भोगवती च पाताले स्वर्गे मन्दाकिनी तथा ।
एताश्चान्याश्च या नद्यो भाषिता याश्च नेरिताः ॥
देवखातानि तीर्थानि कूपा निर्झरसंज्ञकाः ।
सरांसि सिन्धवश्चापि सम्भेदा ये च भूतले ॥
सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणः प्रभुः ॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवतीं स्नापयन्त्विमे ।
ख्याता ये द्वादशादित्या रुद्रा एकादशापि च ॥
मरुतश्चोनपञ्चाशद्वसवोऽष्टर्त्तवश्च षट् ।
आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
ब्रह्मणा सहितः शेषो दिक्पालाः स्नापयन्त्वमी ॥
कीर्त्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्षमा रतिः ।
बुद्धिर्लज्जा क्रिया शान्तिस्तुष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥

---

* विस्तरैरावतो इति ४ पु० पा० ।

† श्वेतगङ्गा-इति २-३-५ पु० पा० ।

एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु शक्तिरूपधरास्तव ।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमबुधजीवसितार्कजाः ॥
राहुः केतुश्च भवतीं स्नापयन्तु ग्रहा नव ।
ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च ॥
देवपत्न्योऽध्वरा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः ।
त्रिशूलचक्रचापर्ष्टिभुशुण्डी परिघो गदा ॥
कुन्तमुद्गरखट्वाङ्गशक्तितोमरपर्शवः ।
पट्टिशो मुद्गलः प्रासभिन्दिपालकटङ्ककाः ॥
क्षुता शतघ्नी कुलिशपाशकर्त्तृहलानि च ।
चत्वार ऋग्यजुःसामार्थर्वणो निगमा हि ये ॥
अङ्गानि शिक्षा कल्पश्च छन्दो व्याकरणं तथा ।
निरुक्तं ज्यौतिषं चापि पुराणान्यखिलानि च ॥
मीमांसान्यायवेदान्ताक्षपात्साङ्ख्यपतञ्जलाः ।
स्मृतिशास्त्राणि सर्वाणि दण्डनीतिर्विधाऽपि च ॥
गन्धर्वायुर्धनुर्वेदाश्चतुःषष्टिश्च याः कलाः ।
अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि वाहनानि नृपास्तथा ॥
औषधानि च सर्वाणि शिल्पविद्यादिकानि वा ।
मुक्तामाणिक्यवैदूर्यवज्रेन्द्रमणयस्तथा ॥
गोमेदपद्मरागौ च प्रवालः श्याम एव च ।
रत्नानि यानि चान्यानि कालस्यावयवाश्च ये ॥
मन्वन्तराणि सर्वाणि चत्वार्यपि युगानि हि ।
अब्दमासर्त्तुपक्षाहोरात्रायनकलालवाः ॥
राशिनक्षत्रयोगाश्च कलांशाश्चापि सूक्ष्मकाः

सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः ॥
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थसिद्धये ॥
*सिन्धुरैवतशोणाद्या ये ह्रदा भुवि विश्रुताः ।
सर्वे सुमनसो भूत्वा भृङ्गारैः स्नापयन्तु ते ॥
तक्षकाद्याश्च ये नागाः पातालतलवासिनः ।
स्नापयन्तु जगद्धात्रि भृङ्गारैस्त्वां सुवासितैः ॥
अथ द्रव्यविशेषेण मन्त्रभेदान् ब्रवीमि ते ।
पौराणानपि तान्वीयान्महास्नापनकर्मणि ॥
सर्वेषामधिपो देव ईशानो नाम नामतः ।
शूलपाणिर्महादेवः स त्वां संस्नापयेत् प्रभुः ॥
स्नापयेच्छङ्खतोयेन मन्त्रमेनमुदीरयेत् ।
मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं परम् ॥
स्वर्गस्रोतःसमुद्भूतं स्नानं भवतु तेन ते ।
गाङ्गेन वारिणा देवीं स्नापयेन्मनुनाऽमुना ॥
उष्णं सुखस्पर्शकरं ज्योतिर्वह्निसमन्वितम् ।
मलापहारकं कल्यं तेन स्नानं समाचर ॥
स्नापयेत् पाथसोष्णेन पठन्मन्त्रममुं प्रिये ।
गन्धाढ्यं शोभनं चैव शीतलं सुमनोहरम् ॥
सर्वपापहरं तोयं तत् ते स्नानाय कल्पताम् ।
अमुनाऽऽमोदिसलिलकुम्भेन स्नापयेच्छिवाम् ॥
पुण्यं पवित्रं स्वच्छं च शीतलं स्वादु यज्जलम् ।

* सिन्धुभरैव-इति २-३-५ पु० पा० ।

स्नानाय कल्पतां तत् ते तथैव श्रमशान्तये ॥
मेध्याच्छशीतलाम्भोभिः स्नापयेदमुनेश्वरीम् ।
गावः पवित्रा ह्यनघा गावो विश्वस्य मातरः ॥
गावोऽध्वराणां धात्र्यश्च गोषु सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
तदङ्गप्रसूतैः पञ्चगव्यैस्त्वां स्नापयाम्यहम् ॥
इति सामान्यतो मन्त्रं पठित्वा तदनु प्रिये ।
प्रत्येकं पञ्चगव्येन स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥
गवां मूत्रेण पुण्येन सर्वाघपरिमोषिणा ।
स्नापयामि जगद्धात्रीं पुत्रायुर्धनवृद्धये ॥
एतेन स्नापयेद्देवीं गोमूत्रेण शनैः शनैः ।
पवित्रताकरं भूमेर्विभूतेः कारणं परम् ॥
गोमयं सर्वपापघ्नं तेन त्वां स्नापयाम्यहम् ।
मन्त्रमेनं पठेद्देवीं स्नपायेद्गोमयाम्भसा ॥
यद्गवामङ्गसम्भूतं हविषः कारणं हि यत् ।
दधि तत् तेऽङ्गलावण्यकरणाय भवत्विदम् ॥
दध्नाऽमुना भगवतीं स्नापयेद्देशिकोत्तमः ।
यज्ञक्रियाकलापोऽयं सर्वो यस्मिन् प्रतिष्ठितः ॥
पयसा तादृशेन त्वां स्नापयामि हरप्रियाम् ।
गृणन्नमु गव्यदुग्धैः स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥
यद्धोमसाधनत्वेन प्रथितं निगमादिषु ।
यच्चाप्यग्निमुखेनैव भुञ्जते निखिलाः सुराः ॥
यस्मात् पवित्रं नैवास्ति बलवीर्यकरं च यत् ।
तेन त्वां स्नापयाम्यद्य गव्येन हविषेश्वरीम् ॥

कालीममूभ्यां मन्त्राभ्यां घृतेन स्नापयेद्बुधः ।
एकीकृत्य ततः पञ्चगव्यानि सकलानि हि ॥
तथाऽनामिकयाऽऽलोड्य कुशमूलेन वा प्रिये ।
यस्मात् परं नापरमस्ति मेध्यं देहे गतं यद्वृजिनं निहन्ति ।
नास्ते परं हव्यमतस्तदेतत् स्नानाय भूयात् तव पञ्चगव्यम् ॥
स्नापयेत् पञ्चगव्येन मन्त्रेणानेन कालिकाम् ।
गव्यं पयो दधि घृतं माध्वीकं सितशर्कराः ॥
पञ्चामृतमिदं प्रोक्तममुना स्नापयेदुमाम् ।
सारं गृहीत्वा जगतां त्रयाणां यन्निर्मितं यज्ञकृते विधात्रा ।
पञ्चामृतं तन्मधुरं मनोज्ञं संस्नापकं ते जगदम्ब भूयात् ॥
मनुनैवामुना पञ्चामृतेन स्नापयेच्छिवाम् ।

तथा ।

ॐ कात्यायन्यै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।
एतेनेक्षुरसेनैव स्नापयीत सुरेश्वरीम् ।

तन्त्रान्तरे ।

महौषधीभिः सर्वाभिः सर्वकामार्थसिद्धये ।
या ओषधीति मन्त्रेण स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥

( महौषध्य उक्ता मात्स्ये )

सहदेवी तथा व्याघ्री बला चातिबला तथा ।
शङ्खपुष्पी च सिंही च वचा चैव सुवर्चसा ॥
महौषध्यष्टकं प्रोक्तं महास्नाने नियोजयेत् ।

व्याघ्री कण्टकारिका । बला वाट्यलकः ।
सर्वौषधयस्तु प्रागेवोक्ताः ।
तथा ।

सहस्रधारकुम्भेन स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ।

( महाकालसंहितायाम् )

सागराः सरितः सर्वाः स्वर्गस्रोतो नदास्तथा ।
तिस्रः कोट्योऽर्धकोटिश्च तीर्थानि पृथिवीतले ॥
कूपाः सरः प्रस्रवणा देवखाताः सगर्तकाः ।
कुल्याश्च निर्झरी वाप्यो यावन्तश्च जलाशयाः ॥
लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलात्मिकाः ।
समुद्राः सप्त तद्द्वीपा ये च सप्त प्रकीर्त्तिताः ॥
जम्बूप्लक्षकुशक्रौञ्चशाकशाल्मलिपुष्कलाः ।
अभिषिञ्चन्तु सर्वे त्वां मन्त्रपाठवशीकृताः ॥
अग्निमीळेति मन्त्रेण ऋग्वेदस्याद्यया ऋचा ।
त्वां स्नापयतु गव्येन पयः कुम्भेन चण्डिकाम् ॥
इषे त्वाख्येन मन्त्रेण स्नापयत्विक्षुजद्रवैः ।
षडशीतिभिदा युक्तो यजुर्वेदः सुरेश्वरीम् ॥
सहस्रशाखासंयुक्तः सामवेदो मधुद्रवैः ।
अग्न आयाहि मन्त्रेण त्वां स्नापयतु चण्डिकाम् ॥
अथर्ववेदो हविषा बहुशाखासमन्वितः ।
शन्नो देवीति मन्त्रेण देवि त्वामभिषिञ्चतु ॥
अष्टादश पुराणानि व्यासेनोक्तानि यानि हि ।
यानि चोपपुराणानि दध्ना त्वां स्नापयन्तु हि ॥
महर्षिभिः प्रणीतानि धर्मशास्त्राणि यानि च ।
शतं चाशीतिरूपाणि स्नापयन्तु महेश्वरीम् ॥
सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
स्वर्गनद्यम्बुपूर्णेन आद्येन कलशेन तु ॥

अमुना गाङ्गतोयेन स्नापयेत् परमेश्वरीम्।
मरुतश्चाभिषिञ्चन्तु भक्तिमन्तः सुरेश्वरीम्॥
मेघतोयाम्बुपूर्णेन द्वितीयकलशेन च।
एतेन वृष्टिनीराढ्यकुम्भेन स्नापयेच्छिवाम्॥
सारस्वतेन तोयेन स्वच्छमेध्येन चण्डिके।
विद्याधराः स्नापयन्तु तृतीयकलशेन तु॥
सरस्वत्यम्बुसम्पूर्णघटेनाप्लावयेच्छिवाम्।
त्वां स्नपयन्तु शक्राद्या लोकपालाः समागताः॥
सागरोदकपूर्णेन तुर्येण कलशेन हि।
*अभावेनाम्बुना देवीं स्नापयेन्मनुनाऽमुना॥
वारिणा परिपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना।
पञ्चमेनाभिषिञ्चन्तु नागास्त्वां कलशेन हि॥
पद्मपुष्पसमायुक्तजलकुम्भमनुस्त्वसौ।
हिमवन्मेरुकैलाशा अभिषिञ्चन्तु पर्वताः॥
निर्झरोदकपूर्णेन षष्ठेन कलशेन हि।
अमुना निर्झराम्भोभिः स्नापयेत् परमेश्वरीम्॥
सर्वतीर्थाम्बुपूर्णेन कलशेन सुरेश्वरीम्।
सप्तमेनाभिषिञ्चन्तु ऋषयः सप्त खेचराः॥
मन्त्रेणैतेन तीर्थाम्बुकुम्भेन स्नापनं चरेत्।
वसवस्त्वाऽभिषिञ्चन्तु कलशेनाष्टमेन तु॥
सारसेनैव तोयेन दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते।
देवीमनेन मन्त्रेण सिञ्चेत् कासारवारिणा॥

---

* आर्णवेना–इति २–३–५ पु० पा०।

धर्मो ज्ञानं च वैराग्यं तपः सत्यं क्षमा धृतिः ।
यशो विवेको नियमो ब्रह्मचर्यं दया दमः ॥
शान्तिर्मौनं तथा शौचं सन्तोषो मितभाषिता ।
यावत्यश्चोपनिषदः कैवल्यप्रतिपादकाः ॥
स्थावरं जङ्गमं चापि त्रैलोक्ये यत् प्रतिष्ठितम् ।
यद्ब्रह्मसृष्टावुत्पन्नं मूर्त्तं चामूर्त्तमेव च ॥
अचरं यच्चरं चापि यद्वाङ्मयमवाङ्मयम् ।
ते सर्वे स्नापयन्तु त्वां नवमेन घटेन हि ॥
स्नापयेच्छुद्धतोयेन चण्डिकां मनुनाऽमुना ।
इत्युक्तं ते महास्नानं शरदर्चाविधौ प्रिये ॥
दिनान्तरेऽपि कुर्वीत भक्तश्चेद्भक्तिभावितः ।
अनेन विधिना यस्तु स्नापयेज्जगदम्बिकाम् ॥
सप्तजन्मकृतात् पापान्मुक्तः स्यान्नात्र संशयः ।
दिव्याष्टाब्दसहस्राणि देवीलोके वसेत् तथा ॥
नवम्यां तु महास्नानं धनपुत्रविवर्धनम् ।
सहस्रयज्ञस्य फलं लभते नात्र संशयः ॥
राजा राज्यमवाप्नोति शत्रुनाशं तथैव च ।
स्वाभीष्टमाप्नुवन्त्यन्ये महास्नानेन पार्वति ॥
महास्नानादनु ततो भूतेभ्यो बलिमुत्सृजेत् ।
स कौलानां मांसमद्ये माषान्नं स्मृतिवर्त्तिनाम् ॥
गृहीत्वा तममूभ्यां वै मनुभ्यामुत्सृजेद्बलिम् ।
भूताः प्रेताः पिशाचाश्च ये वसन्त्यत्र भूतले ॥
ते गृह्णन्तु मया दत्तं बलिमेनं प्रसाधितम् ।
पूजिता गन्धपुष्पाद्यैर्बलिभिस्तर्पितास्तथा ॥

देशादस्माद्विनिःसृत्य पूजां पश्यन्तु मत्कृताम्।
ताररावौ कूर्च्चभूतौ भ्यसन्तो भूत एव च ॥
ससन्ध्येष वलिर्हृञ्च मन्त्रावेतावुदाहृतौ।

रावः फं। भूतः स्फों।

तथा।

अकृते वलिदाने तु महास्नानादनन्तरम्।
अफलं तद्भवेद्देवि पूजाङ्गं हीयते तथा ॥
विलुम्पन्ति सदा लुब्धा न च गृह्णन्ति देवताः।
तस्माद्यत्नेन कर्त्तव्यं भूतानामपसारणम् ॥
लाजचन्दनसिद्धार्थभस्मदूर्वाक्षतादिकम्।
गृहीत्वा ताररोषान्तु निःश्रेण्यस्त्रमुदीरयेत् ॥
अपसर्पन्तु भूतास्ते ये भूताः शारदार्च्चिकाः।
भूतानामविरोधेन देवीपूजां करोम्यहम् ॥
वेतालाश्च पिशाचाश्च राक्षसाश्च सरीसृपाः।
अपसर्पन्तु सर्वत्र मन्त्ररूपास्त्रताडिताः ॥
अन्ते मनूनामेतेषां हूं अः फडिति कीर्त्तयेत्।
भूतादीनपसार्याथ द्वारपालेभ्य एव च ॥
तथाहृद्विल्वशाखाग्रे वासिन्यै तदनन्तरम्।
दुर्गायै कूर्च्चमस्त्रं च मन्त्रेणानेन पार्वति ॥
पाद्यादिभिः समभ्यर्च्य कुर्यान्नीराजनाविधिम्।

नीराजनं * निर्मञ्छनम्।

---

* पञ्च नीराजनं कुर्यात् प्रथमं दीपमालया।
द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा ॥
चूताश्वत्थादिपत्रैश्च चतुर्थं परिकीर्त्तयेत्।
पञ्चमं प्रणिपातेन साष्टाङ्गेन यथाविधि—इति (शब्दस्तोममहानिधिः) ॥

द्वारदेशं समानीय कुर्यान्निर्मञ्छनं ततः ।

इति तन्त्रान्तरवचनात् ।

तथा ।

धृत्वाऽऽसनं ततो देवीं पत्रिकां मृन्मयीमपि ।
सञ्चाल्य गीतवाद्यादीनिमं मन्त्रं समुच्चरेत् ॥
स्थापयेत् सुस्थिराकारां ततः कल्पित आसने ।
तारत्रपारावलक्ष्मीयोगिनीकामयोषितः ॥
डाकिनीं चापि फेत्कारीं चण्डिके भगवत्यपि ।
चलद्वयं चालय द्विर्वज्रकापालिनीत्यपि ॥
पूजालयं द्विः प्रविश हूँ फट् स्वाहा ततः परम् ।
आगच्छ मद्गृहे देवि सह शक्तिभिरष्टभिः ॥
पूजां गृहाण विधिवत् सर्वकल्याणहेतवे ।
अनेन स्थापयेद्देवीं सर्वकल्याणदायिनीम् ॥
दिनत्रयस्य पूजार्थं वेदिकाद्यासनादिषु ।

त्रपा ह्रीँ । रावः फ्रेँ । योगिनी छ्रीँ । कामः क्लीँ । योषित् स्त्रीँ । डाकिनी ख्फ्रूँ ।

फेत्कारी ह्स्ख्फ्रेँ ।

तथा ।

तारचिद्द्रावडाकिन्यः स्थाँ स्थीँ त्वमम्बिके तथा ।
स्थिरीभव शिरश्चेति स्थिरीकुर्यात् ततः परम् ॥

चिद्वाग्भवम् ।

कलशस्थापनमाह ।

ततः पुनर्विरचिते सर्वतोभद्रमण्डले ।
चित्रितं पञ्चवर्णेन दध्यक्षतफलान्वितम् ॥
पञ्चरत्नेन हेम्ना च गर्भगेन विभूषितम् ।
पट्टाच्छादनसंवीतग्रीवं पल्लवशोभितम् ॥
व्रीहीनां वा यवानां वा स्थापयित्वोपरि प्रिये ।

वैदिकेन विधानेन कलशस्थापनं चरेत् ॥
भूमिं स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्रं भूरसीति वरानने ।
अथ धान्यमसीत्युक्त्वा व्रीहिन्वाऽभिमन्त्रयेत् ॥
आजिघ्रेत्युच्चरन्मन्त्रं कलशं तत्र विन्यसेत् ।
वरुणस्येति मन्त्रेण पाथोभिः परिपूरयेत् ॥
काण्डात् काण्डादिति प्रोच्य पल्लवं विन्यसेत् ततः ।
फलं वा फलिनीत्युक्त्वा श्रीश्चेत्युक्त्वा प्रसूनकम् ॥
गन्धद्वारेत्यथो गन्धं सहस्रेत्यक्षतं न्यसेत् ।
स्थिरीभवेति मन्त्रेण स्थिरीकरणमाचरेत् ॥
वल्मीककुञ्जररदनदीसङ्गमपर्वतात् ।
गोकुलाद्देवनृपतिद्वारादपि च मृत्तिकाः ॥
आहृत्य हार्दमन्त्रेण प्रत्येकं निःक्षिपेद्घटे ।

हार्दमन्त्रेण नम इति मन्त्रेण ।

पूर्ववत् सर्ववस्त्वादिशोधनं विदधीत वै ।
प्रागुदीरितमन्त्रेण तथैवालोकनेन च ॥
यदात्मनाऽनवज्ञातं पूजाद्रव्यादिदूषणम् ।
अस्पृश्यस्पर्शनं वाऽपि यदन्यायार्जितं च वा ॥
तथा निर्माल्यसंस्पृष्टं कीटारोहणदूषितम् ।
नश्यन्ति तानि सर्वाणि दूषणान्यवलोकनात् ॥
भूतापसारणं कृत्वा भूतशुद्धिं विधाय च ।
सम्पूज्यासनमात्मीयं गणेशगुरुदेवताः ॥
नत्वा विदध्यात् तदनु प्राणायामत्रयं बुधः ।
पत्रिकायास्ततः कुर्याद्दृष्ट्यादि यतमानसः ॥

शरत्कालीनदुर्गार्चाविधेरस्य हि नारद ।
ऋषिश्छन्दश्च गायत्री श्रीदुर्गा देवता मता ॥
बीजं ह्रीमिति निर्दिष्टं शक्तिः श्रीमपि पार्वति ।
कीलकं क्लीमिति प्रोक्तं पूजायां विनियोगता ॥
अस्मिन्नेव ह्यवसरे सङ्कल्पं केऽपि कुर्वते ।
काम्यत्वान्नेतरे चास्य नित्यत्वान्नित्यकृत्यवत् ॥
क्रियते यदि सङ्कल्पस्त्र्यहस्याप्येक एव हि ।
एकप्रयोगसंहारात् फलैक्याच्च विसर्जनात् ॥
पीठे मूर्त्तौ च नित्यं तमृषिं तत्तन्मनोश्चरेत् ।
मृन्मूर्त्तिपत्रिकापक्षे मन्त्रं सर्षिं निशामय ॥
आदौ वेदादिमालेख्य द्विवारं दुर्गं ईरयेत् ।
सम्बुद्धिरथ रक्षिण्याः शिरसा सह कीर्त्तयेत् ॥
पत्रिकार्चोपचारादिप्रदानार्थं मनुस्त्वमौ ।
एकं द्वे द्वे त्रीणि च द्वे सकलो मन्त्र एव च ॥
कराङ्गुलीहृदादिष्वमी न्यस्या मन्त्रवर्णकाः ।

तथा ।

नित्यपीठे पुरोदीर्णं स्वं स्वं ध्यानं समाचरेत् ।
मार्त्तेयपीठिकापक्षे ध्यानमाकलय प्रिये ॥
निस्तप्तस्वर्णवर्णाभां नवतारुण्यशालिनीम् ।
पूर्णचन्द्राभवदनां जटामुकुटमण्डिताम् ॥
लोलदीर्घासितत्र्यक्षां खण्डेन्दुाबद्धशेखराम् ।
दाडिमीकुसुमाकारदन्तपङ्क्तिविराजिताम् ॥
उत्तुङ्गपीनवक्षोजां वलित्रयविराजिताम् ।
अतिक्षामोदरीं देवीं नितम्बाभोगभासुराम् ॥

त्रिभङ्गस्थानकतया भज्यन्मध्यामिव स्थिताम् ।
बाहुभिर्दशभिर्युक्तां सर्वालङ्करणान्विताम् ॥
शूलं कृपाणं चक्रं च बाणं शक्तिं च दक्षिणे ।
धारयन्तीमथो वामे पाशचर्माङ्कुशं धनुः ॥
कण्ठीरवोपरिन्यस्तदक्षिणाङ्घ्रिसरोरुहाम् ।
संमुखस्थितसंछिन्नमहिषासुरमस्तकाम् ॥
कण्ठनालोत्थदितिजसकिरीटकचोच्चयाम् ।
पाशं वामकरेणैव बिभ्रतीं परमेश्वरीम् ॥
शूलेन हृदि निर्भिन्नं पश्यन्तीं दानवं रुषा ।
पाशाकारमहानागवेष्टितोदरबाहुकम् ॥
भ्रूकुटीभीषणाकारं शोणितार्द्रकलेवरम् ।
आकृष्टासिनिगलितकफोणिं हरिणा हठात् ॥
स्रवद्रुधिरसंदोहवदनेन महात्मना ।
स्तूयमानां सुरैः सर्वैर्ब्रह्मेशमुखादिभिः ॥
लीलया दानवं हत्वा किञ्चित् किञ्चिद्धसन्मुखीम् ।
उग्रचण्डा प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका ॥
चण्डा चण्डवती चैव चण्डरूपा च चण्डिका ।
आभिः शक्तिभिरष्टाभिः सततं परिवेष्टिताम् ॥
चिन्तयेदीदृशीं दुर्गां धर्मकामार्थमोक्षदाम् ।
ध्यात्वेत्थं मानसैरेवोपचारैः परिपूज्य च ॥
पूर्वोक्तेनैव विधिना विदध्यादर्घसंस्थितिम् ।
नैमित्तिकविधानेन विस्तारो यत्र कीर्त्तितः ॥
सत्यां शक्तौ तु पाद्यादीन् पृथक्त्वेन प्रविन्यसेत् ।

अर्घस्योत्तरतः कार्यं पाद्यमाचमनीयकम् ॥
स्नानीयं मधुपर्कं च उपचारास्तथा मया ।
अस्मिन्नेव क्षणे देवीपञ्चायतनपूजकः ॥
गणेशार्कहरीशानां सम्भारैः कल्पितैर्यजेत् ।
पीठार्चनं ततः कुर्यात् सामान्यं प्रथमं बुधः ॥
सर्वशेषे योगरत्नं शेषमन्त्रोपबृंहितम् ।
विधाय च पुनर्ध्यानमावाहनमथाचरेत् ॥
मुद्राविभक्तिकलितं साधको मीलितेक्षणः ।
मूलमन्त्रेणाथ सावयवीकृत्य विभावनैः ॥
मन्त्राक्षरैः षडङ्गानि विन्यसेत् तदुपस्पृशन् ।
मूलपीठप्रतिष्ठायां यो मनुः प्रागुदीरितः ॥
यन्त्रमूर्त्योस्तु तेनैव प्रतिष्ठां स्थिरयोश्चरेत् ।
मृन्मूर्त्तिपत्रिकाकुम्भशूलास्यादिष्वपि प्रिये ॥
केचनेच्छन्ति तन्मन्त्रं नैव कापालिकादयः ।
अन्यान् पौराणिकान् मन्त्रान् वैदिकानपि काँश्चन ॥
ईरयेत् पीठिकाकुम्भमाहेयप्रतिमादिषु ।
ताँस्ते वदामि सुतनु नन्दिकेश्वरभाषितान् ॥
हस्तं दत्वा पत्रिकायां तारादि तत्सदित्यपि ।
त्रिरुदीर्य पठेन्मन्त्रानेवैतान् स्थिरपीठयोः ॥
आगच्छ मद्गृहे देवि अष्टाभिः शक्तिभिः सह ।
पूजां गृहाण विधिवत् सर्वकल्याणकारिणि ॥
एह्येहि भगवत्यम्ब शत्रुक्षयजयप्रदे ।
भक्तितः पूजयामि त्वां नवदुर्गे सुरार्चिते ॥

दुर्गे देवि समागच्छ सान्निध्यं चापि कल्पय ।
यज्ञभागं गृहाण त्वमष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥
शारदीयामिमां पूजां करोमि त्रिदशार्च्चिते ।
आज्ञापय महादेवि दैत्यदर्पनिषूदनि ॥
दुष्पारे घोरसंसारे सागरे पतितं सदा ।
त्रायस्व वरदे देवि नमस्ते शङ्करप्रिये ॥
ये देवा याश्च देव्यश्च चलितायां चलन्ति हि ।
आवाहयामि तान् सर्वांश्चण्डिके परमेश्वरि ॥
प्राणान् रक्ष यशो रक्ष रक्ष दारान् सुतं धनम् ।
सर्वरक्षाकरी यस्मात् त्वं हि देवि जगत्प्रिये ॥
प्रविश्य तिष्ठ यज्ञेऽस्मिन् यावत् पूजां करोम्यहम् ।
मे नानन्दकरे देवि सर्वसिद्धिं च देहि मे ॥
आगच्छ चण्डिके देवि सर्वकल्याणहेतवे ।
पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शङ्करप्रिये ॥
आवाहयामि देवि त्वां मृन्मये श्रीफले तथा ।
त्रिशूले कलशे खड्गे मण्डले चित्र एव च ॥
कैलासशिखराद्देवि विन्ध्याद्रेर्हिमपर्वतात् ।
आगत्य बिल्वशाखायां चण्डिके कुरु सन्निधिम् ॥
स्थापिताऽसि मया देवि पूजये त्वां प्रसीद मे ।
चण्डे चण्डात्मिके चण्डि चण्डविग्रहधारिणि ॥
बिल्वशाखां समाश्रित्य तिष्ठ देवि गणैः सह ।
अथ वा मृन्मये कुम्भे त्रिशूले खड्ग एव च ॥
तथा चित्रपटे वाऽरिनृमुण्डे वह्निमण्डले ।

सर्वंगा त्वं समागत्य सान्निध्यमिह कल्पय ॥
देवि त्वं जगतां मातः सृष्टिसंहारकारिणि ।
मण्डलेषु समस्तेषु सान्निध्यमनुकल्पय ॥
चतुर्विंशतिसङ्ख्येषु अधिष्ठेयेषु चण्डिके ।
आगत्य शारदीं पूजां गृह्ण देवि प्रसीद मे ॥
आवाहिताऽसि देवि त्वं निखिले मण्डले तव ।
भूत्वाऽत्रैव स्थिरात्म त्वं मद्देहे कामदा भव ॥
चण्डि त्वं चण्डरूपाऽसि सुरतेजःसमुद्भवे ।
परिवारैः समागत्य स्थितिमत्र कुरु द्रुतम् ॥
अष्टादशैतान् प्रजपेन्मन्त्रान् पौराणिकान् प्रिये ।
ततो हंसः शुचीत्येवं प्रतद्विष्णुस्तवेत्यपि ॥
तथा विष्णुर्योनिमिति तार्त्तीयकतयोदितम् ।
तारव्याहृतिपूर्वा च गायत्री तारपश्चिमा ॥
त्र्यम्बकं चेति पञ्चैतान् वैदिकान् प्रजपेन्मनून् ।
नेमानपि स्थिरे पीठे मूर्त्तौ वा परिकल्पयेत् ॥
अतः प्राणप्रतिष्ठां वै कुर्वीत मनुविस्तरैः ।
आद्येन नित्यख्यातेन निमित्तोक्तेन तत्परम् ॥
आख्यास्यमानतार्त्तीयमनुना तदनन्तरम् ।
तच्च शारदपूजायां नेतरस्यां कदा चन ॥
पीठमूर्त्योरपि तथा मण्डले नेतरत्र च ।
तारमैधत्रपारावयोगिन्यो डाकिनी तथा ॥
फेत्कारीकूर्चवनिता बीजानीमानि वै नव ।
एह्येहि भगवत्येवं ततो ब्रूयात् पदत्रयम् ॥

त्रयस्त्रिंशत्कोटिपदात् तथा त्रिदशशब्दतः ।
तेजःकल्पितशब्दाच्च शरीरे परिकल्पयेत् ॥
पदात् तथा च महिषासुरतो मर्दिनीत्यपि ।
ततो जगन्नयेत्युक्त्वा पालिनि प्रतिकीर्त्तयेत् ॥
कामप्रसादपाशाश्च नृसिंहकमले ततः ।
आगच्छद्वितयं चापि सान्निध्यं कल्पयद्वयम् ॥
पूजालयं प्रविश्योक्त्वा तिष्ठयुग्ममतः परम् ।
ततो विसन्ध्यष्टशक्तिपदात् परिवृते वदेत् ॥
ज्वलयुग्मं प्रज्वलयुगं स्फुर प्रस्फुर चेदृशम् ।
अङ्कुशप्रेतभैरव्योऽमाहारप्रलयास्ततः ॥
विद्युन्महाक्रोधताराः शिरः शेषे ततः परम् ।
शतमष्टादशोपेतं वर्णानामत्र वै मनौ ॥
मन्त्रत्रयेणामुनैव कुर्यात् प्राणप्रतिष्ठितम् ।
मृन्मूर्त्तिपत्रिकाकुम्भादिषु सर्वान्तिमं मनुम् ॥
श्रौतं पठेन्मनोजूतिरिति कौलेतरो नरः ।
नैमित्तिकोक्तेन तथा कुर्यादावाहनं ततः ॥
मन्त्रेण त्रिरुदीर्णेन न पत्र्यां पीठ एव हि ।
अथ कौलादयः कुर्युरस्मिन्नवसरे प्रिये ॥
नैमित्तिकेन विधिना पात्रस्थापनमुत्तमम् ।
न्यासौघान् पुरतः कृत्वा नैमित्तिकविधीरितान् ॥
शक्तौ तु पञ्चकान् सर्वान् षोढात्रितयमेव हि ।
माहेयपत्र्योर्नैतां वै प्रकुर्वीत कदा चन ॥
पात्राणां स्थापनं चापि कुर्यात् स्वेन मतेन हि ।

विचाररीती एषां वै नैमित्तिक उदीरिते ॥
सा कल्पना च ते मन्त्राः स क्रमः संस्थितिश्च सा ।
ते न्यासाः शोधनं तच्च वस्तु वा तर्पणं च तत् ॥
शरदर्चापीठमन्त्र्योर्नैमित्तिकसमर्हणात् ।
कस्यापि मत ईशानि नैवाणुरपि भिद्यते ॥
विशिष्यातो मया तन्त्रपौराणिकविधिद्वयम् ।
उच्यते स मनुः प्रायो बुद्धिमद्बुद्धिगोचरः ॥
पत्रिकादिषु पौराणं तान्त्रिकं पीठ एव हि ।
वस्त्वर्पणस्य प्रत्येकं ये मन्त्राः पूर्वमीरिताः ॥
नैमित्तिकार्चनविधौ ग्राह्यास्तेऽत्रापि पार्वति ।
प्रत्येकं मनवो ये वै पत्रिकादिषु संस्थिताः ॥
तानिदानीं प्रवक्ष्यामि तत्तद्वस्त्वर्पणाविधौ ।
यथा तत्तन्मनूच्चारादनुमूलमनूदितान् ॥
कथ्यते वस्तुदानाय तथाऽत्रापि सुरेश्वरि ।
पौराणिकमनुं प्रोच्य तदन्ते परिकीर्त्तयेत् ॥
द्वात्रिंशद्वर्णकं मन्त्रमथ वा भैरवोदितम् ।
कात्यायनोपासितं यज्जयदुर्गादशाक्षरम् ॥
ताभ्यां पौराणिकाचार्यां वस्तुदानसमुद्धृतेः ।
द्वयोरशक्तावेकं वा आवश्यकतयेरयेत् ॥
वक्ष्ये तयोरुद्धृतिं तदाद्यं नन्दीश्वरार्च्चितम् ।
तारत्रपाभ्यां ङेन्ता स्याद्दक्षयज्ञविनाशिनी ॥
महाघोराऽपि च तथा योगिनीकोटिशब्दतः ।
तद्वत् परिवृता कार्या मायाबीजं ततः परम् ॥
पूर्ववद्भद्रकाली च हृन्मन्त्रः सर्वशेषगः ।

अथ वा तारतो दुर्गां इति वारद्वयं वदेत् ॥
सम्बुद्ध्यन्तां रक्षणीं च तर्जनीमनुरन्त्यगः ।
यद्यपीमौ मनू देवि तान्त्रिकौ समुदीरितौ ॥
तथाऽपि पौराणिकान्ते नियोज्यौ तत्तदर्हणे ।
अथ सर्वोपचारीयान् वक्ष्ये पौराणिकान्मनून् ॥
पूर्वमेवोदिताः सन्ति निमित्तार्चासु तान्त्रिकाः ।
त एवात्र नियोक्तव्याः प्रत्येकं तत्तदर्पणे ॥
पत्रिकादिषु पौराणाः पीठमूर्त्योस्तु तान्त्रिकाः ।
आसनं पाद्यमर्घ्यं च ततोऽन्वाचमनीयकम् ॥
मधुपर्कं स्नानजलं वस्त्रं भूषणचन्दने ।
पुष्पं धूपं च दीपं च नेत्राञ्जनमतः परम् ॥
अलक्तं चापि नैवेद्यं प्रदक्षिणनमस्कृती ।
उपचारा इमे प्रोक्ता देवीतुष्टिविधायकाः ॥
यद्यद्वै दीयते द्रव्यमलङ्कारादिकाञ्चनम् ।
तेषां दैवतमुच्चार्य कृत्वा च प्रोक्षणार्चने ॥
उत्सृज्य तत्तन्मन्त्रेण तत्तन्नाम्ना निवेदयेत् ।
सर्वशुद्धिं तु पौराणक्रमेण धरयाऽऽचरेत् ॥
इदं त आसनं दत्तं मया सुरवरार्च्चिते ।
भवैतस्मिन्निषण्णा त्वं यावत् पूजां करोम्यहम् ॥
दूर्वापराजितापद्मश्यामाकसहितं जलम् ।
पाद्याय कल्पते देवि विशेषार्चासु नान्यथा ॥
पाद्यं गृह्ण *मया दत्तं सर्वदुःखापहारकम् ।

---

* महादेवि इति ४ ५ पु० पा० ।

त्रायस्व वरदे देवि घोरादस्माद्भवार्णवात् ॥
स्नाने वस्त्रे च नैवेद्ये दद्यादाचमनीयकम् ।
तच्च स्वधापदैर्दद्यान्मधुपर्कं तथा प्रिये ॥
अर्घं स्वाहापदेनैव सर्वमन्यन्नमःपदैः ।
गन्धपुष्पाक्षतयवकुशाग्रतिलसर्षपान् ॥
विल्वपत्रक्षीरदूर्वासहितं सलिलं शुचि ।
शङ्खपात्रगतं कृत्वा कालिकायै निवेदयेत् ॥
दूर्वाक्षतसमायुक्तं विल्वपत्रसमन्वितम् ।
शोभनं शङ्खपात्रस्थं गृहाणार्घं हरप्रिये ॥
नानातीर्थोद्भवं वारि सर्ववस्तूपकल्पितम् ।
गृहाणार्घमिमं देवि जगद्धात्रि नमोऽस्तु ते ॥
चन्द्रजातीलवङ्गैलाकक्कोलसहितं जलम् ।
विशेषाचमनीयं वै दद्याद्देव्यै फलेच्छया ॥
आमोदवस्तुसुरभीकृतमेतदनूत्तमम् ।
गृहाणाचमनीयं त्वं मया भक्त्या निवेदितम् ॥
इमा आपो मया भक्त्या तव पादतलेऽर्पिताः ।
आचामय महादेवि प्रीता शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
सुराभावे घृतदधि मधु कांस्ये निवेदयेत् ।
मधुपर्कं तदुद्दिष्टं प्रार्थनीयं दिवौकसाम् ॥
मधुपर्कं महेशानि ब्रह्मणा परिकल्पितम् ।
मया निवेदितं तुभ्यं गृहाण जगदीश्वरि ॥
मधुपर्कप्रदानान्ते पुनराचमनीयकम् ।
दातव्यं प्राशनान्तेऽस्य यत उच्छिष्टता भवेत् ॥

वारीदं हि ममामोदि प्रसन्नं मेध्यमेव च ।
मया निवेदितं भक्त्या स्नानीयेन सुरेश्वरि ॥
नानावर्णसमायुक्तपट्टसूत्रादिनिर्मितम् ।
वासः शुक्लं तथा रक्तं गृहाण त्रिदशेश्वरि ॥
देहशोभाकरं पूतं रञ्जितं नागवस्तुभिः ।
परिधत्स्व जगद्धात्रि वासो भक्त्या निवेदितम् ॥
वाससः परिधानान्ते पुनराचमनीयकम् ।
दातव्यं भक्तिभावेन स्मृत्युक्तत्वान्मनुष्यवत् ॥
दिव्यरत्नसमायुक्ता वह्निभानुसमप्रभाः ।
अलङ्कारास्तवाङ्गानि शोभयन्तु सुरेश्वरि ॥
अनुलेपनमेतत् ते महासुरभि शीतलम् ।
मया निवेदितं देवि गृहीत्वा लेपयाङ्गकम् ॥
इदं कुसुममामोदि ग्रामारण्यसमुद्भवम् ।
प्राणसन्तर्पणं हृद्यं मया दत्तं प्रगृह्यताम् ॥
कर्पूरागुरुसंमिश्रो वनस्पतिरसोद्भवः ।
मया निवेदितो धूपो देवदेवि प्रगृह्यताम् ॥
अग्निर्ज्योतो रविर्ज्योतिश्चन्द्रज्योतिस्तथैव च ।
ज्योतिषामुत्तमं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
त्वं चन्द्रसूर्यज्योतींषि विद्युदग्न्योस्तथैव च ।
त्वमेव जगतां ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
स्निग्धमुष्णं हृद्यतमं दृशां शोभाकरं तव ।
गृहीत्वा कज्जलं सद्यो नेत्राण्यञ्जय पार्वति ॥
त्वत्पादाम्भोजनखरद्युतिकारि मनोरमम् ।

अलक्तकमिदं देवि मया दत्तं प्रगृह्यताम् ॥
नानाविधानि रम्याणि स्वादूनि रसवन्ति च ।
मया दत्तानि गृह्यन्तां नैवेद्यानि सुरार्च्चिते ॥
फलमूलानि सर्वाणि ग्रामकाननजानि च ।
नानाकारसुगन्धीनि गृहाण *परमेश्वरि ॥
चतुर्विधमिदं भोज्यं देवि षड्भी रसैर्युतम् ।
सदा तृप्तिकरं रम्यमिदमन्नं प्रगृह्यताम् ॥
गव्यसर्पिःपयोयुक्तं नानामधुरमिश्रितम् ।
निवेदितं देवि मया परमान्नं प्रगृह्यताम् ॥
अमृतै रचितं दिव्यं घृतखण्डविनिर्मितम् ।
पिष्टकं विविधं स्वादु गृहाण हरवल्लभे ॥
मोदकं स्वादु रुचिरं कर्पूरादिभिरन्वितम् ।
मिश्रं नानाविधैर्द्रव्यैः प्रतिगृह्याशु भुज्यताम् ॥
ताम्रपात्रे स्थितं सीधुं पयो गव्यमथात्र वा ।
नारिकेलोदकं कांस्ये गृहाण शङ्करप्रिये ॥
पानीयं शीतलं स्वच्छं प्रसन्नं घनसारयुक् ।
भोजने तृप्तिकृद्देवि कृपया प्रतिगृह्यताम् ॥
भोजनान्ते प्रदातव्यं पुनराचमनीयकम् ।
पूर्वोक्तेनैव मन्त्रेण सर्वत्रैव शुचिस्मिते ॥
फलपत्रकसंयुक्तं कर्पूरादिसुवासितम् ।
मुखकान्तिकरं हृद्यं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥
दूर्वाङ्कुरं ततो देव्यै दद्यात् साधकसत्तमः ।

---

* हरप्रिये इति ५ पु० पा० ।

नमस्ते सर्वगे देवि नमस्ते भुक्तिमुक्तिदे ॥
दूर्वां गृहाण देवि त्वं मां निस्तारय सङ्कटात् ।
विल्वपत्रं ततो देव्यै पृथक्त्वेन *निवेदयेत् ॥
अमृतोद्भवं श्रीयुक्तं महादेवप्रियं सदा ।
पवित्रं ते प्रयच्छामि पत्रं मालूरशाखिनः ॥
नानापुष्पेण रचितां स्तनबद्धां सुगन्धिनीम् ।
प्रभ्रष्टां लम्बनां चापि तव देवि निवेदये ॥
सर्वशेषे प्रदातव्यं सिन्दूरं पत्रिकार्च्चने ।
अनुलेपनकाले तु पीटमूर्त्यो र्भिदेयती ॥
अलिकादिकशोभायाः कारकं रागसम्भवम् ।
अतिरागि समुत्पिञ्जसिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥
चमरीपुच्छजं श्वेतं हेमदण्डि सुलोम च ।
मयाऽर्पितं राजचिह्नं चामरं प्रतिगृह्यताम् ॥
वर्हिवर्हकृताकारं मध्यदण्डसमन्वितम् ।
गृह्यतां व्यजनं देवि देहस्वेदापनुत्तये ॥
येन भीषयसे दैत्यान् येन पूरयसेऽम्बरम् ।
तां घण्टां ते प्रयच्छामि महिषघ्नि† प्रगृह्यताम् ॥
दीपैरनेकैर्विहितमारात्रिकमिदं शुभम् ।
निवेदयामि ते देवि संहराज्ञानजं तमः ॥
सर्वशेषे प्रदातव्यं पुष्पाणामञ्जलित्रयम् ।
तन्मनुस्तु वरारोहे दुर्गागायत्र्युदीरिता ॥

---

* प्रदीयते इति ३, ४, ५ पु० पा० ।

† प्रसीद मे इति ३, ४, ५ पु० पा० ।

ॐ चण्डिकायै विद्महे भगवत्यै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात् ।

अनेन विधिना यस्तु मन्त्रैरभिश्च पार्वति ।
महिषघ्नीं महामायां पत्रिकासु प्रपूजयेत् ॥
अश्वमेधफलं प्राप्य स गच्छेच्चण्डिकालयम् ।
इहापि च भवेत् सद्यः कल्याणानां स भाजनम् ॥
पूजारीतिर्वरारोहे पीठमूर्त्योरपीदृशी ।
मन्त्रभेदः परो ज्ञेयः पात्राणां स्थापनं तथा ॥
प्रत्येकं तु ततः कुर्यात् पत्रिकाणां तु पूजनम् ।
यावच्छक्त्योपचारेण मन्त्रेणापि पृथक् पृथक् ॥
एका तत्तदधिष्ठात्री देवता परिकीर्त्तिता ।
तत्तन्नाम्ना चतुर्थ्यन्तां समवाह्यार्चयेत् प्रिये ॥
आदौ तु रम्भाधिष्ठात्री ब्रह्माणी परिकीर्त्तिता ।
कालिका कच्च्यधिष्ठात्री त्रिपुरघ्नेन भाषिता ॥
दुर्गा हरिद्राधिष्ठात्री जयन्त्यां कार्त्तिकी तथा ।
शिवा च बिल्वाधिष्ठात्री दाडिमाधिष्ठिता तथा ॥
शत्रुसङ्घक्षयकरी विज्ञेया रक्तदन्तिका ।
मुनिभिः शोकरहिताऽशोकाधिष्ठात्र्युदीरिता ॥
तथैव मानाधिष्ठात्री चामुण्डा परिकीर्त्तिता ।
लक्ष्मीश्च धान्याधिष्ठात्री नन्दीशेनोपपादिता ॥
नवपत्रिकाधिष्ठात्री कात्यायन्यप्युदीरिता ।
यथाऽऽसां क्रमतो देवि नामान्युक्तानि ते मया ॥
तथैव मन्त्रमेकैकं क्रमेण प्रब्रवेऽधुना ।

ब्रह्माणि त्वं ससागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय ॥
रम्भारूपेण सर्वत्र शान्तिं कुरु नमोऽस्तु ते ।
महिषासुरयुद्धेषु कच्चीभूताऽसि कालिके ॥
मनुष्यानुग्रहार्थाय लोकमेनमुपागता ।
हरिद्रे वरदे देवि दुर्गारूपाऽसि शोभने ॥
मम विघ्नविनाशाय पूजां गृह्ण प्रसीद मे ।
निशुम्भशुम्भमथने सेन्द्रैर्देवगणैः पुरा ॥
जयन्ती पूजिताऽसि त्वमस्माकं वरदा भव ।
महादेवप्रियकरो वासुदेवप्रियः सदा ॥
सदा कालीप्रीतिकरो विल्ववृक्ष नमोऽस्तु ते ।
दाडिमि त्वं पुरा युद्धे रक्तबीजस्य संमुखे ॥
चामुण्डाप्रीतिमकरोत् तस्मात् त्वां पूजयाम्यहम् ।
हरप्रीतिकरो वृक्षो ह्यशोकः शोकनाशनः ॥
दुर्गाप्रीतिकरस्त्वेन मामशोकं सदा कुरु ।
यस्य पत्रे वसेद्देवी मानवृक्ष शचीप्रिय ॥
ममैवानुग्रहार्थाय पूजां गृह्ण सुरेश्वरि ।
जगतः प्राणरक्षार्थं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥
उमाप्रीतिकरं धान्यं तस्मात् त्वं रक्ष मां सदा ।
पत्रिके नवदुर्गे त्वं महादेवमनोहरे ॥
पूजां समास्तां संगृह्य रक्ष मां त्रिदशेश्वरि ।
प्रत्येकमित्थं संपूज्य मन्त्रैरेतैरुदीरितैः ॥
नामाभ्यामपि ङेन्ताभ्यामुक्ताभ्यां पूर्वमेव ते ।
सामान्यपीठन्यासोक्तनामभिर्ङेन्तबृंहितैः ॥

दिक्पालानपि नित्योक्तवाहनायुधसंयुतान् ।
वस्तुभिः पीठमूर्त्यैस्तु नित्यनैमित्तिकोदितैः ॥
प्राभृत्यार्चनविस्तारैर्यजेत परमेश्वरीम् ।
यावती कथिता नित्य इतिकर्त्तव्यता मया ॥
यथा नैमित्तिके चापि ह्यीमपि नियोजयेत् ।
संप्रयोगममन्त्राणामवदन्नैत्यके विधौ ॥
तं केवलं विधायेशि सर्वमन्यमुपाचरेत् ।
नैमित्तिकीयः संग्राह्योऽन्यः सर्व उभयात्मकः ॥
प्रयोगो यादृशीयस्तु तादृशोयं हि तर्पणम् ।
शक्तौ तु पत्रिकार्चायां दशास्त्राणि प्रपूजयेत् ॥
इन्द्रैस्तारहृदो मध्येऽधिष्ठितैस्तत्तदक्षरैः ।
ततोऽनु सर्वपूजान्ते पूजयेन्महिषासुरम् ॥
बलिं दद्यात् स्वशक्त्या च पशूनपि खगानपि ।
नैमित्तिके तद्विधानं प्रागेव तव कीर्त्तितम् ॥

इति सप्तमीकृत्यम् ।

अथाष्टमीकृत्यम् ।

तत्रैव ।

एतावत् सप्तमीकृत्यमथाष्टम्यर्चनं शृणु ।
सप्तम्युक्तविधानं हि पूर्वमेवानुवर्त्तते ॥
अधिकं यत् तदाख्यास्ये सर्वमन्यत् पुरोक्तवत् ।
शोधनं द्रव्यजातानामासनादेस्तथैव च ॥
प्राणायामो भूतशुद्धिर्मातृकान्यास एव च ।
तथा पीठषडङ्गाख्यन्यासौ न्यासान्तराण्यपि ॥
विधाय पूर्वोक्तरीत्या च महाकालं तथैव च ।

दर्पणे प्रतिबिम्बं च कारयित्वा पुरोक्तवत्॥
दन्तकाष्ठं निवेद्याथ संकल्पं विरचय्य च।
अर्घसंस्थापनादीनि विधाय च पुरोक्तवत्॥
समाप्यात्मार्च्चनं चापि घटे गणपतिं यजेत्।
सूर्यादीनपि पञ्चायतनान् संपूज्य यत्नतः॥
ध्यात्वाऽथ मानसैरेवोपचारैः परिपूज्य च।
उपचारैः षोडशभिर्महामायां समर्च्चयेत्॥
तैस्तैर्मन्त्रैस्तदनुक्रमतश्चापि पार्वति।
मुद्राप्रदर्शनैस्तैस्तैरुपचारनिवेदनैः॥
पीठमूर्त्तीस्तान्त्रिकोक्तरीत्या पूजनमाचरेत्।
पत्रिकासु च पौराणक्रमतो जगदीश्वरि॥
कृत्वाऽवरणपूजां हि पीठे द्वाभ्यां समाचरेत्।
नित्यनैमित्तिकोक्ताभ्यां महाष्टम्यर्च्चनक्रमे॥
विशेषं कं चिदाख्यास्ये पत्रिकायाः प्रपूजने।
पूर्वादिवसुकोणेषु दशोपचरणैर्यजेत्॥
देव्याः शक्तीः क्रमेणैवोग्रचण्डाद्या विशेषतः।
मन्त्रमालामयोसंस्थैर्मन्त्रैरासां तु कौलिकः॥
नन्दिकेशपुराणोक्तैर्मनुभिः पद्यरूपिभिः।
श्रुत्यध्वन्याः पूजयेयुरुग्रचण्डादिकाः प्रिये॥
मनूंस्तदीयानधुना ब्रवीमि तव सुन्दरि।
तारह्रीकमला आदौ मध्ये ङेन्ताभिधा तथा॥
अन्ते हृन्मनुरेवं हि परिपाटी प्रकीर्त्तिता।
उग्रचण्डा तु भयदा मध्याह्नार्कसमप्रभा॥

सा मे सदाऽस्तु वरदा तस्यै नित्यं नमो नमः ।
प्रचण्डे पुत्रदे नित्यं प्रचण्डगणसंभृते ॥
जगदानन्ददे देवि प्रसन्ना भव सर्वदा ।
चण्डोग्रे *भूतरूपाऽसि सर्वभूतभयप्रदा ॥
सौम्या भूता मयि सदा वरदा भव शोभने ।
या सिद्धिरिति नाम्ना तु देवेशेन प्रकाशिता ॥
शासि त्वं साऽसि देवेशि नमस्ते चण्डनायिके ।
देवि चण्डात्मिके चण्डे चण्डारिविजयप्रदे ॥
धर्ममोक्षप्रदाऽसि त्वं नित्यं मे वरदा भव ।
या सृष्टिस्थितिसंहारगुणत्रयसमन्विता ॥
यस्याः परा न चान्याऽस्ति चण्डवत्यै नमो नमः ।
चण्डरूपा महाचण्डा चण्डनायकचण्डिका ॥
सर्वसिद्धिप्रदा देवि तस्यै नित्यं नमो नमः ।
बालार्कारुणनेत्रा या सर्वदा भक्तवत्सला ॥
चण्डासुरस्य मथनी वरदा साऽस्तु चण्डिका ।
ततोऽष्टदलपद्मस्य अष्टावृत्या दलेषु च ॥
यजेच्चतुःषष्टिमिता योगिनीगणरूपिणीः ।
तारत्रयं पुरो दत्वा शेषे नम इदं पदम् ॥
ङेन्तं ततो नाम तासां मध्ये कृत्वा नियोजयेत् ।
उपचारैः पञ्चभिर्वा पुष्पैर्वा केवलाक्षतैः ॥
ब्रह्माणी चण्डिका रौद्री गौरीन्द्राणी तथैव च ।
कौमारी भैरवी दुर्गा नारसिंही च कालिका ॥

---

* घोररूपाऽसि इति २, ४, ५, पु० पा० ।

चामुण्डा शिवदूतो च वाराही कौशिकी तथा ।
माहेश्वरी शङ्करी च जयन्ती सर्वमङ्गला ॥
करालिनी मुक्तकेशी शिवा शाकम्भरी तथा ।
भीमा शान्ता भ्रामरी च रुद्राणी चण्डरूपिणी ॥
क्षमा धात्री स्वधा स्वाहा अपर्णा च महोदरी ।
घोररूपा महाकाली विद्युज्जिह्वा कपालिनी ॥
क्षेमङ्करी महामाया मेघमाला बलाकिनी ।
शुष्कोदरी चण्डघण्टा महाप्रेता प्रियङ्करी ॥
*खरतुण्डी ऋक्षकर्णी बलप्रमथनी तथा ।
†मनोमथन्यपि तथा सर्वभूतदमन्यपि ॥
उमा तारा महानिद्रा विजया च जया तथा ।
शैलपुत्री महोल्का च त्रिशूलिन्यञ्जनप्रभा ॥
कूष्माण्डी विश्वसंत्रासा तथा कात्यायनी परा ।
कालरात्रिर्महागौरी चतुःषष्टिरिमा मताः ॥
पूजयेन्मण्डलस्यान्ते सर्वकामार्थसिद्धये ।
पुनश्च कोटियोगिन्यः पूज्या एकाख्यया प्रिये ॥
पद्मपत्राग्रहाग्रेषु पूर्ववन्मन्त्रकल्पनैः ।
ततो देवीसन्निधाने सम्यग्दुर्गा फलप्रदा ॥
ऐशान्यादिक्रमे द्वे द्वे मध्ये वा नव पूजयेत् ।
आसामप्युग्रचण्डादिवन्मन्त्रः परिकीर्त्तितः ॥
पाद्यादिभिः पूर्ववच्च तत्तन्मन्त्रैः प्रपूजयेत् ।

---

* खरकर्णी इति ४ पु० पा० ।

† मनोत्मथन्यपि इति सर्वपुस्तकेषूपलभ्यते ।

मृत्युञ्जयप्राणसंस्थैरथ पौराणिकैरपि ॥
पूर्वपक्षः कौलिकानामुत्तरः श्रुतिशालिनाम् ।
तन्मन्त्रानधुना वक्ष्ये सावधाना निशामय ॥
चतुर्मुखीं जगद्धात्रीं हंसारूढां वरप्रदाम् ।
सृष्टिकर्त्रीं महाभागां ब्रह्माणीं तां नमाम्यहम् ॥
वृषारूढां शिवां भद्रां त्रिनेत्रां वरदां शिवाम् ।
माहेश्वरीं नमस्यामि जगत्संहारकारिणीम् ॥
कौमारीं पीतवसनां मयूरवरवाहिनीम् ।
शक्तिहस्तां शोणदेहां नमामि वरदां सदा ॥
शङ्खचक्रगदापद्मधारिणीं कृष्णविग्रहाम् ।
स्थितिरूपां खगेन्द्रस्थां वैष्णवीं प्रणमाम्यहम् ॥
वराहरूपिणीं देवीं दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धराम् ।
शुभदां नीलवसनां वाराहीं तां नमाम्यहम् ॥
नृसिंहरूपिणीं भीमां दैत्यदानवघातिनीम् ।
विकरालनखां शुभ्रां नारसिंहीं नमाम्यहम् ॥
इन्द्राणीं गजकुम्भस्थां सहस्रनयनां शुभाम् ।
नमामि वरदां देवीं सर्वदेवनमस्कृताम् ॥
चामुण्डां मुण्डमथनीं मुण्डमालोपशोभिताम् ।
अट्टाट्टहासमुदितां नमाम्यात्मविभूतये ॥
कात्यायनीं दशभुजां महिषासुरमर्दिनीम् ।
प्रसन्नवदनां देवीं वरदां प्रणमाम्यहम् ॥
चण्डिके नवदुर्गे त्वं महादेवप्रिये सदा ।
पूजां समस्तां संगृह्य रक्ष मां त्रिदशेश्वरि ॥

कात्यायन्याश्च दुर्गाया मन्त्रद्वयमिदं मतम् ।
इमे तेनैव मन्त्रेण पूजयेत् सुरवन्दिते ॥
पुनः पूर्वोक्तविधिना देवीरेकादशार्च्चयेत् ।
जयन्तीं मङ्गलां कालीं भद्रकालीं कपालिनीम् ॥
दुर्गां क्षमां शिवां धात्रीं स्वधां स्वाहां च पूजयेत् ।
ततोऽस्त्रपूजां कुर्वीत सप्तम्यर्च्चनतोऽधिकाम् ॥
प्रणवाद्यैर्नमोऽन्तैश्च मन्त्रैरेव सुरेश्वरि ।
आदौ तु दक्षिणे भागे ततो वामे प्रपूजयेत् ॥
पाद्यादिभिस्त्रिशूलादीन् केवलैरक्षतैरथ ।
सर्व्वायुधानां प्रथमो निर्म्मितस्त्वं पिनाकिना ॥
शूलसारं समाकृष्य कृत्वा मुष्टिग्रहं शुभम् ।
असिर्व्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ॥
श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्म्मपाल नमोऽस्तु ते ।
चक्र त्वं विष्णुरूपोऽसि विष्णुपाणौ सदा स्थितः ॥
देवीहस्तगतश्चासि चक्रराज नमोऽस्तु ते ।
सर्व्वायुधानां श्रेष्ठस्त्वं दैत्यसेनानिषूदन ॥
भयेभ्यः सर्व्वदा रक्ष तीक्ष्णबाण नमोऽस्तु ते ।
शक्ते त्वं सर्व्वदेवानां गुहस्य च विशेषतः ॥
शक्तिरूपेण सर्व्वत्र रक्षां कुरु नमोऽस्तु ते ।
रक्षारूपेण खेट त्वमरिसंहारकारकः ॥
सदा देवीकरगत मां रक्ष बहुसङ्कटात् ।
सर्व्वायुधमहामात्र सर्व्वासुरनिषूदन ॥
चाप मां सर्व्वतो रक्ष साकं सायकसत्तमैः ।

पाश त्वं नागरूपोऽसि विषपूर्णो विषोदरः ॥
शत्रूणां दुःसहो नित्यं नागपाश नमोऽस्तु ते ।
अङ्कुशोऽसि नमस्तुभ्यं गजानां त्वं नियामकः ॥
देवानामपि रक्षार्थं पार्वत्याऽसि धृतः करे ।
यस्या निनादमाकर्ण्य शक्रमूत्रे प्रसुस्रुवः ॥
दैत्यसङ्घाः पाहि सा त्वं घण्टे नानाविधाद्भयात् ।
परशो त्वमतितीक्ष्णोऽसि सर्ववैरिविमर्दन ॥
देवीहस्तगतश्चासि सदा तुभ्यं नमो नमः ।
यानि यानीह मुख्यानि प्रसिद्धान्यायुधानि च ॥
क्षयकारीणि शत्रूणां विख्यातानि जगत्त्रये ।
यानि यान्यम्बिका धत्ते करेषु स्वेषु सर्वदा ॥
भुशुण्डीपाशपरिघभिन्दिपालास्तु लागुडाः ।
ऋष्टितोमरकुन्ताश्च पट्टिशो मुशलस्तथा ॥
गदाशतघ्नीकुणपच्छुरिकाकर्त्तरीमुखाः ।
सर्वांस्तान् पूजयाम्यद्य महाष्टम्यां विशेषतः ॥
सर्वे रक्षन्तु मां नित्यं सर्वसिद्धिं ददत्वपि ।
तारात् कूर्चाच्च दुर्गायै सर्वायुधपदान्यपि ॥
धारिण्यै नम उच्चार्य दद्यात् पुष्पाञ्जलित्रयम् ।
ततो देव्याः किरीटादीनलङ्कारान् प्रपूजयेत् ॥
ताराद्येन नमोऽन्तेन नाम्ना ङेन्तेन तस्य च ।
ततः प्रपूजयेद्देव्याः सिंहासनमनुत्तमम् ॥
ताराद्वज्रनखदंष्ट्रायुधाय परिकीर्त्य हि ।
महासिंहाय हुँ हृच्च सिंहमेतेन पूजयेत् ॥

यथोपकल्पितैरेवोपचारैः कुसुमाक्षतैः।
तदन्ते मनुनैतेन देव्याः सिंहासनं यजेत् ॥
आसनं चासि देव्यास्त्वं घोरदंष्ट्रोत्कटान्वितः।
हिमाद्रिशिखराकार सिंहराज नमोऽस्तु ते ॥
देव्या दत्तवरत्वेन विशेषान्महिषासुरम्।
अष्टम्यां च नवम्यां च पूजयेद्बहुविस्तरैः ॥
यावच्छक्योपचारैस्तु पाद्यादिभिरनेकधा।
नमोऽन्तः प्रणवादिश्च ङेन्तोऽन्तर्महिषासुरः ॥
एतेन मनुना सर्वोपचारानस्य चार्पयेत्।
न सामान्यासुरधिया साक्षाद्रुद्रधियैव हि ॥
पूजान्ते कीर्त्तयेन्मन्त्रानमून् बद्धाञ्जलिः प्रिये।
रुद्रोऽस्यसुरराज त्वं देवानां दर्पनाशकः ॥
पितुर्वरप्रार्थनया महिषीगर्भसम्भवः।
कात्यायन्या समं योद्धुं सामर्थ्यं कस्य विद्यते ॥
केनासुरेण विधृतः समरे मधुसूदनः।
केनान्येन विजित्याजौ त्रिदशाः सेवकीकृताः ॥
मन्वन्तरत्रयं केन भुक्तं राज्यमकण्टकम्।
बभूव कस्य वा सेना परार्धशतसंमिता ॥
रुद्ररूपधरायातो महिषासुर ते नमः।
ततः संपूजयेद्देवि चतुरो वटुकानपि ॥
सिद्धपुत्रं ज्ञानपुत्रं तथा सहजपुत्रकम्।
शेषे समयपुत्रं च मन्त्रमेषां निशामय ॥
वेदादिकमलाबीजे पुरतोऽन्ते नमोऽपि च।

तत्तन्नाम्ना सह तथा वटुको विग्रहीकृतः ॥
सङेन्त इति मन्त्राः स्युरेतेषां जगदीश्वरि ।
समस्तैरुपचारैस्तु यथाविभवकल्पितैः ॥
पूजयेद्वटुकान्नेताञ्छृणवन्यावृत्तिपूजनम् ।
पूजयेत् क्षेत्रपालाँश्च मध्ये किञ्जल्कपक्षयोः ॥
हेतुकं त्रिपुरघ्नं च अग्निजिह्वं तथैव च ।
अग्निवेतालसंज्ञं च कालं चाथ करालकम् ॥
एकपादं भीमनाथमुत्तरादिक्रमेण तु ।
अधुना मन्त्रमेतेषां ब्रवीमि शृणु पार्वति ॥
तारकूर्चक्षेत्रपालबीजत्रयमिदं पुरः ।
एतन्नाम्ना सह पुनः क्षेत्रपालः सविग्रहः ॥
ङेन्तो महाभीषणश्च तद्वदेव प्रकीर्त्तितः ।
क्रोधो हृच्छिरसी चापि मन्त्र एषां वरानने ॥
मण्डलस्य चतुर्दिक्षु द्वौ द्वौ मध्ये च पूजयेत् ।
भैरवान् नव देवेशि शरदर्चनकर्मणि ॥
असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्त एव च ।
आनन्दश्च कपाली च भीषणस्तदनन्तरम् ॥
संहारी सर्वशेषे स्यात् कीर्त्तिता नव भैरवाः ।
तारत्रपारोषबीजं तत्तन्नाम ततः परम् ॥
भैरवान्तं विग्रहि च ङेन्तं हृन्मन्त्रसंयुतम् ।
दिक्ष्वष्टसु बहिः पद्मादिग्गीशानष्ट पूजयेत् ॥
इन्द्रोऽग्निश्च यमश्चैव नैर्ऋतो वरुणस्तथा ।
वायुः सोमश्च ईशान एतन्नाम्ना परिस्थिताः ॥

वज्रं शक्तिश्च दण्डश्च खड्गः पाशोऽङ्कुशस्तथा ।
ध्वजशूले अमीषां तु शस्त्राणि कथितानि ते ॥
नैर्ऋतो वरुणश्चापि मध्येऽनन्तः प्रकीर्त्तितः ।
तदस्त्रं चक्रमुदितं यथेन्द्रेशानमध्यतः ॥
ब्रह्मा सपद्म इत्येते दिगीशा दश ईरिताः ।
मन्त्ररीती इदानीं त्वं समाकल्पय भामिनि ॥
प्रणवं पुरतो दत्वा तत्तन्नाम ततः परम् ।
ततः परं तत्तदस्त्रं सशब्दपरिबृंहितम् ॥
सवाहनपरीवारं सायुधं तदनन्तरम् ।
शब्दाश्चत्वार इत्येते ङेन्ताः कार्या नमस्ततः ॥
ततो दद्याद्बलिं देव्यै पूर्वोदितविधानतः ।
अष्टम्यामधिकं दद्यात् सप्तमीबलिदानतः ॥

तन्त्रान्तरे ।

ततो यथाशक्ति जपं कृत्वा स्तोत्रमुदीरयेत् ।

बलिदानविधिः स्तोत्रं चाग्रे वक्ष्यते ।

तथा ।

साष्टाङ्गं प्रणमेद्भूमौ देवीं भक्तिपरायणः ।

( निर्णयामृते ) पुराणान्तरे ।

ततः खड्गं नमस्कृत्य शत्रूणां वधसिद्धये ।
इच्छेत विजयं राज्ये सुभिक्षं चात्मनो नृपः ॥
पुनः पुनः प्रणम्यार्यां संस्मरेद्धृदये शिवाम् ।
सर्वं कृत्वेति कौरव्य अष्टम्यां जागरं निशि ॥
*नटनाटकघोषैश्च कारयेच्च महोत्सवम् ।

---

नटनर्त्तकगीतैश्च इति ३, ४, ५ पु० पा० ।

अथाष्टमीनवम्योः सन्धौ चामुण्डापूजा ।

( महाकालसंहितायाम् )

अष्टमीनवमीसन्धौ कुर्वते केचिदर्चनम् ।
तत्सन्धिपूजनमिति पुराणादिषु कीर्त्तितम् ॥
नवम्यामर्धरात्रे वा तत्परेणापि पूजनम् ।
तान्त्रिकाः केचिदिच्छन्ति सिद्धिं तूभयथाऽर्चने ॥
चामुण्डारूपधारिण्यास्तत्र देव्यास्तु पूजनम् ।
विहितं नान्यरूपिण्याः कृत इत्येष निर्णयः ॥
तन्मन्त्रं ध्यानमस्यास्तु समाकल्पय साम्प्रतम् ।

चामुण्डाया मन्त्रध्याने तन्त्रान्तरोक्ताष्टमातृकाप्रकरणे वक्ष्यामः ।

तथा ।

एवं ध्यात्वा च सम्पूज्य विविधोपायनादिभिः ।
शक्तौ तु मार्त्तिकीः स्थालीः पूरयेदन्नतेमनैः ॥
पक्वान्नैरामम्मांसैश्च रुधिरैर्देयपक्षिणाम् ।
ताश्च संपूजयेद्गन्धैः रक्तपुष्पाक्षतैरपि ॥
उपरिष्टाद्धूपदीपैरखिलैर्मनुभिश्च यः ।
वलिं समुत्सृजेत् तेन महतीं श्रियमश्नुते ॥
शक्तियामे ततः पश्चात् केचित् कुर्वन्ति कौलिकाः ।
तद्विधानं पुरैवोक्तं तेनैवैतां समापयेत् ॥

अथ नवमीकृत्यम् ।

( भविष्यपुराणे )

नवम्यां श्रीसमायुक्ता देवैः सर्वैः सुपूजिता ।
जघान महिषं दुष्टमवध्यं देवतादिभिः ॥
लब्ध्वाऽभिषेकं वरदा शुक्ले चाश्वयुजस्य च ।

तस्मात् सा तत्र सम्पूज्या नवम्यां चण्डिका बुधैः ॥
महत्त्वं हि यतः प्राप्ता तत्र देवी सरस्वती।
तदर्थं महती प्रोक्ता नवमीयं सदा बुधैः ॥
पूजयित्वा महादेवीं नवम्यां मन्त्रचण्डिकाम्।
महत्त्वं प्राप्तवान् वीर ब्रह्मा विष्णुस्तथाऽमराः ॥
तस्मादियं महापुण्या नवमी पापनाशिनी।
उपोष्या तु प्रयत्नेन सततं सर्वपार्थिवैः ॥
पूर्वोत्तरेण ऋक्षेण संयुक्ता विधिवन्नृप।
विशेषतो नृपाद्यैश्च बालैर्वृद्धैः सयौवनैः ॥
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैरन्यैश्च सेवकैः।

इत्यादि (दुर्गोत्सवपद्धतौ)।
तन्त्रान्तरे।

ततो महानवम्यां च पूजयेज्जगदम्बिकाम्।
अष्टम्यां यावती प्रोक्ता विस्तरेण समर्हणा ॥
नवम्यामपि कर्त्तव्या तावत्येव वरानने।
विशेषस्तत्र कर्त्तव्यं प्रभूतवलिदानकम् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

नैमित्तिकक्रमेणैव पीठमूर्त्त्यर्च्चनं चरेत्।
शक्तौ नित्योदितावृत्यर्च्चनं कुर्वीत साधकः ॥
नान्यां पूजां वरारोहे व्यवस्थेयं शिवोदिता।
पीठमूर्त्तौ पत्रिकामृन्मूर्त्तौ यो भक्तिभावितः ॥
कुरुते तस्य विहितं पूजनद्वितयं तदा।
पत्रिकायाः पुरः पूजा पीठमूर्त्त्योस्ततः परम् ॥
सर्वाऽपि तान्त्रिकी रीतिः पीठमूर्त्त्योरुदीरिता।

पत्रिकादिषु पौराणी रीतिरुक्ता पुरारिणा ॥
असंसृष्टं पृथक्कृत्य द्वयमेतन्मयोदितम् ।
ततः परं सुरेशानि पाठयेदथ वा पठेत् ॥
मार्कण्डेयपुराणान्तर्गतां भगवतीस्तुतिम् ।
समग्रां वा पठेदाहो वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥
महिषासुरस्याप्यथ वा मधुकैटभयोरपि ।
कुर्यादुभयमेवात्र विधिं संकल्पपूर्वकम् ॥
ब्राह्मणान् वरयित्वैव वस्त्रालङ्करणासनैः ।
विदध्यात् कामनोल्लेखं पूजां शक्त्या च पुस्तके ॥
शनैः पठेत् पाठकोऽपि वर्णोच्चारणपूर्वकम् ।
सुव्यक्तं नातिविश्लिष्टं न शिरश्चालगीतवत् ॥
तनु मान्दोलयन् नापि न हसन् न रुदन् व्रजन् ।
नाश्नन्नान्यैरालपँश्च न मध्ये छिन्नवत् तथा ॥
आचान्तः कृतशौचश्च पदोरुद्गमनीयवान् ।
एतेन विधिनाऽधीते तुष्यते जगदम्बिका ॥
यथोक्तफलदात्री च भवति प्राणवल्लभे ।
यथैतत्पाठतो देवी प्रीता स्याद्द्रुतमीश्वरी ॥
न तथा धूपदीपस्रग्बलिनैवेद्यविस्तरैः ।
पठनं पाठनं वाऽपि तस्मादेतस्य यत्नतः ॥
कार्यं शारदपूजायां कालिकातुष्टिमिच्छता ।
देवीशारदपूजायां यथैतस्य हि नित्यता ॥
होमस्यापि तथा ज्ञेया मुख्ये अङ्गे इमे मते ।
हस्तमात्रं विधायादौ स्थण्डिलं श्रद्धया मृदा ॥

तत्राग्निस्थापनं कृत्वा वैदिकैर्मनुभिः प्रिये।
घृताहुतिं वा जुहुयात् तिलमिश्रामथापि वा ॥
बिल्वपत्रं यवां पद्मं पायसं वा मधूक्षितम्।
मन्त्रस्तत्र तु विज्ञेया भारती षोडशाक्षरी ॥
अथ वा जयदुर्गाया मन्त्रो यः परिनिष्ठितः।

भारती षोडशाक्षरीति प्रकृताभिप्रायेण। जयदुर्गामन्त्रस्तु सकलसाधारण इति बोध्यम्।

तथा।

सप्तशत्यास्तथा देवी एकैकश्लोक एव वा।
मन्त्रे सहस्रसंख्या स्याच्छक्तावयुतमेव वा ॥
उभयत्रापि दातव्याः कर्मान्ते दक्षिणाः शुभाः।
इदं कर्मद्वयं देवि मूर्त्तेः पुरत आचरेत् ॥
नाप्यदो द्वितयं कार्यं क्षपायां वासरादृते।
तस्यां कृतं तु विफलं जायते वेदशासनात् ॥
देवी सप्तशतीपाठं गृह्णाति विधिवत् कृतम्।
विधिना वाऽप्यविधिना पुनर्होमं प्रयच्छति ॥
तस्माद्यत्नेन कर्त्तव्यो होमः शारदपूजने।
होमः सप्तशतीपाठो बलिर्वादित्रवादनम् ॥
चतुष्टयमिदं शस्तं मासीषे कालिकार्च्चने।
प्रभूतबलिदानं च कार्यं भूत्यनुसारतः ॥

अथ बलिदानविधिस्तत्रैव।

ततो दद्याज्जीवबलिं यथालाभं यथाविधि।
विधिस्तु द्विविधः प्रोक्तः श्रौत आगमिकस्तथा ॥
श्रौतः श्रुत्युक्तमन्त्रेणागमस्तन्त्रोक्तमन्त्रकैः।

श्रौतोऽपि स्वस्वगृह्योक्तविधिना संप्रदीयते ॥
पशुजातिविशेषेण तत्राप्यस्ति भिदाऽधिका ।

(मेरुतन्त्रे)

वलिस्तु त्रिविधो ज्ञेयस्तान्त्रिकः स्मार्त्त एव च ।
वैदिकश्चेति तत्रादौ तान्त्रिकोऽष्टविधः स्मृतः ॥
नरश्च महिषः कोलश्छागोऽविः सारसस्तथा ।
कपोतः कुक्कुटश्चेति सामान्याः पूर्वपूर्वतः ॥

तथा ।

कूष्माण्डं नारिकेलं वा श्रीफलं चेक्षुमेव च ।
वस्त्रसंवेष्टितं कृत्वा छेदयेच्छुरिकादिभिः ॥
एवं स्मार्त्तो वलिः प्रोक्तो धर्मशास्त्रानुगामिनाम् ।

तथा ।

वैदिकं तु वलिं दद्यादोदनं स्विन्नमाषवत् ।
सरोचनमतिक्रूरदैवते वटकान्वितम् ॥

इत्युक्तं (महाकालसंहितायाम्) ।

श्रौतः श्रुतिषु सन्धेयो योऽध्वरेषु निरूपितः ।
वक्ष्याम्यागमिकं सर्वं यागस्थानक्रमागतम् ॥
न स देवो न सा देवी देवयोनिभिदा न सा ।
न स कालो न तद्भूतं यो नेच्छति वलिं प्रिये ॥
अमूर्त्ता ये च कालाशा माससंवत्सरर्त्तवः ।
पक्षायनाहोरजनीतिथिप्रहरसंक्रमाः ॥
एतेऽपि वलिमिच्छन्ति किं पुनर्देवयोनयः ।
वनस्पत्योषधिलतातरुगुल्मनगादयः ॥
स्थावरा जङ्गमाश्चापि वल्याकाङ्क्षां प्रकुर्वते ।
यस्य यस्य हि देवस्य यो यो वलिरुदीरितः ॥

एतत्प्रसङ्गेन शिवे स स कश्चन कथ्यते।
स्वयम्भुवो बलिः सिंहो विष्णोर्वार्ध्रीणसः स्मृतः॥
अश्व इन्द्रस्य कथितो गण्डकः परमेष्ठिनः।

विष्ण्वादिनुद्दिश्य वार्ध्रीणसादेरुत्सर्गमात्रं न तु हिंसेति विधानमुक्तावलीकृतः।
वार्ध्रीणसलक्षणं त्वग्रे वक्ष्यते।

तथा।

शूकरो भैरवस्यापि प्रमथानां च जम्बुकः।
प्रियो द्वीपी वेधसश्च चित्रको बलिरिष्यते॥
गणाध्यक्षस्य भल्लूको यक्षाणां लोहितो मृगः।
स्कन्दस्य गोधा विश्वेषां देवानां चमरोऽपि च॥
विनायकानां च बलिः कृष्णसार उदीरितः।
वेतालानां च महिषो गुह्यकानां च सम्बरः॥
शच्याः शल्यो रोहिषस्तु तुषितानां प्रकीर्त्तितः।
कृकलाशो दानवानां दैत्यानां श्येन उच्यते॥
हिरण्यगर्भस्य बलिरष्टापद उदीर्यते।
ईशानस्य पदस्वर्चा रुरू रुद्रस्य कीर्त्यते॥
बलिर्ममापि गोकर्णः साध्यानां गवयस्तथा।
सृमरो भासुराणां च वसूनामृक्ष इष्यते॥
बृहस्पतेस्तु गवयो हस्ती चैव प्रजापतेः।
कुरङ्गो गणसाध्यानां तक्षण उष्ट्रो निगद्यते॥
आङ्गीयविश्वदेवानां वृषभः परिकीर्त्तितः।
अग्नेस्तु कुटरुः पक्षी चक्रवाकः प्रचेतसः॥
पारुष्णा गार्हपत्यस्य दक्षिणाग्नेस्तु चीनकः।
चमूरुराहवनीयस्य शशोऽर्यम्ण उदीरितः॥

वायोर्बलाका सोमस्य हंसश्चन्द्रस्य वै लवः ।
वरुणस्य तथा नक्रो मित्रस्य च कुलीयकः ॥
चाषोऽग्नीषोमयोर्ज्ञेय इन्द्राग्न्योः क्रौञ्च एव च ।
मित्रमित्रस्य मद्गुः स्यात् कुलीकस्त्वष्टुरेव हि ॥
आदित्यानां तथा न्यङ्कुः कृष्णोऽपि हि यमस्य च
स्यात् प्राजापत्यवाय्वोश्च गोमृगौ बलिरीश्वरि ॥
नासत्ययोर्मयूरोऽपि पूष्णो जम्बुक उच्यते ।
गर्दभो निर्ऋतेर्मित्रावरुणस्य कपोतकः ॥
गोधादि देवपत्नीनां मालिकः सवितुस्तथा ।
कुलीको देवयोनीनां राजज्ञोऽप्सरसामपि ॥
अन्तरिक्षस्य योक्त्रस्तु भूमेराखुर्दिवः कशा ।
दिशां बलिस्तु नकुलो विदिशां बभ्रुरेव च ॥
अपां मत्स्यस्तेजसस्तु होमीयाख्यो भुजङ्गमः ।
जलः सामान्यकालस्य तथा कालस्य चिल्लिका ॥
सुपर्णश्चापि दात्यूहो बलिर्वत्सरमासयोः ।
कपिञ्जलो वसन्तर्त्तोर्ग्रीष्मस्य कलविङ्ककः ॥
वर्षाणां तित्तिरिर्ज्ञेयः शरदो वर्त्तिका तथा ।
ऋकरश्चापि हैमन्तः शैशिरो वैककर्यपि ॥
पक्षस्य खञ्जरीटः स्यादयनस्य तु सारसः ।
पारावतो दिनस्यापि रात्रेः सीरायुरुच्यते ॥
प्रोक्ता जलौका सन्ध्याया यैङ्गराजस्तिथेरपि ।
यामस्य सुखिलोकस्तु संक्रान्तेरन्यपायकः ॥
किरीकको ग्रहाणां च नक्षत्राणां शरव्यकः ।

राशीनामपि साकल्यो लग्नानामपि चुञ्चुटः ॥
शिशुमारः समुद्रस्य नदीनां च तिमिङ्गिलः ।
आवर्त्तानां च मकरो विचीनां शङ्कलोऽपि च ॥
उष्ट्रः पातालदेवस्य शङ्कुर्वै ताण्डवस्य च ।
पर्जन्यानां च मण्डूको वृष्टेरपि महीलता: ॥
विद्युतामपि सम्बूको भारद्वाजोऽशनेरपि ।
सिनीवालीकुहूराकानुमतीनां क्रमेण हि ॥
शरादिकङ्कहारीतजीवञ्जीवाः प्रकीर्त्तिताः ।
बलिः कलङ्कः प्रेतानां पिशाचानां वकोऽपि च ॥
भूतानां कुररश्चापि कुक्कुटो ब्रह्मरक्षसाम् ।
गन्धर्वाणां कोकिलोऽपि घोणकानां च वायसः ॥
वर्त्तकः क्षेत्रपालानां वटुकानां च कुक्कुटः ।
यावत्यो जातिहारिण्यस्तासां भारुण्ड उच्यते ॥
छुच्छुन्दरीर्ह्यश्मनः स्याज्जलस्य शरभो बलिः ।
चिल्लो बलिर्डाकिनीनां किन्नराणां च तक्षकः ॥
भूलिङ्गो योगिनीनां स्यान्निधीनां टिट्टिभो बलिः ।
इन्द्रियाणामथो वच्मि चक्षुषोर्मशको बलिः ॥
श्रोत्रयोर्भ्रमरश्चापि घ्राणस्य सरघास्तथा ।
रसनाया बलिश्चिक्का मक्षिका च त्वचो बलिः ॥
पतङ्गो मनसश्चापि प्लुषिर्वाचो बलिर्मतः ।
झिल्लीकीटो बलिः पाण्योः खद्योतः पदयोरपि ॥
पायोर्यूका समुद्दिष्टा उपस्थस्य सिनीपतिः ।
वनस्पतीनां मधुको लतानां तैलपायिका ॥

मत्कुणा औषधीनां स्युस्तरूणां च पिपीलिका ।
गुल्मानां गन्धकीटोऽपि शैलानां वृद्गतास्तथा ॥
शवो बलिः पूतनाया राक्षसीनामहिर्बलिः ।
जातमात्रशिशुः षष्ठ्याः शङ्खो बालग्रहस्य च ॥
चकोरो गरुडस्यापि मातृणां तैलपायिका ।
विद्याधराणां च कोलो यज्ञानां शुक एव च ॥
गृध्रोऽरुणस्य च बलिर्नरकस्य करेटुकः ।
राज्ञो बलिर्मर्कटोऽपि कान्तारस्य प्लवः खगः ॥
सर्वेषामेव देवानां देवीनां च विशेषतः ।
बलित्वेन विनिर्दिष्टा महिषच्छागलादयः ॥
जलजाः स्थलजाश्चापि ग्रामजारण्यजास्तथा ।
पशवः पक्षिणः कीटास्तिर्यग्योनय एव च ॥
इमे विधात्रा विहिता बलित्वेन दिवौकसाम् ।
नान्यैर्नैवेद्यसम्भारैस्तथा तुष्यन्ति देवताः ॥
यथा पशूनां बलिभिर्विहङ्गानां तथैव च ।
अत एव हि देवेशि मीमांसावेदयोरपि ॥
देवानां प्रियशब्दस्तु पशुपर्याय उच्यते ।
एवं विज्ञाय सिद्धान्तं देव्याः सन्तोषहेतवे ॥
पशून् दद्याद्बलित्वेन मेध्यानपि विहङ्गमान् ।
क्रिमिकीटादयः सर्वे ये तिर्यञ्चः प्रकीर्त्तिताः ॥
न ते देवीबलित्वेन विधात्रा विहिताः प्रिये ।
आलभेत वृषं श्वेतं यज्ञे गोमेधनामनि ॥
नरमेधे नरं चापि गजक्रान्ते गजं तथा ।

अश्वमेधे तथैवाश्वं शङ्खचूडे च हस्तिनम् ॥
ब्रवीति यत्र वेदोऽपि तत्र कैव विचारणा ।
तस्मान्नैमित्तिकार्चायां बलिरावश्यकः प्रिये ॥
विशेषेण प्रदातव्यो देवीसन्तोषहेतवे ।
बलिं विना नैव देवी पूजामङ्गीकरोति हि ॥
तत्राप्युभौ प्रशस्येते महिषश्छाग एव च ।
अन्यदेवोचितबलिर्विचारैः किं प्रयोजनम् ॥
येन सन्तुष्यते काली तं विचारं ब्रुवेऽधुना ।
याः काश्चिद्गुह्यकाल्यास्तु विहिताः पशुजातयः ॥
आरण्या अथ वा ग्राम्या जलजानां च जातयः ।
खगानां जातयश्चापि ता एवादौ ब्रवीमि ते ॥
मत्स्या मृगा बराहाश्च कच्छपा महिषास्तथा ।
गण्डका गोधिका ग्राहाः शार्दूला हरयोऽपि च ॥
नकुलाः शरभश्चापि गवयाश्छागलास्तथा ।
मनुष्याः पक्षिणश्चापि तेषां कोशा अपि प्रिये ॥
भगवत्या बलित्वेन विधात्रा बलिकल्पिताः ।
एतेषां बलिदानेन सर्वकार्याणि साधयेत् ॥

बलिदानफलान्याह ।

बलिभिर्वर्धते ह्यायुर्बलिभिः शाम्यते रुजा ।
जयत्यरातीन् बलिभिः प्राप्यते बलिभिर्धनम् ॥
सिद्धिमाप्नोति बलिभिर्बलिभिस्त्रिदिवं व्रजेत् ।
निष्कामाणां बलौ दत्ते प्राप्यो मोक्षोऽपि यज्ञवत् ॥

मत्स्यादीनां जातिभेदानाह ।

जातिभेदानथो वक्ष्ये समासादवधारय ।

अष्टादशभिधा मत्स्याश्चतुर्विंशतिधा मृगाः ॥
वराहाः पञ्चधा प्रोक्तास्त्रिभेदाः कच्छपा अपि ।
द्विभेदा महिषास्तद्वद्गण्डकाश्च चतुर्विधाः ॥
गोधिका च त्रिभेदा स्याद्द्विभेदो ग्राह एव च ।
त्रिविधौ व्याघ्रसिंहौ च नकुलो द्विविधोऽपि च ॥
शरभश्चैकजातिः स्यान्नास्य भेदो वरानने ।
गवयस्त्रिविधः प्रोक्तश्छागः पञ्चविधो मतः ॥
चतुर्विधा मनुष्याश्च षट्त्रिंशज्जातयः खगाः ।
क्रमेण नामान्येतेषां व्याहरामि तव प्रिये ॥
शङ्कुलो रोहितः शालः पाठीनो राघवोऽपि च ।
प्रोष्ठी नालशिशुच्यङ्गमेरेटाङ्गुलिचाम्बटाः ॥
तिमिभाकूटराजीवगडकाः शस्तजातयः ।
गोकर्णकृष्णसारैणरुरुन्यङ्कुचमूरवः ॥
प्रियवातप्रमीचीनसमूहसृमरक्रषाः ।
रङ्कुशम्बरकन्दल्यः सुखरो रोहिषो बटः ॥
कदल्येन विसालाक्षपतङ्गोल्लाटरोहिताः ।
वराहास्तब्धकक्रोडकुशाक्षीणजलस्वनाः ॥
कूर्मश्चित्री चित्रकटो वामनश्चेति वै त्रिधा ।
अकेरः क्षीरिलश्चापि महिषो द्विविधो मतः ॥
कौञ्जरो वारिलश्चामी वैशः खड्गाश्चतुर्विधाः ।
हिरण्या किलिका मोना गोधिका त्रिविधा मता ॥
दीर्घग्रीवश्चर्मपूरो ग्राहो द्विविध एव च ।
तरक्षुस्तरुगश्चित्रो व्याघ्रस्त्रिविध उच्यते ॥

शरलः कृकयुर्मेदो सिंहोऽपि त्रिविधो मतः ।
स्थूलः कलिङ्गश्च तथा नकुलोऽपि द्विधेरितः ॥
एकजातिं विना नैव शरभोऽन्यः प्रजायते ।
लाटिको विट्चरः साम्नी गवयोऽपि त्रिधोच्यते ॥
त्रिपिवः पालितः क्षौरी वर्कॅरो मारिषस्तथा ।
पञ्चभेदो भवेच्छागोऽविरपि त्रिविधो मतः ॥
उर्मिकः पारिशो भेटो मनुष्यानपि मे शृणु ।
न मनुष्यत्वसामान्ये चातुर्विध्यं हि वर्त्तते ॥
प्रकारभेदतस्तस्या भिन्नता परिकल्पते ।
चण्डिकानुगृहीतस्य वितृष्णस्य भवाम्बुधौ ॥
तत्तल्लोकावाप्तिफलश्रवणोत्कण्ठितस्य च ।
स्वतः प्रवृत्तिर्देव्यास्तु बलिरूपो भवाम्यहम् ॥
आगत्य च स्वयं ब्रूते मां बलित्वेन योजय ।
प्रत्यक्षमेव सर्वेषां नृपस्य च विशेषतः ॥
स एक उदितो देवि द्वितीयमवधारय ।
बहुवित्तस्य रत्नादेस्तेनो लोकधृतश्च यः ॥
निर्णीय परिषन्मध्ये प्राग्विपाकेन कीर्त्तितः ।
शीर्षच्छेद्यतया देवि द्वितीयः स निगद्यते ॥
युद्धे जितो धृतः शत्रुः कूटयोधी भटाकृतिः ।
स तृतीयो विनिर्दिष्टश्चतुर्थमवधारय ॥
य आततायी पान्थानां कान्तारेऽप्यथ वा गृहे ।
विदितश्चापि निर्णीतः साक्षिभिः सत्यवादिभिः ॥
स हि तुर्यः समाख्यातः पञ्चमो नोपपद्यते ।

वक्ष्ये विहङ्गान् ये देव्यै बलित्वेन निरूपिताः ॥
पारावतास्ताम्रचूडा हंसा वार्ध्रीणसास्तथा ।
उलूका लोहपृष्ठाश्च सर्वाघाटाश्च सारसाः ॥
कलविङ्काश्चकोराश्च चक्रवाकाः शुका अपि ।
शतपत्रा भरद्वाजा भूलिङ्गाश्चटकास्तथा ॥
कारण्डवाश्चक्रवाकाः पारुष्णाश्च कुलीयकाः ।
प्लवाः कुटरवश्चापि वर्त्तकाः कुक्कुभा अपि ॥
तित्तिर्युरुकक्रौञ्चाश्च नवचाषशिखण्डिनः ।
योवत्रदात्यूहसाकल्यपैङ्गराजन्यवायकाः ॥
जिह्वीका सुखिलोकाश्च मद्गुहारीतवर्त्तकाः ।
जीवञ्जीवाश्च हारीताः कोयष्टाश्मटटिट्टिभाः ॥
वककोकिलगृध्राश्च करेटुश्चोनखञ्जनाः ।
चिरीकाश्चैव जहिकाः सीचापुञ्जन्तमेकलाः ॥
कशाः सुपर्णा भारुण्डा हामायाश्चापि पार्वति ।
इति ते कथिताः सर्वे षष्टिभेदा विहायसाम् ॥
देव्यै योग्यबलित्वेन नान्य उक्ता विहङ्गमाः ।
एतेषां जातिभेदास्तु वर्त्तन्ते डामरादिषु ॥
बहुत्वात् ते न कथ्यन्ते ग्रन्थगौरवभीतितः ।
कपोतश्चामका बङ्कमनिरथतुरुकादयः ॥
पारावतास्तु दशधा हंसाः पञ्चविधास्तथा ।
राजहंसा मल्लिकाख्या धार्त्तराष्ट्राः परिस्फुटाः ॥
माहेया एवमन्येऽपि ज्ञेया विगहजातयः ।

तथा ।

अधुना संप्रवक्ष्यामि बलिना येन येन हि ।

यं यं कालमभिव्याप्य तुष्टा भवति कालिका ॥
*अष्टादशविधैर्मत्स्यैः कच्छपैरपि चण्डिका।
तृप्यते मासमात्रं हि बलित्वेन नियोजितैः ॥
ताम्रचूडस्य बलिना हंससारसयोरपि।
तृप्ता भवति मासौ द्वौ त्रीन् मासान् द्वीपिनक्रयोः ॥
कलविङ्कैरुलूकैः स्यात् तृप्ता मासचतुष्टयम्।
पञ्च मासान् भवेत् तृप्ता शुकैः पारावतैरपि ॥
दार्वाघाटैश्चकोरैश्च षण्मासाँस्तृप्तिमाप्नुयात्।
तृप्यते सप्त मासान् सा जिहीकैश्च कुलीयकैः ॥
चतुर्विंशतिभेदैश्च कुरङ्गैर्गवयैरपि।
मासानष्टौ भवेत् तृप्ता नव मासान् पिकैरपि ॥
हारीतबलिना देवी दश मासाँश्च तृप्यते।
तथा दात्यूहदानेन गजराजैर्वरानने ॥
मासानेकादश शिवा तृप्तिमायाति सिद्धिदा।
गोधिकाबलिदानेन तृप्ताऽब्दं व्याप्य जायते ॥
अविना नकुलेनापि त्र्यब्दं तृप्ता भवेदपि।
आजेन बलिना वाऽपि तुष्टा स्यात् पञ्चवत्सरान् ॥
जीवञ्जीवेन पाङ्गेन तुष्यतेऽष्टौ च हायनान्।
पार्षतैणेन बलिना वराहबलिनाऽपि च ॥
द्वादशाब्दमभिव्याप्य तुष्टा भवति कालिका।
हामायनामा यः पक्षी सिंहाकृतिधरोऽरुणः ॥
तद्दानात् तुष्यते देवी पञ्चविंशतिवत्सरम्।

---

* मत्स्यादिभेदाः पशुभेदाश्च पूर्वमुक्ताः स प्रति तेषामप्रचारात् तन्नामानि (शब्दकल्पद्रुमवाचस्पत्याभिधानादिष्वपि) सर्वाणि नोपलभ्यन्तेऽतः पुस्तकस्थान्येव रक्षितानि।

त्रिविधैरपि शार्दूलैर्महिषैर्द्विविधैरपि ॥
चतुर्विधैस्तथा खड्गैर्बलित्वेन समर्पितैः ।
शतं संवत्सरं यावच्चण्डिका प्रीतिमश्नुते ॥
एको वार्ध्रीणसोऽजश्च विशेषः परिकीर्त्यते ।
अपरः पक्षिजातीयो हिमवच्चरणस्थितः ॥
वृद्धः श्मश्रुधरः श्वेतः पादस्फोटीन्द्रियोज्झितः ।
त्रिविधो रक्तरसनो निःशृङ्गः स्वरभङ्ग्यजः ॥
पीतचञ्चू रक्तशिराः सितपक्षोऽसिताङ्घ्रिकः ।
नीलग्रीवः पाटलाभगलो वार्ध्रीणसः खगः ॥

( कालिकापुराणेऽपि )

त्रिपिबं त्विन्द्रियक्षीणं श्वेतं वृद्धमजं परम् ।
वार्ध्रीणसं विजानीयाद्धव्यकव्येषु संस्कृतम् ॥
नीलग्रीवो रक्तशिराः कृष्णपादः सितच्छदः ।
वार्ध्रीणसः स पक्षी स्यान्मम विष्णोरपि प्रियः ॥

( महाकालसंहितायाम् )

अजवार्ध्रीणसैस्तुष्टा भवेत् त्रिंशतिवत्सरम् ।
निरङ्कसामान्यशशैर्बलित्वेन निरूपितैः ॥
जायते गुह्यकाली सा तुष्टा पञ्चशतं समाः ।
शरभैरथ सिंहैश्च शोणितैश्च स्वदेहजैः ॥
दत्ते सन्तुष्यते काली सहस्रं परिवत्सरान् ।
वार्ध्रीणसविहङ्गेन दत्तेन विधिना प्रिये ॥
अब्दं द्वादशसाहस्रं तुष्यते जगदम्बिका ।
चौराततायिरूपेण नारेण बलिना तथा ॥
त्रीणि लक्षाणि वर्षाणां प्रीतये गुह्यकालिका

एते ते कथिता देवि बलयस्तृप्तिहेतवः ॥

अथ निषिद्धबलयस्तत्रैव ।

अदेयानधुना वक्ष्ये पशूनपि विहङ्गमान् ।
भल्लूकान् मर्कटान् फेरून् सर्पानोतून् शुनस्तथा ॥
क्रमेलकाँश्च बालेयान् शल्यान् विट्चरशूकरान् ।
जलजेष्वपि मण्डूकान् रासभान् शिशुमारकान् ॥
कुलीरान् दीर्घपृष्ठादीन् मीनानपि च भूरिशः ।
खगेषु वायसाँश्चिल्लान् दुर्विदान् कुलिकानपि ॥
एवमन्येऽपि विज्ञेया नानाशास्त्रागमादिषु ।

तथा ।

काँश्चिन्निषिद्धान् वक्ष्यामि विहितेषु बलिष्वपि ।
ग्राम्याणामथ वन्यानां पशूनां पक्षिणां तथा ॥
स्त्रियं नैव प्रयुञ्जीत बलिकर्मणि साधकः ।
ज्ञानपूर्वं बलिं दत्वा नरकं प्रतिपद्यते ॥
अज्ञानेन वितीर्यापि किञ्चित् पापं समश्नुते
अत्रिमाससमुत्पन्नं पशुं न विनिवेदयेत् ॥
न्यूनं तदर्धान्न खगं जातु देव्यै समर्पयेत् ।
भग्नशृङ्गं भग्नदन्तं छिन्नलाङ्गूलमेव च ॥
काणं व्यङ्गं रोगिणं च शृङ्गाहतनरं तथा ।
दुष्टं गलितरोमाणं क्षीरपं च गलद्दिशम् ॥
पशुं न दद्यादीदृक्षं तथा चैव विहायसम् ।
छिन्नत्रोटिं छिन्नपक्षं रुग्णमाहारवर्जितम् ॥
अनुड्डीनं तथाऽऽकाशे मातुरङ्के परिस्थितम् ।
विहितावपि विज्ञातौ न दद्यात् पशुपक्षिणौ ॥

तन्त्रान्तरे ।

कृष्णवर्णो बलिर्यस्तु श्वेतपुच्छो यदा भवेत् ।
छागलं तादृशं विद्वान् दूरतः परिवर्जयेत् ॥
एवं सितं कृष्णपुच्छं वर्जयेत् मतिमान् सदा ।

(महाकालसंहितायाम् )

यस्य यस्य निषिद्धो यः स इदानीं निरूप्यते ।
नरं केशरिणं व्याघ्रं चाषं खञ्जनमेव च ॥
स्वकीयरुधिरं मद्यं न दद्याद्ब्राह्मणः क्वचित् ।
तौ द्वौ खगौ तथा सिंहं द्वीपिनं मानुषं तथा ॥
दत्वा रोगी च हीनायुर्भूत्वा नरकमश्नुते ।
आत्महत्यामवाप्नोति दत्वा स्वरुधिरं द्विजः ॥
दत्वा देव्यै द्विजो मद्यं ब्राह्मणाद्विच्युतो भवेत् ।
चाण्डालत्वमवाप्नोति सर्वकर्मविवर्जितः ॥
न कृष्णसारं वितरेद्वहिणं च नराधिपः ।
कृष्णसारं ददद्देव्यै द्वितीयो वर्ण ईश्वरि ॥
ब्रह्मघ्नत्वमवाप्नोति सर्वकर्मविवर्जितः ।
न वैश्याः शूकरं दद्युर्न वर्त्तककुलीयकौ ॥
ददतां तत्क्षणादेव महापातकता भवेत् ।
वर्णोऽपरो नो वितरेद्गोधिकाशुकखड्गिनः ॥
मृषं मार्जारकं चाषं शूद्रो दत्वा पतत्यधः ।
मोहाद्धठाद्वा ददतां सद्यो ब्रह्मघ्नता भवेत् ॥
वानप्रस्थो ब्रह्मचारी गृहस्थो वा दयापरः ।
सात्त्विको ब्रह्मनिष्ठश्च यश्च हिंसाविवर्जितः ॥
ते न दद्युः पशुबलिमनुकल्पं चरन्त्यपि ।

अनुकल्पेऽपि मुख्येऽधिकारिण एवाधिकार इति प्रागुक्तम् ।
अनुकल्पविधिस्तु तत्रैवोक्तो यथा ।

सात्त्विको जीवहत्यां हि कदाचिदपि नो चरेत् ।
इक्षुदण्डं च कूष्माण्डं तथा वन्यफलादिकम् ॥
क्षीरपिण्डैः शालिचूर्णैः पशुं कृत्वा चरेद्बलिम् ।
तत्तत्फलविशेषेण तत्तत्पशुमुपानयेत् ॥

तथा ।

महिषत्वेन कूष्माण्डं छागत्वेनैव कर्कटीम् ।
वृन्ताकं कुक्कुटत्वेन मेषत्वेन च तुम्बिकाम् ॥
रम्भापुष्पं बीजपूरं पिण्डं जीवं कलौ भवेत् ।
मानुषत्वेन पनसं मत्स्यत्वेनेक्षुदण्डकम् ॥
शूरणं शम्बरत्वेन तथा कोशातकं मृगे ।
पायसं तु गजत्वेन मार्जारत्वे कुलित्थकम् ॥
पटोलं शूकरत्वेन शर्करावालुकं तथा ।
खड्गत्वेन महेशानि मत्स्यत्वे कदलीफलम् ॥
मृषत्वे मूलकं चैव सारङ्गत्वे कलिङ्गकम् ।
करित्वे नारिकेलं च कल्पयेत् परमेश्वरि ॥
माषाः सर्वबलित्वेन सर्वेषां कृशरान्नतः ।

तथा ।

तत्तत्पशुप्रदातॄणां फलावाप्त्यै वरानने ।
घृतगोधूमैक्षवाद्यैः फाणितैरन्नजैस्तथा ॥
कृत्वा तं तं पशुं दद्युस्तत्तत्फलमवाप्नुयुः-इति

अथ प्रशस्तपशुलक्षणं ( रत्नावल्याम् )

ऊर्ध्वशृङ्गो लम्बकर्ण एकवर्णोऽतिपीवरः ।
नीरोगः पुष्टकायश्च सदर्पश्च बलोर्जितः ॥

नाधिकाङ्गो न हीनाङ्ग एकद्वित्र्यादिहायनः ।
प्रशस्तपशुरीदृक्षो देवीप्रीतिकरः शुभः ॥

तन्त्रान्तरे ।

कृष्णवर्णश्छागलस्तु पृष्ठवंशे सितो यदि ।
प्रशस्तं तं विजानीयाद्विपरीतं विवर्जयेत् ॥

विपरीतमिति श्वेतवर्णम् । पृष्ठावच्छेदेन नीलमित्यर्थः ।

( त्रैपुरपद्धत्याम् )

बल्यन्ते छागलबलिं तथा मेषं सुरेश्वरि ।
प्रदद्यात् सर्वकालेषु सर्वकामार्थसिद्धये ॥
नित्ये नैमित्तिके काम्ये माहिषं बलिमाहरेत् ।
जयाय सर्वकामाय देवीलोकाप्तसिद्धये ॥

( महाकालसंहितायाम् )

पशूनां यत्र बाहुल्यं भवेद्वित्तानुसारतः ।
तत्रैकं प्रथमं देवि सर्वलक्षणलक्षितम् ॥
ऊर्जस्विनं सुन्दरं च बलिनं पशुमुत्सृजेत् ।

तथा ।

पशूनामिह सर्वेषां प्रोक्षणं चैवमेव हि ।
कश्चिद्विशेष उत्सर्गे फलं दैवाद्युदीरणे ॥

( त्रैपुरपद्धत्याम् )

सर्वलक्षणसंयुक्तं पशुं संस्नाप्य मन्त्रतः ।
देव्यग्रे स्थापयित्वाऽर्घोदकैः संप्रोक्षयेत् ततः ॥
अस्त्रमन्त्रेण संरक्ष्य कवचेनावगुण्ठ्य च ।
मूलमन्त्रं समुच्चार्य धेनुमुद्रामृतीकृतम् ॥
गन्धपुष्पाक्षतैः सम्यक् परिपूज्योपचारकैः ।
कर्णे तस्य पठेन्मन्त्रं पशुपाशविमोचनम् ॥

ॐ पशुपाशाय विद्महे विप्रकर्णाय धीमहि तन्नो जीवः* प्रचोदयात् ।

गायत्रीयं समाख्याता पशुपाशविमोचिनी ।
इमां पठेद्दक्षकर्णे तस्य मुक्तिप्रसिद्धये ॥

संप्रोक्षयेदिति प्रोक्षणं मूलमन्त्रेणैव ।

अर्घपात्रोदकैः शुद्धैर्मूलेन प्रोक्षयेत् त्रिशः ।

इति महाकालोक्तेः ।

गाव्यन्तरमुक्तं तत्रैव ।

योगिनीबीजतो ङेन्तं बलिरूपं तु विद्महे ।
देवीप्रियं पूर्ववच्च धीमहीति ततः परम् ॥
तन्नः पशुरिति प्रोच्य वदेच्चाथ प्रचोदयात्-इति ।

योगिनीबोजं छ्रीमिति (त्रैपुरपद्धत्याम्) ।

ततः खड्गं यजेन्मन्त्री मन्त्रेणानेन दक्षतः ।
तारं च भुवनेशानीं कालीयुग्मं समालिखेत् ॥
वज्रेश्वरीपदं पश्चाल्लोहदंष्ट्रां ततः परम् ।
ङेन्तां हृद्वसुयुग्मैकसङ्ख्यवर्णो मनुर्मतः ॥
अनेन गन्धपुष्पाद्यैः खड्गमभ्यर्चयेद्बुधः ।
ततस्तस्य मुष्टिदेशे मध्ये चाग्रे यथाक्रमम् ॥
गन्धपुष्पाक्षतैर्मन्त्री मिथुनत्रितयं जयेत् ।
वागीशीसहितो ब्रह्मा लक्ष्मीनारायणौ तथा ॥
उमामहेश्वरौ चेति संप्रोक्तं मिथुनत्रयम् ।
ततश्चानेन मन्त्रेण तं खड्गमभिमन्त्रयेत् ॥
खड्गायासुरनाशाय शक्तिकार्याय तत्पर ।
पशुश्छेद्यस्त्वया शीघ्रं खड्गनाथ नमोऽस्तु ते ॥

---

* रुद्र इति ४ पु० पा० ।

ततस्तु ताम्रपात्रस्थकुशाक्षतजलादिकम् ।
गृहीत्वा मूलमुच्चार्य संकल्प्य पशुमुत्सृजेत् ॥
गृहीत्वाऽक्षततोयादि पशोः शिरसि संत्यजेत् ।
ततस्तेनैव खड्गेन मूलमन्त्रेण साधकः ॥
पशुच्छेदं प्रकुर्वीत स्वयं देवीमनुस्मरन् ।

( मेरुतन्त्रसिद्धान्तसारयोः )

यदा संचालयेद्गात्रं गृहीतस्तु यथेच्छया ।
यावन्न चालयेद्गात्रं पशुस्तावन्न हन्यते ॥
उत्तराभिमुखो भूत्वा बलिं पूर्वमुखं तथा ।
निरीक्ष्य साधकः पश्चादिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥
पशुस्त्वं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः ।
प्रणमामि ततः सर्वरूपिणं बलिरूपिणम् ॥
चण्डिकाप्रीतिदानेन दातुरापद्विनाशनम् ।
चामुण्डाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमो नमः ॥
यज्ञार्थे पशवः सृष्टाः स्वयमेव स्वयम्भुवा ।
अतस्त्वां घातयाम्यद्य तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः ॥
इमं देहं परित्यज्य भूत्वा देववपुर्धरः ।
मोदस्व प्रमथैः सार्धं यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥
ऐँ ह्रीँ श्रीमिति मन्त्रेण त्वं बलिं मत्स्वरूपिणम् ।
चिन्तयित्वा न्यसेत् पुष्पं कुम्भकेनास्य मस्तके ॥

( महाकालसंहितायाम् )

ध्यायेत् कुसुममादाय खड्गमादौ वरानने ।
कृष्णं पिनाकपाणिं च कालरात्रिस्वरूपिणम् ॥
उग्रं रक्तास्यनयनं रक्तमाल्यानुलेपनम् ।

रक्ताम्बरधरं चैव पाशहस्तं कुटुम्बिनम् ॥
पिवमानं च रुधिरं भुञ्जानं क्रव्यसंहतिम् ।
क्षोभयन्तं जगत् सर्वं कम्पनादिप्रचारणैः ॥
वेष्टितं मृत्युकालाभ्यां वामदक्षिणभागतः ।

तन्त्रान्तरे ।

ततः खड्गं यजेन्मन्त्री पाद्याद्यैरुपचारकैः ।
गन्धपुष्पाक्षताद्यैश्च मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ॥

मन्त्रस्तु पूर्वोक्त एव ।

( महाकालसंहितायाम् )

ततो बद्धाञ्जलिर्मन्त्रं पठेत् खड्गं निरीक्ष्य वै ।
रसना त्वं चण्डिकायाः सुरलोकप्रसाधकः ॥
भुङ्क्ष्वैतस्य पशो रक्तं क्रव्यसंहतिमेव च ।
छिन्धीममिव* मे शत्रुं मङ्गलानि प्रयच्छ मे ॥
दैत्यदानवरक्षोऽसृक्छेदोन्मत्त नमोऽस्तु ते ।
एतेन खड्गमामन्त्र्य तन्नामाष्टकमुच्चरेत् ॥
गृह्णीयान्निशितं खड्गं येन सद्यो भवेद्वधः ।
असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ॥
श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपाल नमोऽस्तु ते ।

( मेरुतन्त्रे )

आँ हूँ फडिति मन्त्रं जपन् संछेदयेद्बलिम् ।
एकेनैव प्रहारेण छिन्नो दैवततुष्टये ॥

( महाकालसंहितायामपि )

चन्द्रहासेन खड्गेन छिन्द्यादेकप्रहारतः ।
उत्थाय हननं कुर्यान्नोपविश्य कदा चन ॥

* छिन्धीश पिव इति २ पु० पा० ।

(कालिकापुराणे)

चन्द्रहासेन कर्त्र्या वा छेदनं मुख्यमुच्यते ।
दात्रासिधेनुक्रकचशङ्कुलाभिस्तु मध्यमम् ॥
असिधेनुः स्वल्पखड्गः शङ्कुला चक्रकर्त्तरी ।
क्षुरक्षुरप्रभल्लैश्च मध्यमं परिकीर्त्तितम् ॥
एभ्योऽन्यैः शक्तिबाणाद्यैर्बलिश्छेद्यः कदाऽपि न ।
नात्ति देवी बलिं तं तु दाता मृत्युमवाप्नुयात् ॥
हस्तेन छेदयेद्यस्तु प्रोक्षणं साधकः पशुम् ।
पक्षिणं वा ब्रह्महत्यां स प्राप्नोति दुरुत्सहाम् ॥
नामन्त्र्य खड्गं तु बलिं नियुञ्जीत विचक्षणः ।

तन्त्रान्तरे ।

सर्वेषामुत्तमः खड्गश्चन्द्रहासः सुखावहः ।
पञ्चाशदङ्गुलः कार्यः किं वा तालत्रयेण तु ॥
करवीरदलाकारः किं वा पद्मदलाकृतिः ।
अथ वा कुब्जखड्गेन दण्डखड्गेन भेदयेत् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

सहस्रायुतलक्षाणां बलीनां सम्भवे सति ।
द्वौ त्रीन् पञ्च तथाऽष्टौ वा दश वा द्वादशापि वा ॥
एभ्योऽधिकान् नैव कुर्याद्देवी*भावतया स्थितान् ।
प्राच्याशाभिमुखान् कृत्वा युगपन्मन्त्रमीरयेत् ॥
तन्त्रेणैव बलीन् सर्वान् प्रोक्षयेद्देशिकोत्तमः ।
छेदका अपि भूयांसः कर्त्तव्याः कमलानने ॥
हरिद्वीप्यजकोरभ्रलुलायाकाशगामिनः ।

---

* देवीभाव–इति २ पु० पा० ।

दद्यादेतान् वामभागे पानकानि च यानि च ॥

उरभ्रो मेषः ।

तथा ।

मत्स्यान् ग्राहान् शशान् खड्गान् कमठान् कोलगोधिकाः ।

यावतो मृगभेदाँश्च दद्यात् संमुख एव हि ॥

( श्रीक्रमसंहितायाम् )

यत्नतस्तं बलिं दद्यान्न हन्यादात्मना पुनः ।

यदि हन्यात् प्रमादेन रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

महाकालेऽपि ।

स्वहस्तेन पशुं हत्वा पशुयोनिमवाप्नुयात् ।

तन्त्रान्तरे ।

स्वयं वा भ्रातृपुत्रो वा भ्राता वा सुहृदेव वा ।

सपिण्डश्छेदयेद्वाऽपि शुद्धान्तःकरणो यदि ॥

न रिपुं नाङ्गहीनं वा न काणं नापि कुब्जकम् ।

न योजयेच्छत्रुपक्षं बलिच्छेदनकर्मणि—इत्युक्तम् ॥

महिषबलिदाने विशेष उक्तो ( महाकालसंहितायाम् )

विशेषः कश्चिदधिको महिषे तं ब्रुवेऽधुना ।

तदङ्गे देवताः सर्वाः पूजयेत् कुसुमाक्षतैः ॥

प्रणवादिनमोऽन्तैश्च मध्ये ङेन्तैः पदैस्तथा ।

स्थानानि देवताश्चापि क्रमेण कथयामि ते ॥

ब्रह्मरन्ध्रे च नासायां कर्णयो रसने तथा ।

नेत्रयोर्वदने चैव ललाटे तदनन्तरम् ॥

दक्षगण्डे वामगण्डे ग्रीवायां केश एव च ।

दक्षभ्रुवि तथा वामभ्रुवि चैवं वरानने ॥

ओष्ठेऽधरे च स्कन्धे च हृदये पृष्ठ एव च ।

जठरे चरणे पुच्छे सर्वस्मिन् देह एव च ॥
ब्रह्मा मेदिन्यथाकाशः सर्वतो मुख एव च ।
ज्योतींषि विष्णुश्चन्द्रश्च शक्रो वह्निर्महेश्वरः ॥
निर्ऋतिर्मित्रवरुणौ तथा लक्ष्मीः सरस्वती ।
धनेश्वरः सर्पराजश्चादित्यः साध्य एव च ॥
गन्धर्वेन्द्रस्तथा सिद्धा चामुण्डा सर्वशेषगा ।
अनेनैव प्रकारेण नरस्यापि प्रपूजयेत् ॥
क्रमसिद्धं पूर्वगतमदोऽधिकमिहार्हणम् ।
अथोभयोः शेषगतान् मन्त्रानाकलय प्रिये ॥
यमस्य वाहनत्वेन ख्यातस्त्वमसि कासरः ।
वसतः शृङ्गयोरग्रे मृत्युकालौ सदा तव ॥
भवानेव परिद्वेष्टि जवनाँस्तुरगानपि ।
तव रूपं समास्थाय रम्भासुरसुतः पुरा ॥
भगवत्या समं युद्धं कृतवान् दर्पमोहितः ।
देव्या त्वं निहतश्चासि तथा क्रान्तं शिरस्तव ॥
वहस्यतश्चण्डिकां त्वं शिरसा भङ्गुरेण वा ।
त्वत्तो नान्यो बलिः कश्चिद्देव्याः प्रीतिप्रदायकः ॥
अतो ददामि काल्यै त्वां भक्तियुक्तेन चेतसा ।
मयि कल्याणमाधाय गच्छ कासर सद्गतिम् ॥

नरबलौ विशेषमाह ।

मनुष्यबलिदाने तु विशेषः कश्चिदीरितः ।
पूर्वेद्युरकृताहारं संपरित्यक्तमैथुनम् ॥
स्नातं रक्ताम्बरधरं नरं मुण्डितमस्तकम् ।

रक्तचन्दनदिग्धाङ्गं कृत्तश्मश्रुनखं तथा ॥
अजाताश्रुकमुद्रिक्तं न दीनं नाप्यधोमुखम्।
न बाडवं न चाण्डालं न क्लीबं पतितं न च ॥
चतुर्विधेभ्योऽपि शिवे स्वयमागतमुत्तमम्।
प्रोक्षयेत् पशुसामान्यरूपेण प्रथमं ततः ॥
महिषोक्तप्रकारेण पश्चादेतान् मनून् जपेत्।
सर्वेषु प्राणिषु श्रेष्ठस्त्वं मनुष्य इति स्थितः ॥
बलिश्रेष्ठ महाभाग देवगर्भश्रिया वृतः।
रक्ष मां सर्वभीतिभ्यः सिद्धिं देहि तथोत्तमाम् ॥
राज्यं देहि यशो देहि देहि चानुत्तमां गतिम्।
आरोग्यं दीर्घमायुश्च प्रजावृद्धिं रणे जयम् ॥
कल्याणं विपुलान् भोगान् दारानपि हृदीप्सितान्।
कात्यायन्यां दृढां भक्तिं लक्ष्मीमप्यधिकां स्थिराम् ॥
दत्वा राज्यं परित्यज्य शरीरं पाञ्चभौतिकम्।
देवीलोकं व्रज क्षिप्रं सज्ञातिसुतबान्धवम् ॥
महादानैर्महायज्ञैस्तपोभिरतिदुष्करम्।
यत् स्थानं नाप्यते लोकैस्तत् त्वं गच्छ नरर्षभ ॥
अङ्गीकृतो महाकाल्या मांसशोणितलिप्सया।
देवीलोकं सुदुष्प्राप्यं प्राप्नुहि त्वं द्रुतं गतः ॥
तत्र गत्वा शिवं ध्याहि मामकीनं जगत्पते।
देवीलोकगतिः काम्या मत्प्रसादात् तवेदृशः ॥
त्वत्प्रसादादहं शत्रून् जयेयं रणमूर्धनि।
श्लोकानष्टाविमान् देवि पठेन्नरबलिक्षणे ॥

गण्डकेऽपि विशेष उक्तस्तत्रैव ।

खड्गमन्त्रं समाख्यास्ये गण्डको येन दीयते ।
द्विपदेहाकृते खड्ग शस्त्राभेद्यकलेवर ॥
तृप्ता भवेयुः पितरस्त्वन्मांसेन सुरा अपि ।
न त्त्र त्वत्तोऽधिकः कश्चित् पवित्रः पृथिवीतले ॥
त्वत्करोटिजपात्राणि शस्तानि श्राद्धकर्मणि ।
मया देव्या बलित्वेन त्वमद्य विनिवेदितः ॥
मम विघ्नान् समुत्सार्य सद्यो देवीगणे भव-इति ।

( यामले )

एवं हत्वा पशून् सद्यस्तदीयरुधिरं तथा ।
स्वर्णादिरचिते पात्रे गृह्णीयादुष्णफेनिलम् ॥

( कालिकापुराणे )

ॐ ह्रीँ ऐँ ह्रीँ श्रीँ कौशिकी रुधिरेणाप्यायताम्-इति ।
पात्रे नियोजयेद्रक्तं शिरस्येव प्रदीपकम् ॥

( महाकालसंहितायाम् )

अथ पात्राणि वक्ष्येऽहं स्थाप्यते यत्र शोणितम् ।
हैमे वा राजते ताम्रे ग्राह्यं रक्तं महीभृता ॥
सामन्तैर्माण्डलकैश्च ताम्रे वा कांस्यरैत्ययोः ।
दरिद्रगृहिभिश्चापि मार्त्तिके वाऽथ दारवे ॥
अथ वा पत्रपुटके नैव लौहे कदा चन ।
न रङ्गे सीसके चापि नारिकेलफलत्वचि ॥
कौलानां सर्वपात्रेभ्यः कपालं श्रेष्ठमिष्यते ।
एषां पशूनां पललैर्यावती तृप्तिरीरिता ॥
भगवत्याः प्रिये तृप्ती रुधिरैरपि तावती ।
नित्ये नैमित्तिके वाऽपि कात्यायन्याः प्रपूजने ॥

विना बलिं नैव दद्याद्वामे पललशोणिते ।
पशोर्वा पक्षिणो वाऽपि नरस्यापि विशेषतः ॥

अथ मस्तकपतनफलं तत्रैव ।

एवं दत्वा बलिं देव्यै बलिदानविधिर्यथा ।
शुभाशुभं विजानीयाद्राज्यस्य च नृपस्य च ॥
यदि वायव्यदिग्भागे नैर्ऋत्ये दक्षिणेऽपि वा ।
मस्तके पतिते चैव हानिरत्र विनिर्दिशेत् ॥
शेषेषु दिक्षु सर्वासु विदिक्षु च फलं शृणु ।
पूर्वे चोत्तरदिग्भागे पतते यदि मस्तकम् ॥
सर्वसम्पत्करं विद्याद्राजा राज्यं विनिर्दिशेत् ।
भ्रमित्वा दक्षिणे कर्णे यदा पतति वै शिरः ॥
तदा सिद्धिश्च मासान्ते वामकर्णे विपद्भवेत् ।
राज्ञामध्ये भवेद्धानिर्गृहस्थानां भवेच्छुभम् ॥
ऐशान्यां मध्ययोश्चैव पतते यदि मस्तकम् ।
छिन्नं शिरो निपतितं सहास्यं यदि दृश्यते ॥
विभूतिं तस्य जानीयाद्राजा राज्यं विनिर्दिशेत् ।
तदा स्वल्पेन कालेन सर्वसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥
एकवारे भवेत् सिद्धिर्द्विवारे हानिरुच्यते ।
गृहस्थानां विजानीयाद्राज्ञां तु विपरीतकम् ॥
यदाऽश्रु दृश्यते नेत्रे तदा हानिं विनिर्दिशेत् ।
यदा कटकटाशब्दो दन्तानां श्रूयते क्वचित् ॥
तदा तु मरणं विद्याद्धानिं सर्वत्र निर्दिशेत् ।

(त्रैपुरपद्धत्याम्)

दक्षिणे पतिते सिद्धिर्वामभागे च निन्दितम् ।

सव्ये तु पतिते छेदे देवीमन्त्रं स्मरेद्बुधः ॥
ततः कुण्डादिके हुत्वा हुतिभिर्दशपञ्चभिः ।
शमयेद्धूङ्कृतेर्दोषं बलिलक्षणलक्षितम् ॥

( महाकालसंहितायाम् )

दद्याद्राक्षसदिग्भागे मन्त्री बलिशिरः स्वयम् ।
तद्दक्षिणे रक्तपात्रं विपरीतं न संददेत् ॥
देवस्य संमुखं कृत्वा छिन्नं भागं प्रकल्पयेत् ।
तदेव शस्तं जानीयान्मध्यमं तदुदीरितम् ॥
बलीनामिति संज्ञानं शिरश्च पुरतो ददेत् ।

तथा ।

न भूमौ स्थापयेच्छीर्षं न चैव विपरीतकम् ।
शिरः सलोहितं दद्यात् पुर एव न चान्यतः ॥
रुधिरादानकाले तु पात्रे स्वविभवाहृते ।
सैन्धवं स्थापयेत् किञ्चित् फलानामेकमेव हि ॥
तद्रक्तं हविरेव स्यात् पुरोडाशं च तच्छिरः ।
नासाग्रीवागण्डपुच्छपललानि निकृत्य हि ॥
पशूनां वदने क्षिप्त्वा ततः संस्थापयेत् पुरः ।
तथा पक्षत्रिपत्रं च वीनां त्रोटौ विनिःक्षिपेत् ॥
पशुवच्चरणस्यापि शीर्षे कमललोचने ।
बलीनां मस्तके दद्यात् प्रदीपं धूपवर्त्तिकाम् ॥
दहनाल्लोमकेशानां यो गन्ध उपतिष्ठते ।
घ्राति तं* चण्डिका देवी सन्तुष्टा तु प्रजायते ॥
तस्मिन्नेव ह्यवसरे आधिक्यं धूपदीपयोः ।

* तेन सा इति ३ पु० पा० ।

यथाविभवतो देवि कर्त्तव्यं भक्तितत्परः ॥
बल्याधिक्ये च शीर्षाणां विधेयाः पङ्क्तयस्तथा ।
सधूपदीपाः कुसुमाक्षतपुञ्जान्वितास्तथा ॥

तथा ।

शिरश्च संमुखे स्थाप्यं सदीपं पात्रवर्जितम् ।
स चापि हविरक्तः स्यादथ वा तिलजोक्षितः ॥
सार्षपं न प्रदातव्यं न चान्यफलसम्भवम् ।
मूर्धाभिषिक्तो हविषा तैलेन बहुसिद्धिभाक् ॥
अन्यबीजोद्भवे रोगं शोकं मृत्युं च विन्दति ।
यथा लोमानि दह्यन्ते यत्नात् कार्यं तथा नरैः ॥

तन्त्रान्तरे ।

सूत्रवर्त्तिं प्रदद्याच्च वस्त्रवर्त्तिः प्रशस्यते ।
अङ्गुष्ठस्य प्रमाणं च दीर्घं नैव षडङ्गुलम् ॥
कार्पाससूत्रकैर्दद्यादेकविंशतिसूत्रकैः ।
सुगन्धिद्रव्यैस्तत् कुर्यात् कर्पूरागुरुचन्दनैः ॥
ग्राहाणां कच्छपानां च गोधायाश्च विशेषतः ।
मत्स्यानामपि पक्षिणां न दीपं दापयेच्छिवे ॥
शीर्षोपरि ज्वलद्दीपं यावत्कालं प्रवर्त्तते ।
तावत्कालं वसेत् स्वर्गे तस्माद्यत्नेन दापयेत् ॥
लोमदाहोद्भवं गन्धं घ्रात्वा देवी प्रसीदति ।
तस्मात् संवर्धयेद्दीपं तस्मात् पात्रं विवर्जयेत् ॥
निर्वाणे मृत्युमाप्नोति दीयमाने प्रदीपके ।

(महाकालसंहितायाम्)

ततः पात्रं पुरः कृत्वा देव्याः सपशु शोणितम् ।
शर्करायुतदूर्वाणां प्रदद्यात् त्रिर्महाघृतम् ॥

सैन्धवं शृङ्गवेरं च कदलीफलमेव च ।
पातयेन्मधुराणां च काममुद्दिश्य साधकः ॥
अष्टधा विभजेद्विन्मध्ये चैकं कुशादिभिः ।
दत्वा किञ्चिद्घृतं तत्र कुर्यात् तर्पणमुद्रया ॥
तर्पणं भागभाजां वै देवीनां द्विर्द्विरेव च ।
आद्यन्तिमौ तारहार्दौ मध्ये आदिमनोरपि ॥
तत्तन्नाम्ना मन्त्रमपि तर्पयामीति संयुतम् ।
द्वितीयरूपं ङेन्तं च तद्द्वितीयपदोदितम् ॥
मध्ये नित्योदितश्र्याख्यपात्रवत् पीठगा क्रिया ।
पूर्वस्यां दिशि चामुण्डा दक्षिणस्यां तु योगिनी ॥
डाकिन्युक्ता पश्चिमायामुत्तरस्यां तु भैरवी ।
विदारिकाऽऽग्नेयकोणे नैर्ऋत्यां पापराक्षसी ॥
पूतना चापि वायव्ये ईशाने कालिका तथा ।
ततः स्तुतिं प्रकुर्वीत बद्धाञ्जलिपुटोऽग्रतः ॥
जय देवि जगन्मातर्जय पापौघहारिणि ।
जय जन्मजराव्याधितृणदावानलाकृते ॥
जय सर्वविपत्तिघ्ने जय त्रिदशवन्दिते ।
जय नित्यानन्दरूपे जय कल्याणदायिनि ॥
जय शत्रुक्षयकरे जय रोगप्रणाशिनि ।
जय भीमे जयाघोरे जय सङ्कटतारिणि ॥
जयामृतरसास्वादतुन्दिलामन्दविग्रहे ।
त्रिनेत्रे विकरालास्ये मुण्डमालाविभूषिते ॥
सर्वासुरक्षयकरि खड्गखट्वाङ्गधारिणि ।

महाघोरे महारावे दैत्यदर्पनिषूदिनि ॥
इमं पशुबलिं देवि गृहीत्वा कालरात्रिके ।
प्रीता भव महाचण्डे रक्ष मां शरणागतम् ॥
आयुर्देहि धनं देहि भाग्यं कीर्त्तिं च देहि मे ।
स्त्रियं देहि सुतान् देहि सर्वान् कामाँश्च देहि मे ॥
उग्रचण्डे प्रचण्डाऽसि प्रचण्डकरवालिनि ।
महाचण्डोग्रदोर्दण्डे विश्वेश्वरि नमोऽस्तु ते ॥
रक्ष मां शरणापन्नं त्वत्पादार्पितमानसम् ।
हर पापं हर क्लेशं हर शोकं हरासुखम् ॥
हर रोगं हर क्षोभं हर दैन्यं हरप्रिये ।
स्तुतिमेतां पठित्वैवं दण्डवत् प्रणमेद्भुवि ॥
गुह्यकालि जगद्धात्रि सर्वान्तर्यामिनीश्वरि ।
गृहीत्वेमं पशुबलिं यथोक्तफलदा भव ॥
कायेन मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम ।
अन्तश्चरसि भूतानां द्रष्ट्री त्वं परमेश्वरि ॥

(यामले)

कात्यायनि महामाये दुर्गे दुर्गतितारिणि ।
नमस्तुभ्यं जगद्धात्रि कालरात्रिस्वरूपिणि ॥
एवं स्तुत्वा महादेव्यै दत्वा च सुमनोऽञ्जलीन् ।
साष्टाङ्गं प्रणमेद्भूमौ भक्तियुक्तेन चेतसा ॥

सुमनोऽञ्जलीनिति बहुवचनं कपिञ्जलाधिकरणन्यायेन त्रित्वे पर्यवस्यति । तथा च पुष्पाञ्जलित्रयं दत्वा प्रणमेदित्यर्थः ।

इति बलिदानविधिः ।

अथ पशुपक्षिणां वस्त्वन्तराणां च दैवतानि ।

(महाकालसंहितायाम्)

पशूनां च विहङ्गानामन्येषामपि वस्तूनाम् ।

ब्रवीमि देवताः सर्वाः क्रमेणोत्सर्गकर्मणि ॥
प्राजापत्यो गजः प्रोक्तस्तुरगो यमदैवतः ।
तथा चैकशफाः सर्वे कथिता यमदैवताः ॥
महिषश्च तथा याम्य उष्ट्रो वै नैरृतो मतः ।
गोवृषौ रुद्रदैवत्यौ छाग आग्नेय उच्यते ॥
मेषस्तु वारुणो ज्ञेयो वराहो वैष्णवो मतः ।
गौरीदेव्यौ व्याघ्रसिंहौ गण्डको ब्रह्मदैवतः ॥
यावन्तो मृगभेदाः स्युः कथिता वायुदेवताः ।
यावन्तः पक्षिणः सर्वे वायव्याः परिकीर्त्तिताः ॥
प्राजापत्यास्तथा मत्स्याः कच्छपाः साध्यदैवताः ।
गोधा वरुणदैवत्या ग्राहा अपि च तादृशाः ॥
तथा च बभ्रूशलभावादित्येशानदैवतौ ।
कन्या दासस्तथा दासी प्राजापत्या नरास्तथा ॥
अभयं शिवदैवत्यं धरित्री विष्णुदैवता ।
तथा समुद्रदैवत्यं रत्नमुक्ताफलादिकम् ॥
जलाशयास्तथा सर्वे वारिधानी कमण्डलुः ।
प्रपा कुम्भश्च करकं ज्ञेयं वरुणदैवतम् ॥
सुवर्णमग्निदैवत्यं लोहं भैरवदैवतम् ।
"कांस्ये पूषाऽश्विनौ चापि देवता परिकीर्त्तिताः ॥"
रङ्गं नासत्यदैवत्यं सीसकं वायुदैवतम् ।
ताम्रं च सूर्यदैवत्यं पित्तलं कुजदैवतम् ॥
रजतं चन्द्रदैवत्यं खर्परं पितृदैवतम् ।

---

" " एतद्वक्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

गुडं कुबेरदैवत्यं शर्करा मित्रदैवता ॥

"अन्यत्र तु ।

आपो गुडे देवताः स्युः········इत्युक्तम् ।

तथा ।"

जाङ्गलं वह्नि*दैवत्यं मधु स्याद्यदैवतम् ।

ताम्बूलदेवता ज्ञेया शक्रो विद्याधरोऽथ वा ।

"तन्त्रान्तरे ।

ताम्बूले देवताः शक्रविद्याधरविनायकाः ।

महाकालः ।"

तथा मृत्युञ्जयो देवो घृतेषु परिनिष्ठितः ।

तैलं तु राहुदैवत्यं कार्पासं केतुदैवतम् ॥

क्षीरं च तारादैवत्यं दधि† चौषधिदैवतम् ।

"अन्यत्र तु ।

क्षीरे नारायणः प्रोक्तो दधिसर्पाः प्रकीर्त्तिताः-इत्युक्तम्" ।

तथा ।

पिष्टं शचीदैवतं च सिन्दूरमपि पार्वति ।

"तन्त्रान्तरे ।

अन्येषु देवताः सर्वे देवः पिष्टे प्रजापतिः ।

महाकालः" ।

लवणं चाब्धिदैवत्यं जलं वरुणदैवतम् ।

देवः स्मरश्च गन्धर्वो मधुपर्के च चन्दने ॥

पुष्पं च लक्ष्मीदैवत्यं धूपे देवो वनस्पतिः ।

अप्सरोदैवतं ज्ञेयं सर्वं मृगमदादिकम् ॥

दीपोऽपि वह्निदैवत्यो नैवेद्यं विष्णुदैवम् ।

---

* ब्रह्मदैवत्यम्-इति ४ पु० पा० ।

† दध्यौषधीशदैवतमित्यन्यत्र पाठः । तत्रौषधीशश्चन्द्रः ।

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पादुका सोमदैवत्या छत्रं स्यादिन्द्रदैवतम् ॥
देवता कामधेनुः स्याच्चामरे त्रिदशेश्वरि ।
व्यजनं वायुदैवत्यमिन्द्रः सिंहासनस्य च ॥
माला च रतिदैवत्या डाकिनी देवता सुरा ।
मांसं निर्ऋतिदैवत्यं वितानं चन्द्रदैवतम् ॥
प्राजापत्यानि शस्यानि पक्वान्नानि च सर्वशः ।
वाचस्पत्यानि वासांसि पाण्डुराण्यसितानि च ॥
मयुदैवानि रक्तानि दुर्गादैवं तु पट्टकम् ।
विद्या ब्राह्मी विनिर्दिष्टा विद्याप्रकरणानि च ॥
सारस्वतानि ज्ञेयानि पुस्तकाद्यानि पार्वति ।
पात्राणामपि सर्वेषां विश्वकर्माऽधिदैवतम् ॥

"( यामले )

वाद्यं चतुर्विधं ज्ञेयं रुद्रगन्धर्वदैवतम् ।

महाकाल: " ।

द्रुमाणां च लतानां तु शाकानां हरितैः सह ।
फलानामपि सर्वेषां देवो ज्ञेयो वनस्पतिः ।
अजिनानि तथा शय्या रथ आसनमेव च ॥
उपानहौ तथा दोला यच्चान्यत् प्राणिवर्जितम् ।
उत्तानाङ्गिरदैवत्यं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥
ध्वजो वै धर्मदैवत्यः सीरं पर्यन्यदैवतम् ।
पाषाणादि तथा रत्नं कथितं शक्रदैवतम् ॥
गृहं तु सर्वदैवत्यमनुक्तं यन्मया प्रिये ।
तत् सर्वं रुद्रदैवत्यं ज्ञेयमुत्सर्गकर्मणि ॥

इति दैवतानि ।

---

" ,, एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

अथ कुमारीपूजाविधिः ।

( महाथर्वणसंहितायाम् )

ततः कुमारीयजनं कुर्यात् साधकसत्तमः ।
यस्मिन् कृते तु विधिवत् कर्मणः साङ्गता भवेत् ॥
अकृते चाङ्गहानिः स्याद्विशेषाच्छरदर्चने ।

( महाकालसंहितायाम् )

समाप्य पूजामासायं प्रदोषे पर्युपस्थिते ।
कुमारीपूजनं कुर्याद्विधिना पञ्चमं हितम् ॥

तथा ।

भक्तभद्राभद्रमुभे तदनक्ति सुरेश्वरि ।
स्वयं तद्रूपमास्थाय मूढभावमुपेयुषी ॥
दिदृक्षुरायाति शिवा भक्तिपूजनसम्भृतिः ।
तस्मात् तत्रादरः कार्यो भक्तिभावं च जानता ॥
देवतास्त्रिविधोत्पातैर्यथादेशे हिताहितम् ।
सूचयन्ति तथैवैषां वार्षिकं सुरवन्दिते ॥
तद्विज्ञानार्थमप्येषा पूजितव्या प्रयत्नतः ।
चतुर्णामपि कौलानां स्मर्त्तानामानुकल्पिनाम् ।
नैवात्र मतभेदोऽस्ति नैवार्चनभिदाऽपि वा ॥
न च पूर्वोत्तरौ पक्षौ न च संदेहकल्पना ।
भवेच्च फलबाहुल्यं तुष्टिर्देव्यास्तथैव च ॥
विशिष्य ज्ञायतेऽनेन तथा भावि शुभाशुभम् ।
ज्ञाते शुभे भवेत् तोषोऽन्यस्मिँश्चोपायचिन्तनम् ।

तथा ।

न तथा तुष्यति शिवा बलिहोमस्तुतीरणैः ।
कुमारीपूजनेनात्र यथा सद्यः प्रसीदति ॥

न केवलं पूजयेत् तां भोजयेच्चापि यत्नतः ।

तथा ।

व्यङ्गता चाप्यकरणात् पूजायाः परिकीर्त्तिता ।
कुमारीपूजनेनात्र यथा सद्यः प्रसीदति ॥
करणात् साङ्गताऽपि स्यादन्यस्मिन्नकृतेऽपि हि ।

तथा ।

कौलानां निशि पूजोक्ता स्मार्त्ता नामपराह्निकी ।
नित्या तु शारदी नाम्नी काम्या नैमित्तिकीतरा ॥

कुमारीलक्षणमाह ।

सुस्नातां रक्तपीतादिनानारागोज्ज्वलांशुकाम् ।
सर्वालङ्कारचित्राङ्गीमज्ञातानङ्गचेष्टिताम् ॥
अजातपुम्मनःसङ्गां सप्ताष्टनववार्षिकीम् ।
अनीचजातिं गौराङ्गीं पितृमातृमतीमपि ।
अदन्तुरामवाग्दन्तामधिकोनाङ्गवर्जिताम् ॥
अदीर्घकेशीमुद्दीप्तां सुस्मितास्यामलोभनाम् ।

निषिद्धालक्षणमुक्तं तत्रैव ।

श्यामां दीर्घदतीमोतुनयनां पिङ्गमूर्धजाम् ।
तनुमन्दगतिं क्रुद्धां कुब्जां खञ्जां च खर्विकाम् ॥
भ्रूकेशाल्पत्वसहितां तथा चैव गलद्व्रणाम् ।
जातस्तनरजोऽनङ्गां प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥

तन्त्रान्तरे ।

अधिकाङ्गीं च हीनाङ्गीं रोगिणीं च व्रणाङ्किताम् ।
अन्धां काणां केकरां च कुरूपां लोमशां त्यजेत् ॥

(महाकालसंहितायाम्)

एतद्भिन्ना कुमारी तु वरणीयाऽर्चनक्रमे ।

( मेरुतन्त्रे )

विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥

( स्कान्दे )

दारुणे चान्त्यजां कन्यां पूजयेद्विधिना नरः ।

( यामले )

यः कुमारीं यजेन्मन्त्री सर्वपर्वसु सर्वदा ।
तेनार्च्चिता महादेवी सत्यं सत्यं न संशयः ॥
सन्ध्यैकवर्षा संप्रोक्ता द्विवर्षा च सरस्वती ।
त्रिधामूर्त्तिस्त्रिवर्षा च चतुरब्दा च कालिका ॥
सुभगा पञ्चवर्षेयमुमा षड्वार्षिकी भवेत् ।
मालिनी सप्तवर्षा च अष्टमी कुब्जिका मता ॥
नवाब्दा कालसंकर्षा दशवर्षाऽपराजिता ।
एकादशाब्दा रुद्राणी द्वादशाब्दा च भैरवी ॥
तत्परा स्यान्महालक्ष्मीस्तत्परा कुलनायिका ।
क्षेत्रज्ञा तत्परा प्रोक्ता षोडशाब्दा च चण्डिका ॥
एवं क्रमेण विज्ञेया विना पुष्पं कुमारिका ।

( हेमाद्रौ स्कान्दे )

एकैकां पूजयेत् कन्यामेकवृद्ध्या तथैव च ।
द्विगुणं त्रिगुणं वाऽपि प्रत्येकं नवकं तु वा ॥

तथा ।

*नवभिर्भजते भूमिमैश्वर्यं द्विगुणेन तु ।
एकवृद्ध्या लभेत् क्षेममेकैकेन श्रियं लभेत् ॥
एकवर्षा तु या कन्या पूजार्थे तां विवर्जयेत् ।
गन्धपुष्पफलादीनां प्रीतिस्तस्या न विद्यते ॥

* नवभिर्जृम्भते इति ४ पु० पा० ।

" (वाडवानलीये)

उत्तमा सा परिज्ञेया सप्ताष्टनवहायना ।
मध्यमा पञ्चवर्षा च षडब्दा दशहायना ॥
एकद्वित्रिचतुर्वर्षा रुद्राब्दाद्याऽवरा स्मृता " ।

(महाकालसंहितायाम्)

गीतवादित्रनिर्घोषैरानन्दादरपूर्वकम् ।
नीत्वा पूजागृहद्वारि कुमारीस्ता अयुग्मिकाः ॥
पञ्च वा सप्त वा चापि नवैकादश वा पुनः ।
मुख्यैका तासु कर्त्तव्या या स्यात् सर्वाङ्गसुन्दरी ॥
बह्वीनामप्यभावे हि भवेदेका कुमारिका ।
काम्ये नैमित्तिके चैका बह्व्यः शारदपूजने ॥
श्रेणीभूता उत्थिताश्च नम्रीभूताननना अपि ।
स्थापयित्वा क्रमेणैता मुख्यामादौ नियोज्य च ॥
देवीबुद्धिं विधायास्यां साधको विगतत्वरः ।
गृहीतमदिरामत्तः कल्पितार्चनसम्भृतिः ॥
प्राणायामं विधायादौ ततो भूतापसारणम् ।
गुरुं गणपतिं नत्वा वामदक्षिणयोस्ततः ॥
मध्ये कुमारीं च तथा मूलदेवीस्वरूपिणीम् ।
छोटिकाभिस्तथा तालत्रितयैर्बन्धनं दिशाम् ॥

तथा ।

कुमर्या मूलभूतायाः पादौ प्रक्षालयेत् ततः ।

तथा ।

तज्जलं मस्तके दद्याद्देवीपादोदप्रज्ञया ।
स्वोत्तरीयांशुकेनैव पादाम्बूपनयेत् ततः ॥

---

" " एतद्चिह्नान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पुनरक्षतमादाय विघ्नानुत्सारयेत् प्रिये ।
उदीर्यमाणमन्त्रेण तालत्रयपुरःसरम् ॥
तारपाशकलाकूर्चास्त्राणि प्रथमतो वदेत् ।
भूतान्यपसारय च विघ्नान् नाशय चेत्यपि ॥
हृच्छीर्षे चरमे दद्यादेकविंशाक्षरो मनुः ।
कुमार्या सहिताः सर्वे तया देवीस्वरूपया ॥
दर्शनार्थं समायान्ति यावन्तो देवयोनयः ।
प्रेता भूताः पिशाचाश्च गन्धर्वा गुह्यका अपि ॥
राक्षसा दानवा यक्षा ये चान्ये क्रूरकर्मिणः ।
सह प्रविश्य कौमार्या मण्डपं शारदार्चनम् ॥
लुम्पन्ति च कुमार्यर्चां पूजां विध्वंसयन्ति च ।
अतो वारद्वयं कार्यं विघ्नस्योत्सारणं प्रिये ॥
ततः स्ववामहस्तेन कुमार्या दक्षिणं करम् ।
गृहीत्वा दक्षचरणविनिःक्षेपपुरसःरम् ॥
पङ्क्तीभूताः कुमारीस्ताः श्लोकरूपं मनुं पठन् ।
पूजागृहान्तः शनकैर्नमन्मौलिः प्रवेशयेत् ॥
समस्तजगतामाद्ये जगदाधाररूपिणि ।
कुमारीरूपमास्थाय प्रविशेदं गृहं मम ॥
भवत्याः कीदृशं रूपं जाने मातरहं न हि ।
कुमारीरूपमेवेदं पश्यामि नरचक्षुषा ॥
भक्तिं मदीयां विज्ञाय त्वत्पादाम्बुजयोः शिवे ।
त्वया प्रकटितं रूपमीदृशं सर्वसिद्धये ॥
दृष्टिः कार्या न मे पापे सञ्चारेणासतः पथः ।

दृष्टायां केवलं भक्तौ दातव्या सुखदिन्ते ॥
शिवाद्यास्तव रूपं हि कीदृशं नेति जानते ।
ज्ञास्यामि को वराकोऽहं पाञ्चभौतिकविग्रहः ॥
इति पञ्च पठन् श्लोकान् स्वपृष्ठेनैव तारयेत् ।
अनोक्षमाण एवेशि गोतवाद्यपुरःसरम् ॥

( यामले )

स्नापिता गन्धतैलेन नानाभरणभूषिता ।
आनीय देवतापार्श्वे स्थापनीया सुधीमता ॥

( महाकालसंहितायामपि )

मुख्यं तत्पूजनं प्रोक्तं मुख्याया एव तन्मनुम् ।
तत्पूजयैव ताः सर्वाः पूजिताः स्युर्न संशयः ॥

तथा ।

बलिं दत्वा ततो देवयोनिभ्यः परमेश्वरि ।
आरभेत निरालस्यः कुमारीन्यासमुत्तमम् ॥
नामान्यादौ खलु महाचण्डयोगेश्वरी मता ।
ततः सिद्धिकराली च पुनः सिद्धिविकराल्यपि ॥
महान्तामार्यथ ज्ञेया वज्रकापालिनी ततः ।
मुण्डमालिन्यट्टहासिन्यंते द्वे परिकीर्त्तिते ॥
चण्डकापालिनी कालचक्रेश्वर्यप्यनन्तरम् ।
गुह्यकाली ततः कात्यायनी कामाख्यया सह ॥
चामुण्डा सिद्धिलक्ष्मीश्च कुब्जिका तदनन्तरम् ।
मातङ्गी तदनु ज्ञेया चण्डेश्वर्यथ कीर्त्यते ॥
सर्वशेषेऽथ कौमारी एता अष्टादशेरिताः ।

" एतानि गुह्येशीविषयाणि " ।

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

"अन्यत्र तु ।

नामान्यादौ व्याहरामि दुर्गा नारायणी शिवा ।
महामाया योगनिद्रा कालरात्री कपर्दिनी ॥
उग्रचण्डा भद्रकाली अजिता चापराजिता ।
कात्यायनी महाकाली कामाख्या कुलनायिका ॥
भैरवी भुवनेशी च कौमार्यष्टादश स्मृताः ।

इति नामान्तरण्युक्तानि ।
तथा" ।

अङ्गान्यतो वच्मि शिरो मुखं तदनु चक्षुषी ।
कर्णौ नासापुटे चापि कपोलौ तत्पुरौ पुनः ॥
अधरोष्ठौ दन्तपङ्क्ती स्कन्धौ हृदयमेव च ।
बाहू च जठरं पृष्ठमूरूजानू तथैव च ॥
जङ्घे पादौ च सर्वाङ्गं तावन्त्येव स्थलानि च ।

(त्रिशक्तिरत्ने)

कलादि च कलान्तं ताः पूजयेद्विधिना बुधः ।
उपवेश्यासने दिव्ये कुमारीं साधकोत्तमः ॥
वक्ष्यमाणेन विधिना देहेऽस्या न्यासमाचरेत् ।
कुमारिका स्यात् प्रथमा द्वितीया नायिका मता ॥
तृतीया भैरवो ख्याता तुर्या वागीश्वरी भवेत् ।
पालिका पञ्चमो प्रोक्तो सम्बुद्ध्यन्ताः कुलादिकाः ॥
न्यस्याः पञ्चाङ्गयोगेन कुमारीणां कलेवरे ।
वामावर्त्तक्रमादास्यचतुष्कं पूजयेत् क्रमात् ॥
ततः सिद्धा जया पूर्वा जयाऽन्या कुब्जिका परा ।
कालिका पञ्चमो प्रोक्ता विज्ञेया बोधिता इमाः ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पूर्वादिवक्ष्यमाणयुक्ता चतुर्थ्यन्ता नमोऽन्तकाः ।
तत्तत्स्थानेषु विन्यस्याः स्वधिया क्रमपूर्वकम् ॥
पञ्चप्रणवयोगेन चैतन्यमनुना सह ।
न्यासजालं हि पूर्वोक्तं कुर्यात् साधकसत्तमः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

ततोऽर्घस्थापनं कुर्यान्नित्यके यदुदाहृतम् ।
पूजोपकरणस्यापि शुद्धिरुक्ता पुरोक्तवत् ॥

तथा ।

ततो ध्यानं प्रकुर्वीत कुमार्या वक्ष्यमाणकम् ।

"तन्त्रान्तरे ।

प्रसन्नवदनाम्भोजां प्रोद्यद्बालार्कसप्रभाम् ।
रक्ताम्बरां रक्तमाल्यां नानालङ्कारभूषिताम् ॥
सस्मितां दिव्यकन्याभिः क्रीडारसपरायणाम् ।
ध्यायेत् कुमारिकां बालां स्वभक्ताभीष्टसिद्धिदाम्" ॥

तथा ।

उपचारांस्ततः सर्वान् पाद्यादीन् स्तुतिपश्चिमान् ।

"समर्पयेदिति शेषः" ।

(यामले)

यष्टव्या पूर्वमार्गेण वक्ष्यमाणेन वा पुनः ।
स्वनामभिश्चतुर्थ्यन्तैस्त्रितारायैर्नमोऽन्तकैः ॥
देवतापश्चिमे मन्त्री यजेदेताः सलक्षणाः ।
आद्या शुद्धा कालिकाऽन्या तृतीया ललिता स्मृता ॥
चतुर्थी मालिनी ख्याता पञ्चमी स्याद्वसुन्धरा ।
सरस्वती रमा गौरी दुर्गा तु नवमी भवेत् ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पञ्चाब्दं नववर्षं च यजेद्बालं विचक्षणः ।
पञ्चाब्दो वटुकः प्रोक्तो नववर्षो गणेश्वरः ॥

तथा ।

प्रदद्यादासनं वाचा ह्रिया पाद्यं समर्पयेत् ।
रमयाऽर्घं निवेद्याथ स्त्रिया चन्दनमर्पयेत् ॥
कुमार्यै शक्तिबीजेन प्रदद्यात् कुसुमोच्चयम् ।
चैतन्यमनुना मन्त्री धूपदीपादिकं न्यसेत् ॥
तारा एते समाख्याता भृगुर्भवसमन्वितः ।
बिन्दुनादसमाक्रान्तश्चैतन्यमनुरीरितः ॥
क चिद्भैरवबीजं तु पञ्चमः प्रणवो मतः ।

" एकस्या एव पूजने त्रितारायमन्त्रेणैव समस्तोपचारसमर्पणं बोध्यम् ।
त्रितारायेन मन्त्रेण सर्वं तस्यै निवेदयेत्-इति वचनात् " ।

(महाकालसंहितायाम्)

भूषणानि दुकूलानि सिन्दूरालक्तकावपि ।
कज्जलादर्शविख्याततालवृन्तानि पेटिका ॥
परिकर्माधारचोलमञ्चिकापीठदोलिका ।
पाञ्चालिका च मञ्जूषा पादुके कुथपट्टके ॥
चन्द्रातपोपसङ्ख्यान तथोद्वर्त्तनभाजनम् ।
शय्योपधानपर्यङ्काः समुद्गं च प्रसाधनी ॥
प्रतिग्राहश्च हिन्दोला तथा सीमन्तवर्त्तिका ।
गोरोचनामृगमदौ कर्पूरं कुङ्कुमं तथा ॥
एवमादीनि चान्यानि यावच्छक्यानि सुन्दरि ।
प्रदातव्यानि वस्तूनि कुमारी तुष्यते यथा ॥

तथा ।

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

ततो यत् स्थापितं पात्रं कुमार्यै प्रतिपादयेत् ।
स्वीकुर्यात् सा च तत्रैव तथा यत्नं समाचरेत् ॥
अगृहीते तु तत्पात्रे महान् दोषोऽभिजायते ।
अतो यत्नस्तथा कार्यः स्वीक्रियेत यथा तया ॥
ततो गृहीत्वा कुसुमाक्षतं तस्याः कलेवरे ।
पञ्चाशत्सङ्ख्यकाः शक्तीः क्रमतः परिपूजयेत् ॥
ता इदानीं प्रवक्ष्यामि सावधाना निशामय ।
आद्या जया च विजया ऋद्धिदा माययाऽन्विता ॥
कला च सिद्धिदा सूक्ष्मा प्रभा स्यात् सुप्रभा ततः ।
विद्युता च विशुद्धिश्च नन्दिनी च विशुद्धियुक् ॥
अपराजिता च ललिता लक्ष्मीर्गौरी तथैव च ।
अथ मेधा च गायत्री सावित्री च स्वधा पुनः ॥
स्वाहेच्छे च क्रिया विद्या प्रज्ञा दीप्ता च चेतना ।
भद्रा ज्येष्ठा तथोमा च शिवा च मुदिता क्षमा ॥
श्रद्धाऽथ विमला कौमुद्यपि वै विशदा ततः ।
अशोका ज्ञानदा चैव बलदा राज्यदाऽपि च ॥
मैत्री तदनु रुद्राणी भवानी च मृडान्यपि ।
सर्वज्ञा चण्डिका चापि कुमारी सर्वशोषगा ॥
पञ्चाशत्सङ्ख्यका एताः कुमार्याः शक्तयः स्मृताः ।
भैरवानष्ट तदनु पूजयेदक्षतादिभिः ॥
भैरवीभ्यस्ततो विघ्नविनायकेभ्य एव च ।
वटुकक्षेत्रपालाभ्यां योगिनिभ्यस्तथैव च ॥
भूतेभ्यः प्रेतयक्षेभ्यो डाकिनीभ्यस्तथैव च ।

एतत्पूजां प्रकुर्वीत सदूर्वा*क्षतचन्दनैः ॥
पुनरष्टौ सर्वशेषे ङेन्ता देवीर्यजेत् प्रिये ।
महामाया कालरात्री ततो वै सर्वमङ्गला ॥
पूज्या डमरुका पश्चाद्राजराजेश्वरी तथा ।
सम्पत्प्रदा भगवती कुमारी तदनन्तरम् ॥

(यामले)

कुलान्तः पूजयेदेनां कुलकोणेष्विमान् यजेत् ।
कामेश्वरी च वज्रेशी तृतीया भगमालिनी ॥
उपरिष्टात् कुलद्वन्द्वकोणेष्वेताः समर्चयेत् ।
अनङ्गकुसुमाऽनङ्गमन्मथाऽनङ्गपूर्विका ॥
मदनानन्दशब्दाद्या चतुर्थी कुसुमोत्तरा ।
पञ्चम्यनङ्गमदनाऽऽतुराऽनङ्गपदादिका ॥
शिशिरा कथिता ह्येताः शक्तयो रससङ्ख्यकाः ।
अनेन विधिना पूज्या कुमारी साधकोत्तमैः ॥

(महाकालसंहितायाम्)

समाप्येत्थं कुमार्यर्च्चां तत्पुरो भुवि वारिणा ।
वर्त्तुलं मण्डलं कृत्वा तन्मध्ये कुलकामिनीम् ॥
विलिख्य जलकुसुमाक्षतचन्दननागजैः ।
पूजयेन्मण्डलं तच्च शुभदायै नमो वदेत् ॥
स्थालीगतं च तत्सर्वमन्नं तत्र निवेश्य हि ।
नानाविधां च सामग्रीं लेह्यचोष्यादिघट्टिताम् ॥
मांसमीनसुरापूर्णां भक्ष्यचर्व्यादिपूरिताम् ।
कुमारीदक्षहस्ते च स्थापयित्वाऽन्नमूर्धनि ॥

* कुर्वीत पूजां देवि कुसुमैः—इति ४, ५ पु० पा० ।

उत्तानं वक्ष्यमाणेन मनुनाऽन्नं समुत्सृजेत् ।

" अन्नोत्सर्गमन्त्रस्तु ।

ऐँ ह्रीँ श्रीँ स्त्रीँ सौँः सर्वशक्तिस्वरूपायै सर्वसिद्धिदायै भगवत्यै कुमार्यै भक्ष्यभोज्यनानाविधान्नकल्पितषड्रसोपेतमिदं महाभोगनैवेद्यं तुभ्यमहं निवेदयामि गृहाण २ भुङ्क्ष्व २ प्रसीद २ सर्वसिद्धिं मे प्रयच्छ २ ऐँ ह्रीँ श्रीँ नमः स्वाहा ।

इति पद्धतिकृतोक्तः " ।

तथा ।

इतरासां कुमारीणां प्रत्येकं पूजनं चरेत् ।
गन्धपुष्पैर्धूपदीपैर्नैवेद्यैरन्नसङ्कुलैः ॥

तथा ।

अन्नानि यादृशान्यस्यै मुख्यायै कल्पितानि हि ।
अन्याभ्यस्तादृशान्येव दातव्यान्येष निश्चयः ॥
फलाफलं तु मुख्याया ज्ञेयमत्र विपश्चिता ।
भुञ्जानासु कुमारीषु न तूर्यध्वनिमाचरेत् ॥
नान्यत्र च मनो दद्यात् संबाधं नैव कल्पयेत् ।
कोलाहलं निषेधेत अमङ्गल्यानि यानि च ॥
रुदितापानवायुं च प्रयत्नेन विवर्जयेत् ।
सावधानो भवेदत्र किमादौ भक्षयन्ति ताः ॥
मिथः किं वा प्रजल्पन्ति कुत्र वा वस्तुविग्रहः ।
कुत्र दृष्टिं प्रक्षिपन्ति भीताः किं वा वदन्त्यमूः ॥
इत्यादि नानाजातीयाश्चेष्टा आसां प्रयत्नतः ।
सावधानतया ज्ञेया भद्राभद्रस्य सूचकाः ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

भक्षयन्तीषु तास्वेवं पठेत् तत्स्तोत्रमत्वरम् ।
कृताञ्जलिर्नम्रशिरा आसामन्ने क्षिपन् दृशौ ॥
जय कालि महाभीमे भीमरावे भयापहे ।
संसारदावाग्निशिखे वृजिनार्णवतारिणि ॥
ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रभूतेशप्रभृत्यमरवन्दिते ।
सर्गपालनसंहारकारण्यहितमारिणि ॥
गुह्यकालि परानन्दरसपूरितविग्रहे ।
परब्रह्मरसास्वादकैवल्यानन्ददायिनि ॥
गुणातीतेऽपि सगुणे महाकल्पान्तनर्त्तकि ।
कुमारीरूपमास्थाय विद्याप्रज्ञास्वरूपिणि ॥
आगताऽसि ममागारं शारद्यर्चासमाप्तये ।
सांवत्सरिककल्याणसूचनाय तथैव च ॥
धन्योऽस्मि कृतकृत्योऽस्मि सफलं जीवितं मम ।
यस्मात् त्वमीदृशं कृत्वा कौमारं रूपमुत्तमम् ॥
गुह्यकालि समायाताऽऽब्दिकपूजाजिघृक्षया ।
त्वमेवैतेन रूपेण देवेभ्यः प्रार्थिता पुरा ॥
दत्तवत्यसि साम्राज्यं वरानपि समीहितान् ।
मह्यमप्यद्य देवेशि वरं देहि सुपूजिता ॥
ब्रह्मणे सृष्टिसामर्थ्यं त्वं पुरा दत्तवत्यसि ।
विष्णवे च त्वमेवादास्तथा पालनशक्तिताम् ॥
महारुद्राय संहारकर्त्तृत्वमददः शिवे ।
देवेभ्यश्चापि दैत्यानां नाशने दक्षतामपि ॥
अन्तर्यामिन्यसीशानि त्रिलोकीवासिनामपि ।

निवेदयामि किं तेऽहं सर्वकर्मैकसाक्षिणि ॥
शत्रुनाशं राज्यलाभं शरीरारोग्यमेव च ।
त्वत्पादाम्बुजयोर्भक्तिं याचेऽहं चतुरो वरान् ॥
नमस्ते भगवत्यम्ब नमस्ते भक्तिवत्सले ।
नमस्ते जगदाधाररूपिणि त्राहि मां सदा ॥
मातरं वेद्मि रूपं ते न शरीरं न वा गुणम् ।
भक्त्या हृत्स्थितया पूजां तव जानाम्यनन्यधीः ॥
त्वं माता त्वं पिता बन्धुस्त्वमेव जगदीश्वरि ।
त्वं गतिः शरणं त्वं च स्वर्गस्त्वं मोक्ष एव च ॥
विहाय त्वां जगन्मातर्नान्यां जानामि देवताम् ।
नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमो नमः ॥
एभिः श्लोकैः स्तुतिं कृत्वा कुमारीणां वरानने ।
दद्यादाचमनीयं हि भोजनान्ते गतत्वरः ॥
ततः प्रदद्यात् ताम्बूलं मृगचन्द्राभिवासितम् ।
सह वाद्यादिभिस्तावदनुव्रज्य विसर्जयेत् ॥
शुभाशुभफलं वच्मि साम्प्रतं तव पार्वति ।
तत्राप्यादौ शुभं वक्ष्ये विपरीतं ततोऽस्य च ॥
तदुच्छिष्टं ततो दद्याज्जम्बुकेभ्योऽथ भूतले ।
निखनेदप्सु वा देवि समालोड्य विसर्जयेत् ॥
आदौ भक्ते करे दत्ते सुभिक्षं विषये भवेत् ।
पायसे यजमानस्य पशुवृद्धिः प्रजायते ॥
घृते स्यादायुरारोग्यं पूजामैश्वर्यवृद्धये ।
तथा मोदकशष्कुल्योः सन्ततिर्भूयसी भवेत् ॥

मत्स्यजातिष्वर्थलाभः कृशरे यानसम्पदः ।
मांसे तु पुत्रलाभः स्यात् तेमने कामिनी भवेत् ॥
फलं मांसविशेषस्य भिन्नं मिश्रं ब्रुवे हि तत् ।
अर्थलाभस्तु वाराहे खाड्गे तु विजयो रणे ॥
माहिषेण तु मांसेन राज्यप्राप्तिर्भवेद्ध्रुवम् ।
आरोग्यं हारिणेनाशु कार्ष्णसारेण वाग्मिता ॥
शाशे मेधावितां गच्छेदाजेष्वजरतामपि ।
आवेये पलले देवि सर्वकल्याणमाप्नुयात् ॥
कामठे मेदिनीलाभो बह्वन्नत्वं च राङ्कवे ।
वार्ध्रीणसे शत्रुनाशो हांसे मनुजवश्यता ॥
तैत्तिरेऽभीष्टसिद्धिश्च वर्त्तके पापसंक्षयः ।
मनस्तोषो बलाकायां फलेक्षोर्विश्ववश्यता ॥
कीर्त्तिस्तु महती दध्नि दुग्धे सम्पदनुत्तमा ।
पिष्टके तनयावाप्तिः शाके च रिपुसंक्षयः ॥
हालायां पुण्यवृद्धिः स्याच्चोष्ये संपत् सुवाग्मिता ।
धनागमः फाणिते तु कूर्च्चिकायां बलोन्नतिः ॥
तुम्बीवृन्ताककूष्माण्डकारवेल्लपटोलकैः ।
घोषशूरणदीर्घाङ्घ्रिमूलकैस्तेमने कृते ॥
विद्यालाभो भवेद्देवि तक्रे वाक्पटुताऽपि च ।
गोधूमचूर्णघटिते वस्तुनि प्रतिभा रणे ॥
वेद्यां दृष्टौ भवेन्मोक्षो मण्डपेऽप्युन्नतिर्भवेत् ।
चामरच्छत्रयोस्तालवृन्तपर्यङ्कयोरपि ॥
घण्टादर्पणयोश्चापि दृग्दाने भूतिरुत्तमा ।

आकल्पालङ्करणयोः स्पर्शचालनदृष्टिषु ॥
नानाविधानि* द्रव्याणि भवन्ति महितुः प्रिये ।
एवंविधानि भूयांसि चेष्टितान्यशनानि च ॥
शुभादेशोनि जायन्ते विपरीतान्यतः शृणु ।
मुख्यभूता कुमारी चेद्वमति द्वित्रिवारकम् ॥
दुर्भिक्षं जायतेऽवश्यं प्रजाः स्युः पीडिता अपि ।
राजा विनाशमायाति कुमार्या रोदने कृते ॥
उच्चारे तु महामारी पुरीषे पुरदाहनम् ।
अभोजने शत्रुभयमापदो बहुभोजने ॥
अभाषणे त्वामयाः स्युर्विपदो बहुभाषणे ।
उपसर्गा बहुविधाश्चेष्टया करपादयोः ॥
अतिलज्जा विनाशाय तथा निर्लज्जता शुभा ।
नानोत्पातास्तु मौने स्युः स्वापे बाहोर्विनाशनम् ॥
सर्वनाशस्तु भीतायां क्रुद्धायां मृत्युरेव च ।
आवेशे तत्क्षणाद्राजा म्रियते नात्र संशयः ॥
शङ्कितायां शत्रुशङ्का शान्तायामीतितो भयम् ।
चिन्तितायां तु विज्ञेयं तद्राष्ट्रस्यैव पातनम् ॥
मोहे वित्तविनाशः स्याज्जाड्ये पूजा च निष्फला ।
चाञ्चल्ये चञ्चला लक्ष्मीः पूजकस्यैव जायते ॥
विषादवत्यथ यदि कुमारी तत्र जायते ।
सरुजं सप्रजं राष्ट्रं तदा सीदति पार्वति ॥
रोगेण म्रियते राजा यदि रुग्णा प्रजायते ।

* सौख्यानि इति ४, ५ पु० पा० ।

दुर्भिक्षमरकातङ्का यद्यश्रूणि विमुञ्चति ॥
सर्वनाशो भवेत् तर्हि धुनोति यदि मस्तकम् ।
त्रस्तायां रिपुजस्त्रासस्तस्य राज्ञः प्रदिश्यते ॥
कम्पे सति स्याद्विमुखी कालिका परमेश्वरी ।
नोच्चैः शिरश्चेत् कुरुते असन्तुष्टा तदेश्वरी ॥
हीनायुः स्यात् तदा पृथ्वीपतिश्चेद्रुद्दस्वरा ।
पूजकस्य भ दैन्यं व्याकुला यदि जायते ॥
मोहने व्याकुलायां तु सर्वं नगरमाकुलम् ।
क्रोडितायां भवेद्रोगः स्वेदे दारधनक्षयः ॥
अधोवायुं पतति चेत् कुमारीदैवयोगतः ।
पीडितं परचक्रेण तदा भवति पत्तनम् ॥
गीतं गायति चेत् तत्र कुमारी रहितक्रिया ।
संप्रजाराष्ट्रतनयदारस्य नृपतेर्मृतिः ॥
सहागताभिः कदाचिन्मुख्या विवदते यदि ।
तदा समायात्यकस्मात् परचक्रं सुदारुणम् ॥
यया कयाचित् सार्धं वा येन केनचिदेव वा ।
कुमारी भाषते वीतभयं मन्दाक्षसाध्वसा ॥
प्रजायन्ते तदा तस्य विषयेषु षडीतयः ।
व्यत्यासं यदि भक्ष्यस्य कुर्वते करचालनैः ॥
ग्रस्तं समस्तं भवति मनसो वाञ्छितं प्रिये ।
उपायनीकृतं यद्यद्द्रव्यं देव्यै तु मण्डपे ॥
तच्चेत् कराभ्यां स्पृशति कान्दिशीको भवेन्नृपः ।
निर्वापयति चेद्दीपं कुमारी मुखमारुतैः ॥

बुद्धिभ्रंशो भवेत् तर्हि ज्ञानदीपश्च नश्यति ।
दैवयोगाच्च नृत्यन्ति कुमार्यश्चेत् सुराकुलाः ॥
सराजकः सविषयः श्मशानमिव जायते ।
वासांस्युत्सृज्य नग्नाः स्युर्यदि तत्र कुमारिकाः ॥
शत्रुभिर्धूयते तर्हि राजा समरमूर्धनि ।
यदि फूत्कृत्य कूर्दन्ते करौ धृत्वा भ्रमन्ति च ॥
भूतावेशः क्षितीशस्य जायते नात्र संशयः ।
उच्चरिष्यामि हास्ये वा वदन्तीत्थं कुमारिकाः ॥
भोजनावसरे तर्हि महामारीभयं भवेत् ।
वामे वा दक्षिणे वाऽपि चलत्तारकया दृशा ॥
रक्तोद्यया घूर्णयते शिरः स्वस्य कुमारिका ।
कुरुते वाऽट्टहासं सा येन त्रस्यन्ति मानवाः ॥
भूतावेशो भवेत् तर्हि प्रेता नृत्यन्ति वा पुरे ।
दन्तैर्दन्तान् पीडयित्वा कुर्यात् कटकटारवम् ॥
प्रयाति सदनं मृत्योः सदारसुतबान्धवः ।
दृशावनिमिषे कृत्वा सन्दश्यौष्ठं रदेन हि ॥
संतर्जयति शीर्षं चेत् कम्पयन्ती कुमारिका ।
तदेव फलमुद्दिष्टं यत् स्यात् कटकटारवे ॥
आद्यन्तिकं भजेन्मौनं करेणान्नं स्पृशेन्न च ।
शिरोऽत्यर्थं च नमयेदङ्गुष्ठेन लिखेद्भुवम् ॥
विदध्यात्करतले रेखां करजैर्निष्प्रयोजनम् ।
संहताभ्यां कराभ्यां च कण्डूयेदथ वा शिरः ॥
तृणान्यकारणाच्छिन्द्यादङ्गुलीस्फोटमाचरेत् ।

पाणिभ्यां मुद्रयेन्नेत्रे द्वौ कर्णौ पिदधाति वा ॥
कुर्वीत वा बाहुरिकां पार्ष्णिघृष्टिं करोति वा ।
महान्तं ग्रासमादत्ते मुखं व्यादाय तिष्ठति ॥
अन्नोपरि क्षुतं धत्ते जृम्भणं वा मुहुर्मुहुः ।
गृहीत्वा पाणिना वाऽन्नं चतुर्दिक्षु क्षिपत्यपि ॥
उत्थाय वा प्रचलति त्यक्त्वाऽन्नं पूजनं तथा ।
आयाति वमनं वाऽस्याः स्यातां रोमाञ्चवेपथू ॥
निर्गच्छतो वा तद्गात्रात् पूयास्रे हेतुमन्तरा ।
अकस्मादेव कुरुते काकुं चेत् कारणं विना ॥
अश्लीलं वल्गति तथा स्ववर्ग्यार्थे प्ररोदिति ।
आमुक्तालङ्कृतीर्मुञ्चेद्गृहं यास्यामि वा वदेत् ॥
यस्य कस्यापि वा कुर्याद्भर्त्सनं तत्स्थले स्थिता ।
उपालभेत वा कां चित् सहैवास्या उपेयुषी ॥
भिनत्ति वा निदानं वा स्वहस्तवलयानि वा ।
कृते मृतस्य कस्यापि बन्धोः शोचति तत्र सा ॥
यत्किञ्चिद्वा प्रलपति निर्निमित्तं कुमारिका ।
सर्वमेतदमङ्गल्यं विज्ञेयं त्रिदशार्च्चिते ॥
दुर्भिक्षं धननाशं च रोगो मारीभयं तथा ।
पदे पदे च विपदः शोको व्याधी रिपून्नतिः ॥
परचक्रागमोऽकस्मादग्निदाहः पुरे गृहे ।
मृत्युत्रासश्च दारिद्र्यं विच्छेदो बन्धुभिः सह ॥
भूतप्रेतपिशाचाभिनिवेशोऽपि गृहे गृहे ।
अष्टाभिस्तु महारोगैः प्रजानां निधनं भवेत् ॥

कुमारीचेष्टितद्वारा ज्ञायते हि शुभाशुभम् ।
वार्षिकं च फलं राज्ञो जयो वाऽथ पराजयः ॥
मृत्युर्दुःखं धनं सौख्यं शत्रुभीतिर्बलोन्नतिः ।
राज्यवृद्धिः प्रजापीडा व्यङ्गताऽनीकसंक्षयः ॥
कुमारीपूजनात् सर्वं ज्ञायते भोजनादपि ।
परीक्षा यत्नतस्तस्माद्राज्ञा स्वस्य शुभाशुभम् ॥
अर्चातोऽपि विशेषेण भोजनेन सुरेश्वरि ।
जाते शुभे समीचीनं वृत्ते तदितरत्र हि ॥
काम्यार्चा बहुसम्भारैर्दोषं तज्जं निवारयेत् ।
निवृत्य स्वगृहं रुग्णा याता यदि कुमारिका ॥
तस्मिन्नेवाहनि भवेत् तथाऽपि न शुभं फलम् ।
इत्यादि फलबाहुल्यं शुभस्याप्यशुभस्य च ॥
मया विविच्य कथितं ध्रियस्व हृदि यत्नतः ।
ततो निशीथसमये विधिवत् पूजनं ततः ॥

"(वाडवानलीये)

पूजिता शरदर्चायां या कुमार्युक्तलक्षणा ।
सर्वपर्वसु सा पूज्या यावत् पुष्पं न दृश्यते ॥

पुष्पमित्युपलक्षणम् ।
महाकाल:" ।

पीठमर्च्यां: प्रकुर्वीत धूपदीपानुलेपनैः ।
नैवेद्यैरुपहारैश्च गीतवाद्यादिभिस्तथा ॥

(यामले)

कुमारीपूजिता हन्ति कलुषं पूर्वसञ्चितम् ।
कुमारिकां विजानीयात् साक्षात् प्रकृतिरूपिणीम् ॥

" " एतद्चिह्नान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यत्किञ्चिद्वस्तु शोभनम् ।
अनन्तफलदं प्रोक्तं कुमार्यै चेत् समर्पयेत् ॥
भोजिता चेत् कुमारी स्याद्भोजितं भुवनत्रयम् ।
ब्राह्मणाय सुशीलाय कुमारीं यः समर्पयेत् ॥
पृथिवीदानजं पुण्यं सोऽश्नुते नात्र संशयः ।
स सर्वसिद्धिमाप्नोति यः कुमारीं समर्च्चयेत् ॥
वसन्ति सततं देहे कुमार्या योगिनीगणाः ।
अतः पूज्या नमस्या सा लालनीया तदिच्छया ॥
अशक्त्या पूजयेदेकां कुमारीं साधकोत्तमः ।
विना कुमरिकापूजां न पर्व परिहापयेत् ॥
यो नित्यमर्च्चयेदेतां तस्य स्यात् सिद्धिरुत्तमा ।
नवरात्रे समायाते नवम्यन्तं निशातधीः ॥
नानोपहारैरभ्यर्च्य कुमारीं वृद्धिपूर्वकम् ।
वृद्धिक्रमेण प्रयजेद्वाञ्छितां सिद्धिमाप्नुयात् ॥
अथ वा पूजयेन्मन्त्री युवतीर्नव संख्यकाः ।
हृल्लेखा गगना रक्ता महासूक्ष्मा करालिका ॥
इच्छा ज्ञाना क्रिया दुर्गा नवनामभिरीताः ।
पूर्ववत् पूजयेन्मन्त्री जपेत् साग्रं सहस्रकम् ॥
यदि सा क्षोभमायाति स्वयमेव विलासिनी ।
तया सह नयेद्रात्रिं वासरं वा निशातधीः ॥
कुमारीं न स्पृशेदेव भावयुक्तेन चेतसा ।
अन्यथा मृत्युमाप्नोति नो चेद्देवी पराङ्मुखी ॥

( महाकालसंहितायाम् )

एवं दोषगुणौ ज्ञात्वा कुर्वीत विधिपूर्वकम् ।

कुमारीपूजनं भक्त्या शरत्पूजनकर्मणि ॥
बलिहोमादयश्चास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।

इति कुमारीपूजाविधिः ।

अथ शिवाबलिः ।

( कुलचूडामणौ )

बिल्वमूले प्रान्तरे वा श्मशाने वाऽपि साधकः ।
मांसप्रधानं नैवेद्यं सन्ध्याकाले निवेदयेत् ॥

( महाकालसंहितायाम् )

पुराद्बहिर्निशाकाले महारण्यसमीपतः ।
गृहीत्वा भक्ष्यवस्तूनि पूजासम्भृतिमप्युत ॥
आप्तैरनुगतो हृत्रैः प्रदद्यात् फेरवीबलिम् ।
आमानि पक्वान्यपि च मांसानि विधिनाऽर्पयेत् ॥
तत्रोदीचीदिग्वदनो वीतभीः शुचिरूर्जितः ।
प्राणायामं षडङ्गं च विधायार्घं प्रपूज्य वै ॥
उत्थाय मुक्तचिकुरः शिवा आकारयेच्छनैः ।

( कुलचूडामणौ )

कालि कालीति वक्तव्यं तत्र सा शिवरूपिणी ।
पशुरूपा समायाति परिवारगणैः सह ॥
भुक्त्वा रौति यदैशान्यां मुखमुत्तोल्य सुस्वरम् ।
तदैव मङ्गलं तस्य नान्यथा कुलभूषण ॥
अवश्यमन्नदानेन तोषयेन्नियतं शिवाम् ।
नित्यश्राद्धं यथासन्ध्यावन्दनं पितृतर्पणम् ॥
तथेयं कुलदेवीनां नित्यता कुलपूजने ।
पशुरूपां शिवां देवीं यो नार्चयति निर्जने ॥
शिवारावेण तस्याशु सर्वं नश्यति निश्चितम् ।

जपपूजाविधानानि यत्किञ्चित्सुकृतानि च ॥
गृहीत्वा शापमासाद्य शिवा रोदिति निर्जने ।
एकया त्वश्यते यत्र शिवया देवभैरव ॥
तत्रैव सर्वशक्तीनां प्रीतिः परमदुर्लभा ।
पशुशक्तिर्नरे शक्तिः पक्षिशक्तिश्च भैरव ॥
पूजिता विगुणं कर्म सगुणं कारयेद्यतः ।
तेन सर्वप्रयत्नेन कर्त्तव्यं पूजनं महत् ॥
राजादिभयमापन्नं देशान्तरभयादिकम् ।
शुभाशुभानि कर्माणि विचिन्त्य बलिमाहरेत् ॥
गृह्ण देवि महाभागे शिवे कालाग्निरूपिणि ।
शुभाशुभफलं व्यक्तिं ब्रूहि गृह्ण बलिं तव ॥
एवमुच्चार्य दातव्यो बलिः कुलजनप्रिये ।

(महाकालसंहितायाम्)

स्थानादस्मादपसरेत् किञ्चिद्दूरतरं प्रिये ।
शिवा यथा वीतभया आगच्छन्त्यन्नसन्निधौ ॥
तत्र स्थित्वा निरीक्षेत किं किं ता भक्षयन्ति हि ।
सर्वा आगत्य चेत् सर्वं प्रदत्तं भक्षयन्ति हि ॥
विनिर्दिशेत् सर्वसिद्धिं राज्यलाभं धनागमम् ।
यद्यत् ता भक्षयन्त्यन्नं तत्तत् फलमवाप्नुयात् ॥
यद्यच्च नैव खादन्ति तत्तन्नैव फलं लभेत् ।
कुमारीपूजनादौ तु विशेषोऽस्योपवर्णितः ॥
तेन नात्र ब्रुवे देवि ग्रन्थाधिक्यभयादपि ।
कुमारीरूपमास्थाय यथाऽऽयाति महेश्वरी ॥

शिवारूपं तथा कृत्वा स्वयमायाति कालिका ।
ततो भक्तिः प्रकर्त्तव्या तासु यत्नेन साधकैः ॥
शिवासु भक्षयन्तीषु सर्वेभ्यो बलिमाहरेत् ।
संहारभैरवायादौ वटुकेभ्यस्ततः परम् ॥
विनायकेभ्यो मातृभ्यः क्षेत्रपालेभ्य एव च ।
योगिनीभ्यो डाकिनीभ्यः शिवदूतीभ्य एव च ॥
पुरोक्तो मन्त्र आसिद्धिं तेन तेन बलिं हरेत् ।
महदैश्वर्यमाप्नोति निःशेषं भक्षयन्ति चेत् ॥
अर्धे तु मध्यमा सिद्धिरभक्षे तु विपद्भवेत् ।

( कुलचूडामणौ )

यदि नो गृह्यते वत्स तदा नैव शुभं भवेत् ।
शुभं यदि भवेत् तत्र भक्ष्यते तदशेषतः ॥

( महाकालसंहितायाम् )

खादितोत्थाय तिष्ठत्सु शिवावृन्देषु तत्र हि ।
दण्डवत् प्रणमेत् सर्वाः स्वेष्टदेवीधिया स्वयम् ॥
पुष्पाञ्जलिं समादाय गन्धचन्दनचर्च्चितम् ।
उत्थाय मुक्तचिकुरो मीलिताक्षो दिगम्बरः ॥
भक्तिशाली वीतभयः किञ्चित्प्रणतकन्धरः ।
स्तुतिं कुर्यात् स्तवैरेतैर्वरप्रार्थनपूर्वकम् ॥
शिवारूपधरे देवि गुह्यकालि नमोऽस्तु ते ।
उल्कामुखि ललज्जिह्वे घोररावे शृगालिनि ॥
श्मशानवासिनि प्रेते शवमांसप्रियेऽनघे ।
अरण्यचारिण्यनघे शिवे जम्बुकरूपिणि ॥
नमोऽस्तु ते महामाये जगत्तारिणि कालिके ।

मातङ्गि कुक्कुटे रौद्रि महाकालि नमोऽस्तु ते ॥
सर्वसिद्धिप्रदे भीमे भयङ्करि भयापहे ।
प्रसन्ना भव देवेशि मम भक्तस्य चण्डिके ॥
संसारसागरतरे जय सर्वशुभङ्करि ।
विस्रस्तचिकुरे चण्डि चामुण्डे मुण्डमालिनि ॥
संहारकारिणि क्रुद्धे सर्वसिद्धिं प्रयच्छ मे ।
दुर्गे किराति शवरि प्रेतासनगतेऽभये ॥
अनुग्रहं कुरु सदा कृपया मां विलोकय ।
राज्यं प्रयच्छ विकटे वित्तमायुः सुतान् स्त्रियम् ॥
शिवाबलिप्रदानेन त्वं प्रसन्ना भवेश्वरि ।
नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु नमोऽस्तु ते ॥
इत्येतैरष्टभिः श्लोकैः शिवास्तोत्रमुदीरयेत् ।
ततस्तच्छेषमन्नं यद्भाजनं चान्यदेव वा ॥
सर्वं हि निखनेद्भूमौ प्रयत्नेनैव पार्वति ।
यदि काकाः खराः श्वानो ये चान्ये पापजातयः ॥
भक्षयन्ति तदुच्छिष्टं तदा विघ्नः प्रजायते ।
रात्रावेव समागच्छेन्निर्भयो विपिनान्तरात् ॥

इति शिवाबलिविधिः ।

अथ कृत्यशेषमाह ।

आगत्य गन्धपुष्पाद्यैः पुनर्देवीं प्रपूजयेत् ।

तथा ।

ततः प्रदक्षिणीकृत्य पतित्वा दण्डवद्भुवि ।
भक्तिनम्रः स्तुतिं जल्पेत् काकुगद्गदया गिरा ॥
अलिका नासिका बाहू वक्षो जठरमेव च ।

पादौ क्ष्मां स्पर्शतो दण्डप्रणामः स हि गद्यते ॥
आयुर्देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे ।
पुत्रान् देहि धनं देहि कामान् सर्वाँश्च देहि मे ॥
प्रचण्डे पुत्रदे नित्यं सुप्रीते सुरनायिके ।
कुलोद्योतकरे चोग्रे जयं देहि नमोऽस्तु ते ॥
उग्रचण्डे प्रचण्डासि प्रचण्डबलनाशिनि ।
नमस्ते सर्वदा देवि विश्वेश्वरि नमोऽस्तु ते ॥
दुर्गोत्तारिणि दुर्गे त्वं सर्वाशुभनिषूदनि ।
धर्मार्थमोक्षदे देवि नित्यं मे वरदा भव ॥
दुर्गे देवि महाभागे त्राहि मां शरणागतम् ।
महिषासृङ्मदोन्मत्ते प्रणतोऽस्मि प्रसीद मे ॥
हर पापं हर क्लेशं हर शोकं हराशुभम् ।
हर रोगं हर क्षोभं हर मानं हर प्रिये ॥
कालि कालि महाकालि कालिके पापहारिणि ।
धर्मकामप्रदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥
संग्रामे विजयं देहि धनं देहि सदा गृहे ।
धर्मकामर्थसम्पत्तीर्देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥
महिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि ।
आयुरारोग्यविजयं देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥
आयुर्ददातु मे काली पुत्रानपि सदाशिवा ।
अर्थकामौ महामाया विभवं सर्वमङ्गला ॥
शिरो मे चण्डिका पातु कण्ठं पातु सुरेश्वरी ।
हृदयं पातु चामुण्डा सर्वतः पातु कालिका ॥

ब्रह्माणी चैव कौमारी वाराही वैष्णवी तथा ।
माहेश्वरी नारसिंही इन्द्राणी शिवदूत्यपि ॥
महाकाली च चामुण्डा भैरवी कौशिकी तथा ।
उग्रचण्डा च प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका ॥
चण्डा चण्डवती चैव अतिचण्डा च चण्डिका ।
एताश्चान्याश्च रुद्राणि यास्ते तिष्ठन्ति शक्तयः ॥
ताभिः सहैव मां रक्ष संग्रामे संकटे तथा ।
नानापुराणवाक्येन नानादेवर्षिभाषितैः ॥
सदाशिवाज्ञया चापि त्वमेव शरणं मम ।
त्वां विहायेतरां नैव संश्रये देवतां शिवे ॥
अतः परं यदुचितं तत् कर्त्तुं मातरर्हसि ।
आध्याकुलं च दारिद्र्यं रोगं शोकं च दारुणम् ॥
बन्धुस्वजनवैराग्यं दुर्गे त्वं हर दुर्गतिम् ।
राज्यं तस्य प्रतिष्ठा च लक्ष्मीस्तस्य सदा स्थिरा ॥
प्रभुत्वं तस्य सामर्थ्यं यस्य त्वं मस्तकोपरि ।
धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं सफलं जीवितं मम ॥
अगताऽसि यतो दुर्गे माहेश्वरि ममालयम् ।
अर्घ्यं पुष्पं च नैवेद्यं धूपं दीपं बलिं तथा ॥
गृहाण वरदे देवि कल्याणं कुरु सर्वदा ।
कृत्वैवं विधिना दण्डप्रणामस्तुतिपूर्वकम् ॥
पूजां समर्पयेद्देव्यै गृहीत्वा पाणिना जलम् ।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ॥
यदर्च्चितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ।

गृहीतुं शारदीं पूजां मर्त्यमण्डलमागताम् ॥
चण्डिके त्वां नमाम्यद्य पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।
कायेन मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम ॥
अन्तश्चरसि भूतानां ज्ञात्री त्वं सर्वसाक्षिणी ।
एतावत् कृत्यमुदितं शारदीयार्चनक्रमे ॥
प्रातरारभ्य देवेशि रात्रेर्यामत्रयावधि ।
शिवाबलिं कुमार्यर्च्चां प्रभूतं बलिमेव वा ॥
हित्वाऽदस्त्रयमष्टम्यामयमेव विधिः प्रिये ।
ततः प्रसादं देव्या यदवशिष्टं भवेदनु ॥
गन्धं पुष्पं च नैवेद्यं सिद्धं वाऽसिद्धमेव वा ।
बन्धुभिः सह भुञ्जीत हास्यकौतुकपूर्वकम् ॥
गीतनृत्यादिकं पश्चाद्दिव्यग्रे विनियोजयेत् ।
क्रीडां च ज्ञातिभिः सार्धं विदधीत विचक्षणः ॥

"एतावदशका संक्षिप्तपूजोक्ता (कालिकापुराणे)

सम्यक्कल्पोदिता पूजा यदि कर्त्तुं न शक्यते ।
गन्धं पुष्पं च धूपं दीपं नैवेद्यमेव च ॥
अभावे तोयपुष्पाभ्यां तदभावे च भक्तितः ।
संक्षेपपूजा कथिता ... ... इति" ॥

इति नवमीकृत्यम् ।

अथ द्वितीयादिनवमीपर्यन्तं रेवन्तादिपूजाविधिः ।

तदुक्तं (स्कन्दपुराणे)

शान्तये वृद्धयेऽश्वानामात्मनो विजयाय च ।
द्वितीयादिनवम्यन्तं रेवन्तं पूजयेन्नृपः ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

ग्रन्थान्तरे ।

आश्विनस्य सिते पक्षे नवमीं यावदेव हि ।
द्वितीयां तिथिमारभ्य पूजयेद्विविधार्हणैः ॥
रेवन्तमुच्चैःश्रवसं तुरङ्गानभिरक्षितान् ।
वर्धन्ते वाजिनस्तेन सर्वोपद्रववर्जिताः ॥

अभिरक्षितानिति रक्षणहेतुस्तद्विधिश्लोकः ।

( शालिहोत्रे )

अश्वयुजि शुक्लपक्षे द्वितीयादि सप्तरात्रं तु ।
वडवारूपेणैका स्वातिः सौरं रथं वहति ॥
सा भारेणाक्रान्ता क्रुद्धाऽन्यान्यान्निरीक्षते वाहान् ।
तेषां तेजः सत्त्वं बलं च कृत्स्नं निगृह्णाति ॥
सञ्जायन्ते रोगा महोपसर्गैः समन्विताः कष्टाः ।
तस्मात् स्वात्युपतापे वाजिषु पीडा भवेन्महती ॥
एवं च सप्तरात्रं स्वातेः सम्पात एव निर्दिष्टः ।
तत्र दिवाकरकिरणैरस्पृष्टा वाजिनो रक्ष्याः ॥
शालां ततोपलिप्तां मनोरमां वर्जितां च रविकिरणैः ।
नानाकारैः पुष्पैरलङ्कृतां धूपितां कुर्यात् ।
तस्यां स्नातास्तुरगाः सुधूपिता अर्चिता द्वितीयायाम् ॥
पुरुषैश्च शस्त्रहस्तैः सप्ताहं रक्षितव्यास्तु ।

तथा ।

शुभेऽहनि मुहूर्त्ते च क्ष्मापतिः सपुरोहितः ।
कृतमङ्गलसंस्कारान् वाहान् शालां प्रपूजयेत् ॥

ज्योतिःशास्त्रेऽपि ।

स्वाती नाम रवेः पत्नी वरदा रूपिणी रथम् ।
वहन्ती साऽऽश्विने मासि सूर्यरश्मिसमाश्रिता ॥

सप्ताऽहं पीडयेदश्वाँस्ततः स्नानान्वितान् गृहे ।
रेवन्तं पूजयित्वाऽथ बद्ध्वा पोटलिकां गले ॥

तथा ।

शुक्लपक्षे द्वितीयायां शालां संवेष्ट्य रक्षयेत् ।
आदित्यरश्मितो वाहान् कटैर्वस्त्रादिकैस्तथा ॥
अस्तं गते दिनकरे कटादीनपकर्षयेत् ।
प्रवातार्थं पुनर्दद्याद्यावत् सन्ध्या न जायते ॥
शालाप्रवेशविहितां रक्षां कण्ठे प्रदापयेत् ।
लोहकं निम्बपत्राणि गुग्गुलुं सर्षपान् घृतम् ॥
चैलबद्धां वचां हिङ्गु बध्नीयाद्वाजिनां गले ।
घर्षणं भ्रामणं चैव तथा चैवापवर्त्तनम् ॥
निशाशेषे प्रकर्त्तव्यं यावद्दूरे दिवाकरः ।
एतत्प्रतिदिनं कुर्यात् सप्तरात्रमतन्द्रितः ॥
कारयेद्ब्राह्मणाँश्चैव शान्तिस्वस्त्ययनानि च

( ब्रह्मपुराणेऽपि )

शान्तिस्वस्त्ययने कार्ये तदा तेषां दिने दिने ।
धान्यं भल्लातकं कुष्ठं वचां सिद्धार्थकाँस्तथा ॥
पञ्चरङ्गेन सूत्रेण कण्ठे तेषां तु बन्धयेत् ।
वायव्यैर्वारुणैः सौरैः शाक्तैर्मन्त्रैः सवैष्णवैः ॥
वैश्वदेवैस्तथाऽऽग्नेयैर्होमः कार्यो दिने दिने ।
तुरगा रक्षणीयाश्च पुरुषैः शस्त्रपाणिभिः ॥
न च ताड्याः क्वचित् तत्र न च वाह्याः कदा चन ।

( शालिहोत्रे )

शिरसि स्थापयेद्देवीं रेवन्तं पूजयेत् सदा ।

तथा ।

नानाखाद्यनिवेद्यानि रेवन्ताय निवेदयेत् ।

तथा ।

वेदीं च कल्पयित्वा धुरि च विधानेन पावकं जुहुयात् ।

धुरि शालाशिरोभागे ।

सायं प्रातश्च शुचिः पुरोहितो ब्रह्मचारी स्यात् ।
शालिहोत्रगदितेन मन्त्रेणानेन होमयेत् ॥
रोहिताश्व महाभाग हव्यवाडमरोत्तम ।
धूमध्वज क्रतुद्वार स्वर्गस्य प्रथितः पथि ॥
उत्तिष्ठ होमं गृह्णेमं शान्तिरस्य हयेषु च ।
स्वाहेति तत्र मन्त्रेण प्रापयेत् प्रथमाहुतिम् ॥
ततः प्रजापतीन्द्राय सोमाय वरुणाय च ।
विवस्वते कुवेराय सुषेणायाहिशालिने ॥
आदित्येभ्यस्तथाऽश्विभ्यां रुद्रेभ्यो वसुभिः सह ।
विष्णोश्च विश्वदेवानां साध्यानां मरुद्भिः सहः ॥
वासुकिप्रमुखानां च नागानां गरुडस्य च ।
सर्वासां पौर्णमासीनां तिथीनां चैव सर्वशः ॥
देवीनां नदीनां सागराणां वनपस्तीनाम् ।
स्वाहाकारेण जुहुयात् तृतीयं च हुताशने ॥
देवानामेव सर्वेषां स्वाहाकारेण होमयेत् ।
दुर्बलानीह रक्षांसि प्रत्यूषे ब्रह्मतेजसा ॥
भवन्ति तस्मात् प्रत्यूषे स्वापयेत् पोषयेद्धयान् ।
पुरोहितस्तु द्विः कालं तर्पयित्वा द्विजोत्तमम् ॥
पुण्याहं कारयेन्नित्यं स्वस्त्याशीर्मङ्गलान्वितम् ।

नटनर्तकगन्धर्वाः सूतचारणमागधाः ॥
तुरगानुपतिष्ठेयुः सप्ताहं शान्तिकारणात् ।
मनोज्ञान् मधुरान् शब्दान् श्रुत्वा गच्छन्ति वै ग्रहाः ॥
वादित्रं वाहनागारे तस्मान्नित्यं प्रयोजयेत् ।
अतिक्रम्य च सप्ताहमष्टम्यां स्नापयेद्धयान् ॥
वरुणाय बलिं दत्वा पश्चात् तोयेऽवगाहयेत् ।

अष्टम्यामिति द्वितीयामारभ्याष्टमीतिथावित्यर्थः ।

ग्रन्थान्तरे ।

तानश्वान् समलङ्कृत्य वाजिशालां प्रवेश्य च ।
प्रतिमायां चित्रपटे स्थण्डिले मण्डलेऽथ वा ॥
नानोपचारसम्भारै रेवन्तं देवमर्चयेत् ।
नमो देवाधिदेवाय तुरङ्गबलचारिणे ॥
सूर्यपुत्राय देवाय तुरङ्गानां हिताय च ।
तुरङ्गपरिषद्यस्य नृगजोपरि धावति ॥
साश्वमश्वाधिपं रक्ष शरणं त्वां व्रजाम्यहम् ।
इति पुष्पाञ्जलिं दत्वा रेवन्ताय बलिं हरेत् ॥

तथा ।

सूर्यपुत्र महावाहो छायाहृदयनन्दन ।
शान्तिं कुरु तुरङ्गानां रेवन्ताय नमोऽस्तु ते ॥
एवं स्तुत्वाऽथ विधिवदुच्चैःश्रवसमर्चयेत् ।

( ब्रह्मपुराणे )

अश्वयुक्शुक्लपक्षे तु स्वातीयोगे सुशोभने ।
पूर्वमुच्चैःश्रवा नाम प्रथमं सूर्यमावहत् ॥
तस्मात् साश्वैर्नरैस्तत्र पूज्योऽसौ श्रद्धया सदा ।

पूजनीयाश्च तुरगा नवमीं यावदेव हि ॥

अन्यान्तरे ।

उच्चैःश्रवो नमस्तुभ्यं नमः क्षीराब्धिनन्दन ।
वाहान् वर्धय वाहेन्द्र सर्वोत्पातं विनाशय ॥
एवं स्तुत्वोच्चैःश्रवसं तुरगान् पूजयेत् ततः ।
नानोपचारैस्तेषां तु कर्णजापमिदं पठेत् ॥
गन्धर्वकुलजातोऽसि मा भूयाः कुलदूषकः ।
ब्रह्मणः सत्यवाक्येन सोमस्य वरुणस्य च ॥
तेजसा चैव सूर्यस्य मुनीनां तपसा तथा ।
रुद्रस्य ब्रह्मचर्येण पवनस्य बलेन च ॥
प्रभावाच्च हुताशस्य वर्त्तस्व त्वं तुरङ्गम ।
स्मर त्वं राजपुत्रोऽसि कौस्तुभं च मणिं स्मर ॥
सुरासुरैर्मथ्यमानात् क्षीरोदादमृतादिभिः ।
जात उच्चैःश्रवा पूर्वं तेन जातोऽसि तत् स्मर ॥
यां गतिं ब्रह्महा गच्छेत् पितृहा मातृहा तथा ।
भूम्यर्थे नृतवादी च रणे यस्तु पराङ्मुखः ॥
सूर्याचन्द्रमसौ वायुर्यावत् पश्यन्ति दुष्कृतम् ।
व्रज त्वं तां गतिं क्षिप्रं तच्च पापं भवेत् ततः ॥
विकृतिं यदि गच्छेथा युद्धेऽध्वनि तुरङ्गम ।
रिपून् विजित्य समरे भर्त्रा सह सुखी भव ॥
तुरङ्गम चिरं जीव परशस्त्रैरलक्षितः ।
सदा मां समरे रक्ष स्वामिकार्यं सदा कुरु ॥

ज्योतिःशास्त्रे ।

नार्च्चयेज्जलजैः पुष्पैर्वाहनार्घविधिं प्रति ।

सौगन्धिकं विशेषेण तेषां दद्यान्न सर्वदा ॥
ग्रहहोमस्तु कर्त्तव्यो ग्रहाणामर्च्चनं तथा ।
अनेन विधिना यस्तु करोति तुरगोत्सवम् ॥
तस्य तुरङ्गनाथस्य न कदा चिद्भयं भवेत् ।

गजपूजाऽप्युक्ता (ब्रह्मपुराणे)

ज्येष्ठायोगे पुरा तत्र गजाश्चाष्टौ महाबलाः ।
पृथिवीमवहन् पूर्वं सशैलवनकाननाम् ।
कुमुदैरावतौ पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः ॥
सुप्रतीकोऽञ्जनो नीलस्तस्मात् ताँस्तत्र पूजयेत् ।
शाक्राद‍ृक्षात् समारभ्य नवम्यन्तं च पूर्ववत् ॥

गजपूजामन्त्रस्तु ।

पान्तु वो बसवो रुद्रा आदित्याः समरुद्गणाः ।
भर्त्तारं रक्ष नागेन्द्र समयः प्रतिपाल्यताम् ॥
अवाप्नुहि जयं युद्धे समये स्वस्ति नो व्रज ।
श्रीस्तु सोमाद्बलं कृष्णात् तेजः सूर्याज्जवोऽनिलात् ॥
स्थैर्यं मेरोर्जयो रुद्राद्यशो देवात् पुरन्दरात् ।
युद्धे रक्षन्तु नागास्त्वां दिशश्च सह दैवतैः ॥
अश्विनौ सह गन्धर्वैः पान्तु त्वां सर्वतः सदा ।

इति ज्योतिःशास्त्रे प्रोक्तः ।

इति रेवन्तादिपूजाविधिः ।

अथ शक्तिसङ्गमोक्ताः काम्यविशेषा लिख्यन्ते ।

नवरात्रव्रतासक्तो नवनाथो भवेद्ध्रुवम् ।
गौडकाश्मीरद्रविडमार्गेण त्रिविधो भवेत् ॥
अष्टम्यन्तं जपः कार्यस्ततोऽष्टम्यां तु होमयेत् ।
अर्धरात्रे समायाता पूर्वविद्धाऽपि पार्वति ॥

साऽष्टमी सर्वकार्याणां कर्त्री भवति निश्चितम् ।
होमपूजादिकं तत्र कुर्याद्यत्नेन पार्वति ॥
द्वितीयदिवसे चेत् सा तदैवोपोषणं चरेत् ।

तथा ।

घटिकाः षोडश त्याज्या आद्याः प्रतिपदस्तु याः ।
कलशस्थापनं कुर्यात् कल्याणं जायते तदा ॥
नवम्यां पारणं कुर्याद्दशम्यां तु विसर्जनम् ।
काश्मीराख्यं क्रमं देवि शृणु यत्नेन पार्वति ॥
नवरात्रं निराहारो होमोऽष्टम्यां तथा भवेत् ।
नवम्यां विप्रभोज्यं स्याद्दिग्वेधे पारणं चरेत् ॥
नवरात्रं निराहारो निर्विकल्पं जितेन्द्रियः ।
अष्टमीनवमीसन्धौ होमकर्म समाचरेत् ॥
नवम्यां विप्रभोज्यं स्याद्दशम्यां पारणं चरेत् ।
केरलाख्यः क्रमः प्रोक्तो निर्णयं शृणु पार्वति ॥
तिथिक्षये तथा वृद्धौ यथोक्तेन तु वर्त्मना ।
अष्टमीनवमीप्राप्तौ पूर्ववेधो न दूष्यति ॥
अष्टम्यामर्धरात्रे तु यत्किंचित् कुरुते नरः ।
तत्तदक्षयमायाति नवदुर्गाप्रयोगतः ॥
एकोत्तरप्रवृद्ध्या वा स्तोत्रं जापादिकं चरेत् ।
प्रथमेऽह्नि जपो यावत् तावत् कुर्याच्च वा सुधीः ॥
उदयास्तमयं जप्त्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।
नवरात्रव्रते स्त्रीणां *मृत्युयोगो भवेद्यदा ॥
सैव देवी न संदेहस्तां पूज्य विजयी कलौ ।

* स तु योगो इति ४ पु० पा० ।

ताम्बूलागुरुकस्तूरीदिव्याम्बरविभूषणैः ॥
सूर्योदयं समारभ्य पुनः सूर्योदयान्तरम् ।
तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
एकासनगतो भूत्वा नवरात्रं तु शाम्भवीम् ।
मुद्रामालम्बयेद्देवि नवनाथाधिपो भवेत् ॥
गुहायां मठिकायां वा निर्जने पर्वतेऽपि वा ।
अधोमुखो वा देवेशि नवरात्रं निरम्बुभुक् ॥
स्वमाच्छाद्य मृदा देवि तत्र संस्थापयेद्घटम् ।
यवाङ्कुरान् समारोप्य शाम्भवीं मुद्रिकां चरेत् ॥
दृढासनी वाऽशयनी यथोद्दिष्टं समाचरेत् ।
कापालिकावधूतानां व्रतमेतन्मयेरितम् ॥

शाम्भवी मुद्रा तु ( त्रिपुरासारसमुच्चये )

अथ पार्ष्णिनिरुद्धकम्बुनिनी ध्वजमूलस्थितसव्यपादपार्ष्णिः ।
ऋजुकायशिरोधरो यतात्मा विषयेभ्यो विनिवर्त्तितेन्द्रियश्च ॥
काकीचञ्चुप्रकृष्टैर्मुहुरुदरदरीं पूरयित्वा समीरै-
रङ्गुष्ठाभ्यामुभाभ्यां नररिपुविवरे तर्जनीभ्यां च नेत्रे ।
नासारन्ध्रं निरुध्य स्थिरविमलमतिर्मध्यमाभ्यामथास्यं
त्वन्याभिर्नीतिगाढं कमलजनिलये स्थापयेन्मानसं स्वम्–इति॥

तथा ( शक्तिसङ्गमे )

आज्ञा भवति देवेशि तदैवोपोषणं चरेत् ।
आज्ञा यदि न जायेत तदा ग्रामाधिपस्य च ॥
देशाधिपस्य विप्रस्य पूजकस्य स्त्रियस्तथा ।
आज्ञां गृहीत्वा देवेशि वरं प्रार्थ्य सुखी भवेत् ॥
भक्तप्रीता च सा दुर्गा स्वयमाज्ञां प्रयच्छति ।

वीरशाक्तविधानेन चण्डदर्पव्रतं चरेत् ॥
जिह्वां संत्रोट्य यत्नेन द्विवेदेषुरसाङ्गुलाम् ।
जिह्वा सा पुनरायाति तेन सिद्धीश्वरो भवेत् ॥
नवरात्रं समासाद्य महाष्टम्यां निशामुखे ।
देवीं यत्नेन संपूज्य सङ्कल्पं कामनान्वितम् ॥
शिरःपुष्पं कर्त्तयित्वा पूर्णं मध्यकनिष्ठतः ।
यन्त्रे देवे निवेद्याथ शिवतुल्यो भवेद्ध्रुवम् ॥
पुनः शिरः समायाति महाचीनवरः स तु ।
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥
नवरात्रं निराहारः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
महाष्टम्यामर्धरात्रे अङ्गुष्ठान्मस्तकावधि ॥
मासं संकर्त्य यत्नेन यथोक्तं कुण्डमाचरेत् ।
होमयेत् तत्र देवेशि देवीप्रत्यक्षतामियात् ॥
देवीदेहं भवेत् तद्धि नात्र कार्या विचारणा ।
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥
नवरात्रे निराहारो गुरुभक्तो महाव्रती ।
कुण्डं पुरुषमात्रं तु कृत्वा तत्र विशङ्कितः ॥
पञ्चपल्लवकाष्ठानां वह्निं तत्र समाचरेत् ।
अङ्गुष्ठान्मस्तकं यावत् स्वदेहं होमयेद्व्रती ॥
अग्निशय्यां च वा कृत्वा देवीं पश्यति निश्चितम् ।
अर्चापरः क्रमेणैव लतागेहप्रवेशनात् ॥
भवेत् कल्पलतातुल्यः साधको नात्र संशयः ।
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥

नवरात्रं निर्विकल्पो निराहारो दृढव्रतः ।
यमुद्दिश्य क्रियां कुर्यात् तमेव वशमानयेत् ॥
कामबीजं साध्यनाम वशीकुर्विति चोच्चरेत् ।
स्वाहामुच्चार्य देवेशि प्रदीप्ते जठरानले ॥
होमयेद्यत्नतो देवि तद्गृहं वशमानयेत् ।
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ॥
नवरात्रं निराहारः सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
सहदेवीरसं गृह्य नवम्यां परमेश्वरि ॥
पूर्वोक्तमनुना देवि पत्राण्यापिण्डमाहरेत् ।
आजन्मान्तं वशीकुर्यात् तमेव सकुटुम्बकम् ॥
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।
नवरात्रं मौनयुक्तो वृक्षासनसमन्वितम् ॥
पारणादिवसे प्राप्ते गोमुखं कारयेत् प्रिये ।
पूर्वोक्तमनुना देवि होमयेज्जठरानले ॥
स्वगेहे तत्त्वरात्रेण तद्गेहे दिवसत्रयात् ।
आजन्मान्तं वशं कुर्यान्महादेवाधिकं नरम् ॥
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।
नवरात्रं निराहारो गुरुभक्तो महाव्रती ॥
वामाङ्गुष्ठोपरि स्थित्वा वेदरात्रं महेश्वरि ।
दक्षाङ्गुष्ठोपरि तथा वेदरात्रं महेश्वरि ॥
नवम्यां पारणं कुर्याद्बिल्वे पिण्डं प्रदापयेत् ।
जगत्त्रयं वशीकुर्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।

नवरात्रं पर्यटन् वैरोचनासनसंयुतः ॥
होमं कुर्यान्महाष्टम्यां नवम्यां पारणं चरेत् ।
सर्वस्वदानं कृत्वा तु त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगः कथ्यते शृणु ।
गोमूत्राशी महेशानि नवरात्रं महेश्वरि ॥
यं कं चिह्नै जपेन्मन्त्रं नवम्यां होममाचरेत् ।
नवम्यां पारणं कुर्याद्गोमुखेन महेश्वरि ॥
देवतादर्शनं भूयाद्रात्रौ स्वप्ने महेश्वरि ।
अथ वाऽन्यप्रकारेण प्रयोगं शृणु पार्वति ॥
नवरात्रं जितश्वासो मौनव्रतधरः शुचिः ।
निर्द्वन्द्वो निरहङ्कारः सत्यवादी महामतिः ॥
राजाकर्षणकामश्चेद्राज्ञः सदनदिङ्मुखः ।
पारणामिच्छया कुर्याद्रात्रिजापी सदा भवेत् ॥
त्रैलोक्यं वशमायाति नात्र कार्या विचारण ।

अथ दशमीकृत्यम् ।

तत्रैव ।

ततो दशम्यां निर्वाह्य स्नातो नित्यक्रियां निजाम् ।
यावच्छक्त्युपचारैस्तु पूजयेन्न्यासमुज्जहन् ॥
कृताञ्जलिः पठेत् पश्चाद्विसर्जनमनूनिमान् ।
विधिहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं यदर्च्चितम् ॥
पूर्णं भवतु तत्सर्वं त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ।
शक्नुवन्ति न ते पूजां कर्त्तुं ब्रह्मादयः सुराः ॥
अहं किं वा करिष्यामि मृत्युधर्मा नरोऽल्पधीः ।
न जानेऽहं तेऽम्ब रूपं न शरीरं न वा गुणान् ॥

एकामेव हि जानामि भक्तिं त्वच्चरणाब्जयोः ।
तां भक्तिं हृदि सम्भाव्य शारदार्चां प्रगृह्य च ॥
गच्छ देवि निजस्थानं मह्यं दत्वा वरान् बहून् ।
एतान्मन्त्रान् समुच्चार्य चरलग्ने चरांशके ॥
प्रतिमां पत्रिकां वाऽपि चालयेत् पूजकः शनैः ।
निर्माल्येन ततो देव्याः पूजयेत् कलशोपरि ॥
निर्माल्यवासिनीं देवीं ङेन्तां नमः पदेन हि ।
प्रदर्श्य योनिमुद्रां च ऐशान्यां दिशि निःक्षिपेत् ॥
निर्माल्यं भगवत्यास्तच्चण्डेश्वर्यै नमो वदन् ।
मृन्मूर्त्तिं पत्रिकां वाऽपि जलेऽगाधे विनिःक्षिपेत् ॥
स्रोतस्यथो मज्जयित्वा नदीवेगेन हारयेत् ।
पीठमूर्त्तीं स्वके स्थाने चालयित्वा निवेशयेत् ॥
चालने यन्मनुद्वन्द्वं तदिदानीं निशामय ।
उत्तिष्ठ देवि चामुण्डे शुभां पूजां प्रगृह्य मे ॥
कुरुष्व मम कल्याणमष्टाभिः शक्तिभिः सह ।
गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं देवि चण्डिके ॥
यत् पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु ते ।
गम्यतामर्थलाभाय क्षेमाय विजयाय च ॥
शत्रोर्दर्पविनाशाय पुनरागमनाय च ।
व्रज त्वं स्रोतसि जले मद्गेहे तिष्ठ भूतये ॥
आगामिवत्सरे च त्वं पुनरायास्यसि ध्रुवम् ।
इति देवीं चालयित्वा मनुना कथयिष्यता ॥
महावाद्यरवं कुर्यान्नभोदिक्पूरि सर्वतः ।

तारत्रपारुषश्चैव शाकिनी डाकिनी तथा ॥
चामुण्डे चल युग्मं च चालय द्वितयं तथा ।
कूर्चास्त्रानलकान्ताभिर्मनुश्चालनकर्मणि ॥
शङ्खतूर्यनिनादैश्च मृदङ्गैः पटहैस्तथा ।
ढक्काभेरीझर्झरैश्च पणवानकगोमुखैः ॥
तालवादित्रवीणाभिरातोद्यैर्डिण्डिमैरपि ।
मुरजैर्वेणुभिर्हिङ्कैस्तालमानलयान्वितैः ॥
धूलीकर्दमविक्षेपैः क्रीडाकौतुकमङ्गलैः ।
वेशयुग्वेशनिचयैर्विविधैः शावरोत्सवैः ॥
भगलिङ्गाभिधानैश्च भगलिङ्गप्रगीतकैः ।
भगलिङ्गक्रियाशब्दैर्वेशचेष्टाभिरुक्तिभिः ॥
विसर्जनस्यावसरे क्रीडितव्यं निजेच्छया ।
कार्यं जरद्भिरप्येतद्देवीसन्तोषहेतवे ॥
परैर्वा क्षिप्यते यस्तु यः परान् नाक्षिपत्यपि ।
तस्य क्रुद्धा भगवती शापं दद्यात् सुदारुणम् ॥
एतत्प्रासङ्गिकीं देव्या उक्तिं समवधारय ।
ममानन्दे सदानन्दः सदानन्दो भविष्यति ॥
ममानन्दे निरानन्दो निरानन्दो भविष्यति ।
यथा यथा ममानन्दे भवत्युन्मत्तवज्जनः ॥
तथा तथाऽहं तुष्यामि तत्कृतार्चासु वल्लभ ।
ख्यातं मम भगं चिह्नं लिङ्गं चिह्नं तव प्रभो ॥
लिङ्गाङ्कत्वाद्भगाङ्कत्वादियं माहेश्वरी प्रजा ।
त्वां मां विहाय नैवान्यत् किञ्चित् त्रिभुवनोदरे ॥

तस्मान्मत्पूजनस्यान्ते त्वन्मच्चित्तह्लोक्तिभिर्जनः ।
यः क्रीडति महाभाग स मे मनसि तिष्ठति ॥
अकुर्वाणोऽपि सुरतं भगं भगमिति ब्रुवन् ।
लिङ्गं लिङ्गमिति प्रोच्य मां तोषयति तत्क्षणात् ॥
रेतःसिक्तं भवेद्यादृक् तादृश्यत्र प्रजायते ।
भगं त्रिजगतां स्रष्टृ को वा निन्दितुमर्हति ॥
इत्यादिवचनैर्देव्या यथेष्टं विहरेज्जनः ।
उपस्थयोनिभजनशब्दैस्तत्तत्क्रियान्वितैः ॥
ततो नित्योदकाभ्यासं स्वयमम्भः प्रविश्य च ।
पत्रिकां मृन्मयीं मूर्त्तिं तदन्तः स्थापयेच्छनैः ॥
निमज्ज्याम्भसि सम्पूज्य पत्रिकां वर्जितां जले ।
मया देवि वरान् दत्वा ततो गच्छेन्निजालयम् ॥
इत्यनेन तु मन्त्रेण देवीं संस्थापयेज्जले ।
पोठमूर्त्योरिदं कर्म न कार्यं त्रिदशेश्वरि ॥
ततः सर्वैर्जनैः सार्धं जलक्रीडां समाचरेत् ।
निमज्जनोन्मज्जनैश्च तथा पिञ्जलताम्बुभिः ॥
अन्यैर्जलविहारैश्च क्षणं कौतुकमाचरेत् ।
प्रदद्याद्दक्षिणां पूजां कारयित्वा स्वभक्तितः ॥
हिरण्यं रजतं धेनुं भूमिं वासांसि मन्दिरम् ।
यावच्छक्यं च यच्छक्यं दातव्यं दक्षिणां ततः ॥
यानि देव्यै प्रदत्तानि महोपकरणान्यपि ।
विभज्य तानि सर्वेभ्यो दातव्यानीति निश्चयः ॥

पूजाफलान्याह ।

एवमुक्तप्रकारेण कृत्वा शारदपूजनम् ।

यदाप्नोति फलं देवि तदिदानीं निशामय ॥
सप्तलोकोपरि शिवे वैकुण्ठो लोक उच्यते ।
तदूर्ध्वं शिवलोको हि गोलोकस्तदनन्तरम् ॥
तस्योपरि प्रियतमे देवीलोको विराजते ।
योजनानां कोटिशतं विस्तीर्णं तावदायतम् ॥
विभवा वा गुणा यस्य मम वाचामगोचराः ।
कल्पकोटिशतं सार्धं तत्रायं वसति प्रिये ॥
अव्याहतगतिर्भूत्वा षडानन इवापरः ।
त्रिलोकीं विचरत्येष द्वितीयो द्विरदाननः ॥
यदीहावतरत्येष कदाचित् कालपर्ययात् ।
शतसंवत्सरायुः स्यात् समस्तपृथिवीपतिः ॥
तेजसा सूर्यसदृशः कान्त्या चन्द्रमसा समः ।
कुवेरसन्निभो वित्ते क्षमया क्षमया समः ॥
स्थैर्ये सुमेरुणा तुल्यो गाम्भीर्ये सागरोपमः ।
विद्यया वाक्पतिसमः सौन्दर्ये मन्मथोपमः ॥
प्रियंवदो विनीतश्च दाताऽमितपराक्रमः ।
किं बहूक्तेन देवेशि यावन्तो हि गुणाः स्मृताः ॥
तमेकं संश्रयन्ते हि समुद्रं सरितो यथा ।
प्रत्येकमस्या बाहुल्यं वर्त्तते फलसम्भवे ॥
न विस्तरभयाद्वच्मि डामरेषु तदीरितम् ।
न तादृशं फलं किञ्चिद्यन्न स्याच्छारदार्चनात् ॥

ततोऽपराजितां संपूज्य यात्रां कुर्यात् । तदुक्तं (निर्णयामृते) पुराणान्तरे ।

दशम्यां पूजयित्वा तु मृन्मयीं वाऽपराजिताम् ।

कलशं तोयसंपूर्णं जयन्तीपल्लवाननम् ॥
चतुर्वर्णैस्तदा यात्रा कर्त्तव्या साधनेन च ।
दशम्यां च बली राजा पूजयित्वाऽपराजिताम् ॥
दशदिक्षु मनोयोगाद्यात्रां कृत्वाऽथ वा नृपः ।
नीराजनं स्वस्य कृत्वा ततो नीराजयेद्बलम् ॥

नीराजनमन्त्रस्तत्रैव ।

चतुरङ्गबलं मह्यं सुस्थिरत्वं व्रजत्विह ।
विजयो मम सर्वत्र अस्तु मेऽग्निप्रसादतः—इति ॥

"सर्वत्र विजयो मेऽस्तु त्वत्प्रसादात् सुरेश्वरि—इति (कृत्यरत्ने)

अपराजितापूजने संक्षिप्तप्रकारस्तु अपराह्णे ईशानोदिशमाश्रित्य सीमानमुल्लङ्घ्य—

अद्याश्विनशुक्लदशम्यां क्षेमसिद्ध्यर्थमपराजितापूजां करिष्ये—

इति सङ्कल्प्य कलशेऽष्टदलपद्मयन्त्रमध्ये—अपराजितायै नमः—इत्यपराजिताम् ।

तद्दक्षिणे—क्रियाशक्त्यै नमः—इति जयाम् ।

वामे—उमायै नमः—इति विजयां चावाह्य ।

ॐ अपराजितायै नमः । ॐ जयायै नमः । ॐ विजयायै नमः

इति मन्त्रैः सम्पूज्य प्रणम्य ।

इमां पूजां मया देवि यथाशक्ति निवेदितम् ।
रक्षार्थं तु समादाय व्रज स्वस्थानमुत्तमम्—इति विसर्जयेत्" ॥

(महाकालसंहितायाम्)

अथ नीराजनं राजाऽपराह्णे विदधीत वै ।
विचित्रवेशवसनः सह स्वजनबान्धवैः ॥
चूडामणिपरिस्फूर्यत्कीरीटकुण्डलोज्ज्वलः ।
लसत्प्रालम्बिको मुक्तामाली कटकमण्डितः ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

केयूरी शृङ्खली तद्वदङ्गुलीयकभूषितः।
उष्णषी बद्धनिस्त्रिंशश्चर्चितो मलयद्रवैः॥
चन्द्रकुङ्कुमकस्तूरीविलेपनसुवासितः।
नानाविषयजानश्वान् भूषाभिः परिबृंहयेत्॥
गान्धरजानुत्तरजान् पारसीकोद्भवानपि।
काम्बोजवानायुभवान् वाल्हीकमणिमन्थजान्॥
युक्ताँस्तदीयभूषाभिः कुथाभिरुपशोभितान्।
एवमेव गजेन्द्राँश्च कुथघण्टाङ्कुशोज्ज्वलान्॥
कलिङ्गजङ्गलभवाँश्चेदितैलङ्गसम्भवान्।
एवं रथानपि व्यूह्य तदुपस्करसंयुतान्॥
पदातीँश्च भटाँश्चापि नानाप्रहरणान्वितान्।
कोदण्डशरनिस्त्रिंशशूलपट्टीशतोमरान्॥
गदापरिघचक्रर्ष्टिभुशुण्डीपाशकौरजान्।
भिन्दिपालहुताशक्तिपर्शुकुन्ताहिमुद्गरान्॥
खट्वाङ्गवज्रमुशलपाशायोगुडकर्त्तरीः।
शतघ्नीशल्यकुद्दालक्रकचच्छुरिकास्तथा॥
एतान्यन्यानि चास्त्राणि दधतः स्फुरितौजसः।
चतुरङ्गबलं चेत्थं कृत्वाऽग्रेसरमीश्वरि॥
नानाविधैर्वाहनैश्च पौरजानपदानपि।
वादित्राणि च सर्वाणि वादयित्वा विशेषतः॥
महाकोलाहलं कृत्वा समराभिप्रयाणवत्।
जय जीवेति निनदैः स्तूयमानो महीपतिः॥
विनिर्गच्छेत् पुरात् स्वीयादनुकूलां दिशं प्रति।

ब्राह्मणानग्रतः कृत्वा ताम्बूलं चर्वयन्मुहुः ॥
नटान् मल्लान् वन्दिनश्च शिल्पिनो गणिकास्तथा ।
दैवज्ञान् वणिजो दूतानन्यान् वै देशिकानपि ॥
विलोकयन् हृष्टमना एतेभ्यः पारितोषिकम् ।
ददन्नुत्साहसंयुक्तो विजिगीषुरिव व्रजेत् ॥
एतन्नीराजनं नाम घटनाया बलाख्ययोः ।

अथ खञ्जनादिदर्शनविधिस्तत्रैव ।

एतत् कृत्वा महीपालो भूषितस्तेन चान्वितः ।
खञ्जनं सारसं चाषं प्रयत्नेन विलोकयेत् ॥
अनूपकच्छगोष्ठानगोविडम्बुरुहादिषु ।
स्थितो रुवन् विधुन्वानः पक्षती खञ्जनः शुभः ॥
मङ्गल्यं खञ्जनं दृष्ट्वा मध्यस्थाने मनोरमे ।
शुभं स्यादशुभं ज्ञेयं विपरतेन संशयः ॥

वृक्षेषु गोषु गजवाजिमहोरगेषु
राज्यप्रदः कुशलदः शुचिशाड्वलेषु ।
भस्मास्थिकाष्ठतुषलोमतृणेषु दृष्टो-
ऽरिष्टं ददाति बहुशः खलु खञ्जरीटः ॥
तस्मिन् निधिर्भवति मैथुनमेति यस्मिन्
यस्मिन् पुनर्वसति तत्र दिशन्ति कान्चम् ।
अङ्गारमप्युपदिशन्ति पुरीषणेऽस्य
तत् कौतुकाय च शुभाय च खञ्जरीटः ॥

दृष्ट्वा तु खञ्जनं राजा प्रणमेद्विहिताञ्जलिः ।
इमं मन्त्रं समुच्चार्य श्लोकरूपं वरानने ॥
खञ्जनः खञ्जरीटश्च शङ्खमौलिः शुभप्रदः ।

महापक्षो नीलगलश्चपलाङ्गो हरिद्विजः ॥
यः खञ्जरीटं प्रणमेदेभिर्नामभिरष्टभिः ।
जायते मङ्गलं तस्य सतो गेहे यतः पथि ॥
नारायणशरीरोत्थ संवत्सरशुभप्रद ।
शालग्रामशिलाकण्ठ खञ्जरीट नमोऽस्तु ते ॥
वासुदेवस्वरूपेण सर्वकामफलप्रद ।
पृथिव्यामवतीर्णोऽसि खञ्जरीट नमोऽस्तु ते ॥
त्वं योगयुक्तो मुनिपुत्रकस्त्वमदृश्यतामेषि हिमोद्गमेन ।
त्वं दृश्यसे प्रावृषि निर्गतायां त्वं खञ्जनाश्चर्यमयो नमस्ते ॥
अशुभं खञ्जनं दृष्ट्वा देवब्राह्मणपूजनम् ।
शान्तिं कुर्वीत कुर्याच्च स्नानं सर्वौषधीजलैः ॥
अयं खगस्तु विज्ञेयो विष्णुरूपी सुरेश्वरि ।
संसूचयति वर्षार्थं मङ्गलामङ्गलद्वयम् ॥
देवीरूपस्तु विज्ञेयः सारसः पक्षिराडपि ।
तं दृष्ट्वा तोयतर्वद्रिसदूर्वावीतलेषु हि ॥
प्रणमेच्छुभदं केशगमस्थिगमभद्रदम् ।
तथा कुर्वाण आहारं त्यक्त्वा कण्डुं तनावपि ॥
तिष्ठन् कुलाये शावाय ददद्वा भोजनं शुभम् ।
सारसः सरसीवासः पुष्करः पुष्करालयः ॥
विघ्नापहर्त्ता पक्षीन्द्रो देवीरूपो महाबलः ।
विघ्नं नाशय पक्षीन्द्र शुभं देहि महाबल ॥
पुष्कराब्दफलं ब्रूहि जहि शत्रून् महाबल ।
पठित्वेदं पद्ययुग्मं प्रणमेत् सारसं बुधः ॥

विपरीते तथैतस्य पूर्ववच्छान्तिकं चरेत् ।
अथ चाषं निरीक्ष्यापि महारुद्रस्वरूपिणम् ॥
पूर्वोदितेषु स्थानेषु प्रणमेन्मङ्गलप्रदम् ।
अन्यत्राशुभदातारं विहगं शिवरूपिणम् ॥
अशोकश्च विशोकश्च नन्दीशः पुष्टिवर्धनः ।
ताम्रचूडो मणिग्रीवः स्वस्तिकश्चापराजितः ॥
अष्टावेतानि नामानि चाषं दृष्ट्वा तु यः पठेत् ।
अग्रतो धनलाभाय पार्श्वतो विजयाय च ॥
पृष्ठतः क्षेमवित्ताभ्यां दिव्य चाष नमोऽस्तु ते ।
अशोकाय नमस्तुभ्यं सर्वाभीष्टप्रदाय च ॥
नीलकण्ठाय भद्राय भद्ररूपाय ते नमः ।
भद्रत्वं देहि मे भद्रमाशां पूरय पूरक ॥
स्वस्तिकोऽसि कुरु स्वस्ति त्वं मां नन्दीश नन्दय ।
अशोक कुर्वशोकं मां पुष्प त्वं पुष्टिवर्धन ॥
एवं चाषं नमस्कृत्य "प्रणमेच्च शमीतरुम् ।
अमङ्गलानां शमनीं शमनीं दुष्कृतस्य च ॥
दुःस्वप्नशमनीं धन्यां प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम् ।
शमी शमयते पापं शमी लोहितकण्टका ॥
धारिण्यर्जुनबाणानां रामस्य प्रियवादिनि ।
करिष्यमाणयात्राया यथाकालं सुखं मया ॥
तत्र निर्विघ्नकर्त्री त्वं भव श्रीरामपूजिते ।
इति संप्रार्थ्य मूलस्थां" गृहीत्वा पीतमृत्तिकाम् ॥

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

प्रदक्षिणीकृत्य तथा समीवृक्षं महीपतिः ।
नियुद्धं प्रेक्ष्य मल्लानां भटानां शस्त्रलाघवम् ॥
भरतानां प्रेषणं च धावनं गजवाजिनाम् ।
अस्तं गते दिनमणौ दीपिकाशतसंवृतः ॥
प्रविशेन्नगरं राजा कोलाहलपुरःसरम् ।
अनेन विधिना यस्तु कुरुते शारदं महम् ॥
तस्य देवी सदा तुष्टा सदा नैव विमुञ्चति ।
फलं यच्छारदार्चाया वक्तुं तत् केन शक्यते ॥
ईदृशैव च वासन्ती पूजा कार्या मधौ सिते ।

इति दुर्गोत्सवविधिः ।

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैविव्यचित्रामृत-
स्रोतःशालिनि सन्निबन्धसरित्संभेदमभ्यर्हितम् ।
सन्मुक्तोपमयुक्तिशालिनि तरङ्गः प्रारदेकादशो
विज्ञश्रीनरदेवनिर्मितपुरश्चर्यार्णवेऽस्मिन् नवे ॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराजप्रतापसिंहसाहविरचिते पुरश्चर्यार्णवे दुर्गामन्त्रपुरश्चरणदुर्गोत्सवविधिर्नामैकादशस्तरङ्गः ।

# अथ ब्रह्माण्यादिमन्त्रास्तत्पुरश्चरण विशेषाश्च निरूप्यन्ते ।

( मेरुतन्त्रे )

मुनय ऊचुः ।

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ।
ब्राह्म्याद्यष्टौ भास्करस्य रथे तिष्ठन्ति शक्तयः ॥
रणे मृतानां योगेन मृतानां सहगामिनाम् ।
स्वर्गं याश्च प्रयच्छन्ति तन्मन्त्रून् ब्रूहि शङ्कर ॥

शिव उवाच ।

ब्रह्मशक्तिस्तु शक्तीनां नायिका परिकीर्त्तिता ।
योगिनां मुक्तिदात्री सा भोगिनां भोगदा मता ॥
ब्रामित्येकाक्षरं बीजं मुनिर्वाचस्पतिर्मतः ।
गायत्री छन्द उद्दिष्टं बः शक्तिः कीलकं वचः ॥

अथ ध्यानम्

ध्यायेद्ब्राह्मीं पलाशस्थां हंसारूढां चतुर्भुजाम् ।
अक्षमालावराभीतिकमण्डलुकरारुणाम् ॥
बीजेनैव षडङ्गानि ................. इति ।

अस्य पुरश्चरणं तत्रैव ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं पलाशसमिधैर्हुनेत् ।
तत्पुष्पयुक्तसलिलैस्तर्पयेन्मार्जयेत् कुशैः ॥

अथ माहेश्वरीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि सम्यङ्माहेश्वरीविधिम् ।

ॐ ह्रीँ नमो भगवति माहेश्वर्यै हि संवदेत् ॥
परमे पदमुच्चार्यैश्वर्यै स्वाहान्तको मनुः ।
तारादिरेकविंशार्णोऽश्वारूढा तत्परं मतम् ॥

ध्यानम् ।

वृषारूढां भालचन्द्रां त्रिनेत्रां शशिसन्निभाम् ।
दधतीं शूलडमरुमहाहिवलयां भजे ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं विल्वपत्रैर्घृतप्लुतैः ।
जुहुयात् तद्दशांशेन महदैश्वर्यवान् भवेत् ॥

अथ कौमारीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कौमार्या विधिमुत्तमम् ।
क्रौँ कौमार्यै नम इति षडर्णो मन्त्र ईरितः ॥
मुनिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दः कौमारिका भवेत् ।
देवता कौमिदं बीजं कौमार्यै शक्तिरुच्यते ॥
मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि हृदि ध्यायेच्च देवताम् ।

ध्यानं यथा ।

शक्त्यक्षस्रग्वराभीतिकरां बन्धूकसन्निभाम् ।
मयूरध्वजिनीं रक्तवस्त्रामौदुम्बरस्थिताम् ॥
हरित्कञ्चुकिकां रम्यां नानालङ्कारभूषिताम् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षषट्कं जपः प्रोक्तः पञ्चखाद्यैस्तथा हुनेत् ।
मधुरत्रयसंयुक्तैः सिद्धमन्त्रस्तदा भवेत् ॥
तर्पणं मार्जनं कृत्वा कुमारीणां च भोजनम् ।

अथ वैष्णवीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यापि वैष्णवीमन्त्रमद्भुतम् ।

अकचटतपयशा वैष्णव्या मन्त्र ईरितः ॥
अष्टाक्षरो मनुश्चास्य नारदोऽनुष्टुबुच्यते ।
छन्दस्तु वैष्णवी देवी न्यासः प्रणवपूर्वकः ॥
मूलमन्त्राक्षरैः कुर्यात् त्रिभिस्त्रिभिरनुक्रमात् ।
एकैकं च जपेत् पश्चादङ्गानि षडनुक्रमात् ॥

अथ ध्यानम् ।

शोणपद्मप्रतीकाशां मुक्तमूर्धजलम्बिनीम् ।
लसत्काञ्चनसम्भूतकुण्डलोज्ज्वलशालिनीम् ॥
स्वर्णरत्नसमुन्नद्धकिरीटसूत्रधारिणीम् ।
कृष्णशुक्लारुणैर्नेत्रैस्त्रिभिश्चाहविभूषिताम् ॥
बन्धूकदन्तवसनां शिरीषप्रभनासिकाम् ।
कम्बुग्रीवां विशालाक्षीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ॥
चतुर्भुजां सुवसनां पीनोन्नतपयोधराम् ।
दक्षिणाभ्यां कराभ्यां तु खड्गं च जपमालिकाम्
बिभ्रतीं वामहस्ताभ्यामभयं च वरं तथा ।
अनल्पनागनासोरुं गुप्तगुल्फां सुपार्ष्णिकाम् ॥
गात्रेण रत्नस्तम्भं च सम्यगालम्ब्य संस्थिताम्
किमिच्छसीति वचनं व्याहरन्तीं मुहुर्मुहुः ॥
पञ्चाननं पुरः संस्थं निरीक्षन्तीं स्ववाहनम् ।

ईदृशीं चण्डिकां ध्यायेदिति शेषः ।

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षद्वयं जपेदस्य पुरश्चरणकर्मसु ।
दशांशं होममाज्येन कर्त्तव्यं तर्पणादिकम् ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

ॐ नमोऽन्ते च वैष्णव्यै मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ।

मन्त्रार्णैरत्र चाङ्गानि शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥

अथापराजितावैष्णवीमन्त्रस्तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वैष्णवीमपराजिताम् ।
तारमाकर्षिणिपदमावेशिनि ततो वदेत् ॥
ज्वालामालिनि रमणि रामणि धरणीति च ।
धारणि तपनीत्युक्त्वा तापिनि मनोन्मादिनि ॥
शोषिणीति पदं प्रोच्य ततः संमोहिनीति च ।
तथा नीलपताके च महानीले महाप्रिये ॥
महाग्नेयि महाचण्डे महारौद्रि महेति च ।
वज्रिणीति तथाऽऽदित्यरश्मिजाह्नवि संवदेत् ॥
यमघण्टे किलिकिलिचिन्तामणिपदं वदेत् ।
सुरभिसुरोत्पन्ने च सरस्वतिपदं ततः ॥
सर्वकामदुघे प्रोच्य यथा मम मनीषितम् ।
कार्यं तन्मे सिध्यत्विति स्वाहान्तोऽयं मनुर्मतः ॥
षड्द्वादशार्णो मुन्यादिः प्राग्वत् सौख्यप्रदो मनुः ।
जपेद्वर्णशतं होमादिकं पूर्ववदाचरेत् ॥

अथ वाराहीमन्त्रः ।

अथ वार्त्तालिकां वक्ष्ये वाराहीं शत्रुघातिनीम् ।
ऐँ लौँ ठँठँठमिति हुँ स्वाहान्तोऽष्टाक्षरो मनुः ॥
छन्दोऽनुष्टुप् च कपिलो मुनिर्वार्त्तालिका सुरी ।
वाराह्यत्र षडङ्गानि क्रमाद्द्विद्विभिश्चन्द्रभूभूभिः ॥
द्वाभ्यां ध्यायेत् ततो देवीं विद्युद्भासां कराम्बुजैः ।
दधानामङ्कुशं पाशं मुद्गरं शक्तिमेव च ॥
विद्युद्भासां त्रिनेत्रां च नाशयन्तीं तथा रिपून् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

वसुलक्षं जपित्वाऽन्ते विल्वपत्रैर्हरिद्राजैः ।
धात्रीफलैर्भृङ्गराजैः कुशैश्चापि दशांशतः ॥
होमः कार्यस्तर्पणादि कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
एवं सिद्धमनुर्मंत्री प्रयोगान् कर्त्तुमर्हति ॥

अथ श्यामलामन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि मालामन्त्रं सुसिद्धिदम् ।
ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमः प्रोच्य ततो भगवतीति च ॥
वार्त्तालिवाराहियुगं वाराहमुखिवाभवम् ।
ग्लौं अन्धे अन्धिनीति नमो रुन्धे च रुन्धिनि ॥
नमो भञ्जे भञ्जिनीति नमो मोहेति मोहिनि ।
नमस्तम्भे स्तम्भिनीति नम ऐं ग्लौं च वाग्भवम्
सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाग्वदेत् ।
चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरुद्वयम् ॥
शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ऐं ग्लौं ऐं ठचतुष्टयम् ।
हूं फट् स्वाहेति मन्त्रोऽयं वेदरुद्राक्षरः स्मृतः ॥
मुनिः शिवोऽस्य जगती छन्दो वार्त्तालिका सुरी ।
वाराह्यस्य षडङ्गानि वार्त्ताली हृदयं स्मृतम् ॥
वाराह्यस्य शिरः प्रोक्तं शिखा वाराहमुख्यपि ।
अन्धे अन्धिनि वर्मोक्तं रुन्धे रुन्धिनि नेत्रकम् ॥
भञ्जे भञ्जिनि चास्त्रं स्यात् ततो ध्यायेच्च चण्डिकाम् ।

अथ ध्यानम् ।

रक्ताब्जकर्णिकायां तु शवासनसमास्थिताम् ।
मुण्डमालालसत्कण्ठां नीलाभां दधतीं करैः ॥

अभयं मुशलं चापि हलं चापि वरं तथा ।
वाराहास्यां तुङ्गकुचां त्रिनेत्रामरुणाम्बराम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

जपेन्मन्त्रं सहस्राणि बन्धूककुसुमैस्तिलैः ।
जुहुयात् ........................................................ इति ॥

अथ स्वप्नवाराहीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वाराहीं स्वप्नसंज्ञिकाम् ।
ॐ ह्रीं नमश्च वाराहीघोरे स्वप्नं विसर्गयुक् ॥
ठद्वयं वह्निजायान्तो मन्त्रः पञ्चदशाक्षरः ।
ईश्वरोऽस्य मुनिः प्रोक्तो जगती छन्द ईरितम् ॥
देवता स्वप्नवाराही बीजं तारः प्रकीर्त्तितः ।
हृल्लेखा शक्तिरुद्दिष्टा ठद्वयं कीलकं मतम् ॥

अथ ध्यानम् ।

ततो ध्यायेद्घनश्यामां त्रिनेत्रामुन्नतस्तनीम् ।
कोलास्यां चन्द्रभालां च दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धराम् ॥
खड्गाङ्कुशौ दक्षिणयोर्वामयोश्चर्मपाशकौ ।
अश्वारूढां च कोलास्यां नानालङ्कारभूषिताम् ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं जपेद्दशांशेन नीलपद्मैस्तिलैर्हुनेत् ।

अथेन्द्राणीमन्त्रः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि इन्द्राणीं नष्टराज्यदाम् ।
इन्द्राणीं नम इति मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ॥
गुरुर्मुनिश्च गायत्री छन्दो देवीन्द्रवल्लभा ।
ईं बीजं शक्तिरिन्द्रणीं नमः कीलकमुच्यते ॥

अथ ध्यानम् ।

वज्रपाशवराभीतिहस्ता श्यामाम्बरावृता ।

चतुर्दन्तगजाकल्पच्छायासंस्था हिरण्यभा ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षषट्कं जपेन्मन्त्रं मालतीकुसुमैर्हुनेत् ।
त्रिमध्वक्तैस्तावदेव राज्यार्थं राजवृक्षकैः ॥

अथ चामुण्डामन्त्रस्तन्त्रान्तरे ।

मायाबीजं समुच्चार्य चामुण्डा ङेयुता पुनः ।
नमोऽन्तो नगवर्णोऽयं मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ॥
शिवो मुनिश्च गायत्री छन्दोऽमुष्य च देवता ।
चामुण्डा मन्त्रवर्णैश्च ह्रिरावृत्त्या षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

नीलोत्पलदलश्यामचतुर्बाहुसमन्विता ।
खट्वाङ्गं चन्द्रहासं च बिभ्रती दक्षिणे करे ॥
वामे चर्म च पाशं च ऊर्ध्वतो भावतः पुनः ।
दधती मुण्डमालां च व्याघ्रचर्माम्बराधरा ॥
कृशाङ्गी दीर्घदंष्ट्रा च अतिदीर्घाऽतिभीषणा ।
लोलजिह्वा निम्नरक्तनयनाकारभीषणा ।
कबन्धवाहनासीना विस्तारिश्रवणानना ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं मधुरप्लुतैः ।
पायसैर्जुहुयान्मन्त्री ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥

अथ महालक्ष्मीमन्त्रस्तत्रैव ।

मायाबीजं समुद्धृत्य स्वबीजं च समुद्धरेत् ।
ततो ङेन्ता महालक्ष्मीर्नमोऽन्तोऽष्टाक्षरो मनुः ।
मुनिरस्य शिवः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम् ।
देवता तु महालक्ष्मीर्मन्त्रवर्णैः षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानम् ।

सुवर्णवर्णदीप्ताङ्गी त्रिनेत्रा सिंहवाहिनी ।
ईषत्प्रहसिता देवी नीलोत्पलदलेक्षणा ॥
भुजषोडशसम्पन्ना सर्वालङ्कारभूषिता ।
खड्गं घण्टां शरं सूत्रमङ्कुशं शूलपद्मकम् ॥
दधाना दक्षिणैर्हस्तैरनाथेभ्यो वरप्रदा ।
तथा वामैर्हस्तपद्मैः खेटकं डिण्डिमं धनुः ॥
कमण्डलुं नागपाशं कपालं पुस्तकाभयम् ।
जाज्वल्यमाना तेजोभिरतीवाह्लादकारिणी ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं मधुरप्लुतैः ।
विदध्यात् पायसैर्होममेवं सिद्धो भवेन्मनुः ॥

इत्यष्टमातृकाप्रकरणम् ।

अथ गोरक्षनाथमन्त्रः ।

(कल्पद्रुमतन्त्रे)

गर्ग उवाच ।

अथ मन्त्रं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं यदुनन्दन ।
जपन्ति साधका वीरास्तन्मन्त्रान् श्रद्धयाऽन्विताः
शीघ्रं भवति सिद्धिर्वै साधकानां शिवाज्ञया ।

तथा ।

गोरक्षस्य मनुं जप्त्वा योगीन्द्रो भविता नरः ।
विना गोरक्षमन्त्रेण योगसिद्धिर्न जायते ॥
गोरक्षस्य प्रसादेन सर्वकार्याणि साधयेत् ।

मन्त्रो यथा ।

ॐ ह्रीँ श्रीँ हुँ फट् स्वाहा ।

ॐ ह्रीँ श्रीँ गोँ गोरक्ष हुँ फट् स्वाहा।

ॐ ह्रीँ श्रीँ गोँ गोरक्ष हुँ हुँ निरञ्जनात्मने हूँ फट् स्वाहा।

ॐ श्रीँ गोँ ह्रीँ हँ हाँ गोरक्षनाथाय निरञ्जनात्मने* हँ सँ फट् हसः।

इति चत्वारो मन्त्राः।

अथ गायत्री।

ॐ ह्रीँ श्रीँ गोँ गोबीजाय विद्महे गोरक्षाय धीमहि तन्नो निरञ्जनः प्रचोदयात्।

अथ ऋष्यादिन्यासः।

गोरक्षनाथमन्त्रस्य बृहदारण्यको मुनिः।
छन्दोऽनुष्टुब्देवता च नाथो गोरक्षसंज्ञकः॥

कराङ्गन्यासस्तु।

ॐ ह्रीँ श्रीँ गाँ गोरक्षनाथाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः–इत्यादि।

अथ ध्यानम्।

शुद्धस्फटिकसंकाशो जटाजूटी त्रिलोचनः।
निरञ्जनो निराकारो निर्विकल्पो निरामयः॥

अथ पुरश्चरणम्।

लक्षं शताधिकं जप्त्वा साधकः शुद्धमानसः।
साधयेत् सर्वकार्याणि नात्र कार्या विचारणा॥
धारयेद्यो नरो नित्यं मन्त्रमेनं विशेषतः।
स योगसिद्धिमाप्नोति गोरक्षस्य प्रसादतः॥

अथ शीतलामन्त्रो (मेरुतन्त्रे)

अथ वक्ष्ये महेशस्य वक्त्रप्रक्षालिका तु या।
शीतलेति च विख्याता मसूर्या चिपिटेश्वरी॥

---

* हँ सँ फट् हुँ इति २, ५ पु० पा०।

तारो माया रमा शीतलायै हृच्च नवाक्षरः ।

( " यामले तु ) ।

माया श्रीशीतला ङेन्ता हृदन्तोऽष्टाक्षरो मनुः—इत्युक्तम् ।

( मेरौ " )

उपमन्युर्मुनिश्छन्दो बृहती शीतला सुरी ।

षड्दीर्घयुक्त्रपालक्ष्मीबीजाभ्यां स्यात् षडङ्गकम् ॥

अथ ध्यानं ( " यामलादौ )

नमामि शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ।

मार्जनीकलशोपेतां सूर्पालङ्कृतमस्तकाम् ॥

( मेरौ " )

ध्यायेच्च शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ।

मार्जनीसूर्पहस्तां च रक्तपुष्पहिमार्च्चिताम् ॥

तैलादिमलसंयुक्तवस्त्रपोटलिशीर्षकाम् ।

त्रिकोणान्तर्यजेद्देवीं कोद्रवां च मसूरिकाम् ॥

शराविकां च कोणेषु भूपुरे त्वष्टभैरवान् ।

अथ पुरश्चरणम् ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं पायसेन दशांशतः ।

हुत्वा कृत्वा तर्पणादि मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥

नाभिमात्रे जले स्थित्वा यः सहस्रं जपेन्मनुम् ।

तेन संमार्जितास्तीव्राः स्फोटा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥

साधितो येन मन्त्रोऽयं तस्य वंशे न शीतला ।

तेनाभिमन्त्रितं भस्म यद्देहे तत्र सा न हि ॥

एतत्पुरुषस्यापि मन्त्रस्तत्रैवोक्तः ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि भर्त्तुरस्याः परं मनुम् ।

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

तारः प्रासादबीजं यँ वँ व्योमव्यापिने द्विठः ॥
एकादशार्णमन्त्रोऽयं न्यासध्यानार्चनादिकम् ।
प्रासादमन्त्रवज्ज्ञेयमर्धलक्षं पुरस्कृतिः ॥
दशांशं जुहुयादाज्यैस्तर्पणादि ततश्चरेत् ।

इति शीतलाप्रकरणम् ।

अथोक्तदेवतानां पूजायन्त्राणि प्रदर्श्यन्ते ।

तत्रादौ विघ्नराजयन्त्रं ( मेरुतन्त्रे )

श्रीपर्ण्यादिकृते पीठे रचयेत् कुङ्कुमादिना ।
चतुर्द्वारयुतं कुर्याच्चतुरस्रत्रयं शुभम् ॥
तन्मध्येऽष्टदलं कार्यं पूजापीठं गणेशितुः ।

अथ लक्ष्मीगणेशयन्त्रं तत्रैव ।

अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं कर्णिकाकेशरोज्ज्वलम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥

" शक्तिगणेशक्षिप्रप्रसादहेरम्बहरिद्रा गणेशयन्त्रं विघ्नराजयन्त्रवत् ।

अथ महागणपतियन्त्रं तत्रैव ।

धर्मादित्रलसे पूर्वोक्ते तीव्रादिनवशक्तिके ।
पूजायन्त्रं गणेशस्य मातृकापद्म उच्यते ॥
चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रायवृतम् ।"
तत्कर्णिकायां षट्कोणं तदन्तश्च त्रिकोणकम् ॥

विरञ्चिगणनायकयन्त्रं विघ्नराजयन्त्रवत् । वक्रतुण्डयन्त्रं लक्ष्मीगणेशयन्त्रवत् । एवमग्रिमयोरपि विघ्नराजसमानम् ।

अथ सूर्ययन्त्रं ( सौरपद्धतौ )

लिखेदष्टदलं पद्मं तद्बाह्येऽष्टदलं लिखेत् ।
चतुरस्रं ततो बाह्ये सूर्ययन्त्रमिदं स्मृतम् ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४, ५ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

(महाक्रमार्चनपद्धतौ तु)

मध्येऽष्टदलपद्मं च अष्टशृङ्गं ततः परम् ।
द्वादशारं च कमलं वेदास्त्रद्वारमेव हि—इत्युक्तम् ॥

क्व चित् तु चतुरस्त्रावृतमष्टदलमात्रमुक्तम् ।

अन्यत्र तु द्वादशदलपद्ममुक्तम् ।

अथ विष्णुयन्त्रं तत्रैव ।

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकाकेशरोज्ज्वलम् ।
चतुरस्त्रावृतं बाह्ये पूजापीठं मधुद्विषः ॥

अथ मत्स्ययन्त्रम् ।

षट्पत्रं विलिखेत् पद्मं तद्बाह्ये च चतुर्दलम् ।
सप्तपत्रं तु तद्बाह्ये तद्बाह्येऽष्टदलं लिखेत् ॥
ततश्चतुर्दशदलं तद्बहिः षोडशच्छदम् ।
वसुच्छदं तु तद्बाह्ये चतुरस्त्रं ततो बहिः ॥

कूर्मयन्त्रं तु भूपुरावृतमष्टदलपद्ममेव ।

अथ वराहयन्त्रं (प्रपञ्चसारे)

अष्टपत्रमथ पद्ममुल्लसत्कर्णिकं विधिवदारचय्य च ।
मण्डलं रविसहस्त्रसन्निभं शूकरं यजत तत्र सिद्धये ॥

अथ नृसिंहयन्त्रम् (विष्वक्सेनसंहितायाम्)

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकाकेशरान्वितम् ।
तद्बाह्येऽष्टदलं लेख्यं तद्बाह्येऽपि वसुच्छदम् ॥
चतुरस्त्रं ततो बाह्ये यन्त्रं श्रीनारसिंहकम् ।

अन्यत्र तु पूर्वोक्तविष्णुयन्त्रमेव श्रीनृसिंहयन्त्रमुक्तम् ।

अथ वामनयन्त्रम् ।

षड्दलं पद्ममालिख्य तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ।
तद्बहिर्वसुपत्रं च तद्बाह्ये द्वादशच्छदम् ॥
अष्टपत्रं ततो बाह्ये तद्बहिर्भूपुरत्रयम् ।

अथ परशुरामयन्त्रम् ।

आदौ चतुर्दलं पद्मं तद्बाह्येऽष्टदलं लिखेत् ।
अष्टपत्रं ततो बाह्ये तद्बहिर्दशपत्रकम् ॥
तद्बहिर्द्वादशारं च षोडशारं च तद्बहिः ।
तद्बहिर्भूपुरद्वन्द्वं चतुर्द्वारोपशोभितम् ॥

अथ रघुनाथयन्त्रम् ।

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं षट्कोणोज्ज्वलकर्णिकम् ।
पुनरष्टदलं बाह्ये लिखेद्वृत्तत्रयाद्बहिः ॥
तद्बहिर्द्वादशदलं तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ।
दन्तपत्रं च तद्बाह्ये भूपुरत्रितयावृतम् ॥

अत्र केचित् ।

देहात्मनोर्यथा भेदो मन्त्रदैवतयोस्तथा ।
तस्मात् पीठे महामन्त्रं लिखित्वा तत्र पूजयेत्—इति ॥

वशिष्ठवचनादस्मिन् सपर्यायन्त्रेऽपि साधारणयन्त्रोक्तमन्त्रवर्णान् यथास्थानं लिखित्वा श्रीरामः पूज्य इति वदन्ति ।

धारणयन्त्रे मन्त्रलिखनप्रकारस्तु ( रामतापिन्या- ) मुक्तः ।

यथा ।

त्रिरेखापुटमालिख्य मध्ये तारद्वयं लिखेत् ।
तन्मध्ये बीजमालिख्य तदधः साध्यमालिखेत् ॥
द्वितीयान्तं च तस्योर्ध्वे षष्ठ्यन्तं साधकं तथा ।
कुरुद्वयं च तत्पार्श्वे लिखेद्बीजान्तरे रमाम् ॥
तत्सर्वं प्रणवाभ्यां च वेष्टयेद्बुद्धि-ऋद्धिमान् ।
दीर्घभाजि षडस्रेषु लिखेद्बीजं हृदादिभिः ॥
कोणपार्श्वे रमामाये तदग्रेऽनङ्गमालिखेत् ।
क्रोधं कोणाग्रान्तरेषु लिखेन्मन्त्र्यभितो गिरम् ॥

वृत्तत्रयं साष्टपत्रं सरोजे विलिखेत् स्वरान् ।
केशरे चाष्टपत्रे च वगस्तिकमथो लिखेत् ॥
तेषु मालामनोर्वर्णान् विलिखेद्भूर्मि-(४५)संख्यया ।
अन्ते पञ्चाक्षरानेवं पुनरष्टदलं लिखेत् ॥
तेषु नारायणाष्टार्णं लिखेत् तत्केशरे रमाम् ।
तद्बहिर्द्वादशदलं विलिखेद्द्वादशाक्षरम् ॥
तथोन्नमो भगवते वासुदेवायेत्यव्ययम् ।
आदिक्षान्तान् केशरेषु वृत्ताकारेण संलिखेत् ॥
तद्बहिः षोडशदलं लिखेत् तत्केशरे ह्रियम् ।
वर्मास्त्र*रतिसंयुक्तं दलेषु द्वादशाक्षरम् ॥
तरसन्धिश्रीरजादीनां मन्त्रान् मन्त्री समालिखेत् ।
हँ स्रँ भ्रँ व्रँ लँ षँ जँ च लिखेत् सम्यगतो बहिः ॥
द्वादशारं महापद्मं नादविन्दुसमायुतम् ।
विलिखेन्मन्त्रराजार्णं तेषु पत्रेषु यत्नतः ॥
ध्यायेदष्ट वसूनेकादश रुद्राँस्तथैव च ।
द्वादशेनाँश्च धातारं वषट्कारं ततो बहिः ॥
भूगृहं वज्रशूलाढ्यं रेखात्रयसमन्वितम् ।
द्वारोपेतं च राश्यादिभूषितं फणिसंयुतम् ॥
एवं मण्डलमालिख्य तस्य दिक्षु विदिक्षु च ।
नारसिंहं च वाराहं लिखेन्मन्त्रद्वयं तथा ॥
कूटरेफानुग्रहेन्दुनादशक्त्यादिभिर्युतः ।
यो नृसिंहः समाख्यातो ग्रहमारणकर्मणि ॥

---

* नति- २, ३, ५ पु० पा० ।

अन्त्यार्घीशवियद्बिन्दुनादैर्बीजं च शौकरम् ।
हूँकारं चात्र रामस्य मालामन्त्रोऽमुनेरितः ॥
तारो नतिश्च निद्रायाः स्मृतिर्मेदश्च कामिका ।
रुद्रेण सहिता वह्निमेधामरविभूषिताः ॥
दीर्घा क्रूरयुताह्लादिन्यथो दीर्घा समानदा ।
क्षुधा क्रोधिन्यमोघा च विश्वमप्यथ मेधया ॥
युक्ता दीर्घा ज्वालिनी च ससूक्ष्मा मृत्युरूपिणी ।
सप्रतिष्ठाऽऽह्लादिनी त्वक् क्ष्वेडं प्रीतिश्च सामरा ॥
ज्योतिस्तीक्ष्णाऽग्निसंयुक्ता श्वेताऽनुस्वारसंयुता ।
कामिका पञ्चमोलान्ता स्तान्तान्तो धान्त इत्यथ ॥
ससानन्तो दीर्घयुक्तो वायुः सूक्ष्मयुतो विषा ।
कामिका कामिका रुद्रयुक्ताऽथोपिस्थिराससे ॥
तापिनी दीर्घयुक्ता भूरनिलोऽनन्तगोऽनलः ।
नारायणात्मकः कालः प्राणोऽम्भो विद्यया युतम् ॥
पीता रतिस्तथा लान्तो युक्तो योन्या तथा नतिः ।
सप्तचत्वारिंशदर्णो गुणान्तस्त्वगुणः स्वयम् ॥
अयं राज्याभिषिक्तस्य रामस्योक्तक्रमाल्लिखेत् ।
इदं सर्वात्मकं यन्त्रं प्रागुक्तमृषिसेवितम् ॥
सेवकानां मोक्षकरमायुरारोग्यवर्धनम् ।
अपुत्राणां पुत्रदं च बहुना किमनेन वै ॥
प्राप्नुवन्ति क्षणात् सम्यगत्र धर्मादिकानपि ।
इदं रहस्यं परममीश्वरेणापि दुर्गमम् ॥
इदं यन्त्रं समाख्यातं न देयं प्राकृते जने ।

श्रीकृष्णबलरामयोर्यन्त्रं तु पूर्वोक्तविष्णुयन्त्रमेव ।

बुद्धयन्त्रं तु भूपुरावृतद्वात्रिंशद्दलं पद्मम् ।

एवं ध्यात्वा यजेत् पद्मे द्वात्रिंशत्पत्रसंमिते ।

इति ( मेरुतन्त्र– ) वचनात् ।

विष्णुयन्त्रमेव कल्कियन्त्रम् ।

हयग्रीवादियन्त्रमपि विष्णुयन्त्रमेव ।

गोपालसुन्दरीयन्त्रं श्रीचक्रं तच्चाग्रे वक्ष्यते ।

अथ शिवयन्त्रं ( प्रपञ्चसारे )

अष्टपत्रगुणवृत्तराशिभिर्वीथिकल्पतरुभिः समावृतम् ।

मण्डलं प्रतिविधाय शूलिनः पीठमन्त्रनवशक्तिभिर्यजेत् ॥

क्वचित् तु भूपुरत्रयावृताष्टदलपद्मत्रयात्मकं शैवयन्त्रमुक्तम् ।

"कर्णिकाकेशरभ्राजद्वसुपत्रत्रयं लिखेत् ।

चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्त्रत्रयावृतम्–इति ॥

( सिद्धान्तसंग्रहे )

भूपुरत्रयमध्ये तु लिखेदष्टदलत्रयम् ।

केशरानाद्यपत्रेषु मध्ये विन्दुं प्रकल्पयेत् " ॥

अथ दक्षिणामूर्त्तियन्त्रं ( मेरुतन्त्रे )

पद्मत्रयसमोपेते भूगृहत्रितयान्विते ।

चतुर्द्वारयुते........................इति ॥

अथ पाशुपतास्त्रमन्त्रयन्त्रं तत्रैव ।

पद्ममष्टदलं कृत्वा कर्णिकाकेशरान्वितम् ।

चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्त्रत्रयावृतम् ॥

अथ वटुकयन्त्रं तत्रैव ।

शैवे पीठे यजेद्देवमन्तर्व्योमाष्टपत्रकम् ।

ऊर्ध्वत्रिकोणषट्कोणमष्टपत्रं गृहावृतम् ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४ पुस्तकेऽधिक उपलभ्यते ।

अथ क्षेत्रपालयन्त्रं तत्रैव ।

शैवे पीठे यजेदष्टपत्रे दिक्स्वरभूषिते ।

अथ भवानीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

आदौ त्रिकोणमालिख्य तद्बाह्येऽष्टदलाम्बुजम् ।

"भूपुरं चापि तद्बाह्ये भवानीमत्र पूजयेत् ॥

एतदेव त्रिकोण शून्यं यन्त्रान्तरम् ।"

गरुडयन्त्रं तु वक्ष्यमाणमातृकायन्त्रमेव ।

पूजयेन्मातृकापद्मे गरुडं वेदविग्रहम्—इति (मेरुतन्त्र-) वचनात् ।

कार्त्तवीर्ययन्त्रं तु पूर्वोक्तविष्णुयन्त्रमेव ।

काम्यपूजायां तु विशेष उक्तो (मेरुतन्त्रे)

अथातो दक्षिणे मार्गे वक्ष्यते काम्यपूजनम् ।

शुद्धभूमावष्टगन्धैर्लिखेद्यन्त्रं तदुच्यते ॥

लिखेद्दशदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ।

ध्रौं क्रीमोमैश्च पत्रेषु प्रणवाद्यानि संलिखेत् ॥

मन्त्रस्य नवबीजानि ततो यन्त्रान्तरेषु च ।

फडादिदशवर्णांश्च मन्त्रस्यैव समालिखेत् ॥

शषसहान् स्वरांश्चापि केशरेषु द्विशो लिखेत् ।

वेष्टयेत् कादिभिर्वर्णैः शषसहविवर्जितैः ॥

तद्बाह्ये चतुरस्रं तु वेष्टयेद्भूतवर्णिकैः ।

कामनाभेदतस्तानि वाय्वग्निक्ष्मा जलं नभः ॥

पञ्च ह्रस्वाः पञ्च दीर्घा एकाराद्याश्च पञ्च च ।

पञ्चवर्णा पञ्च याद्याः षक्षराश्च सहौ क्रमात् ॥

स्तम्भने पार्थिवैराप्यैः शान्तौ वश्ये च तैजसैः ।

उच्चाटने वायवीयैर्विद्वेषे चापि नाभसैः ॥

---

" " एतदङ्कान्तर्गतः पाठः ४, ५ पुस्तकयोरधिक उपलभ्यते ।

मारणे तैजसैः शान्तौ चाप्यैः पुष्टौ च पार्थिवैः ।
अस्मिन् यन्त्रे तोयपूर्णघटे भूपं प्रपूजयेत् ॥
कुम्भं स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं तेन सेचयेत् ।
सम्यक् साध्यं तदा स स्यात् पुत्रवान् रोगवर्जितः ॥
यशस्वी दीर्घजीवी च सत्कलत्रोऽसुरञ्जकः ।
वाक्सिद्धश्चापि तेजस्वी प्रतापी विजितेन्द्रियः ॥
शत्रूपद्रवमापन्नो ग्रामे वा मण्डपे पुरे ।
संस्थापयेदिदं यन्त्रमरिभीतिनिवृत्तये ॥
अथ वक्ष्ये वामगानां यन्त्रभेदं शृणुष्व तत् ।
लिखेदष्टदलं पद्मं ससाध्यं क्रौँ च मध्यतः ॥
यौँ यैमाद्यन्तयोस्तस्य लिखेत् पत्रेषु च क्रमात् ।
मन्त्रबीजाष्टकं चान्ते दले लेख्यं पुनश्च फट् ॥
पत्रान्तरे शेषवर्णानन्ते वर्णद्वयं लिखेत् ।
द्विशः स्वरान् केशरेषु द्विधोष्मार्णसमन्वितान् ॥
वृत्तद्वयं च तद्बाह्ये तयोर्वीथ्यां च कादिकान् ।
उष्मोनाँश्चतुरस्रं तु वज्राष्टकसमन्वितम् ॥
तद्बाह्ये विलिखेत् तत्र पूर्ववद्भूतवर्णिकान् ।
स्नानार्थं घटमानीयमन्यत् पूर्ववदीरितम् ॥

अथ हनुमद्यन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकाकेशरोज्ज्वलम् ।
भूपुरं च ततो बाह्ये लिखित्वा तत्र पूजयेत् ॥

अथ स्मरयन्त्रं तत्रैव ।

यन्त्रं लिखेत् ततो विद्वान् वसुपत्राम्बुजं शुभम् ।
तद्बहिः षोडशदलं चतुरस्रेण संयुतम् ॥

अथ मातृकायन्त्रं (शारदायाम्)

व्योमेन्दौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं
यन्त्रान्तर्गतपञ्चवर्गयशलार्णादित्रिवर्गं क्रमात् ।
आशास्वश्रिषु लान्तलाङ्गलियुजा क्षोणीपुरेणावृतं
पद्मं कल्पितमत्र पूजयत तां वर्णात्मिकां देवताम् ॥

व्योम हकारः । इन्दुः सकारः । औ इति स्वरूपम् । रसनार्णो विसर्गः । तेन ह्सौः-रिति । आशास्वित्यादि । आशासु दिक्षु । अश्रिषु कोणेषु । लान्तो वकारः । लाङ्गली ठकारः । तथा चतुर्दिक्षु वकारयुक्तेषु कोणेषु ठकारयुक्तेनेत्यर्थः । शेषं स्पष्टम् ।

भूतलिपियन्त्रं तु अष्टदलोपरि षोडशदलं तदुपरि चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रमिति (शारदा-)टीकायामुक्तम् ।

अथ श्यामासपर्यायन्त्रं (कालीतन्त्रे)

आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं च बहिर्न्यसेत् ।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥
ततो वृत्तं समालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद्भूपुरमेककम् ॥

यन्त्रान्तरमुक्तं (कुमारीकल्पे)

आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्बहिर्न्यसेत् ।
बहिस्त्रिकोणमालिख्य षट्कोणं च बहिर्न्यसेत् ॥
मध्ये तु वैन्दवं चक्रं बीजेनापि विभूषितम् ।
षट्कोणात् तु बहिः पद्मं भूपुरैकेण संयुतम् ॥
ज्ञात्वैवं मुक्तिमाप्नोति यन्त्रमेतन्न संशयः ।

पद्ममष्टदलम् । भूपुरं च चतुर्द्वारयुक्तम् ।

तदुक्तं (भैरवतन्त्रे)

शक्त्यग्निभ्यां च षट्कोणं तत्र शक्तित्रयं लिखेत् ।
पद्ममष्टदलं भूमिपूश्चतुर्द्वारसंयुतम् ॥

शक्त्यग्निभ्यामिति । शक्तिरधोमुखत्रिकोणम् । अग्निरूर्ध्वमुखं त्रिकोणम् । ताभ्यां षट्कोणे सिद्धे तन्मध्ये वाऽधोमुखत्रिकोणत्रयं लिखेदित्यर्थः ।

तथा ।

स्वर्णादिरचिते पात्रे रक्तचन्दनचर्चिते ।
स्वयम्भुकुसुमाक्ते वा रक्ताक्ते चान्यथा शुचि ॥
रक्तचन्दनलेखन्याऽथ वा स्वर्णशलाकया ।

रक्तचन्दनचर्चिते पशुना स्वयम्भुकुसुमाद्यक्ते वीरेण यन्त्रं लेखनीयमित्यर्थः ।

( कुमारीकल्पे )

एतत् तु विलिखेत् ताम्रे कुण्डगोलविलेपिते ।
स्वयम्भुकुसुमैर्युक्ते कुङ्कुमारुणसेविते ॥

( स्वतन्त्रतन्त्रे )

स्वयम्भुकुसुमं कुण्डगोलोत्थं रोचनाऽगुरुः ।
काश्मीरमृगनाभी च मद्यं मलयजोद्भवम् ॥
एष गन्धः समाख्यातः सर्वदा चण्डिकाप्रियः ।
एतेन गन्धयोगेन योनिचक्रक्रमं लिखेत् ॥

(मुण्डमालायाम्)

ताम्रपात्रे कपाले वा श्मशाने काष्ठनिर्मिते ।
शनिभौमदिने वाऽपि वीरमृतकसम्भवे ॥
स्वर्णे रौप्ये तथा लौहे चक्रमर्च्यं विधानतः ।

अत्रापि कपालादिविधेर्वीरपरत्वं वेदितव्यम् ।

अथ गुह्यकालीयन्त्रं ( महाकालसंहितायाम् )

सविन्दुत्र्यारपञ्चारविभिन्ननवकोणयुक् ।
वृत्तयोरन्तरेऽष्टारयुतं तदनु भाविनि ॥
वस्वर्कभूपच्छदनाम्भोजवृत्तान्वितं ततः ।
अष्टाशनिसमायुक्तमन्तर्बहिरथापि च ॥
अष्टशलाष्टमुण्डाढ्यं वह्निज्वालायुतेन हि ।

श्मशानेनावृतं शेषे शोणितोदेन वेष्टितम् ॥
यन्त्रराजमिदं देवि पूजनाय प्रकल्पितम् ।
भरतश्च्यवनश्चापि हारीतश्च जवालकः ॥
दक्षश्चैते जनाः पञ्च पूजयन्त्यमुनाऽम्बिकाम् ।
बिन्दुः पञ्चारषट्कोणत्रिकोणनवकोणगः ॥
अष्टारवृत्तसहितषोडशच्छदपद्मयुक् ।
पुनर्वृत्तान्वितः शेषे पूर्ववत् सकलं प्रिये ॥
पूज्योऽयं रामयक्षेशनाहुषाणां वरानने ।

अथ कामकलायन्त्रं तत्रैव ।

यन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि तत्र धेहि मनः प्रिये ।
भूपुरे वसुपत्राढ्ये पद्ममष्टदलान्वितम् ॥
केशराणि प्रकल्प्यानि तदन्तश्चापि कर्णिकाम् ।
कर्णिकान्तस्त्रिकोणस्य त्रितयं पृथगेव हि ॥
बहिस्त्रिकोणकोणेषु लिखेद्बीजत्रयं शुभम् ।
मायाबीजं तु वामे स्यात् क्रोधबीजं तु दक्षिणे ॥
अधः पाशं विनिर्दिश्य कन्दर्पाणं तु मध्यतः ।
तदन्तःस्थायिनी देवी तत्र सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥
एतद्यन्त्रं महादेवि सर्वकामफलप्रदम् ।
एतस्य सर्वयन्त्राणि कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥

अथ श्मशानकालीयन्त्रं ( स्वतन्त्रतन्त्रे )

पद्मं चाष्टदलं वृत्तं तद्बाह्येऽष्टकवर्गकम् ।
धरण्यां विलिखेदाद्यं चतुष्कं च चतुष्ककम् ॥
पर्वादि उत्तरान्तं च मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ।

अथ सिद्धिलक्ष्मीयन्त्रं कालानलतन्त्रे ।

यन्त्रोद्धारमहं वक्ष्ये सिद्धिलक्ष्म्या द्विज शृणु ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारं वृत्तत्रयेण वेष्टितम् ॥
अष्टारं च रविदलं पुनरष्टदलं लिखेत् ।
षट्कोणमध्ये कोणं च तत्र बिन्दुं विचिन्तयेत् ॥

अथ तारायन्त्रं ( फेत्कीये )

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं त्रिकोणोज्ज्वलकर्णिकम् ।
मायां पूर्वदले न्यस्य याम्ये बीजं द्वितीयकम् ॥
तथोत्तरे पश्चिमे च फट्कारं विलिखेत् ततः ।
मध्ये बीजं लिखित्वा........................इति ॥

( फेत्कारिणीतन्त्रे )

सयोनि गोमयेनाष्टपत्रमब्जं सुशोभनम् ।
भूपुरं वसुवज्राढ्यं यन्त्रमेकजटात्मकम् ॥

( मेरुतन्त्रे )

ततस्तां पूजयेत् पीठे पद्मे षट्कोणकर्णिके ।
धरागृहावृते पीठमादावर्च्यं सशक्तिकम् ॥

एतयोर्भूपुरमधिकमुक्तम् ।

तथा त्रिकोणषट्कोणयोर्विकल्पः ( नीलतन्त्रे )

व्योमेन्दौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं
वर्गोल्लासिवराच्छदं वसुमतीगेहेन संवेष्टितम् ।
ताराधीश्वरवारिवर्गविलसद्दिक्कोणसंशोभितं
यन्त्रं नीलतनोः परं निगदितं सर्वार्थसिद्धिप्रदम् ॥

इदं च नीलसरस्वतीयन्त्रं नीलतनोरित्यभिधानात् ।

( फेत्कारिणीतन्त्रो- )क्तयन्त्रमेकजटायाः । ( फेत्कारीयमेरुतन्त्रोक्तं ) च ताराया इति सम्प्रदायविदः ।

केचित् तु व्योमेन्द्वावित्यादिना धारणयन्त्रमुक्तम् । पूर्वोक्तानि यन्त्राणि तारेकजटानीलसरस्वतीसाधारणानीति वदन्ति ।

( मत्स्यसूक्ते )

अनुक्तकल्पे यन्त्रं तु लिखेत् पद्मं दलाष्टकम् ।
षट्कोणकर्णिकं वृत्तं वेदद्वारोपशोभितम् ॥

अथ श्रीयन्त्रं ( यामले )

विन्दुत्रिकोणवसुकोणदशारयुग्मं
मन्वस्त्रनागदलसंयुतषोडशारम् ।
वृत्तत्रयं च धरणीसदनत्रयं च
श्रीचक्रराजमुदितं परदेवतायाः ॥

अस्मिन् यन्त्रे केशरा न कर्त्तव्याः ।

योऽस्मिन् यन्त्रे महेशानि केशराणि प्रकल्पयेत् ।
योगिनीसहितास्तस्य हिंसां कुर्वन्ति भैरवाः ॥

इति ( भूतभैरवोक्तेः )

एतद्दर्शनफलमुक्तं ( यामले )

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा यत् फलं समवाप्नुयात् ।
तत् फलं लभते भक्त्या कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥
महाषोडशदानादि कृत्वा यल्लभते फलम् ।
तत् फलं समवाप्नोति कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥
सार्धत्रिकोटितीर्थेषु स्नात्वा यत् फलमश्नुते ।
लभते तत् फलं भक्त्या कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥

अथ पूजाफलम् ।

कोटिलिङ्गप्रतिष्ठायां यत् फलं समुदाहृतम् ।
तत्फलं लभते नूनं श्रीचक्रस्य च पूजनात् ॥

अथ दानफलम् ।

श्रीचक्रं कारयित्वा तु यो दद्यात् साधकाय च ।

भूचक्रं तेन दत्तं हि सशैलवनसागरम् ॥

अथैतत्पादोदकमाहात्म्यम् ।

गङ्गापुष्करनर्मदासयमुनागोदावरीगोमती-
गङ्गाद्वारगयाप्रयागवदरीवाराणसीसिन्धुषु ।
रेवासेतुसरस्वतीप्रभृतिषु ब्रह्माण्डभाण्डोदरं
तीर्थस्नानसहस्रकोटिगुणितं श्रीचक्रपादोदकम् ॥

अथैतच्चक्रोद्धारप्रकारस्तन्त्रान्तरोक्तः प्रदर्श्यते ।

वृत्तं कृत्वेष्टमानेन मध्ये सूत्रं तु पातयेत् ।
पूर्वपश्चिमलग्नाग्रं द्विचत्वरिंशवद्भवेत् ॥
पूर्वदिग्भागतः कार्या रेखा दोषापनुत्तये ।
त्यक्त्वा षड्भागमाद्या स्याद्रेखा याम्योत्तराश्रिता ॥
पञ्चभागाँस्ततस्त्यक्त्वा द्वितीयाऽपि तथा भवेत् ।
ततो भागचतुष्केण दूरतास्त्रितया भवेत् ॥
ततो भागत्रयं त्यक्त्वा रेखा स्यात् तु चतुर्थिका ।
भागद्वयं ततस्त्यक्त्वा रेखा कार्याऽथ पञ्चमी ॥
ततो भागचतुष्केण षष्ठी रेखा तथा भवेत् ।
सप्तमी स्यात् त्रिभिर्भागैश्चतुर्भागैस्तथाऽष्टमी ॥
नवमी पञ्चभिर्भागैरेवं रेखा विधाय तु ।
अन्तरं वृत्ततः षड्भिरंशैराद्यन्तरेखयोः ॥
सूर्यादिग्रहनामानि नवानां धारयेत् क्रमात् ।
पार्श्वद्वयेऽपि कर्त्तव्यं रेखाग्राणां विमार्जनम् ॥
अग्रयोरुभयोर्लुम्पेत् सूर्ये भागत्रयं त्र्यम् ।
पञ्चभागान् प्रलुम्पेत द्वितीया पार्श्वयोर्द्वयोः ॥
मार्जनं च भवेदेवमग्रयोः शनिभौमयोः ।

बुधरेखाग्रयोर्लुप्याद्भागान् षोडश यत्नतः ॥
अष्टादश विलुप्यंत भागान् गुर्वग्रयोर्द्वयोः ।
षोडशोभयतो लुप्येद्भागान् भृग्वग्रयोस्तथा ॥
राहुकेत्वोः क्रमेण स्यादष्टषड्भागमार्जनम् ।
सूर्याग्रे चुम्बतः शुक्रे मध्यं सोमाग्रके पुनः ॥
चुम्बतः केतुमध्यं तु भौमाग्रे वृत्तचुम्बके ।
बुधाग्रे राहुमध्यं तु चुम्बतस्तद्वदेव हि ॥
चुम्बतः शनिमध्यं तु अग्रभागौ बृहस्पतेः ।
पूर्वस्यां वृत्तमध्यं चुम्बतोऽग्रे शनेरपि ॥
राह्वग्रे सूर्यमध्यं तु चुम्बतस्तद्वदेव हि ।
केत्वग्रे चुम्बतो भौमं भृग्वग्रे सोमचुम्बके ॥
एवं चक्रं लिखित्वा तु भवेदतिमनोरमम्-इति ।

बालायन्त्रं तु वक्ष्यमाणत्रिपुरभैरवीयन्त्रवत् ।
(त्रिपुरासारसमुच्चये) यन्त्रान्तरमुक्तम् ।

त्रिकोणं विलिख्यानु वृत्तं दलानां
ततः पञ्चकं तद्बहिश्चापि वृत्तम् ।
पुनः षड्दलं बाह्यतश्चापि वृत्तं
लिखेदष्टपत्राणि तद्बाह्यतोऽपि ॥

अथ भुवनेश्वरीयन्त्रम् (शारदायाम्)

पद्ममष्टदलं बाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः ।
विलिखेत् कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम् ॥
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।

अथ त्रिपुरभैरवीयन्त्रं (शारदायाम्)

पद्ममष्टदलोपेतं नवयोन्याढ्यकर्णिकम् ।

चतुर्द्वारसमायुक्तं भूगृहं विलिखेत् ततः ॥

अथ चैतन्यभैरवीयन्त्रं ( ज्ञानार्णवे )

त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं वरानने ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ॥

भुवनेश्वरीभैरवीकमलेश्वरभैरव्योरपि तदेव यन्त्रम् । सम्पत्प्रदाभैरवीयन्त्रं त्रिपुरभैरवीयन्त्रवत् । कामेश्वरभैरवीयन्त्रं चैतन्यभैरवीयन्त्रवत् ।

अथ षट्कूटाभैरवीयन्त्रं ( ज्ञानार्णवे )

यन्त्रमस्या वरारोहे त्रिकोणं संपुटं लिखेत् ।
बहिरष्टदलं पद्मं रविपत्रं ततो लिखेत् ॥
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।

अथ रुद्रभैरवीयन्त्रं तत्रैव ।

त्रिकोणं चैव वृत्तं च वृत्ताष्टदलपङ्कजम् ।
वृत्तं भूमण्डलं च.............................................इति ॥

अथ छिन्नमस्तायन्त्रं ( यामले )

त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम् ।
तन्मध्ये विलिखेद्योनिं द्वारत्रयसमन्वितम् ॥
बहिरष्टदलं पद्मं भूविम्बत्रितयं पुनः ।
कूर्मबीजं लिखेन्मध्ये त्रिकोणे हसमन्वितम् ॥

( तन्त्रान्तरे )

अथोच्यते यन्त्रराजं वैरोचन्या महेश्वरि ।
षट्कोणं प्रथमं लेख्यं मध्यदेशे त्रिकोणकम् ॥
सूर्यविम्बं ततो दद्याच्चतुरस्रं ततः परम् ।
भूगोलं च ततो दद्याच्चतुरस्रं ततः परम् ॥
अष्टपत्रं ततो दद्याद्यथास्थानं च देशिकः ।
चन्द्रविम्बं ततो दद्याद्वह्निविम्बं ततः परम् ॥

भूगोलं च ततो दद्याद्भूपुरत्रितयं ततः ।
वज्रशूलसमायुक्तं कोणे टङ्कं नियोजयेत् ॥
किञ्जल्के केशरे दद्यान्मन्त्रवर्णांस्त्रिकोणके ।
इति कामोपरि ध्यायेद्देवीं वैरोचनीं शुभाम् ॥

( तन्त्रान्तरे )

भैरवोक्तमहं वक्ष्ये यन्त्रं सर्वसमृद्धिदम् ।
त्रिकोणं प्रथमं लेख्यं षट्कोणैर्वेष्टयेच्च तत् ॥
त्रिविम्बं च ततो दद्याद्गुणानां परिणामकम् ।
भूपुरत्रितयं कुर्याद्वज्रशूलसमन्वितम् ॥
कोणदेशे ततो दद्याट्टङ्कास्त्रं सुमनोहरम् ।
यथास्थाने लिखेद्धीमान् कर्त्तृखर्परकं शुभम् ॥
रतिकामोपरि ध्यायेद्देवीं वैरोचनीं शुभाम् ।

( मेरुतन्त्रे )

त्रिकोणं रसकोणं वाऽष्टदलं भूपुरं ततः ।

अथ धूमावतीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

लिखेदष्टदलं पद्मं भूपुरेण च वेष्टितम् ।

अथ बगलामुखीयन्त्रं ( मेरुतन्त्रे )

सौवर्णे वाऽथ वा रौप्ये पैत्तले वाऽथ भूर्जके ।
कर्पूरागुरुकस्तूरीश्रीखण्डकुङ्कुमैरपि ॥
लिखेद्यन्त्रं प्रयत्नेन लेखन्या हेमतारयोः ।
मध्ये योनिं समालेख्य तद्बाह्ये तु षडस्रकम् ॥
तद्बाह्येऽष्टदलं पद्मं तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ।
चतुरस्रत्रयं बाह्ये चतुर्द्वारोपशोभितम् ॥

अथ मातङ्गीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

षट्कोणाष्टदलं पद्मं लिखेद्यन्त्रं मनोरमम् ।

एतस्मिन् पूजयेत् पीठे नवशक्तीः क्रमादिमाः ॥

अथ यन्त्रान्तरं ( मेरुतन्त्रे )

त्रिकोणं पञ्चकोणं च बहिरष्टदलद्वयम् ।
षोडशारं चाष्टदलं भूपुत्रितयं लिखेत् ॥

एतद्द्वयमप्युच्छिष्टचाण्डालिन्याः । राजमातङ्गीयन्त्रं तु तद्ध्यानात् प्रागेवोक्तम् । वश्यमातङ्ग्यादिभेदानामपि तदेव यन्त्रमाकलनीयम् ।

अथ सुमुखीयन्त्रम् ।

त्रिकोणं पञ्चकोणं च वृत्तमष्टदलावृतम् ।
चतुरस्रं च तद्बाह्ये सुमुखीयन्त्रमीरितम् ॥

अथ लक्ष्मीयन्त्रं ( मेरुतन्त्रे )

धर्मादिकल्पिते पीठे भूपुरद्वारशोभिते ।
दलादष्टके केशराख्ये कर्णिकायां यजेदिमाम् ॥

भूपुरावेष्टितमष्टदलपद्मत्रयात्मकं यन्त्रमन्यत्रोक्तम् ।

अथ सरस्वतीयन्त्रं तन्त्रान्तरे ।

पद्ममष्टदले लेख्यं चतुरस्रावृतं शुभम् ।
यन्त्रमेतद्वरारोहे वाग्देव्याः परिकीर्त्तितम् ॥

त्वरिताया नित्यक्लिन्नायाश्च यन्त्रं पूर्वोक्तभुवनेश्वरीयन्त्रवत् ।

अथान्नपूर्णायन्त्रं ( मेरुतन्त्रे )

त्रिकोणं च चतुःपत्रं वसुपत्रं ततः परम् ।
कलापत्रं च भूविम्बं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥

प्रत्यङ्गिरायन्त्रमन्नपूर्णायन्त्रवत् ।

अथ कुब्जिकायन्त्रम् ।

विन्दुत्रिकोणषट्कोणमष्टपत्रं सकेशरम् ।
श्रीमत्कुब्जेश्वरीयन्त्रं सद्वारं भूपुरत्रयम् ॥

तन्त्रान्तरे ।

विन्दुत्रिकोणषट्कोणमष्टपत्राम्बुजं तथा ।
समातृबीजाष्टदलमष्टशृङ्गं सभूपुरम् ॥

गङ्गायन्त्रं तु सरस्वतीयन्त्रवत् । भूपुरावृतषडस्रं वागमतीयन्त्रम् ।
अष्टदलकमलद्वयात्मकं चन्द्रयन्त्रम् ।
अथ भौमयन्त्रं ( मेरुतन्त्रे )

त्रिकोणं पूर्वमुद्धृत्य पञ्चधा विभजेत् ततः ।
तृतीयरेखां चिह्नाभ्यां लाञ्छयेत् समभागतः ॥
आद्यरेखाग्रयुगलं तृतीयाचिह्नयोर्न्यसेत् ।
द्वितीयाग्रे समाकृष्य तृतीयाचिह्नयोर्न्यसेत् ॥
युता रेखा तृतीया तु समा भाज्या समं ततः ।
तुर्यां चिह्नद्वयेनाथ त्रिभिश्चिह्नैश्च पञ्चमी ॥
तृतीयाग्रे प्रकुर्वीत पञ्चम्या मध्यचिह्नजे ।
तुर्याग्रे योजयेत् सम्यक् पञ्चम्या चिह्नयोर्द्वयोः ॥
अथ मीनद्वये दद्यात् सूत्रयुग्मं विचक्षणः ।
एवमेकाधिका सम्यक् कोष्ठानां विंशतिर्भवेत् ॥

बुधादीनां यन्त्रं तु भूपुरावृताष्टदलकमलम् । तेषां यन्त्रान्तराणि विस्तरभयान्न लिख्यन्ते ।

पिङ्गलादिग्रहशान्तियन्त्रं तु त्रिकोणपञ्चकोणाष्टदलभूपुररूपम् । षड्दलाद्बहिरष्टदलमिन्द्रयन्त्रम् । अग्नियन्त्रमपि तदेव । अष्टदलमात्रमग्नेर्यन्त्रान्तरम् । यमयन्त्रमिन्द्रयन्त्रवत् । नैर्ऋतयन्त्रं तु पञ्चकोणगर्भाष्टदलपद्मम् । षड्दलाद्बहिरष्टदलवरुणयन्त्रम् । षड्दलाद्बहिरष्टदलत्रयं वायुयन्त्रम् । कुबेरयन्त्रमष्टदलमात्रम् । ईशानयन्त्रं शिवयन्त्रवत् । ब्रह्मयन्त्रं तु दशदलपद्मम् । विष्णुयन्त्रमेवानन्तयन्त्रम् । षट्कोणकर्णिकषोडशदलपद्मं ब्राह्मीयन्त्रम् । पञ्चकोणगर्भाष्टदलकमलं कौमारीयन्त्रम् । वैष्णवीयन्त्रमष्टदलपद्मम् । तदेव वाराहीयन्त्रमपि ।

मालामन्त्रं तु यन्त्रान्तरमुक्तं ( मेरुतन्त्रे )

योनिपञ्चास्रषट्कोणाष्टपत्रशतपत्रकम् ।
सहस्रदलभूबिम्बसंवीतं द्वारशोभितम् ॥
कैलाशाचलमध्यस्थं पीठमेतद्विचिन्तयेत् ।

त्रिकोणषोडशदलाष्टदलदशदलद्वयात्मकं स्वप्नवाराहीयन्त्रं तत्रैवोक्तम् । षट्कोणगर्भाष्टदलपद्ममैन्द्रीचामुण्डामहालक्ष्मीयन्त्रम् ।

नवदुर्गात्मकचामुण्डामन्त्रयन्त्रं तु तन्त्रान्तरे।

एतन्मन्त्रावृतत्र्यस्रषट्कोणाष्टदलं लिखेत्।
पञ्चविंशद्दलं बाह्ये चतुरस्रावृतं शुभम्॥

अथ दुर्गायन्त्रं (मेरुतन्त्रे)

अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं चतुरस्रत्रयावृतम्।
चतुर्द्वारसमायुक्तं कुङ्कुमादिभिरुद्धरेत्॥

अथ यन्त्रपुरश्चरणं तन्त्रान्तरे।

आदौ यन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं तन्मन्त्रस्य पुरस्क्रियाम्।
कृत्वाऽयुतप्रमाणेन पश्चाद्यन्त्रस्य वाऽऽचरेत्॥
यथाऽऽधारे यथाद्रव्यैर्यन्त्रं संलिख्य यत्नतः।
तत्रावाह्यैव तद्देवं संपूज्य विधिपूर्वकम्॥
ध्यात्वा बलिं जपं होमं कृत्वा देवं विसर्जयेत्।
एकैकवारमावर्त्य तन्मन्त्रं संस्मरन् बुधः॥
इत्थं जपादिभिः सिद्धे यन्त्रे नासाध्यता क्वचित्।
दिक्सहस्रप्रमाणेन यन्त्रे कार्या पुरस्क्रिया॥

अथ धारणयन्त्रसाधनमुक्तं (मेरुतन्त्रे)

अथ यन्त्रविधिं वक्ष्ये सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
सिद्धस्य लिखनादेव यन्त्रसिद्धिः प्रजायते॥
न भावि यत्र कार्यं तु सिद्धस्यापि तदा भवेत्।
दुःस्वप्नदर्शनं पूर्वं तदा यन्त्रं न कारयेत्॥
साधकस्य शुभे घस्रे समाराध्येष्टदेवताम्।
स्वप्यात् त्रिदिवसं भूमौ हविष्याशी जपे रतः॥
एतद्यन्त्रं करिष्यामि मम तत् कीदृशं प्रभो।
स्वप्ने वदैतद्देवेशि तदङ्गत्वेन पूजनम्॥

प्रदोषसमये कृत्वा लिखेत् त्रिदिवसं भुवि ।
तृतीयदिवसे रात्रौ यथा स्वप्नः प्रजायते ॥
तथैवाज्ञां गृहीत्वा तु सत्स्वप्ने चालिखेद्भुवि ।
अस्वप्ने वाऽथ दुःस्वप्ने नैव कुर्याल्लिखेद्धि तत् ॥
जीवसंस्थापनं यन्त्रे कुर्याद्येन फलं लभेत् ।
षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्यबीजोर्ध्वतो लिखेत् ॥
द्वितीयान्तं साध्यमधः कुरुद्वन्द्वं च पार्श्वयोः ।
हसौर्यन्त्रस्य जीवः स्यान्मध्यभागादधो लिखेत् ॥
हंसः सोऽहं मनोरस्य लिखेदेकैकमक्षरम् ।
ईशानादिषु कोणेषु दक्षपार्श्वे च इद्वयम् ॥
उद्वयं वामपार्श्वे च पूर्वाशादौ लिखेत् क्रमात् ।
लँ रँ मँ क्षँ तथा वँ यँ सँ हँ पूर्वादिके लिखेत् ॥
ईशानपूर्वयोर्मध्ये आँ ह्रीँ वायव्यसौम्ययोः ।
एवं दिक्पालबीजानि दशदिक्षु न्यसेत् क्रमात् ॥
यन्त्रराजाय विद्महे वरप्रदाय धीमहि तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात् ।
एतस्याः प्रतिकाष्ठायां लिखेद्वर्णत्रयं त्रयम् ।
बहिः प्राणप्रतिष्ठाया मन्त्रं सर्वत्र वेष्टयेत् ॥
एवं तु लिखितं यन्त्रं भवेत् सिद्धिप्रदायकम् ।
स्थलानुक्तौ भूर्जपत्रे क्षौमे वा ताम्रपत्रके ॥
यन्त्रं विलिख्य गुटिकां बद्ध्वा सूत्रेण वेष्टयेत् ।
लाक्षयाऽऽच्छादितं स्वर्णे रूप्ये ताम्रेऽथ वा क्षिपेत् ॥
यद्देवताकं यन्त्रं स्यात् तद्बीजेन च पूजयेत् ।
तदभावे मातृकार्णैर्यन्त्रपूजां समाचरेत् ॥

अष्टोत्तरसहस्रं तु मूलं जप्त्वा हुनेद्घृतम् ।
तत्संपातेन संसिक्तं कृत्वा यन्त्रं नियोजयेत् ॥
मूर्ध्नि बाहौ गले वाऽपि तत्तदिष्टार्थसिद्धये ।

( मेरुतन्त्रे )

उपास्या वा भूतलिपिर्यन्त्रसिद्धिविधायिनी ।
अक्लेशेनैव सर्वेषां यन्त्राणां सिद्धिमाप्नुयात् ॥

अथ भूतलिपिनिर्णयः ( शारदायाम् )

अथ भूतलिपिं वक्ष्ये सुगोप्यामपि दुर्लभाम् ।
यां प्राप्य शम्भोर्मुनयः सर्वान् कामान् प्रपेदिरे ॥
पञ्च ह्रस्वाः सन्धिवर्णा व्योमेराग्निर्जलं धरा ।
अन्तमाद्यं द्वितीयं च चतुर्थं मध्यमं क्रमात् ॥
पञ्चवर्गाक्षराणि स्युर्वान्तः श्वेतेन्दुभिः सह ।
एषा भूतलिपिः प्रोक्ता द्विचत्वारिंशदक्षरैः ॥

पञ्च ह्रस्वा इति अकारादयः । सन्धिवर्णा एकारादयश्चत्वारः । व्योम हकारः । इरो यकारः । अग्नी रेफः । जलं वकारः । धरा पृथ्वी तद्बीजं लकारः । अन्तमित्यादि वर्गस्येति शेषः । वान्तः शकारः । श्वेतः षकारः । इन्दुः सकारः ।

तथा ।

आयंवराणाः वर्गाणां पञ्चमाः शार्णसंयुताः ।
वर्गाद्या इति विज्ञेया नव वर्गाः स्मृता अमी ॥

आयंवराणा इति । अश्च ए च अंवरार्णश्च ते । आयंवराणा अकारैकारहकारा इत्यर्थः । वर्गाणां पञ्चमा ङञणनमाः । शार्णः शकारः । एते वर्णा नवानां वर्गाणामाद्या इत्यर्थः ।

भूतलिपित्वं दर्शयति ।

व्योमेराग्निजलक्षोणीवर्गवर्णान् पृथग्विदुः ।
द्वितीयवर्गे भूनं स्यान्नवमे सजलं धरा ॥

भूनं स्यादिति । द्वितीयवर्णस्य वर्णचतुष्टयात्मकत्वादिति भावः । एवमग्रेऽपि बोध्यम् ।

तथा ।

विरिञ्चिविष्णुरुद्राश्विप्रजापतिदिगीश्वराः ।
क्रियादिशक्तिसहिता नवदुर्गेश्वराः स्मृताः ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिर्गायत्री छन्द ईरितम् ।
देवता कथिता सद्भिः साक्षाद्दुर्गेश्वरी परा ॥
हादिषड्वर्णकैः कुर्यात् षडङ्गानि सजातिभिः ।

( मेरुतन्त्रे )

स्वरहोतैर्हयाद्यैश्च मन्त्रार्णैः पञ्चपञ्चभिः ।

अथ ध्यानं ( शारदायाम् )

ध्यायेल्लिपितरोर्मूले देवीं तन्मयपङ्कजे ।
वदन्ति सुधियो वृक्षं नित्यं वर्णमयं शुभम् ॥
परसंविन्महाबीजं बिन्दुनादमहाशिखम् ।
पृथिव्यक्षरशाखाभिः सर्वाशासु विजृम्भितम् ॥
सलिलाक्षरपत्रैः स्वैः संछादितयुगत्रयम् ।
वह्निवर्णाङ्कुरैर्दीप्तं रत्नैरिव सुरद्रुमम् ॥
मरुद्वर्णलसत्पुष्पैर्द्योतयन्तं वपुःश्रियम् ।
आकाशार्णफलैर्नम्रं सर्वभूताश्रयं परम् ॥
परामृताख्यमधुभिः सिञ्चन्तं परमेश्वरीम् ।
वेदागमादिभिः कल्पसमुन्नतिमनोहरम् ॥
शिवशक्तिमयं साक्षाच्छायाश्रितजगत्त्रयम् ।
एतामाश्रित्य सुधियः सर्वान् कामान् प्रपेदिरे ॥
अङ्कोन्मुक्तशशाङ्ककोटिसदृशीमापीनतुङ्गस्तनीं
चन्द्रार्धान्वितमस्तकां मधुमदादालोलनेत्रत्रयाम् ।
बिभ्राणामनिशं वरं जपवटीं विद्यां कपालं करै-

राज्ञां यौवनगर्वितां लिपितनुं वागीश्वरीमाश्रये ॥

अथ पुरश्चरणम् ।

लक्षं न्यसेज्जपेत् तावज्जुहुयादयुतं तिलैः ।
पूजयेदन्वहं देवीं पीठे प्रागीरिते सुधीः ॥

( मेरुतन्त्रेऽपि )

लक्षं प्रजप्यादयुतं तिलैर्हुत्वा च तर्पयेत् ।
एवं भूतलिपिः सेव्या यन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥
श्रीविद्याराधने वाऽपि समर्थो जायते नरः ।

इति भूतलिपिपुरश्चरणम् ।

अथ मातृकान्यासपुरश्चरणं (शारदायाम्)

दीक्षितः प्रोक्तमार्गेण न्यसेल्लक्षं समाहितः ।
जपेत् तत्संख्यया विद्वानयुतं मधुराप्लुतैः ॥
विदधीत तिलैर्होमं मातृकामन्वहं जपेत् ।

इति मातृकान्यासपुरश्चरणम् ।

अथ त्रिलोहीमुद्रा तत्रैव ।

सोमसूर्याग्निरूपाः स्युर्वर्णा लोहत्रयं तथा ।
रौप्यमिन्दुः स्मृतो हेम सूर्यस्ताम्रं हुताशनः ॥
लोहभागाः समुद्दिष्टाः स्वराद्यक्षरसंख्यया ।
तैर्लोहैः कारयेन्मुद्रामसङ्कलितसङ्गताम् ॥
साग्रं सहस्रं संजप्य स्पृष्ट्वा तां जुहुयात् ततः ।
तस्यां संपातयेन्मन्त्री सर्पिषा पूर्वसंख्यया ॥
निःक्षिप्य कुम्भे तां मुद्रामभिषेकोक्तवर्त्मना ।
आवाह्य पूजयेद्देवीमुपचारैः समाहितः ॥
अभिषिञ्च्य विनीताय दद्यात् तां मुद्रिकां गुरुः ।

इयं रक्षा क्षुद्ररोगविषज्वरविनाशिनी ॥
व्यालचौरमृगादिभ्यो रक्षां कुर्याद्विशेषतः ।
युद्धे विजयमाप्नोति धारयेन्मनुजेश्वरः ॥

सोमसूर्याग्निरूपा इति । अकारादयः स्वराः सोमरूपाः । कादयो मान्ताः स्पर्शवर्णाः सूर्यरूपाः । यकारादयो व्यापकवर्णा अग्निरूपा इत्यर्थः ।

तथेति । तथैव लोहत्रयमपि सोमसूर्याग्निरूपमित्यर्थः ।

एतदेव स्फुटयति रौप्यमित्यादिना । भागा अंशाः ।

स्वराद्यक्षरसंख्ययेति । रौप्यस्य षोडश । हेम्नः पञ्चविंशतिः । ताम्रस्य दशभागा इत्यर्थः ।

असङ्कलितसङ्गतामिति । असङ्कलितामेकरूपतामनापन्नाम् । सङ्गतां परस्परसम्बद्धाम् ।

संजप्येति । जपश्चात्र मातृकावर्णानामेव ।

तस्यां संपादयेदिति । स्वाहेति हुत्वा तस्यां मुद्रायां संपाताज्यं निःक्षिपेदित्यर्थः ।

अभिषिकोक्तवर्त्मनेति । काम्याभिषेकोक्तरीत्यत्यर्थः ।

काम्याभिषेकस्तु तत्रैव ।

पूर्वोक्तं पङ्कजं कृत्वा कुम्भं संस्थाप्य पूर्ववत् ।
क्वाथेन पूरयेन्मन्त्री यथावत् क्षीरशाखिनाम् ॥
अष्टगन्धं विलोड्यास्मिन् नवरत्नसमन्विते ।
आवाह्य पूजयेद्देवीं मातृकामुक्तमार्गतः ॥
सहस्रं साधितैस्तोयैरभिषिञ्चेत् प्रियं नरम् ।
भानुवारे शुभे लग्ने ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥
गुरवे दक्षिणां दद्याद्भक्तियुक्तः स्वशक्तितः ।
रक्षाकरं विशेषेण कृत्वा द्रोहोपशान्तिदम् ॥
ऐश्वर्यजननं पुंसां सर्वसौभाग्यसिद्धिदम् ।
अभिषेकमिमं प्राहुर्विश्वसंमोहनं परम्—इति ॥

देवीं मातृकासरस्वतीम् ।

अभिषिञ्च्येति । अभिषेकस्तु विलोममातृकावर्णैः कार्यः ।

अभिषिञ्चेद्विलोमेन साध्यन्तं दत्तदक्षिणम् ।

इत्यभिषेकान्तरे तत्रैवोक्तत्वात् ।

अथ नवरत्नमुद्रा तत्रैव ।

विभजेन्मातृकां मन्त्री नववर्गान् यथाक्रमात् ।
अष्टावष्टौ स्वराः स्पर्शाः पञ्चशो व्यापका अपि ॥
नववर्गाः समुत्पन्नाः नवरत्नेश्वरग्रहाः ।
अर्केन्दुरक्तजगुरुभृगुमन्दाहिकेतवः ॥
माणिक्यं मौक्तिकं चारु विद्रुमं गारुडं पुनः ।
पुष्परागं लसद्वज्रं नीलं गोमेदकं शुभम् ॥
वैदूर्यं नवरत्नानि मुद्रां तैः कल्पयेच्छुभाम् ।
जपहोमादिकं सर्वं कुर्यात् पूर्वोक्तवर्त्मना ॥
यो मुद्रां धारयेदेनां तस्य स्युर्वशगा ग्रहाः ।
वहते तस्य सौभाग्यं लक्ष्मीरप्यहता भवेत् ॥
कृत्या द्रोहा विनश्यन्ति नश्यन्ति सकलापदः ।
रक्षोभूतपिशाचाद्या नेक्षन्ते तं भयाकुलाः ॥
उपर्युपरि वर्धन्ते धनरत्नादिसम्पदः ।

इति नवरत्नमुद्रा ।

अथ षोढान्यासपुरश्चरणं तन्त्रान्तरे ।

देवीभावसमायुक्तः षोढान्यासपरो भवेत् ।
दशविद्याविधौ सा च दशधा भिन्नभिन्नतः ॥
प्रत्येकं षडृषिं तं तं तद्ध्यानं च समाचरेत् ।
ऋषिच्छन्दादिकं यत्र कीर्त्तितं परमेश्वरि ॥
तदेव तत्र गदितमनुक्ते मूलदेववत् ।
ध्यानं छन्दादिकं स्तोत्रं देवीवत् सर्वमेव तु ॥

अयुतं च पुरश्चर्या न्यासस्तत्क्रमयोगतः ।

इति षोढान्यासपुरश्चरणम् ।

अथ सहस्रनामस्तवकवचानां पुरश्चरणं तत्रैव ।

ईश्वर उवाच ।

सहस्रनामस्तोत्रेषु कवचेष्वपि पार्वति ।
कवचादौ तु या प्रोक्ता सा वै कार्या पुरस्क्रिया ॥
यत्रानुक्ता पुरश्चर्या तत्र किं वा विधीयते ।
अयुतं तु पुरश्चर्या स्तोत्रमात्रे प्रकीर्त्तिता ॥
सहस्रनामकवचे पुरश्चर्या त्वियं मता ।
एवं पुरस्क्रियां कृत्वा दशांशं हवनादिकम् ॥
तर्पणं मार्जनं देवि कुत्र चित् परिकीर्त्तितम् ।
महाकालमते प्रोक्तं तत्रस्थं चेत् समाचरेत् ॥
विप्रसंतोषणेनैव सर्वं सिद्ध्यति पार्वति ।
हवनं तु तथा कार्यं पुरश्चर्यादिकं भवेत् ॥
सहस्रनामरूपं वै कीदृशं परमेश्वरि ।
तथा च कवचं देवि किंरूपं परिकीर्त्तितम् ॥
शिवदेव्योस्तु संवादो ब्रह्मरन्ध्रं प्रकीर्त्तितम् ।
अन्ये श्लोकाः केशतुल्या ऋषिः शिर उदीरितम् ॥
छन्दो मुखं भवेद्देवि देवता हृदयं भवेत् ।
बीजं गुह्यमिति प्रोक्तं शक्तिं तु पदगां विदुः ॥
सर्वाङ्गं कीलकं देवि ह्यर्थवादः प्रकीर्त्तितः ।
स्तोत्रमध्ये स्थितं यद्यत् तत् सर्वं स्तोत्ररूपकम् ॥
एवं च देवदेवेशि स्तोत्ररूपं प्रकीर्त्तितम् ।
तथैव कवचं देवि ज्ञात्वा पाठं पठेत् प्रिये ॥

अङ्गहीने भवेन्नाशः सर्वथा परमेश्वरि ।
फलस्तुत्यादिकं देवि अङ्गमित्यभिधीयते ॥
आद्योपान्तं विना देवि फलमर्धं प्रकीर्त्तितम् ।
अत्रार्थे प्रत्ययो देवि षडङ्गाद्या यथा स्मृताः ॥
हवनं कवचादीनां श्लोकान्ते विहितं च वा ।
आद्योपान्तं पठित्वा तु पश्चात् तु हवनं मतम् ॥
आदौ पूर्णं तु संपठ्य तथैवान्ते महेश्वरि ।
मध्ये नामानि पाद्यानि पुरश्चर्या प्रकीर्त्तिता ॥
श्लोकान्ते हवनं प्रोक्तं श्लोकान्ते मार्जनादिकम् ।
तत्र स्तोत्रोक्तविधिना पुरश्चर्यादिकं चरेत् ॥
स्तोत्रमावर्त्य संपूर्णं तदन्ते गणानां चरेत् ।
संपूर्णहोमयोगोऽयं कथितस्ते प्रियंवदे ॥
सारूप्यं कवचाख्यं च सायुज्यं स्तोत्रमीरितम् ।
सान्निध्यं नामसाहस्रं त्रितयं परिकीर्त्तितम् ॥
कवचं कवचरूपं स्यात् स्तोत्रं सहचरो भवेत् ।
सहस्रनामस्तोत्रं तु पूजास्थाने प्रकीर्त्तितम् ॥
पूजा दुर्गास्वरूपा स्याद्बलिदानं तु मारणम् ।
मन्त्रो राजा पुरश्चर्या राज्यसंपत्तिरीरिता ॥
संपत्त्या तु विना राजा न शोभति महेश्वरि ।
संपत्तिमूलमेतद्धि सर्वमेव प्रकीर्त्तितम् ॥
होमो मन्त्वः इति प्रोक्तः पर्जन्यास्त्वं तु तर्पणम् ।
जलं दुर्गस्वरूपं वै त्वभिषेकः प्रकीर्त्तितः ॥
ब्राह्मणानां भोजनं तु दुष्टसैन्यप्रभक्षणम् ।

देवतागुरुविद्यैक्यं त्वात्मैक्यं परिभाव्य च ॥
सर्वसिद्धीश्वरो भूत्वा त्रैलोक्याधिपतिर्भवेत् ।
यथा च राजराज्यादौ शत्रुसैन्यभयं भवेत् ॥
सिद्धिराज्ये महादेवि तथैव परिकीर्त्तितम् ।
दुर्गयन्त्रादिकं देवि देशराज्ये यथा मतम् ॥
तथैव सिद्धिराज्यस्य पुरश्चर्यादिकं मतम् ।
मन्त्रो राजा गुरुर्मन्त्री गणेशा द्वारपालकाः ॥
साधनं शवमुण्डस्य सिंहासनमितीरितम् ।
साधकेन तथा कार्यं येन सर्वं तु सिध्यति ॥
नैमित्तिकं च काम्यं च हयद्विरदकौ मतौ ।
होमधूपः पताका स्याज्जयस्तु सिद्धभूमिका ॥
सिद्धिराजाधिपे देवि किं न सिद्ध्यति भूतले ।
षोढान्यासादिकं सेना देवता राज्यदायिका ॥
यन्त्रं तु वज्रदुर्गं तु जीवचक्रं त्वभेदकम् ।
कवचादि पुरश्चर्या प्रोक्ता किं श्रोतुमिच्छसि ॥

इति स्तवकवचसहस्रनामपुरश्चरणम् ।

अनुक्तपुरश्चरणानां स्तवकवचादीनां पुरश्चरणमेतत् । उक्तपुरश्चरणानां तु तेषां कल्पोक्तमेव तत् कार्यम् ।

अथ कर्पूरस्तवपुरश्चरणं (वीरतन्त्रे)

देव्युवाच ।

कर्पूराख्यमिदं स्तोत्रं यदुक्तं भवता पुरा ।
षट्कर्मसाधनं तस्य प्रयोगं वद शङ्कर ॥

श्रीशिव उवाच ।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कर्पूरस्तवसाधनम् ।

सकृत् कृतेऽपि देवेशि काली तुष्टा भवेत् सदा ॥
शनिभौमदिने देवि स्नात्वा प्रयतमानसः ।
संपूज्य कालिकां देवीं सङ्कल्पं सम्यगाचरेत् ॥
कृत्वा षोढादिकं देवि पठेत् स्तोत्रमनुत्तमम् ।
अयुतैकप्रमाणेन तद्दशांशं हुनेत् सुधीः ॥
तर्पणं चाभिषेकं च ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः ।
पश्चात् स्वकार्यसिद्ध्यर्थं प्रयोगानाचरेत् तथा ॥
राज्ञो भये समुत्पन्ने दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे ।
त्रासोत्पन्ने महेशानि रोगशोकभये तथा ॥
पठेत् स्तोत्रं महाकाल्याः सर्वशान्तिं प्रयच्छति ।
कुमारीपूजनं चान्ते कर्त्तव्यं सुसमाहितः ॥
एवं कृते महेशानि सम्यक् सिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ।

इति कर्पूरस्तवपुरश्चरणम् ।

अथ सप्तशतीस्तवविधानम् ।

(मुक्तावल्याम्)

सप्तशत्या विधानं तु शृणु वक्ष्यामि यत्नतः ।
यज्ज्ञात्वा साधकश्रेष्ठः सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥

(मेरुतन्त्रे)

सप्तशत्यास्तु सकलं तत्त्वं वेद्म्यहमेव हि ।
पादोनं श्रीहरिर्वेत्ति वेत्त्यर्धं तु प्रजापतिः ॥
व्यासस्तुर्यांशकं वेत्ति कोट्यंशमितरे जनाः ।

(वाराहीतन्त्रे)

ऋषिच्छन्दादिकं न्यस्य पठेत् स्तोत्रं विचक्षणः ।

ऋष्यादिन्यास उक्तो (मेरुतन्त्रे)

सप्तशत्याश्चरित्रे तु प्रथमे पद्मभूर्मुनिः ।

छन्दो गायत्रमुदितं महाकाली तु देवता ॥
वाग्बीजं पावकस्तत्त्वं धर्मार्थे विनियोजनम् ।
मध्यमस्य चरित्रस्य मुनिर्विष्णुरुदाहृतः ॥
उष्णिक् छन्दो महालक्ष्मीर्देवता बीजमद्रिजा ।
वायुस्तत्त्वं धनप्राप्त्यै विनियोग उदाहृतः ॥
उत्तरस्य चरित्रस्य मुनिः शङ्कर उच्यते ।
महासरस्वती देवी त्रिष्टूप् छन्द उदाहृतम् ॥
कामो बीजं रविस्तत्त्वं कामाप्त्यै विनियोजनम् ।

तन्त्रान्तरे ।

नवार्णमन्त्रवर्णैस्तु षडङ्गन्यासमाचरेत् ।

देवतात्रयध्यानानि ( दुर्गाप्रकरणे ) प्रोक्तानि ।

अथ पाठक्रमो ( वाराहीतन्त्रे )

आधारे स्थापयित्वा तु पुस्तकं वाचयेत् ततः ।
हस्तसंस्थापनाद्देवि भवेदर्धफलं यतः ॥
यावन्न पूर्यतेऽध्यायस्तावन्न विरमेत् पठन् ।
यदि प्रमादादध्याये विरामो भवति प्रिये ॥
पुनरध्यायमारभ्य पठेत् सर्वं मुहुर्मुहुः ।
अनुक्रमात् पठेद्देवि शिरःकम्पादिकं त्यजेत् ॥

( महाकालसंहितायाम् )

ब्राह्मणान् वरयित्वैवं वस्त्रालङ्करणासनैः ।
विदध्यात् कामनोल्लेखं पूजां शक्त्या च पुस्तके ॥
शनैः पठेत् पाठकोऽपि वर्णोच्चारणपूर्वकम् ।
सुव्यक्तं नापि विश्लिष्टं न शिरश्चारगीवत् ॥
तनुमान्दोलयन्नापि न हसन्न रुदन् व्रजन् ।

नाश्नन्नान्यैरालपँश्च न मध्ये छिन्नवत् तथा ॥
आचान्तः कृतशौचश्च पदोरुद्गमनीयवान् ।
एतेन विधिनाऽधीते तुष्यते जगदम्बिका ॥
यथोक्तफलदात्री च भवति प्राणवल्लभे ।

( वाराहीतन्त्रे )

प्रणवं चादितो दत्वा स्तोत्रं वा संहितां पठेत् ।
अन्ते च प्रणवं दद्यादित्युवाचादिपूरुषः ॥

तथा ।

स्वयं च लिखितं यच्च शूद्रेण लिखितं भवेत् ।
अब्राह्मणेन लिखितं तच्चापि विफलं भवेत् ॥
स्तोत्रे न दृश्यते यत्र प्रणवं तत्र विन्यसेत् ।
सर्वत्र पाठे विज्ञेयस्त्वन्यथा विफलं भवेत् ॥

( देवीपुराणे )

वाचकं पूजयित्वा तु यथाविभवविस्तरैः ।
वाचयीत ततो राजन् देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ॥
तदन्ते शान्तिशब्दस्तु जनस्य सनृपस्य च ।
अनेन विधिना राजन् यः पठेच्छृणुयादपि ॥
चिन्तयेद्वाचयेद्वाऽपि तस्य पुण्यफलं शृणु ।
वाजपेयसहस्रस्य अश्वमेधशतस्य च ॥
यत् फलं लभते तात तत् फलं शतधा भवेत्–इत्यादि ।

( मरीचिकल्पे )

रात्रिसूक्तं जपेदादौ मध्ये सप्तशतीस्तवम् ।
प्रान्ते तु जपनीयं वै देवीसूक्तमिति क्रमः ॥
एवं संपुटितं स्तोत्रं सर्वकामार्थसिद्धये ।

अथ रात्रिसूक्तं-च ।

**त्वं स्वाहा त्वं स्वधा**-इत्यादि प्रथमचरित्रस्थस्तुतिरूपं देवीसूक्तम् ।

**नमो देव्यै**-इत्यादि तृतीयचरित्रस्थस्तुतिरूपमिति नागोजिभट्टादयः ।

अन्ये तु सूक्तद्वयं वैदिकमेवेत्याहुः ।

( मेरुतन्त्रे )

मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठेत् ।
पुटितं मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वाञ्छितम् ॥

मूलमन्त्रस्तु दुर्गाप्रकरणोक्तो नवार्णः ।

अथ पुरश्चरणं ( मरीचिकल्पे )

कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशीम् ।
वृद्ध्यैकोत्तरया जाप्यं पूर्वसंपुटितं तु तत् ॥
एवं देवि मया प्रोक्तः पौरश्चरणिकः क्रमः ।
तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसैः ॥
*रात्रिसूक्तं प्रति-ऋचं तथा †देव्यास्तु सूक्तकम् ।

प्रतिश्लोकेनेति । तस्य ( कात्यायनीतन्त्रो-)क्तमन्त्रविभागेन । तदज्ञाने तु श्लोकेनैव होमः कार्य इति साम्प्रदायिकाः ।

नवरात्रे प्रकारान्तरेण पुरश्चरमुक्तं तत्रैव ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि नवरात्रविधानकम् ।
जपेदेकोत्तरां वृद्धिं दिनानि नवसंख्यया ॥
नवाक्षरीविधानेन संपूज्याथ विचक्षणः ।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं प्रत्येकं च यथाविधि ॥
हुत्वा दशांशतो होमं तत्र सिद्धिमवाप्नुयात् ।

इति पुरश्चरणम् ।

अथ प्रसङ्गाच्छतचण्डीविधिर्लिख्यते ।

तथा च ( मेरुतन्त्रे )

शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ।

---

* रात्रिं प्रपद्य-इत्यादि रात्रिसूक्तम् । † अहं रुद्र-इत्यादि देवीसूक्तम् ।

नृपोपद्रवमापन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ॥
अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ।
सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते ॥
रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्रसमृद्धयः ।
शङ्करस्य भवान्या वा प्रसादनिकटे शुभम् ॥
मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात् सध्वजतोरणम् ।
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ॥
स्नात्वा नित्यकृतिं कृत्वा योजयेद्दशवाडवान् ।
जितेन्द्रियान् सदाचारान् *कुलीनान् सत्यवादिनः ॥
व्युत्पन्नाँश्चण्डिकापाठे रतान् लज्जादयावतः ।
मधुपर्कविधानेन वस्त्रस्वर्णादिदानतः ॥
जपार्थमासनं मालां दद्यात् तेभ्योऽपि भोजनम् ।
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ॥
भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ।
मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ॥
नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं †क्वचित् ।

वाडवा विप्राः ।

अन्न च ।

पञ्चभिः सप्तभिर्वाऽपि नवैकादशभिस्तथा ।
अदीर्घदिवसे क्षिप्रं विदध्याच्चण्डिकामखम् ॥
अयुग्मब्राह्मणैः कार्यं शतावृत्तं सुसिद्धये ।
त्रिपञ्चसप्तनवभिर्दिनैः पक्षेण वा पुनः ॥
देवीमाहात्म्यपाठं तु युगैर्विप्रैः कृतं च यत् ।

---

* कृतज्ञान् इति २ पु० पा० ।  † पृथक् इति ४ पु० पा० ।

निष्फलं च भवेत् सर्वं भूतिनाशं च प्राप्नुयात् ॥

इति यद्वचनद्वयं क्वोऽडतन्त्रनाम्ना पठ्यते तत् तु निर्मूलम् । तन्त्रानुपलम्भादनेकतन्त्रविरोधाच्च ।

तथा ।

यजमानः पूजयेच्च कन्यानां दशकं शुभम् ।
द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ॥

तथा ।

विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥

द्विवर्षादीनां प्रत्येकं नामानि ।

द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्त्तिर्हायनत्रिका ।
चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥
षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायना ।
अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद्दुर्गा तु नवहायना ॥
शुभदा दशवर्षोक्ता ता मन्त्रैः परिपूजयेत् ।
एकाब्दायाः प्रीत्यभावो रुद्राब्दा तु विवर्जिता ॥
मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ॥
कुमारिकादिकन्यानां पूजामन्त्रान् ब्रवेऽधुना ।
जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ॥
पूजां गृहाण कौमारि जगन्मात्रे नमोऽस्तु ते ।
त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ॥
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्त्तिं पूजयाम्यहम् ।
कलात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ॥

कल्याणजननीं नित्यां कल्याणीं पूजयाम्यहम्।
अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम्॥
अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम्।
कामचारीं शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम्॥
कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम्।
चण्डबीजां चण्डमयीं चण्डमुण्डप्रभञ्जनीम्॥
पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम्।
सदानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम्॥
सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम्।
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःखविनाशिनीम्॥
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गतिनाशिनीम्।
सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम्॥
सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम्।
एतैर्मन्त्रैर्लक्षणाढ्यां तां तां कन्यां समर्चयेत्॥
गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्यभोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि।
वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले॥
घटं संस्थाप्य विधिवत् तत्रावाह्यार्चयेच्छिवाम्।
तदग्रे कन्यकाश्चापि भोजयेद्ब्राह्मणानपि॥
उपचारैश्च विविधैः पूर्वोक्तावरणान्यपि।
एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चहोमान् समाचरेत्॥

एतेन प्रथमेऽह्नि प्रत्येकमेकैकावृत्तिः। द्वितीये द्वे द्वे। तृतीये तिस्रस्तिस्रः। चतुर्थे चतस्रश्चतस्र इत्युक्तं भवति।

तदुक्तं (रुद्रयामले)

एकं द्वे त्रीणि चत्वारि जपेद्दिनचतुष्टये।

पञ्चमे दिवसे प्रातर्होमं कुर्याद्विधानतः—इति ॥

अथ ब्राह्मणहोमद्रव्याण्युक्तानि ( मेरुतन्त्रे )

पायसान्नैस्तु मध्वक्तैर्द्राक्षारम्भाफलैरपि ।
मातुलुङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलैः पुरैस्तिलैः ॥
जातीफलैराम्रफलै रम्यैर्मधुरवस्तुभिः ।
सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिश्लोकं हुतं चरेत् ॥
अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ।
होमविधौ यो विशेषः स चाग्रे वक्ष्यते मया ॥
कृत्वाऽऽवरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ।
कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग्देवमग्निं विसृज्य च ॥
अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः ।

अभिषेकमन्त्रास्तु ।

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीम्—इत्यादि ।
देव्या यया ततमिदम्—इत्यादि ।
नमो देव्यै महादेव्यै—इत्यादि ।
देवि प्रपन्नार्त्तिहरे प्रसीद—इति चत्वारः श्लोकाः ।
निष्कं सुवर्णमथ वा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ।

( मारीचिकल्पे तु )

पञ्चस्वर्णाः शतावृत्ते पक्षावृत्ते तु तत्त्रयम् ।
पञ्चावृत्ते स्वर्णमेकं त्रिरावृत्ते तदर्धकम् ॥
एकावृत्ते पादमेकं दद्याद्वा शक्तितो बुधः—इत्युक्तम् ।

( कात्यायनीतन्त्रे )

एकैकं दशविप्रेभ्यो दद्याद्गोमिथुनं समम् ।
निष्कत्रयसमायुक्तं वस्त्रालङ्कारभूषितम् ॥

( मेरुतन्त्रे )

भोजयेच्चत्र पृथग्विप्रान् भक्ष्यभोज्यैः पृथग्विधैः ।
तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्वा गृह्णीयादाशिषस्तथा ॥
एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।
राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्नं लभेत च ॥

( कात्यायनीतन्त्रे )

यद्यत् कार्यं समुद्दिश्य क्रियते शतचण्डिका ।
तत् तत् तस्य महालक्ष्मीः सत्यमाशु प्रयच्छति ॥

अथ सहस्रचण्डीविधानमुक्तं ( मेरौ )

एतद्दशगुणं कुर्याच्चण्डीसाहस्रजं विधिम् ।
विद्यावतः सदाचारान् ब्राह्मणान् वृणुयाच्छतम् ॥
प्रत्यहं चण्डिकापाठान् विदध्युस्ते दशामितान् ।
अयुतं प्रजपेयुस्ते प्रत्येकं नववर्णकम् ॥
पूर्वोक्ताः कन्यकाः पूज्याः पूर्वमन्त्रैः शतं शुभाः ।
एवं दशाहं संपाद्य होमं कुर्युः प्रयत्नतः ॥
सप्तशत्याः शतावृत्त्यां प्रतिश्लोकं विधानतः ।
लक्षसंख्यं नवार्णं च पूर्वोक्तैर्द्रव्यसंचयैः ॥
होतृभ्यो दक्षिणां दत्वा पूर्वोक्तान् भोजयेद्द्विजान् ।
सहस्रसंमितान् साधून् देव्याराधनतत्परान् ॥
एवं सहस्रसंख्याते कृते चण्डीविधौ नृणाम् ।
सिद्ध्यत्यभीप्सितं सर्वं दुःखौघश्च विनश्यति ॥
मारीदुर्भगरोगाद्या नश्यन्ति व्यसनोच्चयाः ।

( रुद्रयामले )

राज्यभ्रंशे महोत्पाते जनमारे महाभये

गजमारेऽश्वमारे च परचक्रभये तथा ॥
इत्यादिविविधे दुःखे क्षयरोगादिजे भये ।
सहस्रचण्डिकापाठं कुर्याद्वा कारयेत् तथा ॥

( मेरुतन्त्रे )

नेमं विधिं वदेद्दुष्टे खले चौरे गुरुद्रुहि ।
साधौ जितेन्द्रिये दान्ते वदेद्विधिमिमं परम् ॥
एवं सा चण्डिका तुष्टा वक्तॄन् श्रोतॄन् प्ररक्षति ।

अथ होमविधिः ।

चतुरस्रे समे कुण्डे समन्ताद्धस्तमात्रके ।
एकावरणसंयुक्ते योनिमण्डलमण्डिते ॥
दशांशविधिना होममुक्तहव्येन साधयेत् ।
निरयचण्ड्यां नवचण्ड्यां कुण्डमेवंविधं स्मृतम् ॥
एतद्द्विगुणितं कुण्डं शतचण्ड्यां प्रकीर्त्तितम् ।
संस्कारैरष्टभिः कुण्डं संस्कृत्याग्निं निधापयेत् ॥
कुण्डमध्ये भुवं दर्भैः परिमार्ज्य प्रलेपयेत् ।
प्रागग्राः स्रुवमूलेन रेखास्तिस्रः समुल्लिखेत् ॥
पांशुमुद्धृत्य रेखाणामभ्युक्षणमतः परम् ।
कुण्डस्य पूजनं षष्ठः सप्तमः सप्तमुद्रया ॥
अस्त्रावगुण्ठितं कुण्डे संस्कारश्चाष्टमः स्मृतः ।
अष्टमङ्गलनामानं कुण्डेऽग्निं सन्निधापयेत् ॥

अत्र सर्वत्र मायाबीजमन्त्रः ।

चण्डिकापाठसंपूर्णे ब्रह्माणं दक्षिणे द्विजम् ।
ततस्तदग्निमत् कुण्डं नववस्त्रेण भूषयेत् ॥
कुण्डस्योत्तरतः स्थाप्या प्रणीता वारिपूरिता ।

प्रणीतापात्रतः सर्वे स्थाप्याः पात्रगणाः क्रमात् ॥
आज्यस्थाली चरुस्थाली गव्यक्षीरसमन्विता ।
स्रुक्स्रुवौ च घृतं गव्यं तण्डुलाः कुशमूलकाः ॥
पालाशाः समिधस्तिस्रः पूर्णपात्रमतः परम् ।
सप्तद्वीपेश्वरीं ध्यात्वा गृहीत्वा कुशमूलकम् ॥
निःक्षिपेत् प्रोक्षणीपात्रे वारुणं बीजमुच्चरेत् ।
तेन दर्भसमूहेन शतसंख्येन चेश्वरि ॥
क्रमात् पात्राणि संप्रोक्षन् प्रोक्षणीपात्रवारिणा ।
आज्यपात्रे चरुस्थाल्यां निःक्षिपेद्घृततण्डुलम् ॥
यथाक्रमेण कर्त्तव्यं ततोऽधिश्रयणं तयोः ।
आदौ वै पायसं कार्यं पर्यग्निकरणं तयोः ॥
सव्यं पालाशकाष्ठेन त्रिभिर्दर्भैश्च सोज्ज्वलम् ।
स्रुवयोः स्थापनं कृत्वा दक्षिणे स्थापनं कृतम् ॥
उद्वास्य प्रथमं पूर्वादानीयाग्नेः प्रदक्षिणम् ।
कुण्डाचार्यान्तरे स्थाप्यं स्वबीजजपगौरवात् ॥

स्वबीजं त्वमृतबीजम् ।

अभिघार्य स्वबीजेन वायव्ये स्थापयेच्चरून् ।
तिष्ठन् पालाशसमिधो मौनी वैश्वानरे क्षिपेत् ॥
कुशमूलकयुक्ताभिः प्रोक्षिण्यद्भिः प्रदक्षिणम् ।
पर्युक्ष्याग्निं प्रणीतायां निःक्षिपेत् कुशमूलकम् ॥
निधाय दक्षिणं जानु भूमावग्निमुखं हुनेत् ।
अन्वारब्धस्त्रुवेणाज्यं निर्धूमे हव्यवाहने ॥
प्रजापतिं महाकालीं महालक्ष्मीं सरस्वतीम् ।

एतदग्निमुखं प्रोक्तं मायाबीजपुरस्सरम् ॥
संश्रवान् प्रोक्षणोपात्रे निःक्षिपेद्यज्ञसाधनान् ।
विदध्यात् कल्पितं होममुक्तेन हविषा शमी ॥

कल्पितं सङ्कल्पितमित्यर्थः ।

ततः स्विष्टकृतं दद्याद्धविषा स्वोज्ज्वलेऽनले ।

मायाबीजं ब्रह्माणीमाहेश्वरीकौमारीवैष्णवीनारसिंही–ऐन्द्री-चामुण्डायै विच्चे विष्टेते स्वाहा ।

एष प्रोक्तो महादेवीमन्त्रः स्विष्टकृदाहुतौ ।
आज्येन नवाहुतिकं मायाबीजादिनामभिः ॥

नन्दारक्तदन्तिकाशाकम्भरीदुर्गाभीमाभ्रामरीकालीशिवदूती-चामुण्डायै प्रजापतिभ्यः ।

गन्धपुष्पफलोपेतां कृत्वा यज्ञारिमकां श्रुचम् ।
ततः पूर्णाहुतिं दद्याद्घृतेनाच्छिन्नधारया ॥
नवाक्षरेण मन्त्रेण महालक्ष्मीपरायणः ।
ध्यात्वा यज्ञपुरोडाशममृतं देवदुर्लभम् ॥
प्रोक्षणीपात्रमध्यस्थान्मन्त्रेणाश्नाति संस्रवात् ।

यस्मात् प्राशस्तं संस्रवपुरोडाशं प्राश्नामि सुखपुण्यदम्–इति मन्त्रः ।

सलिलेन प्रणीतायास्तीर्थध्यानपरायणः ।
करोति मार्जनं दर्भैः शतेन श्लोकपाठतः ॥
याः शिवाः शक्तयो याश्च ताभिश्च सविता सह ।
याश्च याः सन्निधानस्थास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्–इति ॥
संस्रक्षोर्निखिलं विश्वं मुहुः शुक्रं प्रजापतेः ।
मातरः सर्वभूतानामापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥

अलक्ष्मीं मलरूपां याः सर्वभूतेषु संस्थिताम् ।
क्षालयन्ति जलस्पर्शादापो देव्यः पुनन्तु माम्—इति मन्त्रः ॥
अभिषिञ्चेदथात्मानं चतुर्भिश्चण्डिकास्तवैः ।
शूलेन पाहि नो देवीत्यादिश्लोकचतुष्टयम् ॥

ऋत्विक्कर्तृयजमानाभिषेके तु पूर्वोक्तश्लोकचतुष्टयमेव ।

दानं दद्याद्विधानेन हेमधेन्वम्बरादिकम् ।
सजपं होममावेद्य महालक्ष्मीं प्रणम्य च ॥
शूलेन पाहि नो देवीत्येतैः श्लोकैः प्रदक्षिणम् ।
विदध्यात् सुस्थिरो भूत्वा चण्डिकाध्यानतत्परः ॥

इत्येतैः-शूलेन—इत्यादिभिः तैरस्मान्रक्ष सर्वतः—इत्यन्तैरित्यर्थः ।

नमो देव्या इति श्लोकैः पञ्चभिर्ध्यानतत्परः ।
कृत्वा पञ्चनमस्कारानुपविश्यासने शुभे ॥
सर्वस्वरूपे इत्यादिषड्भिः श्लोकैः कृताञ्जलिः ।
प्रार्थयेज्जगतां धात्रीं प्रणतः सन् हृदीप्सितम् ॥
स्वशरीरे समारोप्य दद्यादस्यै विसर्जनम्-इति ।
अनेन विधिना यस्तु प्रकुर्याच्चण्डिकार्चनम् ॥
तस्य तुष्टा महालक्ष्मीः सर्वान् कामान् प्रयच्छति ।

इति होमविधिः ।

( प्रयोगसारे )

चण्डीपाठफलं राजन् शृणुष्व गदतो मम ।
एकावृत्त्यादिपाठानां प्रत्यहं पठतां नृणाम् ॥
सङ्कल्पपूर्वं सम्पूज्य न्यस्याङ्गेषु मनून् सकृत् ।
पश्चाद्बलिप्रदानेन फलमाप्नोति मानवः ॥
उपसर्गोपशान्त्यर्थं त्रिरावृत्तं पठेन्नरः ।

ग्रहदोषोपशान्त्यर्थं पञ्चावृत्तं वरानने ॥
महाभये समुत्पन्ने सप्तावृत्तमुदीरयेत् ।
नवावृत्त्या भवेच्छान्तिर्मुच्येत् प्राणार्त्तिजाड्ययात् ॥
राजवश्याय भूत्यै च रुद्रावृत्तमुदीरयेत् ।
अर्कावृत्त्या काम्यसिद्धिर्वैरिनाशश्च जायते ॥
मन्वावृत्त्या रिपुर्वश्यस्तथा स्त्रीवश्यतामियात् ।
सौख्यं पञ्चदशावृत्त्या श्रियं प्राप्नोति मानवः ॥
कलावृत्त्या पुत्रपौत्रधनधान्यागमं विदुः ।
राजभीतिविनाशाय वैरस्योच्चटनाय च ॥
कुर्यात् सप्तदशावृत्तं तथाऽष्टादशकं प्रिये ।
महार्णवविमोक्षाय विंशावृत्तं पठेन्नरः ॥
पञ्चविंशावर्त्तनाच्च भवेद्बन्धविमोक्षणम् ।
सङ्कटे समनुप्राप्ते दुश्चिकित्सामये तदा ॥
जातिध्वंसे कुलच्छेदे आयुषो नाश आगते ।
वैरिवृद्धौ व्याधिवृद्धौ धननाशे तथा क्षये ॥
तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवातिपातके ।
कुर्याद्यत्नाच्छतावृत्तं ततः सम्पद्यते शुभम् ॥
विपदस्तस्य नश्यन्ति अन्ते याति परां गतिम् ।
श्रियो वृद्धिः शतावृत्त्या राज्यवृद्धिस्तथा परा ॥
मनसा चिन्तितं देवि सिद्ध्येदष्टोत्तराच्छतात् ।
शताश्वमेधयज्ञानां फलं प्राप्नोति सुव्रते ॥
सहस्रावर्त्तनाल्लक्ष्मीरावृणोति स्वयं स्थिरा ।
भुक्त्वा मनोगतान् कामान् नरो मोक्षमवाप्नुयात् ॥

यथाऽश्वमेधः क्रतुषु देवानां च यथा हरिः।
स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशतीस्तवः॥
नातः परतरं स्तोत्रं किञ्चिदस्ति वरानने।
भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं पावनानां च पावनम्॥
अथ वा बहुनोक्तेन किमेतेन वरानने।
चण्डिकायाः शतावृत्त्या सर्वाः सिद्ध्यन्ति सिद्धयः॥

(मेरुतन्त्रे)

कलौ न चण्डीसदृशी सिद्धदा भुवनत्रये।
वामदक्षिणमार्गाभ्यामधिकारिफलप्रदा॥
तत्रादिमं चरित्रं तु रोगनाशाय योजयेत्।
उपसर्गविनाशाय मध्यमं योजयेद्बुधः॥
अन्त्यं विषमकामस्तु चरित्रं परिशीलयेत्।
चरित्रद्वयशीलस्य न वंशश्छिद्यते क्वचित्॥
पठेदाद्यन्तचरितं विपत्तिस्तस्य नश्यति।
अनाद्यं पठते यस्तु मारयेदचिराद्रिपून्॥
स्वार्थानुसारपद्यं च सप्तशत्यास्तु योजयेत्।
यस्तन्मन्त्रेण पुटितं तत्प्रस्ताराङ्कसंख्यया॥
पठेच्चण्डीं तथाऽऽद्यन्ते स कामस्तस्य सिद्ध्यति।
स्वशत्रून् दैत्यभावेन स्वमित्रान् देवताधिया॥
भावयन् योजयेच्चण्डीं त्रिसन्ध्यं माससमात्रकम्।
मृता वा मृतकल्पा वा शत्रवः स्युर्न संशयः॥
सितपक्षतिमारभ्य चाष्टम्यन्तमिषस्य यः।
जपेल्लक्षं मनुं होमं खाद्यैस्त्रिमधुराप्लुतैः॥

प्रत्यहं पूजयेद्देवीं चण्डीमाद्यन्तयोः पठेत् ।
विप्रान् गुरुं समाराध्य वाञ्छितं लभते द्रुतम् ॥

अथ (कात्यायनीतन्त्रो-)क्ताः कति चित् प्रयोगा लिख्यन्ते ।

प्रतिमन्त्रमाद्यन्तयोः प्रणवं—जपेन्मन्त्रसिद्धिः ।

सप्रणवव्याहृतित्रयमादावन्ते तु विलोमं तदित्येवं प्रतिश्लोकं कृत्वा शतावृत्तपाठेऽतिशीघ्रं सिद्धिः ।

प्रतिश्लोकमादौ जातवेदसे इति ऋचं पठेत् सर्वकामसिद्धिः ।

अपमृत्युवारणायादावन्ते च शतं त्र्यम्बकं जपेत् ।

प्रतिश्लोकं शरणागतदीनार्त्त—इति श्लोकं पठेत् सर्वकार्यसिद्धिः ।

प्रतिश्लोकं करोतु सा नः शुभ—इत्यर्धं पठेत् सर्वकामाप्तिः ।

स्वाभीष्टवरप्राप्त्यै एवं देव्या वरं लब्ध्वा—इति श्लोकं पठेत् ।

सर्वापन्निवारणाय प्रतिश्लोकं—दुर्गे स्मृता—इति पठेत् ।

अस्य केवलस्यापि श्लोकस्यापि कामानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः ।

सर्वाबाधा—इत्यस्य लक्षजपे श्लोकोक्तं फलम् ।

इत्थं यदा यदा—इति श्लोकस्य लक्षजपे महामारीशान्तिः ।

ततो वव्रे नृपो राज्य—इति मन्त्रस्य लक्षजपे पुनः स्वराज्यलाभः ।

हिनस्ति दैत्यतेजांसि—इत्यनेन सदीपबलिदाने घण्टाबन्धने च बालग्रहशान्तिः ।

आद्यावृत्तिमनुलोमेन पठित्वा ततो विपरीतक्रमेण पुनरनुलोमेन त्रिमावृत्तित्रय उक्तप्रकारेषु शीघ्रं सिद्धिर्भवति ।

सर्वापन्निवारणाय—दुर्गे स्मृता—इत्यर्धम् ।

ततो यदन्तिके यच्च दूरके—इत्यृचं तदन्ते—दारिद्र्यदुःख—इत्यर्धमेव कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः ।

मारणार्थम् एवमुक्त्वा समुत्पन्ना—इति प्रतिश्लोकं पठेत् । मारणोक्तावृत्तिभिः फलसिद्धिः ।

**ज्ञानिनामपि चेतांसि**—इति श्लोकत्रयमात्रेण सद्यो मोहनमित्यनुभवसिद्धम् ।

प्रतिमन्त्रं तच्छ्लोकपाठे त्ववश्यम् ।

**रोगानशेषा**—इति श्लोकस्य प्रतिश्लोकपाठे सकलरोगनाशः तन्मात्रजपेऽपि समं फलम् ।

**इत्युक्त्वा सा तदा देवी गम्भीरा**—इति श्लोकस्य प्रतिश्लोकपाठे यथा जपे वा विद्याप्राप्तिः वाग्वैकृतेर्नाशश्च ।

**भगवत्या कृतं सर्वम्**—इत्यादिद्वादशोत्तरशताक्षरो मन्त्रः सर्वकामदः सर्वापन्निवारणश्च ।

**देवि प्रपन्नार्त्तिहरे**—इति श्लोकस्य यथाकार्यं लक्षायुतसहस्रशतान्यमे जपे प्रतिश्लोकपाठे वा सर्वापन्निवृत्तिः सर्वकामाप्तिश्च ।

एषु प्रयोगेषु प्रतिश्लोकं दीपाग्रे केवलमेव वा नमस्कारकरणेऽतिशीघ्रं सिद्धिः । अत्र सर्वत्र प्रयोगे त्रयोदशपात्रेषु एकस्मिन्नेव पात्रे वा त्रयोदशदीपाः प्रदेयाः ।

प्रतिश्लोकं **कामबीज**—संपुटितस्यैकचत्वारिंशद्दिनं त्रिरावृत्तौ सर्वकामसिद्धिः ।

एकविंशतिदिनपर्यन्तमुक्तरीत्या प्रत्यहं दशावृत्तौ वशीकरणम् ।

**मायाबीज**—पुटितस्य **फट्पल्लव**—सहितस्य सप्तदिनपर्यंतं त्रयोदशावृत्तपठने उच्चाटनसिद्धिः ।

तादृशस्यैव दिनचतुष्टयमेकादशावृत्तौ सर्वोपद्रवनाशः ।

एकोनपञ्चाशद्दिनपर्यन्तं प्रतिश्लोकं **श्रीबीज**—संपुटितस्य पञ्चदशावृत्तौ लक्ष्मीप्राप्तिः ।

प्रतिश्लोकं **वाग्भवबीज**—संपुटितस्य शतावृत्त्या विद्याप्राप्तिः ।

अथ परार्थे प्रयोगे—

**ॐ पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः । घृतेन त्वं तन्ववर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ।**

इति वैदिकमन्त्रं प्रत्यध्यायं प्रत्यावृत्ति वा पठेत् ।

नवार्णमन्त्रपुटितप्रयोगस्तु कमानामात्रे कर्त्तव्यः ।

तदुक्तं ( वाराहीतन्त्रादौ )

**शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवाक्षरम् ।**

चण्डीसप्तशतीमध्ये संपुटोऽयमुदाहृतः ॥
सकामैः संपुटो जाप्यो निष्कामैः संपुटं विना ।
सर्वकामप्रसिद्ध्यर्थं नवार्णपुटितं जपेत्—इति ॥

अत्र नवार्णमन्त्रौ प्रसिद्धौ । तत्रैको दुर्गाप्रकरणे उक्तः ।

अन्यस्तु (वाराहीतन्त्रे)

वेदादिर्वाग्भवं चैव माया कामस्तथैव च ।
पृथ्वी रेफो वामनेत्रं नादविन्दुविभूषितम् ॥
माया कामो नमः पश्चान्मूलमन्त्र उदाहृतः ।

अस्य पुरश्चरणमपि तत्रैवोक्तम् ।

लक्षं जपेन्मूलमन्त्रं सर्वकामार्थसिद्धये—इति ।

(कात्यायनीतन्त्रे)

स्थितिक्रमो भुक्तिकामे मुक्तिकामे च संहृतिः ।
श्रीकामे पुष्टिकामे च सृष्टिक्रम उदाहृतः ॥

सृष्टिक्रमादयश्च तत्रैवोक्ताः ।

आदिमारभ्य प्रजपेत् सृष्टिक्रम इहोच्यते ।
जपेच्छक्रादिमारभ्य शुम्भदैत्यवधावधि ॥
आद्याच्छक्रादिपर्यन्तं स्थितिक्रम उदाहृतः ।
शेषमारभ्य आद्यन्तं संहारोऽयं क्रमो भवेत् ॥

(मेरुतन्त्रे) चरित्रत्रयप्रयोगसंख्यां यथाक्रममुक्त्वा—

एवं सप्तशतं चात्र प्रयोगाः परिकीर्त्तिताः ।
तस्मात् सप्तशतीत्येतत् प्रोक्तं व्यासेन धीमता ॥

(कात्यायनीतन्त्रे) तु सप्तशतहोममन्त्रा एवास्य सप्तशतीत्वव्यवहारप्रयोजका इत्युक्तम् ।

ते च मन्त्रास्तत्रैव ।

मार्कण्डेय—ऋषिप्रोक्तप्रथमश्लोकतः प्रिये ।
व्योमादिवर्णसम्भूतो द्वितीयस्वरसंयुतः ॥

व्योम हकारस्तस्यादिः सकारः । द्वितीयस्वर आकारः । तेन सा इति ।
तथा ।

नृपान्तं प्रवदेन्मन्त्राः सर्वे चाष्टादश प्रिये ।
वैश्योवाच *ततः श्लोका व्योमाद्याः पञ्च मन्त्रकाः ॥

व्योमाद्य आद्यो येषामिति मृगनयनावत् समासः ।

नृपस्योक्तिर्मान्तवर्णो द्वादशस्वरसंयुतः ।

मान्तवर्णो यकारः । स च द्वादशस्वरेण ऐकारेण युक्तः ।

सकारो बिन्दुसंयुक्तश्चान्ते स मनुरीदृशः ।
वैश्योवाच पुनर्देवि स्वरैकादश आदितः ॥

स्वरैकादश एकारः ।

वह्निबीजं बिन्दुयुक्तमन्ते स्यान्मनुपञ्चकम् ।

वह्निबीजं रमिति ।

मार्कण्डेय-ऋषिप्रोक्तं मन्त्रत्रयमुदाहृतम् ।
तादिवर्णं च भुवनस्वरयुग्वाहनं परम् ॥

भुवनस्वर औ । तद्युक्तं वाहनं वौ इति ।

राजोवाचेति षण्मन्त्रा भादितान्ताः शुभानने ।
अथोवाच ऋषिर्ज्ञानमस्तीत्यादि सुरेश्वरि ॥
सर्वेश्वरेश्वरी चान्ते मन्त्रा वै द्वादश स्फुटाः ।
राजोवाचेति भगवन्नादिरन्ते विदां वरम् ॥
मन्त्रत्रयमिदं ख्यातं तत ऋषिरुवाच ह ।
नित्यैव सा पदं चादौ प्रभुरन्तेऽष्टमन्त्रकाः ॥
ब्रह्मोवाच ततश्च त्वं स्वाहादिश्च महासुरौ ।
अन्ते पञ्चदशैते स्युर्मन्त्राः स्युः परमेश्वरि ॥
एवं स्तुतादि-ऋष्युक्तिवान्तमन्त्राश्च सप्त वै ।

* वैश्य उवाचेत्यत्र वैश्योवाचेति पाठस्तान्त्रिकः ।

ततो भगवदुक्तिश्च भवेतादिमन्तुद्वयम् ॥
वश्चितेति च ऋष्युक्तिर्मन्त्रौ द्वौ परमेश्वरि ।
ऋष्युक्तिश्च तथेत्यादि मन्त्रद्वयमुदाहृतम् ॥
सर्वे श्लोकास्त्विहाध्याये अष्टयुक् सप्ततिः क्रमात् ।
मध्ये चतुर्विंशतिका अर्धमन्त्राः प्रकीर्त्तिताः ॥
सर्वाश्चाहुतयो ज्ञेयाश्चतुरुत्तरकं शतम् ।
उवाचान्तास्तत्र बोध्याः मन्त्रा भुवनसंख्यकाः ॥

इति प्रथमचरित्रमन्त्रनिर्णयः ।

ईश्वर उवाच ।

द्वितीये ऋषिरुवाचेति नवषष्ट्याहुतिः क्रमात् ।
ततस्तृतीयेऽध्याये तु ऋषिरुवाचेति देशिकैः ॥
षट्त्रिंशच्च तथा मन्त्राः श्लोका ज्ञेया वरानने ।
देव्युवाचेति मन्त्रान्ते मन्त्रः श्लोको मतः प्रिये ॥
ऋषेरुक्तिः पुनः श्लोकाः पञ्च मन्त्राः सनातनाः ।
एवमाहुतयस्तत्र चत्वारिंशच्चतुर्युतम् ॥
चतुर्थे क्रमतो देवि ऋष्युक्तिः षट् च विंशतिः ।
पुनस्तथैव ऋष्युक्तिः श्लोकौ द्वौ मन्त्ररूपिणौ ॥
एवं स्तुतेति मन्त्रोऽयमतिगुह्यः शुभानने ।
देव्युवाचेति व्रियतां मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः ॥
देवा ऊचुस्ततश्चोक्त्वा भगवत्या कृतं वदेत् ।
मन्त्रोऽयं शतवर्णाढ्यो द्वादशोत्तरयुक् पुनः ॥
ततो-ऋषिरुवाचेति इति प्रसादितेति च ।
चतुःसंख्यास्तु ते श्लोका मन्त्रास्तावन्त एव हि ॥

श्लोकाश्चतुर्थेऽध्याये तु षट्त्रिंशत् परमेश्वरि ।
अर्धमन्त्रद्वयेनैव चत्वारिंशद्द्वियुक् पुनः ॥
एवं मध्यचरित्रस्य पञ्चाशच्च शतोत्तरम् ।
तथा पञ्चशतं मन्त्रा महालक्ष्म्या विभेदतः ॥

इति मध्यमचरित्रमन्त्रनिर्णयः ।

ऋषिरुवाच त्रिपुरा विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ।
षण्मन्त्राः श्लोकरूपास्ते देवा ऊचुस्ततः परम् ॥
नमो देव्यादितः श्लोकास्त्रिंशद्भिन्नमर्त्तिभिः ।
विष्णुमायादितो भ्रान्तिरूपान्ते त्रीणि षष्टियुक् ॥
अवतारपृथङ्मन्त्रास्तेषां त्रिषष्टिराहुतीः ।
चितिरूपेण मन्त्रेण आहुतित्रयमाचरेत् ॥
एवं मन्त्रा अशीतिस्ते ऋषिरुवाच इत्यथ ।
एवं स्तवादियुक्तानां त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥
मन्त्राः सप्तदशैते तु ऋष्युक्तिर्निशम्येति वै ।
इत्यादित्रितयैर्मन्त्रैः शुद्धभेदाः प्रकीर्त्तिताः ॥
अथ दूत उवाचेति देवि दैत्येश्वरः परम् ।
इत्यादिनवमन्त्राश्च पुना ऋषिरुवाच ह ॥
इत्युक्तेत्यादिमन्त्रेण एकेन च सरस्वती ।
देव्युवाचेति श्लोकास्तु चत्वारो मन्त्रभेदतः ॥
दूत उवाचेति पुनरवलिप्ताऽसि इत्यथ ।
मन्त्राश्चत्वारो विज्ञेया देव्युवाच ततः परम् ॥
एवमेतद्बली शुम्भो-स च युक्तं करोतु यत् ।
इति मन्त्रद्वयं श्लोका अर्धमन्त्राश्च ते नव ॥

एकोनत्रिंशच्च शतादधिका मन्त्ररूपकाः ।

इति पञ्चमोऽध्यायः ।

ऋषिरुवाचेत्याकर्णेति श्लोकाश्चत्वार ईरिताः ।
पुना ऋषिरुवाचेति तेनाज्ञप्तस्ततः परम् ॥
मन्त्रत्रयमिदं प्रोक्तं देव्युवाचेति वै तथा ।
दैत्येश्वरेण प्रहितो–एको मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ॥
ततश्च ऋषिरुवाच इत्युक्तः सोऽभ्यधावत ।
इत्यादिद्वादशश्लोकाः षष्ठेऽध्याये प्रकीर्त्तिताः ॥
चतुर्विंशतिभेदास्ता देवताहुतयः क्रमात् ।

इति षष्ठोऽध्यायः ।

ऋष्युक्तिराज्ञ–इत्यादित्रयोविंशतिमातरः ।
ऋषिरुवाच तावानीतौ मातृभेदद्वयं क्रमात् ॥
सप्तविंशत्यत्र देवि भवन्त्याहुतयः क्रमात् ।
अत्राध्यायद्वये देवि धूम्राक्षी तु प्रकीर्त्तिता ॥

इति सप्तमोऽध्यायः ।

ऋषिश्चण्डे च निहते इत्याध्यायावसानकम् ।
त्रिषष्ट्याहुतयः प्रोक्ता एका स्वर्धाहुतिर्मता ॥
रक्ताक्षी देवता अष्टौ महाशक्त्यः प्रकीर्त्तिताः ।

इत्यष्टमोऽध्यायः ।

राजा विचित्रमित्यादि श्लोकद्वयमुदाहृतम् ।
ऋषिश्चकार कोपं हि इत्यादिश्लोकरूपतः ॥
एकचत्वारिंशदिह आहुतिर्नवमे शुभे ।
देवता भैरवी तावच्छृणु गोप्यं वरानने ॥

इति नवमोऽध्यायः ।

ऋषिर्निशुम्भनिहतमित्यादिद्वयमन्त्रकम् ।
ततो देवीति मन्त्रौ द्वौ एकैवाहं मनूत्तमौ ॥
पुनर्देव्येकमन्त्रेण व्यक्तमन्त्रा उदीरिताः ।
ऋषिस्ततः प्रववृते सार्धद्वाविंशतिस्त्वयम् ॥
द्वात्रिंशन्मनवस्तत्र एको ह्यर्धमनुर्मतः ।
प्रथमं सिंहमासीना शूलपाशविधारिणी ॥
मुख्या चतुर्भुजा बाणचापहस्ता शुभेक्षणा ।

इति दशमोऽध्यायः ।

ऋषिः सुमेधा विख्यातः प्रोक्तो देव्या हते शुभे ।
चतुस्त्रिंशत् तथा श्लोका मन्त्रास्तत्संख्यकाश्च ते ॥
ततो देव्येकमन्त्रेण वरदाऽहं सुरेश्वरि ।
देवा ऊचुस्तथा सर्वबाधाप्रशमनं तथा ॥
श्लोकेनैकेन देवेशि देव्युवाच ततः परम् ।
वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्तेत्यादिश्लोकाश्चतुर्दश ॥
सार्धसर्वाहुतिर्देवि पञ्चाशत् पञ्चसंयुताः ।
वैष्णवी देवता ह्यत्र महागरुडवाहिनी ॥

इत्येकादशोऽध्यायः ।

देव्युवाचेति च तत एभिः स्तवैश्च मां सदा ।
दूरेत्यर्धेन सहिता अष्टाविंशतिरूपकाः ॥
ततश्च ऋषिरुवाच इत्युक्त्वा श्लोकमादितः ।
*ऊर्ध्वयुग्दशभिः श्लोकैर्मन्त्रास्तत्संख्यका मताः ॥
एवं तु द्वादशाध्याये एकचत्वारिंशदाहुतीः ।

इति द्वादशोऽध्यायः ।

---

*अर्धयुग्नवभिः इति २, ५ पु० पा० ।

ततस्त्रयोदशेऽध्याये ऋषिरुवाच इत्यथ ।
एतत् ते कथितं भूपेत्यादिसार्धत्रयं मनुः ॥

मनुचतुष्टयमित्यर्थः ।

मार्कण्डेय उवाचेति ततो वक्रे मनुद्वयम् ।
देव्युवाच पुनश्चैव स्वल्पश्लोकत्रयेण वै ॥
अर्धानामेव मन्त्रत्वाद्भवत्यत्र षडाहुतिः ।

षट्संख्याहुतिरित्यर्थः ।

ततो मार्कण्डेय उवाचेति दत्वा तयोरिति ।
द्वौ मन्त्रौ पुनरुच्चार्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥
एकोनत्रिंशत्संख्याकाऽऽहुतिरत्र विधीयते ।
एवं त्रयोदशाध्याये होमे तर्पणकर्मणि ॥
शतानि सप्तसंख्यानि तव प्रोक्तानि शैलजे ।
सकारादिनकारान्तो मनुः परमदुर्लभः ॥
स संप्रदायविधिना ज्ञातव्यो मम वल्लभे ।
अन्यथा विफलो मन्त्रः सत्यं सत्यं मयोदितः ॥

विधिनेति । अष्टम्यां वा चतुर्दश्यामिति कीलकेनेत्यर्थः । तत्र होमे स्वाहान्ता एते मन्त्राः पूजायां नमोऽन्ताः । तर्पणे तर्पयाम्यन्ताः ।

के चित् तन्मन्त्रं पठित्वा तत्तदध्यायदेवतायै स्वाहा—इत्येवम् ।

तत्तदध्यायहोमे तत्तदध्यायदेवतां तर्पयामि—इति तर्पणे ।

तत्तदध्यायदेवतायै नमः—इति पूजने इत्याहुः ।

एवं होमाशक्तौ ।

जयन्ती—मन्त्रेण नमो देव्या इति मन्त्रेण सर्वमङ्गल—इति मन्त्रेण वा होमपूजातर्पणानि ।

जुहुयात् स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः—इत्यपि (रहस्ये) ।

आदौ तु कवचं कृत्वा पश्चात् सप्तशतीं जपेत्—इत्यादिवचनात् ।

कवचपाठे क्रियमाणे तच्छ्लोकैराहुतयो न देयाः।

अन्धकश्च पुरा दैत्यो दुर्गाहोमपरायणः।
कवचाहुतिमन्त्रेण महेशेन निपातितः-इति तन्त्रान्तरवचनात्।
कवचं चात्र शूलेन पाहि नो देवि-इत्यादिश्लोकचतुष्टयरूपमिति केचित्।

तत्र (कात्यायनीतन्त्र-) विरुद्धे (कात्यायनीतन्त्रो-)क्तमन्त्रविभाग एवाभियुक्तैः स्पष्टीकृत्याभिदर्शितः।

तथा हि।

अष्टसप्तत्युत्तरं तु श्लोकानां शतपञ्चकम्।
प्रोक्तं सप्तशतीस्तोत्रे तत्सप्तशतसंख्यया॥
विभज्य जुहुयान्मन्त्रमिति कात्यायनीमतम्।
मार्कण्डेय उवाचैकः सावर्ण्याद्यास्ततः परम्॥
श्लोकमन्त्राः सप्तदश अर्धश्लोकात्मकस्ततः।
एकोनविंशदेवं स्युर्वैश्योक्तिर्विंशतिस्तथा॥
पुनरर्धं पुनः श्लोकं त्रयमर्धं पुनर्भवेत्।
पञ्चविंशतिसंख्या स्याद्राजा षड्विंशतिस्तथा॥
अर्धश्लोकात्मकं मन्त्रद्वयमर्धं पुनर्भवेत्।
एकोनत्रिंशदेवं तु मन्त्रसंख्याः प्रकीर्त्तिताः॥
पुनरर्धं पुनः श्लोकत्रयमर्धं पुनर्भवेत्।
मार्कण्डेयः पुनश्चार्धश्लोकः श्लोकात्मकः पुनः॥
अर्धश्लोकात्मको मन्त्रो राजार्धश्लोकमन्त्रकः।
मन्त्राश्चत्वारिंशदेव श्लोकमन्त्रचतुष्टयम्॥
पुनरर्धमृषिश्चार्धश्लोकमन्त्राः पुनर्दश।
पुनरर्धं पुना राजा एकोना षष्टिरुच्यते॥
पुनरर्धं पुनः श्लोकः पुनरर्धं पुना ऋषिः।

पुनरर्धं पुनः श्लोकाः षण्मन्त्राः पुनरर्धकाः ॥
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ।
इत्येव पाठो मन्त्राणामेकसप्ततिरुच्यते ॥
ब्रह्मार्धश्लोकमन्त्रोऽथ श्लोकमन्त्रास्त्रयोदश ।
अर्धश्लोकः पुनः श्लोक ऋषिः श्लोकास्तु पञ्च वै ॥
पुनरर्धं तु मन्त्राणां सपञ्चनवतिः स्मृताः ।
भगवानर्धमन्त्रौ द्वौ ऋषिः श्लोकार्धकं पुनः ॥
श्लोकः पुना ऋषिः श्लोकद्वयं मन्त्रद्वयं भवेत् ।
श्लोकानामष्टसप्तत्या चतुर्भिरधिकं शतम् ॥
अध्यायादावेव ऋषिरुवाचेति सकृन्मनुः ।
अष्टषष्टिमिताः श्लोकास्तावन्तो मनवो मताः ॥
एकोनसप्ततिः सर्वेऽध्याये मन्त्रा द्वितीयके ।
आदावृषिरुवाचैकं पञ्चविंशत् ततः परम् ॥
निहन्यमानाद्याः श्लोका मुखरागाकुलाक्षराः ।
इत्यन्ता देव्युवाचैको गर्ज गर्जेति चापरः ॥
श्लोको–ऋषिरुवाचेति पुनश्च श्लोकपञ्चकम् ।
चतुश्चत्वारिंशदेवं सर्वे मन्त्रास्तृतीयके ॥
आदावृषिरुवाचेति शक्राद्याः श्लोकमन्त्रकाः ।
षड्विंशास्तु ऋषिः श्लोकद्वयं देवी ततः परम् ॥
व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ।
इत्यर्धश्लोकमन्त्रोऽथ देवा उच्चुस्ततः परम् ॥
भगवत्या कृतं सर्वमित्यर्धश्लोकमन्त्रकः ।
यदयं नियताद्यं च श्लोकमन्त्रत्रयं भवेत् ॥

ऋषिश्लोकास्तु चत्वारो मनवः परिकीर्त्तिताः।
षट्त्रिंशच्छ्लोककेऽध्याये चत्वारिंशद्द्वयाधिकम्॥
षट्सप्ततिश्लोकयुक्तेऽध्याये मन्त्रास्तु पञ्चमे।
एकोनत्रिंशदधिकं शतं कात्यायनीमते॥
आदौ ऋषिरुवाचेति पुरा शुम्भादयश्च षट्।
श्लोकमन्त्रास्ततो देवा ऊचुश्चैवाष्टमो मनुः॥
नमो देव्यादिकाः श्लोकाः पञ्च मन्त्राः प्रकीर्त्तिताः।
त्रयोदशैव मन्त्रास्तु या देवीत्यादयोऽपि च॥
एकविंशतिकाः श्लोका भ्रान्त्यन्तास्तेषु मन्त्रकाः।
प्रतिश्लोके त्रयो मन्त्रा ज्ञेयास्ते च त्रिषष्टिकाः॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै इति प्रोक्तो विंशत्यक्षरको मनुः॥
नमस्तस्यै इति प्रोक्तो द्वितीयश्चतुरक्षरः।
अष्टाक्षरस्तृतीयोऽपि नमस्तस्यै नमो नमः॥
एवं द्वाविंशतिश्लोके ज्ञेयं मन्त्रत्रयं बुधैः।
पुनः श्लोकात्मको मन्त्रस्त्रिमन्त्रः श्लोककः पुनः॥
त्रयोविंशच्छ्लोककेषु मन्त्रा वै सप्तषष्टिकाः।
पूर्वैस्त्रयोदशैर्मन्त्रैः सहाशीतिरुदाहृता॥
स्तुता सुरैरिति श्लोकद्वयं चैव पुना ऋषिः।
पुनः सप्तदशश्लोका ऋषिः श्लोकत्रयं ततः॥
दूतश्चैव नव श्लोका ऋषिरेकोऽम्बिका ततः।

एक इत्यस्यैकश्लोकः इत्यर्थः।

चतुःश्लोकी पुनर्दूतश्चतुःश्लोकी पुनः शिवा।

श्लोकद्वयं मिलित्वा तु चत्वारिंशन्नवाधिकम् ॥
अशीत्याऽपि च संयोग एकोनत्रिंशताऽधिकम् ।
शतमेवं तु विज्ञेयमाहुतीनां च पञ्चमे ॥
विंशतिश्लोकसंयुक्ते षष्ठेऽध्याये प्रकीर्त्तिता ।
सर्वे श्लोका मन्त्ररूपा देव्ये काऽथ ऋषित्रयम् ॥
चतुर्विंशतिमन्त्राणामित्येवं परिकीर्त्तितम् ।
पञ्चविंशच्छ्लोकयुक्तेऽध्याये मन्त्रास्तु सप्तमे ॥
सर्वे मन्त्राः श्लोकरूपा ऋष्युवाचद्वयं ततः ।
सप्तविंशतिरेवं तु मन्त्रसंख्या प्रकीर्त्तिता ॥
सार्धैकषष्टिश्लोकाढ्येऽष्टमेऽध्याये प्रकीर्त्तिताः ।
एकषष्टिश्लोकमन्त्रा अन्तेऽर्धश्लोकमन्त्रकः ॥
आदावेक ऋषिश्चैव त्रिषष्टिर्मन्त्रसंततिः ।
एकोनचत्वारिंशद्भिः श्लोकैर्युक्ते समीरिताः ॥
अध्याये नवमे मन्त्रास्तावन्तोऽथ मनुद्वयम् ।
राजा ऋषिश्चेति चैकचत्वारिंशन्मनुस्त्वयम् ॥
सार्धसप्तान्वितैर्विंशच्छ्लोकैस्तु दशमेऽन्विते ।
सप्तविंशतिमन्त्रास्तु श्लोकरूपास्ततोऽन्तिमः ॥
अर्धश्लोकात्मको मन्त्र ऋष्युवाचद्वयं तथा ।
देव्युवाचद्वयं चैव द्वात्रिंशन्मन्त्रसंग्रहः ॥
श्लोकानां सार्धपञ्चाशज्ज्ञेयमेकादशे स्फुटम् ।
पञ्चाशच्छ्लोकमन्त्रास्तदन्तेऽर्धश्लोकमन्त्रकः ॥
शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि ।
एषोऽर्धमन्त्र इत्याहुः केचिदत्र विचक्षणाः ॥

देवीद्वयमृषिश्चैको देवा एकमितीरितम् ।
पञ्चाधिकं तु पञ्चाशन्मन्त्रा ज्ञेयाः परिस्फुटम् ॥
अष्टत्रिंशच्छ्लोकयुक्तेऽप्यध्याये द्वादशात्मके ।
चत्वारिंशच्च एकश्च मन्त्रास्तत्राहुतिद्वयम् ॥
अर्धश्लोकात्मकं श्लोकाः सप्तत्रिंशन्मिता ऋषिः ।
देव्युवाचेति चैवैकमेवं संख्या स्फुटोदिता ॥
त्रयोदशे सार्धसप्तदशश्लोकाः प्रकीर्त्तिताः ।
ऋषिरुवाचेत्यारभ्य भोगस्वर्गापवर्गदाः ॥
इत्यन्ताः पञ्चमन्त्रास्ते मार्कण्डेयस्ततः परम् ।
इति तस्य वचः श्रुत्वेत्यर्धमन्त्रः प्रकीर्त्तितः ॥
श्लोकमन्त्रास्ततो ज्ञेयाः पञ्चैवाथार्धमन्त्रकम् ।
देव्युवाचेति मन्त्रोऽयं ततः श्लोकस्तु मन्त्रकः ॥
मार्कण्डेयस्ततो मन्त्रः श्लोकौ मन्त्रद्वयं ततः ।
ततो देवीषडर्धानि सप्त मन्त्राः प्रकीर्त्तिताः ॥
मार्कण्डेयस्ततः पश्चाद्द्वयं मन्त्रद्वयं स्मृतम् ।
आवृत्त्या त्वधिको मन्त्रः सावर्णिर्भविता मनुः ॥
एकोनत्रिंशत्संख्याका मन्त्रा अत्र स्मृता बुधैः-इति

अथ प्रसङ्गात् प्रश्नविधिरुच्यते ( तन्त्रविधानमुक्तावली-)धृतवचनानि ।

त्रयोदशदलं पद्मं लिखित्वा सुमनोहरम् ।
एकाङ्कादिक्रमेणाङ्कैर्दलानि परिपूरयेत् ॥
प्रत्यध्याये श्लोकसंख्याः पृथग्लेख्याश्च पङ्क्तिशः ।
पूजयेत् पुस्तके दुर्गां नवर्णेन विधानवित् ॥
देवि दुर्गे नमस्तुभ्यं सर्वज्ञे सर्वदर्शिनि ।

सिद्धिकार्यस्य वा सिद्धिं सत्यं मन्त्रं प्रदर्शय ॥
एवं संप्रार्थ्य पुष्पं वा फलं वाऽक्षतमेव वा ।
कुमार्या वा शिशोर्हस्तादध्यायाङ्के निधापयेत् ॥
विदित्वा चैवमध्यायं तत्पद्याङ्के निधापयेत् ।
श्लोकं ज्ञात्वा ततो मन्त्री वाचयीत स्फुटाक्षरम् ॥
श्लोकस्यार्थानुसारेण ज्ञेयं विज्ञैः शुभाशुभम् ।
वरदानार्थकाः श्लोका देवीतुष्ट्यर्थकाश्च ये ॥
त्राणाभ्युपगमार्थाश्च भाविभव्यार्थकाश्च ये ।
देवोरसत्वाभिधेया ये श्लोकास्ते सिद्धिसूचकाः ॥
दैत्यानां संख्ययो यत्र देवीविक्रमवर्णनम् ।
अमर्षवर्णनं देव्या असुरेषु रणाजिरे ॥
एवंविधाश्च ये श्लोकाः संग्रामविजयप्रदाः ।
प्रार्थनार्थाश्च ये श्लोकाः स्तोत्ररूपास्तथैव च ॥
सूचयन्ति च ते सिद्धिं दीर्घकालविलम्बिनीम् ।
यदि स्यादुत्तरश्लोको वरदानार्थकस्तथा ॥
सिद्धिमीदृगपि श्लोकस्तुर्णमेवाभिशंसति ।
आपदो वर्णनं तस्या वेदनं च सुपर्वणाम् ॥
भूभृद्विशोश्च संवादो वर्णनं विपदस्तयोः ।
दूतवाक्यं च दैत्यानां विक्रमस्य च वर्णनम् ॥
प्रयाणवर्णनं तेषां कार्यनाशस्य सूचकम् ।

आपद इति सुपर्वणामापदो वर्णनमित्यन्वयः । तस्या आपदो वेदनं ज्ञानं कथनमिति यावत् ।

स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि ।
विचरन्ति—इत्यादिश्लोकार्थः ।

केचिदिष्टमनिष्टं वा श्लोकानावेदयन्ति च ।
तादृशश्लोकलाभे तु पुनः प्रश्नं समाचरेत् ॥

इति सप्तशतीप्रकरणम् ।

अथ प्राणायामपुरश्चरणं तदुक्तं ( सिद्धान्तसंग्रहे )

अथातः संप्रवक्ष्यामि प्राणायामपुरस्क्रियाम् ।
बद्धपद्मासनो मन्त्री समकायशिरोऽधरः ॥
वशीकृतेन्द्रियग्रामो नाकुलः कम्पवर्जितः ।
मूलाधारेऽनाहते वा भ्रूमध्ये वा स्वपङ्कजे ॥
मन्त्रं ज्योतिर्मयं ध्यायेद्येनासौ प्राणसंयमः ।

प्राणसंयमः प्राणायामो येन मन्त्रेण कर्त्तव्य इत्यर्थः ।
तथा ।

तत्स्वरूपं शिवं ध्यायेत् पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
प्राणायामं चरेद्धीमान् पूरकादिकलक्षणम् ॥

शिवमिति प्रकृतदेवताभिप्रायेण ।
तथा ।

प्रातःकालं समारभ्य यावद्यामद्वयं भवेत् ।
हविष्यान्नैस्तथा नक्तं प्रकुर्याद्भोजनं मितम् ॥
न कुर्याद्योषितां स्पर्शं न पश्येत् पामरं जनम् ।
शुद्धभूमौ कुशास्तीर्णे शयीत विजितेन्द्रियः ॥
एवं लक्षमितं कुर्यात् प्राणायामं विचक्षणः ।
ततो होमादिकं कुर्यात् पुरश्चर्योक्तवर्त्मना ॥
भोजनं कारयेद्विप्रान् गुरुं संतोषयेत् तथा ।
एवं कृत्वा सर्वपापनिर्मुक्तः शुद्धविग्रहः ॥
मन्त्रसिद्धिमवाप्नोति योगसिद्धिं विशेषतः ।
अणिमाद्यष्टसिद्धीनामपि स्यादाश्रयस्तु सः ॥

यन्मन्त्रं साधयेन्मन्त्री स मन्त्रस्तस्य सिध्यति ।

इति प्राणायामपुरश्चरणम् ।

अथ पुरश्चरणव्यतिरिक्तेन मन्त्रसिद्धिप्रकारो (वीरतन्त्रे)

अथ सम्यक् प्रवक्ष्यामि गुरुसिद्धिपरम्पराम् ।
एवं ज्ञात्वा विशेषज्ञो गोपयेत् प्रीतये मम ॥
एतत्प्रकाशनाल्लोके महाहानिः पदे पदे ।
शिवशिखिशीतभानुं पञ्चमान्त्यस्वराढ्यं
द्वितयमिदमपूर्वं बीजमुग्रप्रभायाः ।
क्षणमपि रमणीनां मण्डलान्तर्विभाव्य
क्षपयति दुरदृष्टं वादिराड्जायते सः ॥

शिवो हकारः । शिखी वह्निस्तद्बीजं रेफः । सितभानुरनुस्वारः । पञ्चमान्त्यस्वर उकारस्तेन ह्रुमिति प्रणवादिवह्निजायान्तस्योग्रप्रभामन्त्रस्य द्वितीयं बीजमित्यर्थः ।

तथा ।

स जयति रिपुवर्गान् वादिराजान् विवादे
रमयति रमणीनां चित्तचौरश्चिरायुः ।
कवयति कविराजैरप्यदृष्टं सुकाव्यं
मधुमतिरपि ह्रेया किं पुनः सिद्धिसंघाः ॥
कुलयुवतिसुयोनौ मन्त्रवर्णान् विलिख्य
निखिलनिगमवर्णान् सुप्तदोषादिदुष्टान् ।
विदितगुरुकुलान्तर्बाह्यवर्त्मा विधिज्ञो
मधुपुटितपटीयान् भावयेच्छान्तचित्तः ॥
कुलपथमनुसन्ध्यातर्पणासक्तचित्त-
स्तव जननि जनो यस्तर्पयेत् तीर्थतोयैः ।
स किल सुरतपुष्पैर्गन्धमाल्यानुरूपै

रचितयुवतिवेशस्तद्धिया ध्यायते सः ॥
परिचरति समस्तैर्न्यासपूर्वैः प्रसिद्धैः
स्तवपरिकरजालैर्योनिचक्रे प्रपूज्य ।
सुविमलकुलजातां ह्रीघृणावर्जितां यः
स्वयमपि रचिताङ्गः क्षोभकृद्योगिनीनाम् ॥
पशुरिपुकुलचक्रे संस्पृशन्मध्यशाखं
सुरतरुसुरनाथः पापभ्रष्टसुवेशः ।
कुलपतिकुलनाथस्तद्द्वयं योजयित्वा
मनुपुटितविमृष्यं योजयेत् तद्बहिर्यः ॥
जननि तव कलानां को विदां कामरूपः
कुमतिरहितचित्तः संलिखेत् तान्त्रिधारे ।
विगतभयविवादध्वान्तजालः सुधांशु-
स्तव चरणतलान्तर्भृत्यजालैर्विधेयः ॥
परिकलितवपुस्तद्धर्मभिर्देवपूज्यैः
परिचरति स विज्ञो मोक्षचर्याधिया सः ।
मदनमदवधूनां बीजमुद्धृत्य शक्तिं
तदनु कठतबीजं लोकधात्रीं तदन्तः ॥
यदि जपति मदन्तभावमासाद्य सद्यः
सुरनगरगतिस्तैः सिद्धवर्गैः स पूज्यः ।
शिवभृगुमदपृथ्वीशक्तियुक्तं सुसिद्धो
हरिहरचतुरास्यस्वस्वभूतिप्रभूतम् ॥
परमवरदसंज्ञः क्षोभकृत् कामिनीना-
मधिपतिरपि वाचां श्रीपतिः सार्वभौमः ।

भृगुमदकथिताधः कामबीजं तदग्रे
भुवनभयविनाशः क्षोभिणीं योजयित्वा ॥
जपति यदि सकृद्वा चिन्त्यते वीरसिंहः
कुलयुवतिकुलान्तः क्षोभकृत् कामभावात् ।
मदनमदलताधः शक्तिबीजं नियोज्य
स्मरहरहरिरूपी कामरूपः कुबेरः ॥
रिपुकुलहरिणाक्षीलोचनाम्भोजविद्यु-
द्विपुलजननिषेकात् खण्डितान्तोग्रतापः ।
शिवभृगुमदमूलं लोभमूलं भजन्ति
यदि विविधगुरूणां वर्ममूलं विमृष्य ॥
निधिपतिरपि नाथो गीष्पतिर्भद्रनेता
यदि भवति तदेतन्मुख्यमुर्वीपतित्वम् ।
वरुणवलविवर्जं घ्राणमेकं विवर्जं
तदुपरि मृगचिह्नं द्वन्द्वमेतद्भवान्याः ॥
निखिलमुनिवराणां मोक्षदानैकदक्षः
सदसतसमधर्मा क्षेमकृन्मन्त्रराजः ।
शिवशमनययुक्तं बीजमेतद्भवान्या
अनलशिवसधर्माश्चादिराजं स्वतन्त्रम् ॥
तव समनययुक्तं बीजमेतद्भवान्या
द्वितयमपि विमानं वक्तुमीशो महेशः ।
किमिह कमलजन्मा जन्मधारासहस्रै-
रिति भजति नराणां मन्त्रराजं स्वभाग्यैः ॥
भवति जननि युष्मत्पादपद्मीयभक्त-

स्त्यजसि परपुमांसं नेदृशं क्वापि काले ।
न खलु वपुपुरघ्यं तस्य का चित् कदा चि-
न्निहितगुरुमुखाद्वा प्राप्य कस्मादकस्मात् ॥
स्मररिपुपुरपारे मोक्षनर्यास्वपारे
परमपदविलीनः सर्वसौभाग्यभोगैः ।
अनलपुरविभागे कालिकारन्ध्रबीजं
तदपि यदि विदध्याद्दीक्षितं दण्डवर्णम् ॥
नयनयुतलकारं मस्तके नामयुक्तं
तदनु विकटदंष्ट्रासोत्कटं बीजयुक्तम् ।
यदि जपति समस्तं गुह्यगुह्यातिगुह्यं
त्रिजगति किमिहास्ते क्लेशलभ्यं कथं चित् ॥
क्रमपन्वितमपूर्वं सर्वमेवानुबद्ध्यं
मनुरपरविभाव्यस्तस्य मध्यस्थरूपम् ।
भजति यदि चिदानन्दात्मधृक् केवलोऽसौ
विविधभुवनमुख्यः कौतुकी मानमुख्यः ॥
इति ते कथितं सर्वं रहस्यं परमाद्भुतम् ।
यथानुक्रमतो लोके किं न साध्यति योगिराट् ॥

अथ भैरवसाधनं ( मेरुतन्त्रे )

अथातः संप्रवक्ष्यामि नानाभैरवसाधनम् ।
श्मशाने ते तु तिष्ठन्ति काले काले पुरे पुरे ॥
नियमं क्व चिदेकं यो न त्यजेद्धर्मगर्भितम् ।
वाममार्गादिनिरतोऽप्यद्वेष्टेतरवर्त्मनाम् ॥
हीने गुरावपूर्णे वा साधने लोकभीतितः ।
स भवेद्भैरवो देवस्तस्य देशस्य शासकः ॥

तत्रत्यभूतवेतालाः सदा संसेवयन्ति तम् ।
स्वमार्गप्रच्युतानां स शासनं कुरुते सदा ॥
क्षीणकर्मणि तस्मिँश्च गते ग्रामो विलीयते ।
अन्यस्मिन् भैरवे जाते ग्रामो वसति निश्चितम् ॥
यदाम्नायो भैरवोऽसौ तच्छासनं तु तद्दिशि ।
तेन मार्गेण वशयेत् कार्यार्थं भैरवं तु तम् ॥
वाग्रमाकायमायाख्यास्तारो बीजं क्रमाद्भवेत् ।
पूर्वाद्यूर्ध्वान्तकानां तदाम्नायानां क्रमेण च ॥
आम्नायबीजं ग्रामस्य बीजं भ्राँ भैरवस्य च ।
ग्रामनाम ततः प्रोच्य पितृगेहे निवासिने ॥
ततस्तेषां मनुमिमं जपेद्दशसहस्रकम् ।
निशि श्मशाने च बलिं तदाम्नायोक्तवर्त्मना ॥
जपादौ च जपान्ते च नित्यं दद्यादनन्यधीः ।
वटुकोक्तं हुनेद्द्रव्यं तर्पणादि ततश्चरेत् ॥
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री भूतानां निग्रहक्षमः ।
तस्मिन् देशे भवेत् तस्य प्रत्यक्षीकरणं शृणु ॥
कृतनित्यक्रियः प्रातः सोपवासो जितेन्द्रियः ।
सायं सन्ध्यादिकं कृत्वा शान्तिपाठं विधाय च ॥
प्रगृहीत्वा च सामग्रीं सायं सोत्तरसाधकः ।
व्रजेच्छ्मशानसामग्रीं शृणु सुस्थिरमाषकान् ॥
अनङ्कुरान् जलतिलान् मुद्गाँस्तद्वन्मसूरिकान् ।
तथैव चणकान् भक्तं पायसान् पूपशष्कुलीः ॥
कन्यकाकर्त्तितं सूत्रं कुङ्कुमेन सुरञ्जितम् ।

अष्टौ वितस्तिदीर्घाश्च मुष्टिस्थूलाश्च खादिराः ॥
कीला एको हस्तमात्रं गन्धपुष्पादिकं तथा ।
बलिद्रव्यं च पूर्वोक्तं पूर्वाम्नाये समत्स्यकम् ॥
समांसं पश्चिमाम्नाये समद्यं चोत्तरे भवेत् ।
ग्राममध्ये श्मशाने च ऊर्ध्वाम्नाये सरक्तकम् ॥
यथायोग्यं च नैवेद्यं गच्छेच्च भयवर्जितः ।
पादप्रक्षालनं कृत्वा ततः स्मृत्वाऽस्य देवताम् ॥
बद्धाञ्जलिरिदं वाक्यं प्रवदेत् साधकोत्तमः ।
अत्र श्मशाने याः काश्चिद्देवता निवसन्ति हि ॥
ताः प्रयच्छन्तु मे सिद्धिं प्रसन्नाः सन्तु पान्तु माम् ।
पूर्वे मां शङ्करः पातु तथाऽऽग्नेय्यां च शूलधृक् ॥
कपाली दक्षिणे पातु नैर्ऋत्ये जटिलोऽवतु ।
पश्चिमे पार्वतीभर्त्ता वायव्यां प्रमथाधिपः ॥
उत्तरे मुण्डमालाढ्य ईशाने वृषभध्वजः ।
ऊर्ध्वं पातु तथा शम्भुरधस्ताद्धूलिधूसरः ॥
अग्रतो भैरवः पातु पृष्ठतः पातु खेचरः ।
दक्षिणे भूधरः पातु वामे तु पिशिताशनः ॥
केशान् पातु विशालाक्षो मूर्धानं च मरुत्प्रियः ।
मस्तकं पातु भृग्वीशो नेत्रे पातु महामनाः ॥
कपोलौ पातु वीरेशो गण्डौ गण्डादिमर्दनः ।
उत्तरोष्ठे विरूपाक्षस्त्वधरे योगिनीप्रियः ॥
दन्तेषु दक्षविध्वंसी चिबुके नृकपालधृक् ।
कण्ठे रक्षतु मां देवो नीलकण्ठो जगद्गुरुः ॥

दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो वामस्कन्धे च सुन्दरः ।
भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदाऽवतु ॥
वामे भुजे सार्वभौमो हृदये पातु पाण्डुरः ।
दक्षस्तनं पशुपतिर्वामं पातु महेश्वरः ॥
उत्तरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा ।
नाभौ कामप्रविध्वंसी जङ्घे पातु दयामयः ॥
जानुनी पात्वजामित्रो गुल्फौ गौरीपतिः सदा ।
पादपृष्ठं ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलीर्हरः ॥
पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः ।
इति रक्षां समाधाय मन्त्ररक्षां ततश्चरेत् ॥
ॐ ह्रां हुँ हुँ हुं च पूर्वे ॐ ह्रीं हुँ ह्रीं हुताशने ।
ॐ ह्रीं श्रीं दक्षिणे न्यस्य ॐ म्लुँ स्लुँ चापि नैर्ऋते ॥
ॐ प्लुँ म्लुँ य्लुँ प्रतीच्यां च तारः प्रों प्रुँ समीरणे ।
ॐ भ्रां भैरवः सौम्यायां ॐ ब्लुँ प्लुँ भ्रुँ च फट् शिवे ॥
ॐ ग्लौं ब्लुँ मूर्धदेशेऽथो स्त्रां स्त्रुँ स्त्रं स्त्रस्त्वधः स्मृतम् ।
एवं रक्षां समाधाय कील्याः कीलादिगष्टके ॥
मध्ये महाकीलमथो दिक्पालार्चनमारभेत् ।
ततो मन्त्रमिमं ब्रूयात् प्रार्थयेत् प्रेमसंयुतः ॥
भ्रां भैरव द्विरुच्चार्य भयङ्करहरे वदेत् ।
मां रक्ष रक्ष हुँ फट् च स्वाहा द्वाविंशदर्णकः ॥
पलाशभाजने माषान् कृत्वा प्राचीं व्रजेत् ततः ।
कीलस्य निकटे चेन्द्रमावाह्य परिपूजयेत् ॥
ध्यानं प्रागुक्तवत् कृत्वा तत्पुरश्चतुरस्त्रके ।

मन्त्रेणानेन चेन्द्राय मण्डले बलिमर्पयेत् ॥
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुं समुच्चार्य भो इन्द्र सुरनायक ।
प्रसन्नो भव मे शीघ्रं देहि सिद्धिं सनातनीम् ॥
इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हूँ फट्नागाग्निवर्णकः ।
जलं दत्त्वा बलिं त्यक्त्वा नत्वेयाद्वह्निकीलकम् ॥
अग्निं तत्र समावाह्य प्राग्वद्ध्यात्वा प्रपूजयेत् ।
तदग्रे मण्डलं कृत्वा दद्यान्मन्त्रेण वै बलिम् ॥
ॐ रँ राँ रूँ रूँ च रिँ रीँ तदग्रेऽग्नेपदं पदेत् ।
तेजोनायक मे शीघ्रं सिद्धिं देहि इमं वदेत् ॥
मुद्गबलिं गृह्ण गृह्ण हूँ फड्देवार्णको मनुः ।
ततो दक्षिणकीलस्य निकटे यममर्चयेत् ॥
मँ बीजेन समावाह्य मनुना निर्वपेद्बलिम् ।
ॐ प्राँ प्रीँ प्रुँ ततः प्राँ प्रीँ प्रूँ भो यमपदं वदेत् ॥
प्रेताधिपतये शीघ्रं प्रसन्नो भव संवदेत् ।
इमं मे मसुरं पात्रे बलिं गृह्णयुगं वदेत् ॥
हूँ फडन्तः समाख्यातो मन्त्रो गोरामवर्णकः ।
ततो नैर्ऋत्यकीलस्य निकटे नैर्ऋतं यजेत् ॥
क्षँ बीजेन समावाह्य बलिमन्त्रोऽथ कथ्यते ।
ॐ प्रँ प्रँ प्रँ ततो हूँ हूँ त्रिः खँ ह्रिह्रीँ च भोयुगम् ॥
रक्षोनाथ पदाच्छीघ्रं प्रसन्नो भव संवदेत् ।
इमं मे चणकबलिं गृह्ण हूँ फड्मनुर्मतः ॥
षट्त्रिंशदर्णोऽथ ततो व्रजेत् पश्चिमकीलकम् ।
वँ बीजेन समावाह्य वरुणं तत्र पूजयेत् ॥

बलिमन्त्रो ध्रुवो ब्राँ ब्रीँ भो भो वरुण संवदेत् ।
जलनाथपदस्यान्ते प्रसन्नो भव संवदेत् ॥
इमं ते चोदनबलिं गृह्ण गृह्ण च हूँ च फट् ।
त्रिंशदर्णो मनुः प्रोक्तो वरुणस्य बलेरयम् ॥
ततो व्रजेद्वायुकोणं कीलस्य निकटेऽर्चयेत् ।
यँ बीजेन समावाह्य वायुं शृणु बलेर्मनुम् ॥
वाँ वीँ वूँ ततः क्राँ क्रीँ भो भो वायो पुनः पुनः ।
क्षिप्रं प्रसन्नो भवेति ममेदं पायसेति ॥
बलिं गृह्णयुगं हूँ फट् पञ्चत्रिंशाक्षरो मनुः ।
उदक्कीलं ततो गत्वा कुँ बीजेन धनेश्वरम् ॥
आवाहयेत् पूजयित्वा मनुना निर्वपेद्बलिम् ।
ॐ क्राँ क्रूँ ततः क्राँ क्रीँ भो भो यक्षपदं वदेत् ॥
नाथ शीघ्रं प्रसन्नो मे भवेति च पदं वदेत् ।
ममापूपबलिं गृह्ण गृह्ण हूँ फड्रदार्णकः ॥
ईशानकीलनिकटे गत्वेशानं समाह्वयेत् ।
ह्रँ बीजेन ततः पूज्यबलिः स्यान्मनुनाऽमुना ॥
ॐश्राँश्रीँ श्रूँ ततःश्राँश्रीँ श्रीँ श्रीँ स्याच्छष्कुलीपदम् ।
बलिं गृह्णयुगं हूँ फड्नवविंशतिवर्णकः ॥
पुष्पाक्षतान् समादाय मध्यस्तम्भादधः स्थितः ।
अधस्तनस्तम्भाय नमो मन्त्रोऽयं तु नवाक्षरः ॥
अनेन मनुना स्तम्भनिर्भयः परिपूजयेत् ।
महाकवचमन्त्रेण कुर्याद्देहस्य रक्षणम् ॥
ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रुँ ततो ह्रश्च क्षाँ क्षीँ क्षुँ क्षः समुच्चरेत् ।

स्वाँ स्वीँ स्वुँ स्वँ स्तथा ग्राँ ग्रीँ ग्रौँ ग्रौँ म्राँ म्रीँ ततो वदेत्॥
म्रूँ म्रोँ म्रँ म्रँ ततो म्रोँ म्रौँ त्रिधोक्तेन त्रिधा त्रिधा।
हूँ सप्तकं समुच्चार्य फडन्तं सर्वतो वदेत्॥
रक्ष रक्ष पदं प्रोच्य रक्ष रक्षेति भैरव।
नाथ नाथ फडन्तोऽयमेकपञ्चाशदक्षरः॥
इत्यात्मरक्षां कृत्वाऽथ स्तम्भस्य च समीपतः।
आसनं सम्यगास्तीर्य तत्र प्राङ्मुख आस्थितः॥
साग्रे समे तु भूभागे गोमयाद्युपलेपिते।
पद्ममष्टदलं कृत्वा तद्बहिः षोडशच्छदम्॥
तद्बाह्येऽष्टदलं चापि भूपुरं च ततो लिखेत्।
चतुरस्रत्रयोपेतं चतुर्द्वारसमन्वितम्॥
तन्मध्ये देवमावाह्य सम्यङ्मूलेन पूजयेत्।
कर्णिकायां षडङ्गानि ह्यसिताङ्गादिभैरवान्॥
पत्राष्टके पूजयित्वा पूजयेत् षोडशच्छदे।
कुलीशं सकुलीशं च जामित्रं रामठं रिभम्॥
प्रचण्डं चण्डकेशं च चण्डात्मानं च चामरम्।
चारित्रं च चमत्कारं चञ्चलं चारुभूषणम्॥
चामीकरं चारुवह्नं चकितं चेति षोडश।
नत्यन्तनामभिः पूज्याः षोडशानन्दपूरिताः॥
ब्राह्म्याद्याश्चाष्टपत्रेषु बहिर्वीथ्यां दिगीश्वरान्।
तद्बाह्यायां तदस्त्राणि तद्बाह्यायां त्विमान् यजेत्॥
प्रचण्डचण्डोर्ध्वकेशभीषणाभीषणाभिधाः।
व्योमकेशो व्योमवाहो व्योमव्यापक एव च॥

एतान् वीरान् समाहूय चायाहीति समुच्चरेत् ।
अभ्यर्च्चयेन्निर्भयः सन् बलिं न्यासान् समाचरेत् ॥
पश्चिमाभिमुखो भूत्वा मालां संपूज्य संयजेत् ।
उच्चैः स्वरं तदाऽऽयाति प्रत्यहं भैरवः स्वयम् ॥
वामहस्तेन दद्याच्च यथाम्नायोदितं बलिम् ।
सम्भोजयन् जपं कुर्यान्निर्भयः प्रीतमानसः ॥
तृप्तो देवो यदा ब्रूयाद्वरं वरय वाञ्छितम् ।
दक्षिणे पायसेनैव तस्य तृप्तिः प्रजायते ॥
वामादीनां मांसमद्यरक्ताद्यैश्चरुणाऽपि वा ।
प्रणम्य दण्डवद्भूमौ वाञ्छितं वरमुच्चरेत् ॥
आगत्य च गृहे पश्चात् त्र्यहं कुर्यान्महोत्सवम् ।
एवं कलियुगे सिद्धिः श्मशानस्य प्रकीर्त्तिता ॥
जपेदेनं समारूढो दैवी प्रत्यक्षता भवेत् ।
समस्तभैरवानां तु मन्त्रादेवं मयोदितम् ॥

इति भैरवसाधनम् ।

अथ योगिनीसाधनं (भूतडामरे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि योगिनीसाधनोत्तमम् ।
सर्वार्थसाधनं नाम देहिनां सर्वसिद्धिदम् ॥
अतिगुह्या महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
यासामभ्यर्च्चनं कृत्वा यक्षेशोऽभूत् कुलाधिपः ॥
तासामाद्यां प्रवक्ष्यामि सुराणां सुन्दरीं प्रिये ।
अस्या अभ्यर्च्चनेनैव राजत्वं लभते नरः ॥
अथ प्रातः समुत्थाय कृत्वा स्नानादिकं शुभम् ।

प्रसादं च समासाद्य कुर्यादाचमनं ततः ॥
प्रणवान्ते सहस्रारे हुँ फड्दिग्बन्धनं चरेत्।
प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥
षडङ्गं मायया कुर्यात् पद्ममष्टदलं लिखेत्।
तस्मिन् पद्मे महामन्त्रबीजन्यासं समाचरेत् ॥
पीठे देवीं समभ्यर्च्य ध्यायेद्देवीं जगत्प्रियाम्।

ध्यानं यथा।

पूर्णचन्द्रमुखीं गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम्।
पीतोन्नतकुचां रामां सर्वाय्यामभयप्रदाम् ॥
इति ध्यात्वा च मूलेन दद्यात् पाद्यादिकं शुभम्।
पुनर्धूपं निवेद्यैव नैवेद्यं मूलमन्त्रतः ॥
गन्धचन्दनताम्बूलं सकर्पूरं सुशोभनम्।
प्रणवान्ते भुवनेशीमागच्छ सुरसुन्दरि ॥
वह्निभार्यां जपेन्मन्त्रं त्रिसन्ध्यं च दिने दिने।
सहस्रैकप्रमाणेन ध्यात्वा देवीं सदा बुधः ॥
मासान्ते व्याप्य दिवसं बलिपूजां सुशोभनाम्।
कृत्वा च प्रजपेन्मन्त्रं निशीथे याति सुन्दरी ॥
सुदृढं साधकं मत्वा महिम्ना साधकालये।
सुप्रसन्ना साधकाग्रे सदा स्मेरमुखी ततः ॥
दृष्ट्वा देवीं साधकेन्द्रो दद्यात् पाद्यादिकं शुभम्।
सुचन्दनं सुमनसो ज्ञात्वाऽभिलषितं वदेत् ॥
मातरं भगिनीं वाऽपि भार्यां वा भक्तिभावतः।
यदि माता तदा वित्तं दिव्यं च सुमनोहरम् ॥

भूपतिस्त्वं प्रार्थितं यत् तद्ददाति दिने दिने ।
पुत्रवत् पालितं लोके सत्यं सत्यं सुनिश्चितम् ॥
स्वसा ददाति दिव्यं च दिव्यवस्त्रं तथैव च ।
दिव्यकन्यां समानीय नागकन्यां दिने दिने ॥
यद्यद्भवति भूतं च भविष्यति च यत् पुनः ।
तत्सर्वं साधकेन्द्राय निवेदयति निश्चितम् ॥
यद्यत् प्रार्थयते सर्वं ददाति सा दिने दिने ।
भ्रातृवत् पालितं लोके कामनाभिर्मनोरथैः ॥
भार्या स्याद्यदि सा देवी साधकस्य मनोहरा ।
राजेन्द्रः सर्वराजानां संसारे साधकोत्तमः ॥
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले गतिः सर्वत्र निश्चितम् ।
यद्यद्ददाति सा देवी वर्णितुं नैव शक्यते ॥
तया सार्धं च सम्भोगं करोति साधकोत्तमः ।
अन्यस्त्रीगमनं त्यक्त्वा अन्यथा नश्यति ध्रुवम् ॥

इति सुन्दरीसाधनम् ।

अथ मनोहरासाधनं तत्रैव ।

ततोऽन्यसाधनं वक्ष्ये निर्मितं ब्रह्मणा पुरा ।
नदीतीरं समासाद्य कुर्यात् स्नानादिकं ततः ॥
पूर्ववत् सकलं कार्यं चन्दनैर्मण्डलं लिखेत् ।
स्वमन्त्रं तत्र संलिख्यावाह्य ध्यायेन्मनोहराम् ॥

ध्यानं यथा ।

कुरङ्गनेत्रां शरदिन्दुवक्त्रां विम्बाधरां चन्दनगन्धलिप्ताम् ।
चेलांशुकां पीनकुचां मनोज्ञां श्यामां सदा कामदुघां विचित्राम् ॥

एवं ध्यात्वा जपेद्देवीमगुरूधुपदीकैः ।

गन्धं पुष्पं रसं चैव ताम्बूलादींश्च मूलतः ॥
तारं माया तथाऽऽगच्छ मनोहरे पावकवल्लभा ।
स्नात्वाऽयुतं प्रतिदिनं जपेन्मन्त्रं प्रसन्नधीः ॥
मासान्ते दिवसं प्राप्य कुर्याच्च जपमुत्तमम् ।
आनिशीथं जपेन्मन्त्रं ज्ञात्वा च साधकं दृढम् ॥
गत्वा च साधकाभ्यासे सुप्रसन्ना मनोहरा ।
वरं वरय शीघ्रं त्वं यद्यन्मनसि वर्त्तते ॥
साधकेन्द्रोऽपि तां भक्त्या पाद्याद्यैरर्च्चयेन्मुदा ।
प्राणायामं षडङ्गं च मायया च समाचरेत् ॥
मत्स्यमांसबलिं दत्वा पूजयेच्च समाहितः ।
चन्दनोदकपुष्पेण फलेन च मनोहराम् ॥
ततोऽर्च्चिता प्रसन्ना सा पुष्णाति प्रार्थितं चरेत् ।
सुवर्णस्य शतं भारं सा ददादि दिने दिने ॥
सविशेषं व्ययं कुर्यात् स्थिते तत् तु न दास्यति ।
अन्यस्त्रीगमनं तस्य न भवेदिदमीरितम् ॥
अव्याहतगतिस्तस्य भवतीति न संशयः ।
साधिताऽपि विधानेन यदि नायाति यक्षिणी ॥
विषं क्रोधात्मकं प्रोच्यामुकयक्षिण्यतः परम् ।
भूतेशान्मादनं वायुद्वयं क्रोधास्त्रसंयुतम् ॥
क्रोधेनानेन चाक्रम्य जपेदष्टसहस्रकम् ।
एवं कृते समायाति वाञ्छितार्थं प्रयच्छति ॥

क्षुद्रामाह ।

मुष्टिमन्योन्यमास्थाय कनिष्ठे वेष्टयेदुभे ।

प्रसार्याकुञ्च्य तर्जन्यौ कार्या चैषाऽङ्कुशाकृतिः ॥
इयं क्रोधाङ्कुशी मुद्रा यक्षिण्याकर्षणक्षमा ।
इयं ते कथिता विद्या सुगोप्या या सुरेश्वरि ॥
तव स्नेहेन भक्त्या च वशोऽहं परमेश्वरि ।

इति मनोहरासाधनम् ।

अथ धनदामन्त्रस्तत्रैव ।

तत्तूयँ विन्दुना युक्तं लज्जाबीजं सविन्दुकम् ।
लक्ष्मीबीजं ततो देवि सम्बोध्य च रतिप्रिया ॥
स्वाहान्तो मनुराख्यातो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ।

मन्त्रान्तरम् ।

तत्तूयँ विन्दुसंयुक्तं लक्ष्मीः प्रणव एव च ।
मायाबीजं समुद्धृत्य सम्बोध्य च रतिप्रियाम् ॥
वह्निजायामिति प्रोक्तो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ।
कुवेरोऽस्य मुनिः प्रोक्तः पङ्क्तिश्छन्दोऽथ देवता ॥
धनदाप्रीतये तस्या विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।
षड्दीर्घमायया चैव कराङ्गन्यास इष्यते ॥

ततो ध्यानम् ।

कुङ्कुमोदरगर्भाभां किञ्चिद्यौवनशालिनीम् ।
मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषिताम् ॥
तुलाकोटिपरिभ्रान्तपादपद्मद्वयान्विताम् ।
माणिक्यहारमुकुटकुण्डलादिविभूषिताम् ॥
नीलोत्पलदृशं किञ्चिदुद्यत्कुचविराजिताम् ।
कराब्जभ्राम्यत्कमलां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम् ॥
हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि ।

ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले देवीं तां धनदायिकाम् ॥
ध्यात्वा च साधकश्रेष्ठः पूजयेद्भक्तितत्परः।
नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत् कर्णिकोपरि ॥
दिग्दलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं ततो बहिः।
कोणेषु वज्रान् संलिख्य मध्ये बीजं समुल्लिखेत् ॥
अङ्गानि केशरेऽभ्यर्च्य दले शक्तीः प्रपूजयेत्।
लक्ष्मीः पद्मा तथा पद्मालया श्रीश्च हरिप्रिया ॥
हरा चैवाऽथ कमलालयाऽब्जलोलचञ्चला।
एताः शक्तीः प्रपूज्याथ मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ॥
प्रजपेदक्षसूत्रेण रत्नालिकृतकेन च।
लक्षे जपेत् मन्त्रसिद्धिः प्रयोगानाचरेद्बुधः ॥
रात्रौ चेज्जपते चाष्टसहस्रं सप्त वासरान्।
एतेनैव सुसिद्धः स्यात् पुरश्चर्यादिको विधिः ॥
किमत्र दुर्लभं देवि साधयेद्यदि मानवः।
भुक्त्वा वाऽप्यथ वाऽभुक्त्वा पायसान्नं प्रदाय च ॥
दशकृत्त्वोऽथ वा शौचमकृत्वा वा कुले च ताम्।
यः स्मरेद्देवि विद्यां तां दारिद्र्यैर्नाभिभूयते ॥
कामदेवं जपेत् पार्श्वे देव्याः प्रत्यहमादरात्।
तेन देव्या महाप्रीतिर्वाञ्छितार्थं ददाति च ॥
पूजान्ते च समायाति रात्रौ देवी धनेश्वरी।
सर्वालङ्कारमुत्सृज्य दत्वा याति निजालयम् ॥
धनं च विपुलं दत्वा साधकस्य मनोरथान्।
पूरयित्वा महेशानि वशगा जायते शुभा ॥

स्वयमाहेति यक्षेशी यो मां स्मरति मानवः ।
तस्य दारिद्र्यसन्यासं दासीवत् करवाण्यहम् ॥

द्वितीयमन्त्रस्य पुरश्चरणमाह ।

सहस्रसप्ततिर्यावत् पुरश्चरणमुच्यते ।
होमो घृतेन खण्डेन मधुना च दशांशतः ॥
ताम्रपात्रे मण्डलं च कृत्वा चन्दनलेपिते ।
पूजा कार्या महादेव्याः क्षणाद्दारिद्र्यशान्तये ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ चाङ्गे चैवास्य देवता ।
कुवेरस्य मतेनास्याः पूजाऽपि क्रियते तथा ॥

इति धनदासाधनम् ।

अथाप्सरःसाधनं ( भूतडामरे )

प्रालेयं श्रीः शशी देव्या अनादिः श्रीस्तिलोत्तमा ।
तारादिमन्त्रमुद्धृत्य प्रोक्ता काञ्चनमालिका ॥
तारं श्रीर्वर्मणा युक्ता भाव्या कुण्डलहारिणी ।
तारं वर्मसमायुक्तं रत्नमाल्येति पञ्चमी ॥
तारं ब्रह्मेति रम्भाख्या विषं श्रीरुर्वशी परा ।
अनादिबीजमाता च भूतिनीत्यप्सराः क्रमात् ॥
क्रोधं नत्वा प्रवक्ष्येऽहमथासां सिद्धिसाधनम् ।
शैलशृङ्गं समारुह्य जपेल्लक्षं समाहितः ॥
पौर्णमास्यां समभ्यर्च्य घृतदीपं निवेदयेत् ।
प्रजपेत् सकलां रात्रिमायाति बन्धनक्षये ॥
चन्दनार्घेण संतुष्टा वरं वरय भाषिते ।
कामिता सा भवेद्भार्या प्रयच्छति रसायनम् ॥

सहस्रं वत्सरं याति वरं दद्याद्यथेप्सितम् ।
जपेदयुतमात्रं तु क्षीराशो सप्तवासरान् ॥
चन्दनेन विधायाथ मण्डलं सप्तमे दिने ।
संपूज्य भक्तितः शुक्लाष्टम्यां पर्वतमूर्धनि ॥
प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशात्यये ।
आगत्य पुरतस्तिष्ठेत् सितवस्त्रोन्नतस्तनी ॥
चुम्बत्याऽऽलिङ्गयत्याशु भार्या भवति कामिका ।
राज्यं यच्छति संतुष्टा त्रिदिनं दर्शयत्यपि ॥
पञ्चवर्षसहस्रं तु भुक्त्वा भोगमनुत्तमम् ।
मृते राजकुले जन्म प्रयच्छति तिलोत्तमा ॥
अन्यथा म्रियते शीघ्रं विपरीते कृते सति ।
नीचगासङ्गमं कृत्वा मण्डलं चन्दनेन च ॥
धूपं चैवागुरुं दत्वा बलिं च प्रतिपादयेत् ।
जपेदष्टसहस्रं तु नित्यं सप्तदिनावधि ॥
सप्तमे दिवसे पूजां कृत्वा धूपं प्रदापयेत् ।
प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशात्यये ॥
चन्दनार्घेण संतुष्टा वरं वरय भाषिते ।
साधकेनापि वक्तव्यं मातृवत् परिपालय ॥
वस्त्रालङ्करणं भक्ष्यं सेवकेभ्यः प्रयच्छति ।
मृते राजकुले जन्म दद्यात् काञ्चनमालिका ॥
न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासो विधीयते ।
शैलमूर्ध्नि समास्थायायुतं मासं जपेन्मनुम् ॥
धूपं दत्वा समभ्यर्च्य पुना रात्रौ जपेत् ततः ।

अर्धरात्रे समायाति प्राग्वदर्घ्यं प्रदापयेत् ॥
कामिता सा भवेद्भार्या प्रत्यहं संप्रयच्छति ।
लक्षमेकं हिरण्यं च सिद्धद्रव्यं रसायनम् ॥
दर्शयेत् पृष्ठमारोप्य स्वर्गं कुण्डलहारिणी ।
देवतायतनं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ॥
मासमेकं तु मासान्ते पौर्णमास्यां पुनर्जपेत् ।
समभ्यर्च्यार्धरात्रौ च श्रूयते नूपरध्वनिम् ॥
समायात्यन्तिकं दद्यात् पुष्पासनमनुत्तमम् ।
किमिच्छसि वद त्वं मे भव भार्येति साधकः ॥
भार्याकर्म करोत्येवं राज्यं यच्छति कामिकम् ।
याति वर्षसहस्राणि प्रत्यहं परितोषिता ॥
प्रतिपत्तिथिमारभ्य कृत्वा चन्दनमण्डलम् ।
धूपं च गुग्गुलुं दत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ॥
त्रिसन्ध्यं पौर्णमास्यां च पूजां कृत्वा सुशोभनाम् ।
प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशात्यये ॥
कामिता सा भवेद्भार्या चान्यथा म्रियते ध्रुवम् ।
ददाति कामिकं भोज्यं सिद्धद्रव्यं रसायनम् ॥
दशवर्षसहस्राणि जीवतेऽन्ते मृते पुनः ।
जन्म राजकुले कुर्याद्द्यात् क्रोधप्रसादतः ॥
रात्रौ देवगृहं गत्वा चन्दनेन च मण्डलम् ।
कृत्वा धूपं ततो दत्वाऽयुतं मासयुतं मनुम् ॥
मासान्ते महतीं पूजां कृत्वा रात्रौ जपं चरेत् ।
निशात्यये समायाति प्रदद्यात् कुसुमासनम् ॥

कृते च स्वागतं पृच्छेत् किमिच्छसि च भाषते।
साधकः प्राह भार्या त्वं भव यच्छ रसायनम्॥
याति वर्षसहस्राणि अप्सराः स्वयमुर्वशी।
परस्त्रीं वर्जयेत् सर्वां चान्यथा म्रियते ध्रुवम्॥
एकाकी शयने स्थित्वा शुची रात्रौ च कुङ्कुमैः।
लिखित्वा भूषिणीं भूर्जे चन्दनेन तु धूपयेत्॥
जपेदष्टसहस्रं तु मासं यावत् प्रयत्नतः।
मासान्ते तु समभ्यर्च्य जपेदष्टसहस्रकम्॥
रात्र्यर्धान्तिकमायाति भार्या भवति कामिता।
सिद्धद्रव्यं हिरण्यं च तुष्टा यच्छति भूषिणी॥
क्रोधराजः पुनः प्राह यदि नायाति साधकः।
अनेन क्रोधयोगेन जपेदप्सरसां चयम्॥
विषं प्राथमिकं बीजमुद्धरेच्च कटुद्वयम्।
अमुकीं क्रोधबीजं च वातमादरसंयुतम्॥
जपेत् सकृत् समुद्धृत्य मन्त्रमष्टसहस्रकम्।
म्रियते शीर्यते मूर्ध्नि प्रस्फुटत्यप्सरेति च॥
वन्दयेदप्सरोवृन्दं मन्त्रेणानेन साधकः।
विषबन्धद्वयं प्रोच्यहनयुग्ममुदीरयेत्॥
अमुकीं क्रोधमन्त्रोऽयमप्सरोवश्यकारकः।
अथ वक्ष्येऽप्सरोवश्यकारकं मनुमुत्तमम्॥
विषं चलद्वयं प्रोच्य अमुकीं वश्यमानय।
सकृज्जापाज्जपादेवाप्सरोवश्यमियाद्ध्रुवम्॥

इत्यप्सरस्साधनम्।

अथ ज्वालामुखीसाधनं ( फेत्कारिणीतन्त्रे )

नमो भगवतीत्युक्त्वा ज्वालामालिन्यतः परम् ।
गृध्रगणपरिवृते द्विठान्तो मनुरीरितः ॥
ॐ नमो हृदयं प्रोक्तं भगवति शिरः स्मृतम् ।
ज्वालामालिनि च शिखा गृध्रगणपरिवृते ॥
वर्मस्वाहास्त्रमित्येतज्जातियुक्तं न्यसेत् तनौ ।
अभुक्त्वा नियतं चैतज्जयमन्त्रं जपेज्जयी ॥

अथ मन्त्रान्तरं तत्रैव ।

रुद्राङ्गनाग्निजायाभ्यां रुद्रज्वालामुखीत्यपि ।
मन्त्रान्तरं समाख्यातं ज्वालामुख्या अनन्तरम् ॥
दीपतैलाक्तपादोऽर्धरात्रे गुरुदिनादितः ।
जपेदष्टसहस्रं तु त्रयोविंशतिवासरान् ॥
प्रत्यहं पलषट्कं च ददातीति न संशयः ।

पूर्वमन्त्रमाहात्म्यमाह ।

नारायणेन कथितमगस्त्यैः कथितं पुनः ।
सुसिद्धिमिच्छता गोप्यो नामापि न समीरयेत् ॥
पुत्रस्य नृपतेश्चापि धार्मिकस्य विशेषतः ।
नवदुर्गाविधानेन दर्शयेत् कार्यगौरवात् ॥
नृपोऽपि सम्यगाचारो मन्त्रज्ञो विविधं धनम् ।
निवेद्य विधिवत् पश्चान्मन्त्रग्रहणमाचरेत् ॥
स्मृतिमात्रेण वैवर्णान् रिपून् सर्वान् विनाशयेत् ।
प्रदद्याद्दक्षिणां तस्य सहस्रं शतमेव वा ॥
गवां सुवर्णं निष्काणां भूमिं वा शस्यशालिनीम् ।
सर्वशान्तिमवाप्नोति सर्वरक्षाकृतिर्भवेत् ॥

निष्कमलङ्कारः ।

इति ज्वालामुखीसाधनम् ।

अथ कर्णपिशाचीमन्त्रस्तत्रैव।

कहयुग्मं कालिके च गृह्ण युग्मं तथैव च।
पिण्डं पिशाचि स्वाहेति द्वीपार्णः कथितो मनुः॥

ध्यानम्।

ध्यायेत् पिशाचीं चलशूलहस्तां श्यामां सुदीर्घां युवतीं त्रिनेत्राम्।
क्रुद्धां विवर्णां तनुवृत्तमध्यां गुञ्जाफलैः कल्पितहारयष्टिम्॥

साधनप्रकारमाह।

एकविंशद्दिनं यावदुदयास्तमयं जपेत्।
नित्यं सायं स्वमाहारं पिण्डं हर्म्योपरि क्षिपेत्॥
त्रिसप्ताहाच्च तुष्टा सा शय्यां गत्वा पिशाचिनी।
पञ्चविंशतिदेशानां कथां च कथयत्यपि॥
त्रिंशद्दिनैश्च देवेशि जम्बूद्वीपकथां नयेत्।
द्वात्रिंशता तथा गौरि त्रैलोक्यं श्रावयेद्ध्रुवम्॥
त्रिस्वादुबलिदानेन सर्वं वदति तत्क्षणात्।
सभायां यदि संघाते द्यूते च रिपुसंसदि॥
सर्वं कथयति क्षिप्रं नूनं तुष्टा पिशाचिनी।
केनापि नैव वेद्या सा साधकस्तां प्रपश्यति॥

इति कर्णपिशाचीसाधनम्।

अथ विभूषिण्यादिसाधनानि (फेत्कारिणीतन्त्रे)

आद्या विभूषिणी देवी परा कुण्डलधारिणी।
हारिणी सिंहिनी चैव हंसिनी तु ततो नटी॥
देवी कामेश्वरी चैव प्रोक्ता देवी रतिप्रिया।

विभूषिणीमन्त्रमाह।

क्रोधास्त्रद्वयमायान्ते भूतिनी च त्रिकूर्चतः।
तारलज्जाद्वयादस्त्रद्वयान्ते च विभीषिका॥

क्रोधद्वयान्तो मन्त्रोऽयं विभूषिण्या उदीरितः ।

ध्यानम् ।

कर्त्रीं चैव करे परे नरशिरस्तुङ्गाकृतिर्भीषणा
दन्तान्तर्गतमांसशोणितवसासंयुक्तभूतव्रता ।
कालव्यालकरालसत्त्वविकटव्यालम्बिदंष्ट्राङ्कुरा
यस्याः केशकुलाकुलाखिलमहीशैलाऽस्तु सा रक्षतु ॥

साधनप्रकारमाह ।

एकवृक्षतरं गत्वा यामिन्यां प्रवसेत् त्र्यहम् ।
जपेदष्टसहस्रं तु ध्यायन्नव्यग्रमानसः ॥
जपान्ते पूजनं नाम्नाऽगुरुधूपं निवेदयेत् ।
प्रजपेदर्धरात्रे तु समायाति विभूषिणी ॥
चन्दनोदकमिश्रेण दत्तार्घा तुष्यति ध्रुवम् ।
माता वा भगिनी भार्या हृष्टा भवति कामिता ॥
करमेलनकं कृत्वा माता भूत्वा जगत्त्रये ।
शताष्टपरिवारस्य सदाऽभ्यञ्जनभूषणम् ॥
भगिनी चेन्महायोगिन् सहस्रयोजनादपि ।
ददाति ख्रियमानीय दिव्यं रसरसायनम् ॥
भार्या चेत् स्पृष्टमारोप्य स्वर्गं नयति तत्क्षणात् ।
दिने रत्नसहस्रं तु रसं चैव रसायनम् ॥

दद्यादिति शेषः ।

सर्वाशाः पूरयत्येव सदा देवी विभूषणी ।

अथ कुण्डलधारिणीमन्त्रस्तत्रैव ।

ध्रुवमायास्त्रयुगला प्रोक्ता कुण्डलधारिणी ।
जपेदष्टसहस्रं तु मासमात्रं दिने दिने ॥
कर्णे कुण्डलधारिणी शशिकुण्डलधारिणी ।

आयाति रुधिरेणार्घ्यं देयास्तुष्टा वदत्यपि ॥
किं कर्त्तव्यं मया वत्स मातेति भव साधकः ।
पञ्चाशता दिनेनापि त्रैलोक्यमपि दास्यति ॥

अथ सिन्दूरहारिणीमन्त्रस्तत्रैव ।

क्रोधद्वयास्त्रयुगतः सिन्दूरहारिणीपदम् ।
कूर्चत्रयान्तः संप्रोक्तः सिन्दूरहारिणीमनुः ॥

ध्यानम् ।

स्वर्णालङ्कृतिहारिणी चलदलव्यालोलशाखाम्बरा
सोत्कण्ठीकृतगात्रकर्मसुभगा* शुभ्रांशुचन्द्रप्रभा ।
अन्तः संततकान्तिदन्तमलिना त्रैलोक्यशोभास्पदा
पायादूर्ध्वनवांशुशूललतिका सिन्दूरहारिण्यसौ ॥
शून्यदेवालयं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
शीघ्रमायात्यागता सा भार्या भवति कामिता ॥
पञ्चविंशति दिनानि वस्त्रालङ्कारभूषणम् ।
ददाति साधकेन्द्राय देवी सिन्दूरहारिणी ॥

अथ सिंहिनीमन्त्रस्तत्रैव ।

लज्जाद्वयास्त्रयुगलं सिंहिनीति पदं ततः ।
क्रोधबीजत्रयाद्यन्तः कीर्त्तितः सिंहिनीमनुः ॥

ध्यानम् ।

शैलाग्रद्रुमस्वर्गदन्तवदने दुर्गान्तदैत्यस्थिता
केशा अस्थिसमस्तविष्णुचरणप्रभ्रष्टसंत्रासिनी ।
या दन्तान्तरलम्बिधारणरणे प्रक्षुब्धसिद्धाङ्गना
सेयं पातु समस्तकण्टककुलव्याकम्पिमालाकुला ॥

---

* शुभ्रांशुचन्द्रस्मिता इति २-३-५ पु० पा० ।

गत्वैकलिङ्गं यामिन्यां प्रजपेदयुतं मनुम् ।
ततो हृष्टाऽतिवरदा सिंहिन्यायाति पूजिता ॥
किं करोमि वदत्येवं भार्या भवति कामिता ।
दीनाय वस्त्रयुगलं दद्याद्रसरसायनम् ॥

अथ हंसिनीमन्त्रस्तत्रैव ।

तारत्रिकूर्चास्त्रयुगाद्धंसिनी भूतिनी ततः ।
कूर्चत्रयान्तः कथितो हंसिनीमनुरुत्तमः ॥

ध्यानम् ।

शुभ्रा शुभ्रसरोजतुल्यनयना दुग्धासवेनार्चिता
प्रारब्धध्वनिमुग्धमानववधूसंसेविता सादरम् ।
किञ्चित्तुङ्गविलोलपाङ्गवलितव्यामुग्धमीलन्मुखी
मुक्तायुक्तविलोलहारललिता श्रीहंसिनी पातु नः ॥
वज्रपाणिगृहं गत्वा प्रतिमां शोभनां लिखेत् ।
हयमारेण संपूज्य जपेदयुतसंख्यकम् ॥
यावदर्धनिशां देवी हंसिन्यायाति निश्चितम् ।
चन्दनार्घप्रदानेन हृष्टा वदति साधकम् ॥
किं मया ते प्रकर्त्तव्यं किङ्करी भव साधकः ।
वस्त्रालङ्कारभोज्याद्यं व्ययार्थं संप्रयच्छति ॥
तदशेषव्ययाभावान्न ददाति प्रकुप्यति ।

अथ चेटीसाधनं तत्रैव ।

ततः कूर्चयुगं चास्त्रयुगं चेटी ततः परम् ।
ङेऽन्तं क्रोधयुगं चोक्त्वा चेटीयुग्मं त्रपां ततः ॥

ध्यानम् ।

गच्छन्ती मितभाषिणी शशिमुखी भ्रष्टोत्तरीयाधरा

बिभ्रन्ती कलसं सरोजयुगलं स्वर्णान्तसीमन्तिनी ।
श्रीखण्डादिविलेपनामलवपुःसौरभ्यसंभाविता
किञ्चिद्धर्मसमार्जितार्पितकरा पायादियं चेटिका ॥

कुत्रापि भीषणस्थाने नामोच्चारणमात्रतः ।
ध्रुवं चेटी समागत्य चेटीकर्म करोत्यपि ॥
अथ वाऽस्य गृहद्वारे त्र्यहं रात्रौ जपं चरेत् ।
आगत्य नियतं देवी चेटीकर्म करोति च ॥

अथ कामेश्वरीमन्त्रस्तत्रैव ।

तारकूर्चास्त्रयुक्कामेश्वरि भूतिन्यतः परम् ।
ङेन्तं क्रोधत्रयं कामेश्वरीमन्त्र उदाहृतः ॥

ध्यानम् ।

कामस्कन्धसमागता मधुलतावासन्तिपुष्पान्विता
गायन्ती मधुराधरस्मितमुखी वीणावती चञ्चला ।
रक्ताम्भोजविलोचना मधुमदैर्मत्ता समन्तादियं
पायात् पुष्पधनुर्धरा मधुमती कामेश्वरी भूतिनी ॥

मातृस्थानं समागत्य कृत्वा मांसस्य भक्षणम् ।
मांसादिना बलिं दत्वा सहस्रं सप्त वासरान् ॥
जपान्नियतमायाति रुधिरार्घं निवेदयेत् ।
कामेश्वरी भवेत् तुष्टा भार्या भवति कामिता ॥
सर्वाशाः पूरयत्येव राज्यं यच्छति निश्चितम् ।

अथ रतिप्रियामन्त्रस्तत्रैव ।

तारं लज्जा च कूर्चास्त्रहृदययुक्ता रतिप्रिया ।
क्रोधत्रयास्त्रयुक्कामेश्वरीमन्त्रोक्तवत् क्रिया ॥

ध्यानम् ।

हेमप्राकारमध्ये सुरविटपितटे हेमपीठाधिरूढा
यक्षीमालाविसर्पत्परिमलकुसुमोद्भासिधम्मिल्लभारा ।
पीनोत्तुङ्गस्तनाढ्या कुवलयनयना रक्तवर्णा कराभ्यां
भ्राम्यद्रक्तोत्पलाभा सकलसुरयुता दिव्यभूषाङ्गरागा ॥
रात्रौ देवगृहं गत्वा तत्र शय्यां प्रकल्पयेत् ।
सितवस्त्रं चन्दनं च जातीपुष्पं प्रदापयेत् ॥
धूपं तु गुग्गुलं दत्वाऽष्टसहस्रं जपेन्मनुम् ।
जपान्ते नित्यमायाति चुम्बनालिङ्गनादिभिः ॥
कामिता जायते भार्या सत्यं देवी कुमारिका ।
दद्यादष्टदिनेनैव दिव्यं वस्त्रयुगं ततः ॥
कामिकं भोजनं दिव्यं परिवारस्य दास्यति ।
अन्यद्वैश्वानरगृहाद्द्रव्यमानीय यच्छति ॥
सहस्रमेतानि जपेज्जपान्ते सिद्ध्यति ध्रुवम् ।
मुहुर्मुहुर्जपेन्मन्त्रमित्याह क्रोधभूपतिः ॥

इति विभूषिण्यादिसाधनानि ।

अथ धरित्रीसाधनम् । तदुक्तं (वैष्णवीकल्पे)

अथातः संप्रवक्ष्यामि धरित्रीसाधनं परम् ।
रहस्यातिरहस्यं च सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥
सर्वैश्वर्यकरं नृणां दुर्लभं परमाद्भुतम् ।
यज्ज्ञात्वा साधकश्रेष्ठो धनदेन समो भवेत् ॥
शरत्काले च केदारमध्ये कमलसंकुले ।
विनिर्माय कुटीं रम्यां स्थापयेत् कलशं शुभम् ॥
भौमाष्टम्यामाहृतया मृदा नक्तं विनिर्मितम् ।

गन्धर्वकर्दमैर्लिप्तं वेष्टितं शुक्लवाससा ॥
वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण तत्रावाह्य वसुन्धराम् ।
नानोपचारसम्भारैस्त्रिसन्ध्यं पूजयेत् सुधीः ॥
भूबीजं तारमायान्ते ङेन्ता चैव वसुन्धरा ।
हृदयं वह्निजायान्तो द्वादशार्णो मनुः स्मृतः ॥
महावराहोऽस्य मुनिर्गायत्री छन्द ईरितम् ।
वसुन्धरा देवता च भूबीजं बीजमुच्यते ॥
मायाबीजं धरित्र्याश्च विनियोगः प्रसादने ।
मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि कृत्वा ध्यायेद्वसुन्धराम् ॥

ध्यानम् ।

फुल्लाम्भोरुहमध्यस्थामिन्दीवरदलप्रभाम् ।
पीतकौशेयवसनां नानालङ्कारभूषिताम् ॥
नीलोत्पलद्वयं शालिमञ्जरीं चेक्षुकं करैः ।
बिभ्राणां सर्वलोकस्य धात्रीं वसुमतीं भजे ॥
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं वेदलक्षं समाहितः ।
जपान्ते वसुधादेवी भाषते कलशोदरान् ॥
वरं ब्रूहि प्रदास्यामि यत् ते मनसि वर्त्तते ।
इति ब्रुवाणां तां देवीं प्रसूनाञ्जलिभिस्त्रिभिः ॥
संपूज्य प्रणमेद्भूमौ दण्डवत् साधकोत्तमः ।

श्लोकार्धपतितमन्त्रः ।

नमस्तुभ्यं भगवति जगद्धात्रि वसुन्धरे ।
विष्णुपत्नि वराहस्य दंष्ट्राकोटिकृतालये ॥
विश्वम्भरे नमस्तुभ्यं सर्वभूताश्रये धरे ।
रत्नानां च निधीनां च त्वदभ्यन्तरवर्त्तिनाम् ॥

लब्धुकामोऽस्मि कल्याणि प्रसादात् तव मेदिनि ।
इति संप्रार्थयेद्देवीं सा ददाति वरं ततः ॥
द्रक्ष्यसि प्राप्स्यसीत्येवं ततः पश्यति साधकः ।
पदे पदे च रत्नानि विधानं योजनत्रये ॥
ततस्तानि समादाय यथेष्टं विहरेद्भुवि ।
आदौ पुरस्क्रियां कुर्याद्वर्णलक्षं जपेन्मनुम् ॥
तद्दशांशं च जुहुयात् संस्कृते हव्यवाहने ।
ससर्पिषा पायसेन तद्दशांशं च तर्पयेत् ॥
मार्जयेत् तद्दशांशेन तद्दशांशेन वैष्णवान् ।
विप्रान् संभोजयेन्मन्त्री ततः साधनमाचरेत् ॥
पुरश्चर्यामकृत्वा तु न मन्त्रः कोऽपि सिद्ध्यति ।

इति धरित्रीसाधनम् ।

एवं किन्नर्यादिसाधनानि विस्तरभयादुपेक्षितानि ।

मेरुतन्त्रं महाकालसंहितां शक्तिसङ्गमम् ।
वाडवानलतन्त्रं च तन्त्रं कालानलाभिधम् ॥
कालीतन्त्रं परातन्त्रं तन्त्रराजं तथैव च ।
मुण्डमालाख्यतन्त्रं च योगिनीहृदयं तथा ॥
कुमारीतन्त्रमाम्नायरहस्यं श्रीमतोत्तमम् ।
कुलिकाम्नायतन्त्रं च कुलचूडामणिं तथा ॥
तन्त्रचूडामणिं तद्वद्भावचूडामणिं तथा ।
समयाचारतन्त्रं च विश्वसारं तथैव च ॥
भैरव्या भुवनेश्वर्याश्चामुण्डायास्तथैव च ।
योगिन्याश्चापि वाराह्याः पञ्च तन्त्राणि च क्रमात् ॥
नीलतन्त्रं गौतमीयतन्त्रं फेत्कारिणीमपि ।

वामकेश्वरतन्त्रं च वीरतन्त्रं तथैव च ॥
संमोहनाख्यतन्त्रं च तन्त्रं गन्धर्वसंज्ञकम् ।
माहेश्वरीयतन्त्रं च तन्त्रं प्रथमसंज्ञकम् ॥
तद्वत् कात्यायनीतन्त्रं बालातन्त्रं तथैव च ।
उड्डीशं मालिनीतन्त्रं गुह्यातन्त्रं तथैव च ॥
कौलेशं कुब्जिकातन्त्रं कुलरत्नावलीमपि ।
विशुद्धेश्वरतन्त्रं च गणेश्वरविमर्षिणीम् ॥
सिद्धसारस्वतं शम्भुविद्यातन्त्रं तथैव च ।
तद्वद्भैरवतन्त्रं च ज्ञानार्णवकुलार्णवौ ॥
तथैव वैष्णवीकल्पं कालीकल्पं कुलामृतम् ।
श्रीमत्प्रत्यङ्गिराकल्पं ताराकल्पं तथैव च ॥
निरुत्तराख्यतन्त्रं च तन्त्रमुत्तरसंज्ञकम् ।
तन्त्रं तद्वत् स्वतन्त्राख्यं मन्त्रदेवप्रकाशिकाम् ॥
श्रीक्रमं ब्रह्मरुद्रादियामलानि कुलागमम् ।
शैषागमं सोमशम्भुमतं देव्यागमं तथा ॥
डामरं भूतपूर्वं च यक्षपर्वं च डामरम् ।
वैनायकीसंहितां च वैशम्पायनसंहिताम् ॥
अगस्त्यसंहितां तद्वद्बृहच्छ्रीक्रमसंहिताम् ।
सुरेन्द्रसंहितां चैव नन्दिकेश्वरसंहिताम् ॥
वशिष्ठसंहितां तद्वद्वायवीयां च संहिताम् ।
गोरक्षसंहितां तद्वत्सिद्धनाथाद्यसंहिताम् ॥
संहितां चैव वाराहीं महाथर्वणसंहिताम् ।
संहितां तत्त्वसाराद्यां दक्षिणामूर्त्तिसंहिताम् ॥

विष्वक्सेनीसंहितां च तथैव ब्रह्मसिंहताम् ।
निबन्धेषु क्रियासारं त्रिपुरासारसंग्रहम् ॥
प्रपञ्चसारं सिद्धान्तसारं मन्त्रमहोदधिम् ।
शारदातिलकं चापि पुरश्चरणचन्द्रिकाम् ॥
मन्त्ररत्नावलीं तद्वदाचारकुसुमावलीम् ।
संग्रहेषु प्रसिद्धेषु ताराभक्तिसुधार्णवम् ॥
आगमाद्यां कल्पलतां मन्त्ररत्नाकरं तथा ।
क्रियासंग्रहनामानं ग्रन्थं सिद्धान्तसंग्रहम् ॥
कालीतत्त्वं तथा श्यामारहस्यं मन्त्रचण्डिकाम् ।
तारारहस्यवृत्तिं च दुर्गाभक्तितरङ्गिणीम् ॥
तन्त्रसारं [illegible] तन्त्रचिन्तामणिं तथा ।
तत्त्वसारं योगसारं श्रीरामार्चनचन्द्रिकाम् ॥
ग्रन्थं विधानमालाख्यं विधिमुक्तावलीमपि ।
नानाविधाः पद्धतीश्च तथोपनिषदोऽपि च ॥
ज्योतिःशास्त्रं शालिहोत्रं पुराणानि स्मृतीरपि ।
सम्यगालोक्य लोकानामुपकारविधित्सया ॥
महाराजधिराजेन सुरराजानुकारिणा ।
श्रीमत्प्रतापसिंहेन विद्याब्धेः पारदृश्वना ॥
संवत्सरे निशानाथवह्निनागधरा-१८३१ङ्किते ।
तपस्यर्जुनपक्षे हि तिथौ भास्करवासरे ॥
पुरश्चर्यार्णवो नाम ग्रन्थ एष विनिर्मितः ।

महीमहीपालगणोत्तमाङ्गस्रग्धूलिभिर्धूसरपादपद्मः ।
वीरो महादानमहाहवेषु प्रतापसिंहो नृपतिश्चकास्ति ॥

उन्मीलयन् स्वजनमानसमानसानि
संकोचयन् प्रतिनृपाननकैरवाणि ।
संमोदयन् सकलकोविदलोककोकान्
यस्य प्रतापसवितोदयते धरायाम् ॥

यस्य क्षोणिपतेः प्रतापतपने विभ्राजमाने परे
राजन्ते न महीक्षितः क्षितितले खद्योतपोतद्युतः ।
यत्कीर्त्तीन्दुमरीचिभिस्त्रिभुवने शुभ्रीकृते सर्वतः
श्यामत्वं द्विषतामकीर्त्तितिमिरस्तोमेषु विश्राम्यति ॥

यावल्लोकोपकारी रचयति दिनकृद्वासरानस्ततन्द्र-
श्चन्द्रो यावत् त्रियामाः कुमुदविशदया ज्योत्स्नयाऽलङ्करोति
यावन्नामानि विष्णोः प्रजपति जनता सन्ति भूतानि याव-
द्भूभर्त्तुस्तस्य कीर्त्तिः स्फुरतु वसुमती मण्डले तावदेषा ॥

यद्विष्णुं प्रवदन्ति वैष्णवगणाः शैवाः शिवं मन्वते
गाणेशा निगदन्ति दन्तिवदनं शौरा दिनेशं विदुः ।
चिच्छक्तिं कलयन्ति शाक्तनिवहाः साङ्ख्याः परं पूरुषं
ब्रह्माब्रह्मविदो वदन्त्यवतु वस्तद्दैव्यसिंहं वपुः ॥

बिभ्रत्यद्भुतभूतिभूतपवचोवैचित्र्यचित्रामृत-
स्रोतशालिनि सन्निबन्धनसरित्सम्भेदमभ्यर्हितम् ।
नव्येऽस्मिन् नरदेवनिर्मितपुरश्चर्यार्णवे द्वादशः
सद्युक्तिं स्फुटमौक्तिकोत्करुचोत्तुङ्गस्तरङ्गो गतः ॥

इति श्रीगिरिराजचक्रचूडामणिनरनारायणेत्यादिविविधबिरुदावलीविराजमानमानोन्नत श्रीमन्महाराजाधिराजश्रीप्रतापसिंहसाहदेवविरचिते पुरश्चर्यार्णवे ब्राह्मणादिमन्त्रपुरश्चरणपूर्वकयन्त्रस्तवकवचादिपुरश्चरणभेदनिरूपणं नाम द्वादशस्तरङ्गः समाप्तः ।

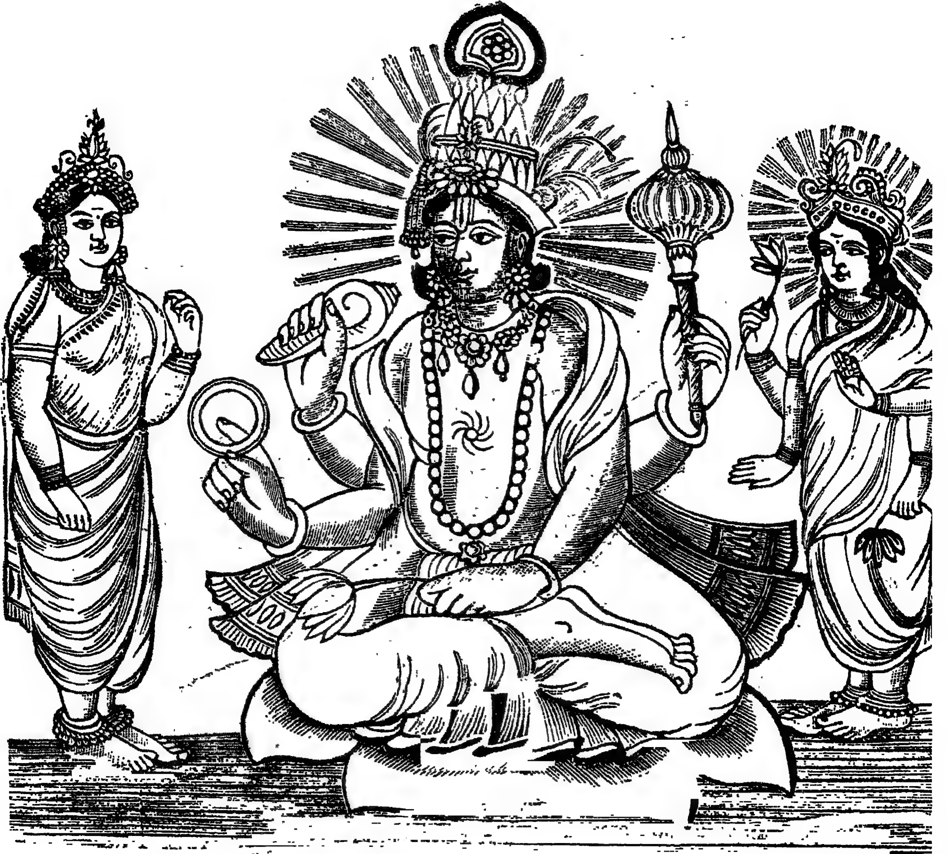
शुभमस्तु ।



गणेशध्यानम् । (६३० पृ. २० पं.)



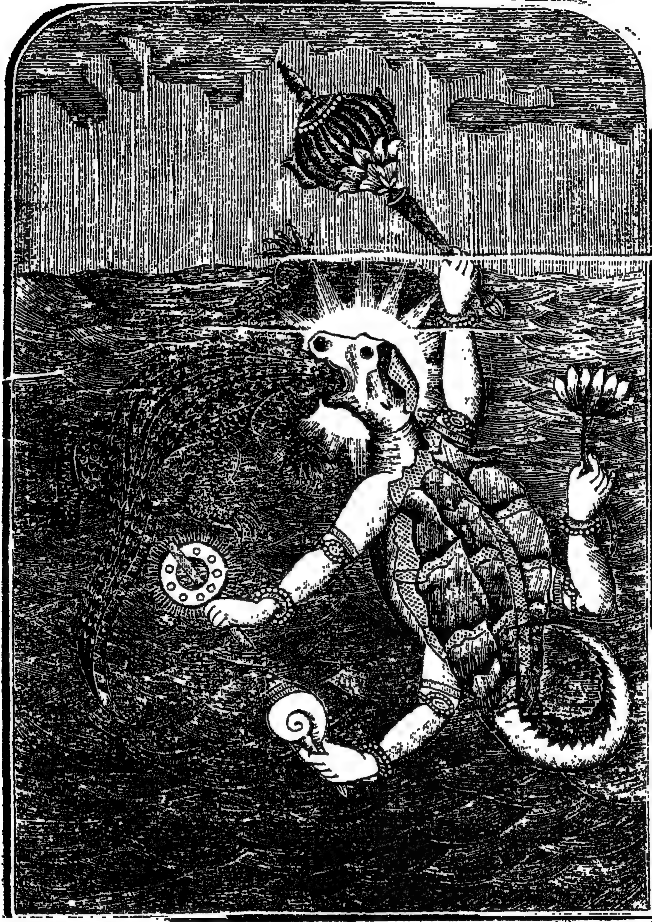
सूर्यध्यानम् । (६४० पृ. १ पं.)



विष्णुध्यानम् । (१४२ पृ. १९ पं.)



मत्स्यध्यानम् । (६४६ पृ. ४ पं.)



कूर्मध्यानम् । (६४७ पृ. १९ पं.)



वराहध्यानम् । (६४८ पृ. १० पं.)



नृसिंहध्यानम् । ( ६५२ पृ. २५ पं. )



वामनध्यानम् । (६६९ पृ. १५ पं.)



परशुरामध्यानम् । (६७१ पृ. ४ पं.)



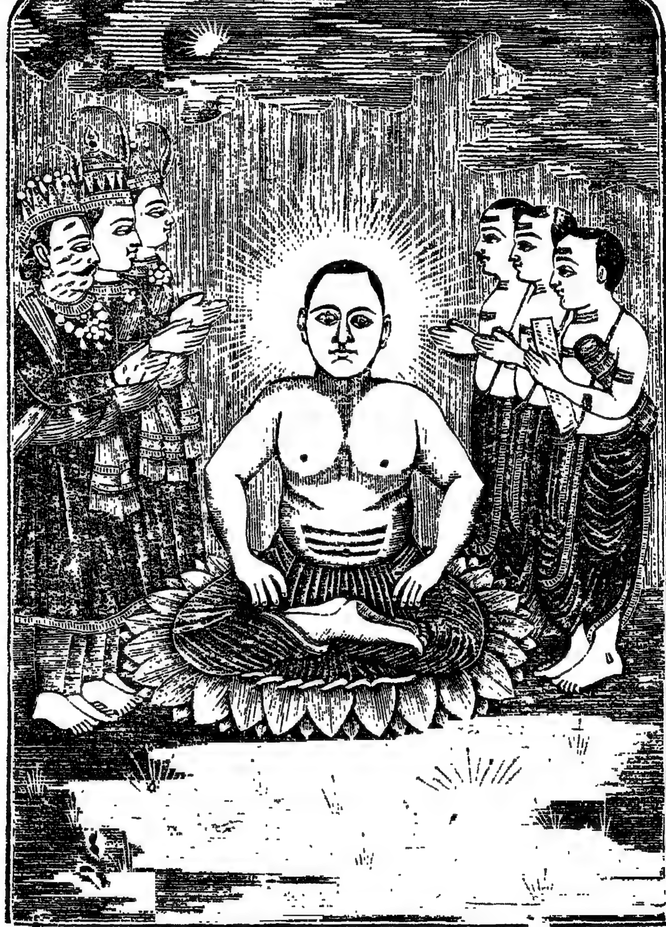
रामध्यानम् । (६७६ पृ. १८ पं.)



बलरामध्यानम् । (६८३ पृ. २० पं.)



कृष्णध्यानम् । (६८९ पृ. ४ पं.)



बुद्धध्यानम् । (६९१ पृ. २६ पं.)



कल्किध्यानम् । (६९२ पृ. १२ पं.)



हयग्रीवध्यानम् । (६९२ पृ. १७ पं.)



शिवध्यानम् । (६०७ पृ. २१ पं.)



शरभध्यानम् । (७०४ पृ. १८ पं.)

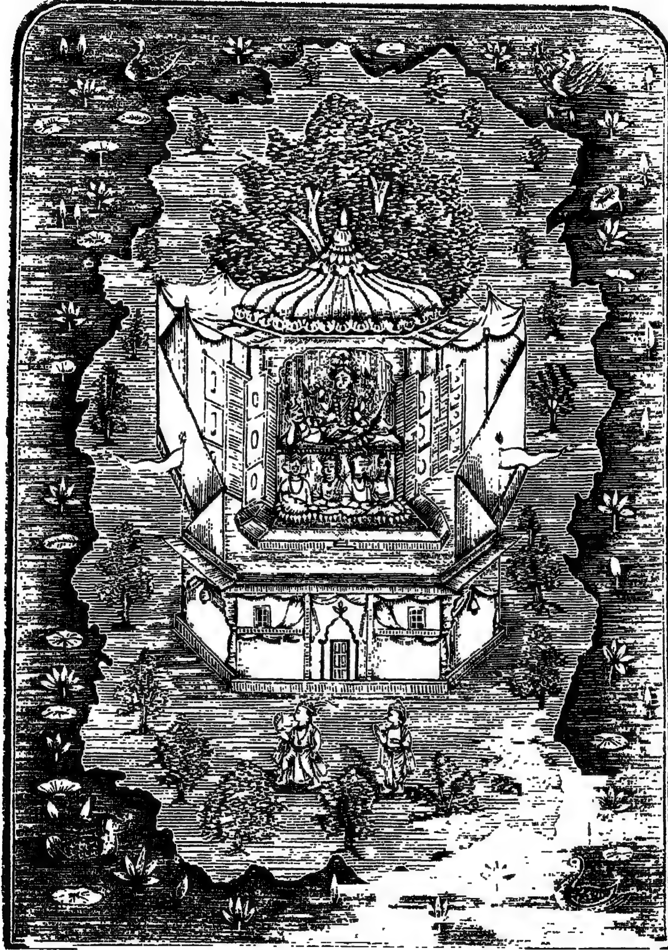


कार्त्तवीर्य-(सहस्रार्जुन-)ध्यानम् । (७१० पृ. १६ पं.)





ताराध्यानम् । (७८६ पृ. २ पं.)



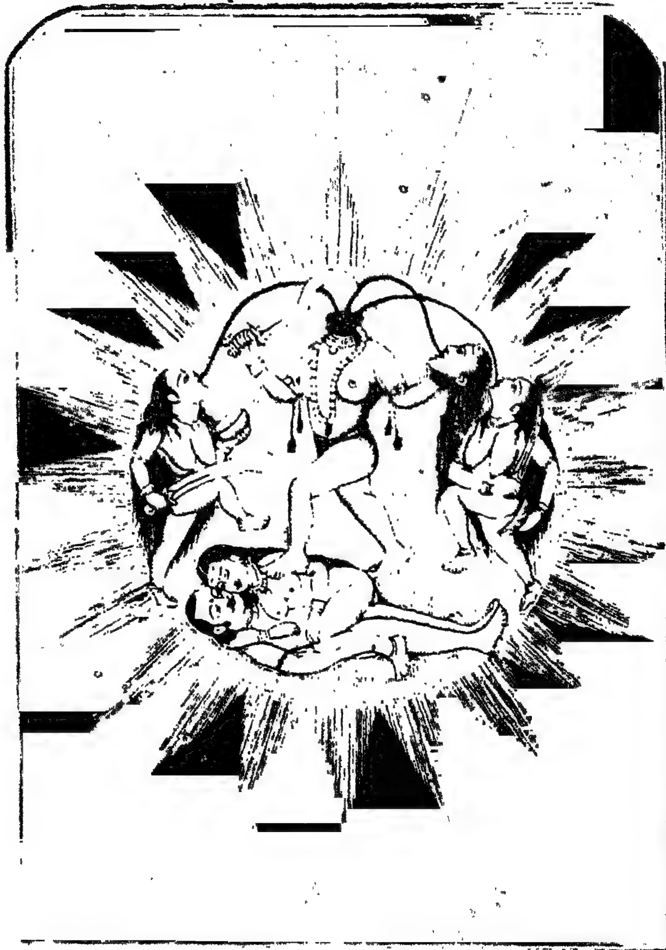
षोडशी-( श्रीविद्या- )ध्यानम् । ( ७९९ पृ. १० पं. )



भुवनेश्वरीध्यानम् । (८०६ पृ. २९ पं.)



भैरवीध्यानम् । (८०९ पृ. ९ पं.)



छिन्नमस्ताध्यानम् । (८१६ पृ. ४ पं.)



धूमावतीध्यानम् । (८२२ पृ. ९ पं.)



बगलामुखीध्यानम् । (८२६ पृ. १३ पं.)



मातङ्गीध्यानम् । (८२७ पृ. १६ पं.)



लक्ष्मीध्यानम् । (८३२ पृ. ९ पं.)



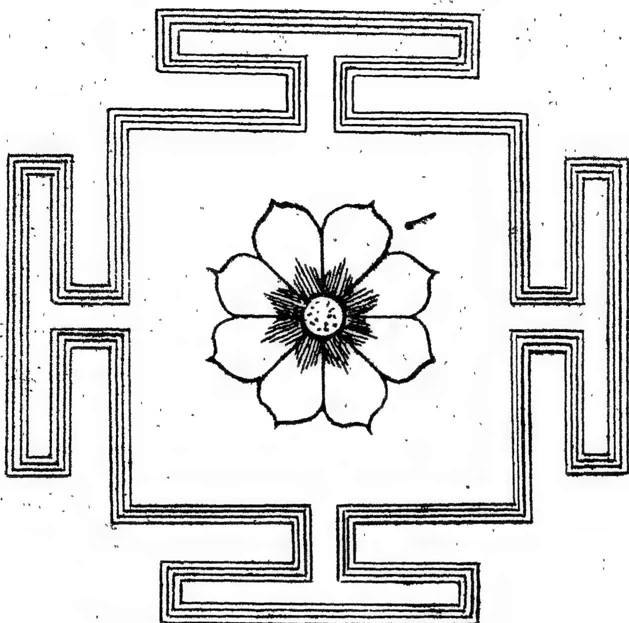
दशभुजादुर्गाध्यानम् । (९६२ पृ. २१ पं.)



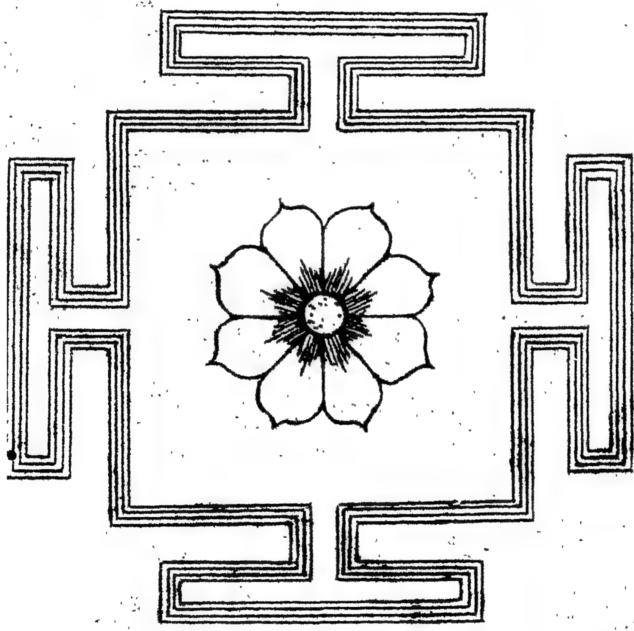
शीतलाध्यानम् । (११२९ पृ. ११ पं.)

[ १

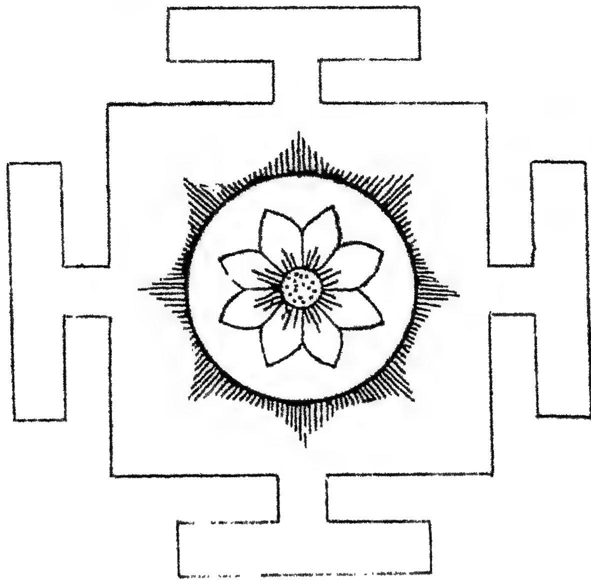
हंसा यन्त्रम् (पृ० ११७८ पं० १)



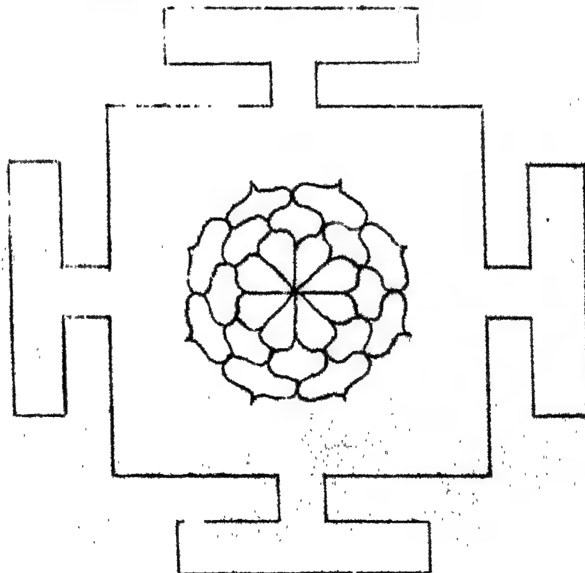
कार्त्तवीर्ययन्त्रम् (पृ० ११४६ पं० १)



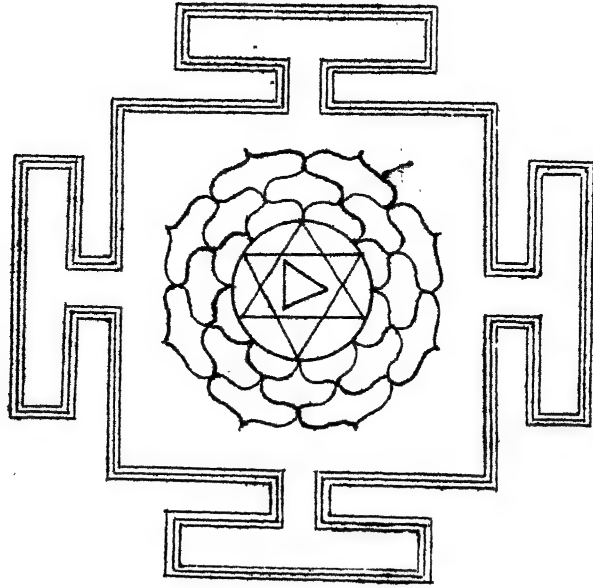
वराहयन्त्रम् (पृ- ११५१ पं- १६)



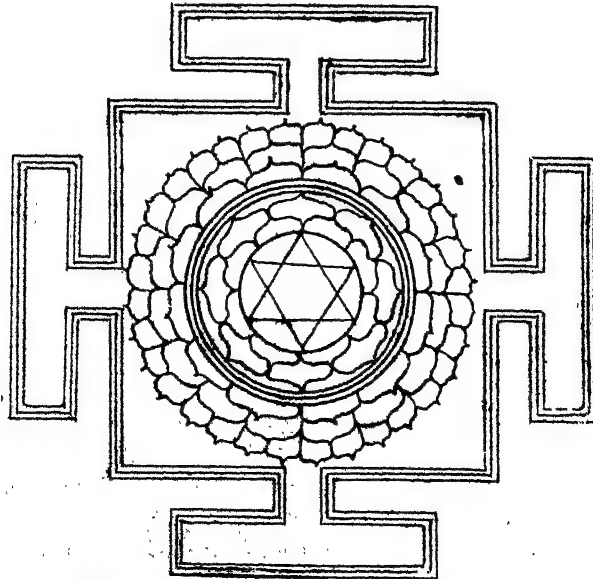
नृसिंहयन्त्रम् (पृ- ११४१ पं- १९)



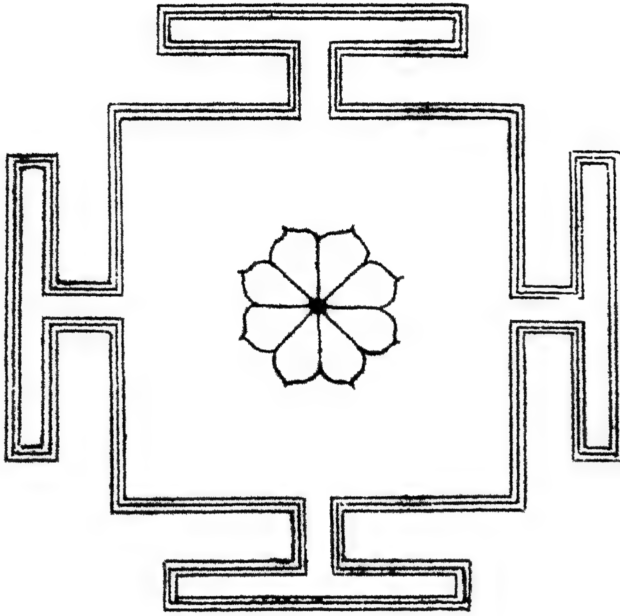
बगला यन्त्रम् (पृ० ११५६ पं० २१) 



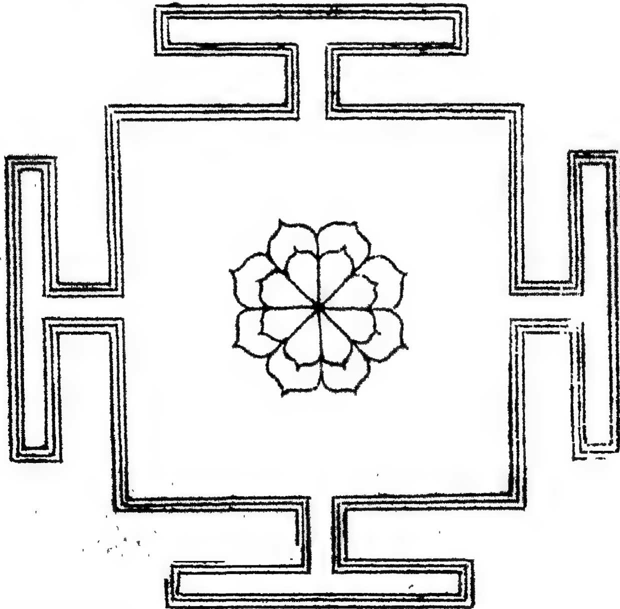
रामयन्त्रम् पृ० ११४२ पं० ७)



विघ्नराज - यन्त्रम् (पृ· ११४० पं·९ )

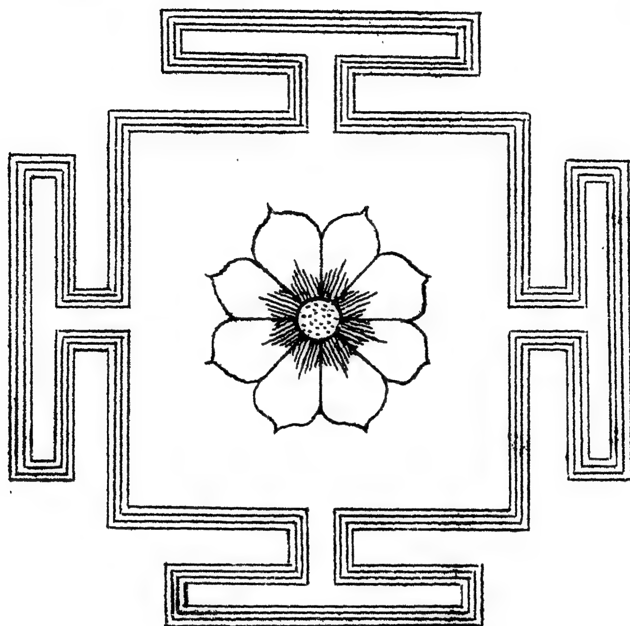


दुर्गा यन्त्रम् (पृ· ११५९ पं· ५ )

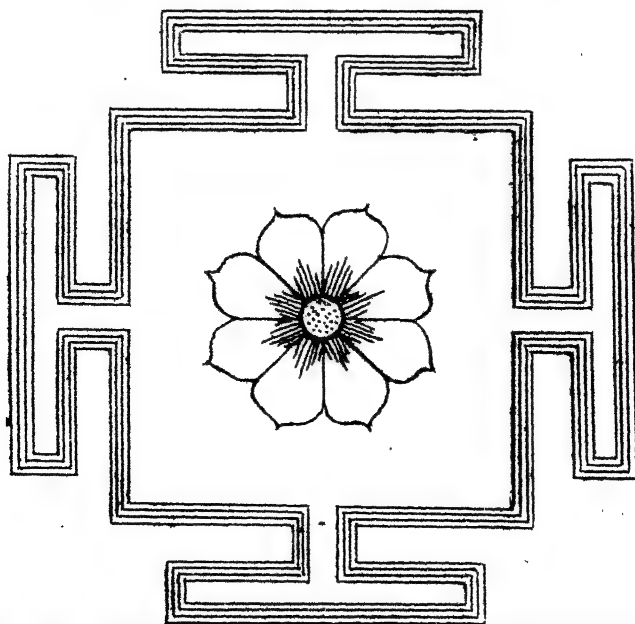


हयग्रीवयन्त्रम् (पृ० ११४५ पं० ६)

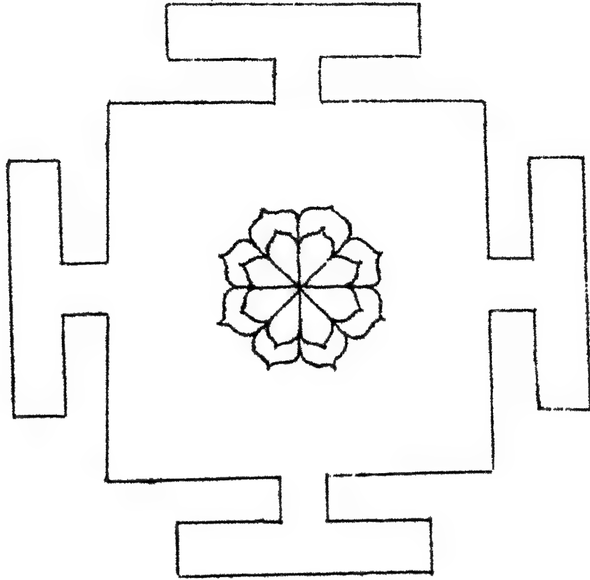




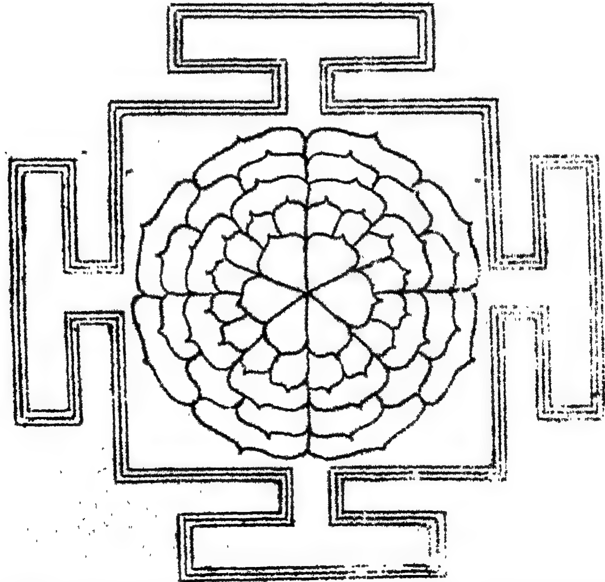
कल्किकयन्त्रम् (पृ० ११४५ पं० ५)



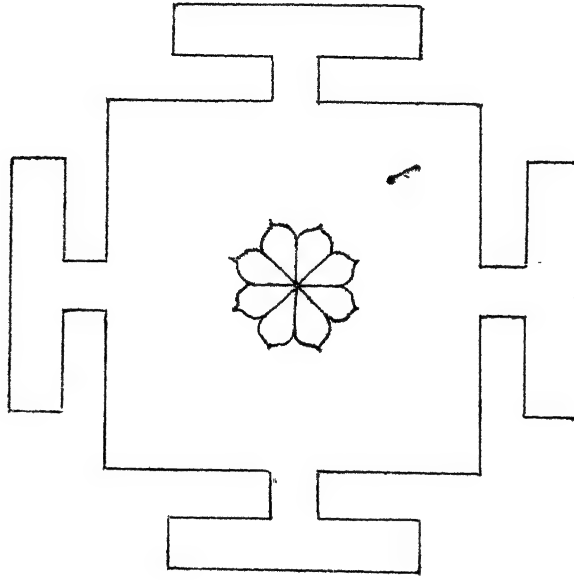
सूर्य यन्त्रम् (पृ· ११४० पं· २३)



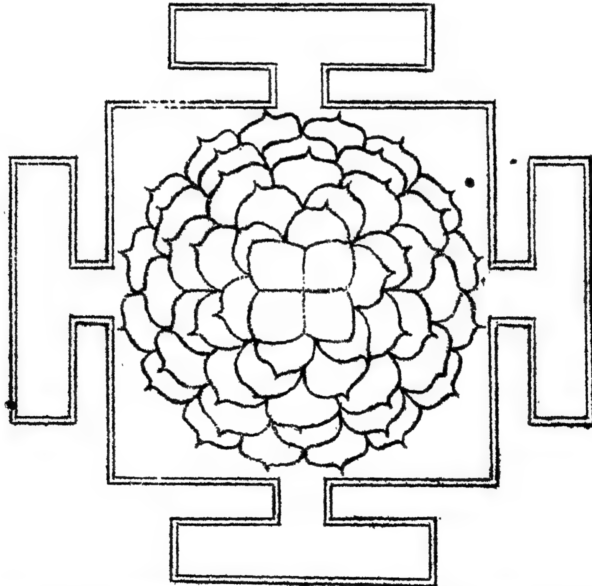
वामनयन्त्रम् (पृ· ११४१ पं· २६)



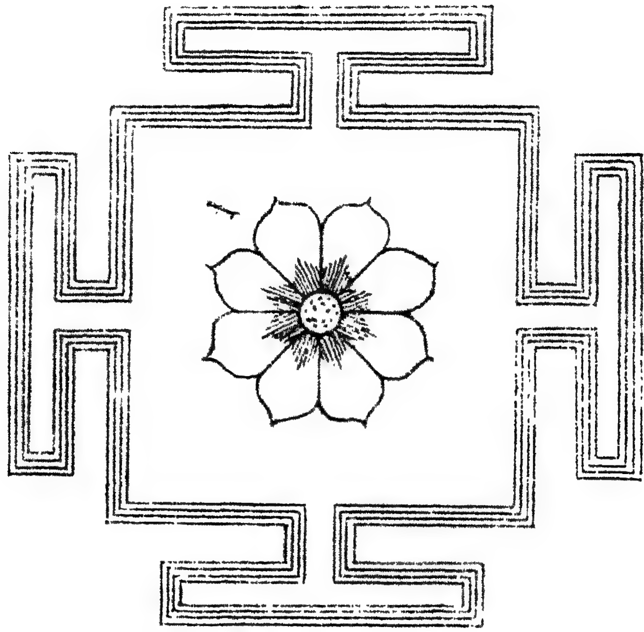
कूर्मयन्त्रम् ( ११४१ पं· १४)



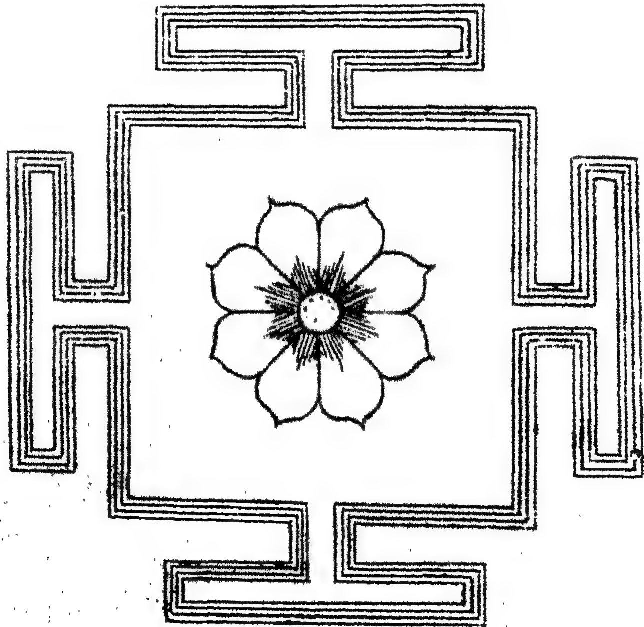
परशुराम यन्त्रम् (पृ· ११४२ पं-२



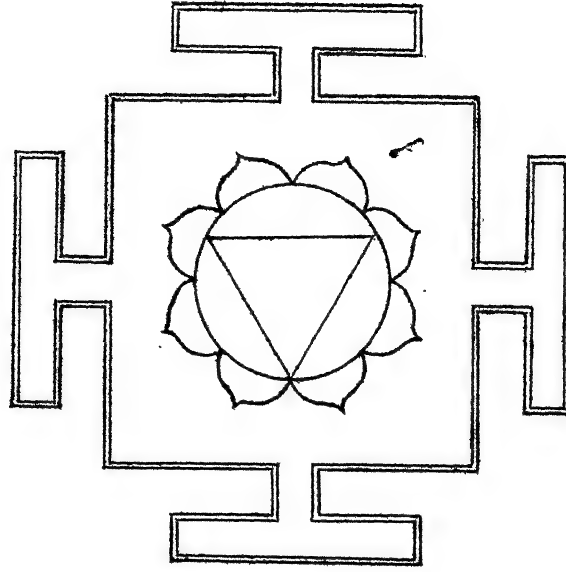
बलरामयन्त्रम् (पृ· ११४५ पं·१)



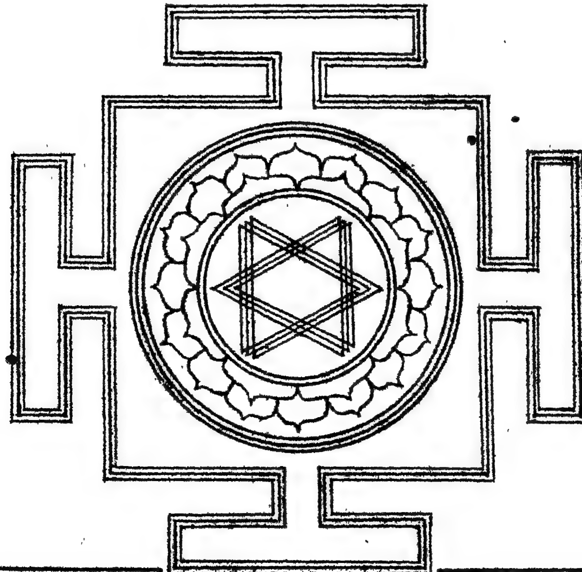
विष्णुयन्त्रम् (पृ· ११४१ पं·७)



तारायन्त्रम् (पृ- ११५१ पं- १)

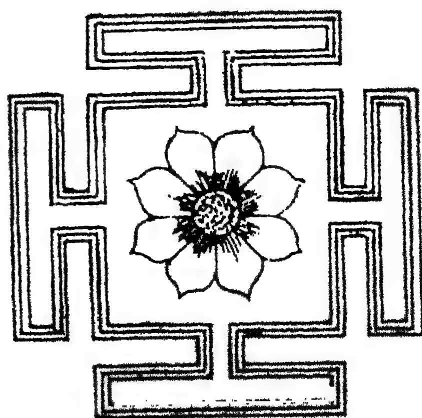


षोडशी यन्त्रम् (पृ- ११५२ पं- ७)

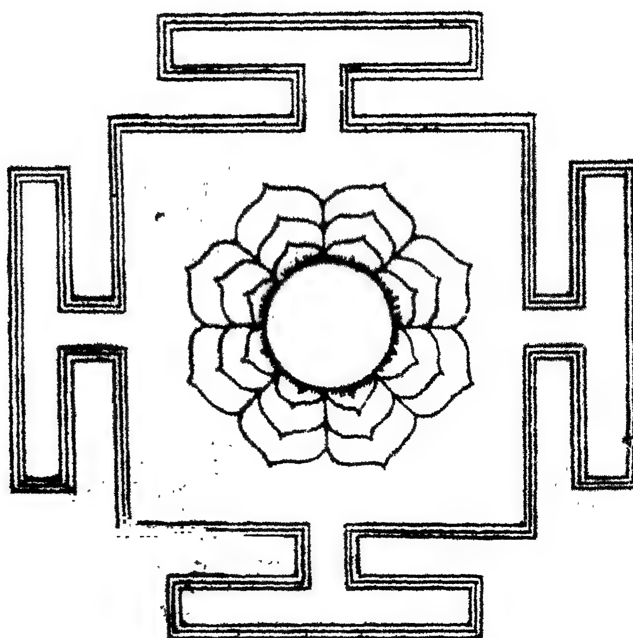


शीतला यन्त्रम्

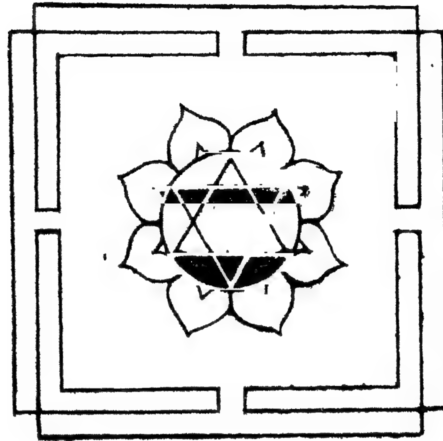
कर्णिका बाह्य भागे वै चाष्ट पंत्र सुशोभनम् ।
चतुर्द्वार समायुक्तं भूपुर च त्रिरेखकम् ॥



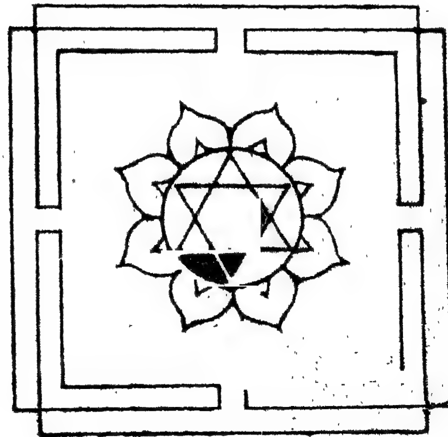
शिव यन्त्रम् ( पृ· ११४५ पं· १२ )



मातङ्गीयन्त्रम् (पृ० ११५६ पं० २५)

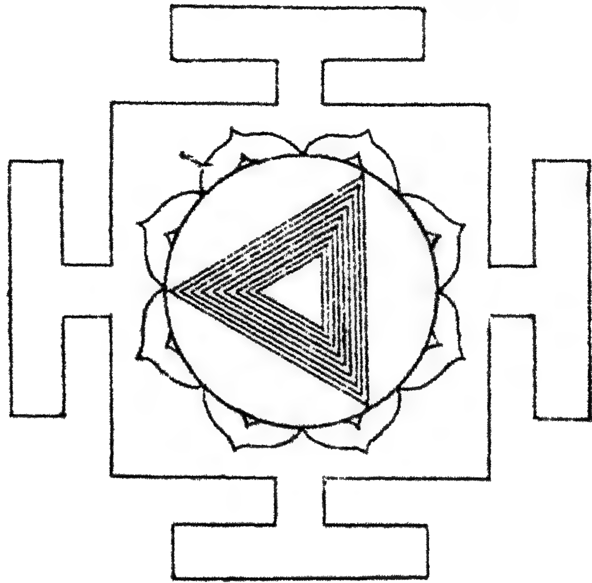


धूमावतीयन्त्रम् (पृ० ११५६ पं० १६)

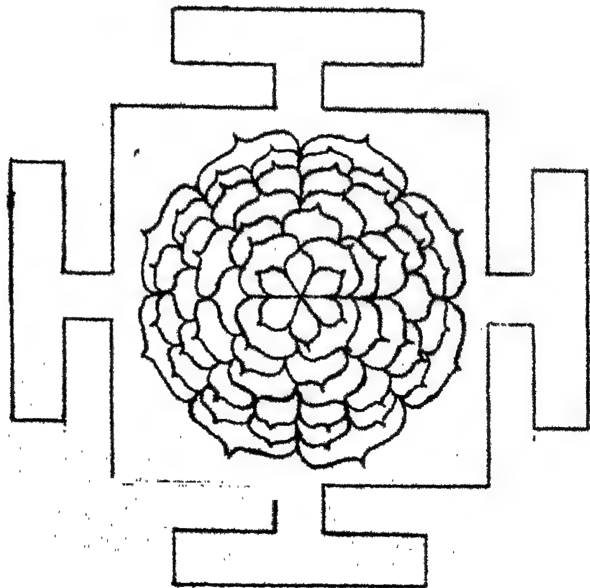


१२

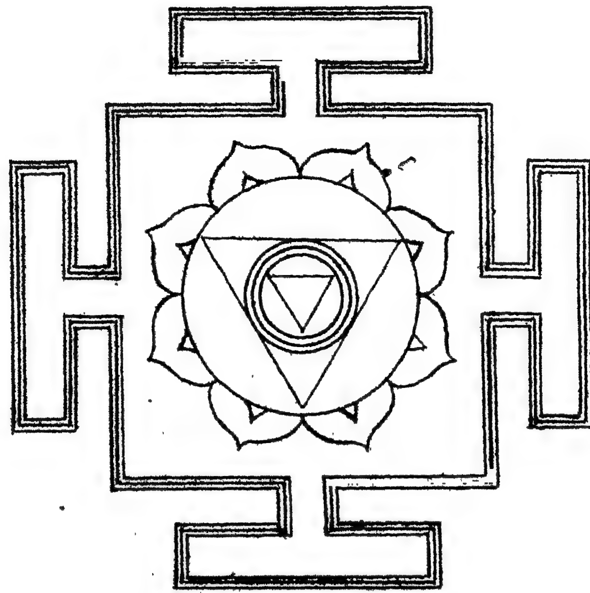
त्रिपुरभैरवीयन्त्रम् (पृ· ११५४ पं·२४)



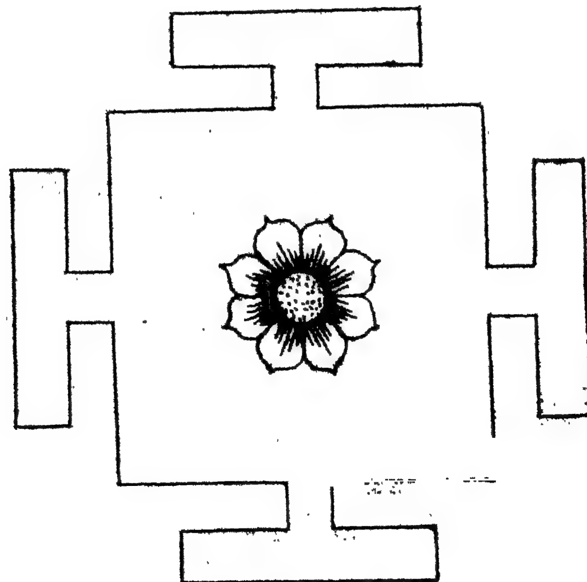
मत्स्ययन्त्रम् (पृ· ११८१ पं· १०



छिन्नमस्तायन्त्रम् (पृ. ११५५ पं. १५)

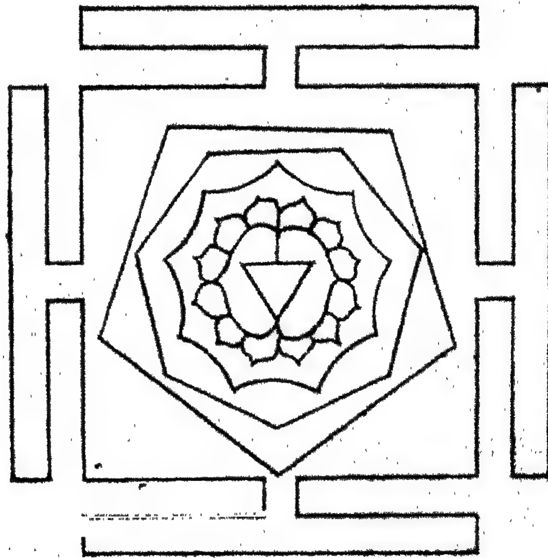


लक्ष्मी यन्त्रम् (पृ. ११५७ पं. ११)

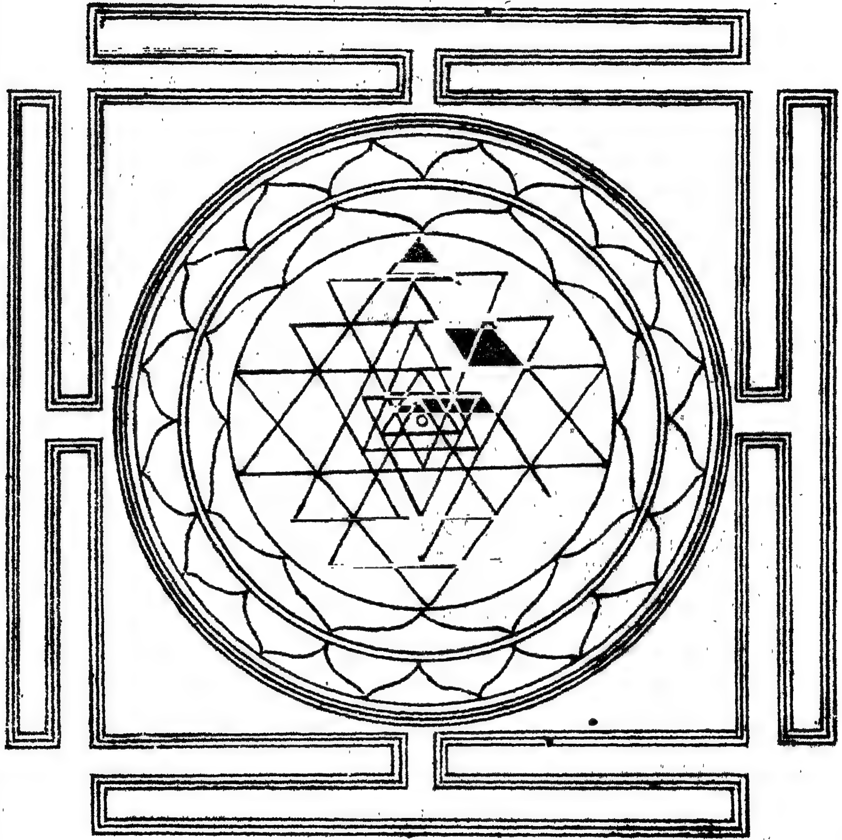


शरभ यन्त्रम्॥

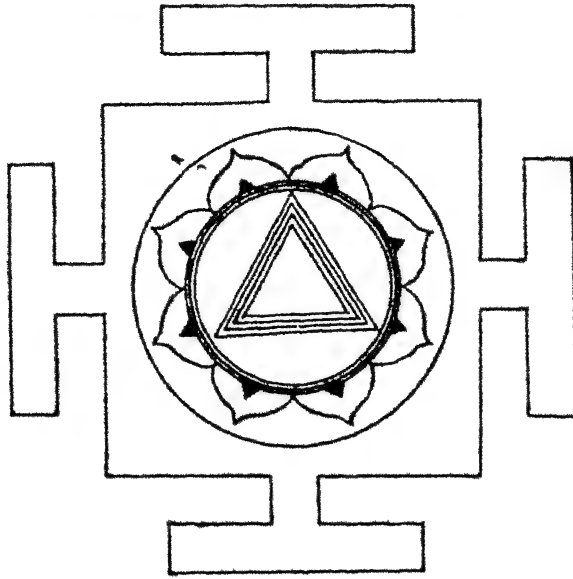
त्रिकोणं विलिखेत् पूर्वं तद्बाह्ये तु दलद्वयम् ।
द्वादशारं तु तद्बाह्ये तद्बाह्ये तु नवास्त्रकम् ॥
सप्तास्त्रं चैव पञ्चास्त्रं भूपुरं च क्रमाल्लिखेत् ।
पावकादि पृथिव्यन्तं लिखेन्मन्त्रं यथा क्रमम् ॥
तद्बहिः कोणषट्केषु भागारभ्यमन्तु शिवे ।
खट् फट् जहि तथा छिन्धि भिन्धि हन्धि लिखेत् क्रमात् ॥
आकारादि क्षकारान्तं वेष्टये द्विन्दु संयुतम् ।
महायन्त्रमिदं पुण्यं सप्तावरणकं परम् ॥



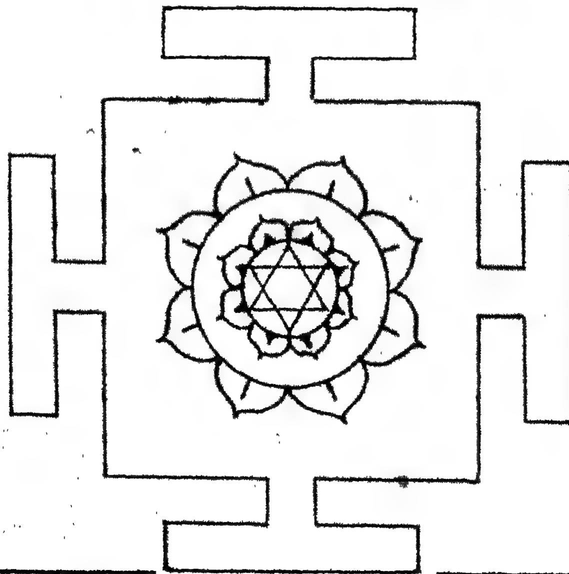
श्री चक्रम् (पृ॰ ११५३ पं॰ ८)



श्रीकाली यन्त्रम् (पृ· ११४८ पं· १२



भुवनेश्वरी यन्त्रम् (पृ· ११५६ पं· २०)



# वर्णबीजकोशः ।

[ अ ]

अकूपारः=हूँ
अक्षतिः=ट, य, यँ
अक्षम्=ऊँ, ब्री
अगः=द, हूँ
अगस्त्यः=औं
अगिरः=र, रँ
अग्निः=र, रँ
अग्निवधूः=स्वाहा
अग्निवल्लभा=,,
अग्निसुन्दरी=,,
अङ्कुशः=ट, क्रों
अङ्कुशी=ञ
अचलः=द, हूँ
अचलकीला=ल, लँ
अचला=ल, लँ
अच्युतः=अ, उ, क्लीँ
अजगत्प्राणः=ट, य, यँ
अजः=ए, द्रां, स, ँ
अजितः=अ, उ, क्लीँ
अजेशः=ज, झ
अञ्जनी=ड
अट्टहासः=ग, ग, म, ह
अण्डजः=क, कँ, म
अतिथीशः=ऋ
अत्रिः=द
अत्रिनेत्रजः=ए, द्रां, म, ँ
अत्रीशः=द

अदितिः=ल, लँ
अद्रिः=द, हूँ
अध्वरः=ऐ, ऐँ
अधःक्षजः=अ, उ, क्लीँ
अधोदन्तगः=औं
अनङ्गः=ख, इ, क, क्लीँ
ह, हँ [ह, हँ
अनन्तम्=आ, क्ष, ख,
अनन्ता=ल, लँ
अनन्यजः=इ, क, क्लीँ
अनलः=र, रँ
अनिरुद्धः=ः
अनिलः=ट, य, यँ
अनुग्रहेशः=औं [ख, ह, हँ
अन्तरि(री)-क्षम्=आ, क्ष,
अन्तिमः=क्ष
अन्त्यः=क्ष [ह
अन्धकरिपुः=ए, ग, स, ँ
अन्धतमः=औं
अन्धम्=व, वँ
अपमारकः=र, रँ
अपांनाथः=हूँ
अपांपतिः=हूँ
अर्पितम्=र, रँ
अबलम्=व, वँ
अब्जः=ए, द्रां, स, ँ
अब्जयोनिः=क, क, म
अब्धिद्वीपा=ल, लँ
अब्धिबीजम्=हूँ

अब्धिमेखला=ल, लँ
अब्धिशयनः=अ, उ, क्लीँ
अभ्रम्=आ, ख, व, वँ,
ह, हँ
अभ्रपुष्पम्=व, वँ
अमातिः=ए, द्रां, स, ँ
अमरेशः=इ, उ, ल
अमृतदीधितिः=ऐ, द्रां,
स, ँ
अमृतम्=व, वँ
अमृता=ए
अमृताद्यः=ट [ह, हँ
अम्बरम्=आ, आँ ख,
अम्बु=व, वँ,
अम्बुधा=व, वँ
अम्भः=व, वँ
अम्भोधिः=हूँ
अम्भोनिधिः=हूँ
अम्भोराशिः=हूँ
अरणिः=र, रँ
अरिमर्दनः=अ, उ, क्लीँ
अरुणः=उ, म
अर्कः=ह, म
अर्घिः=उ
अर्घीशः=ऋ
अर्णः=व, वँ
अर्णवः=कँ
अर्धगण्डी=ख
अर्धनारीशः=ह

अर्धर्चः = ऌ
अर्यमा = म
अर्हः = इ, ल
अलकनन्दा = ऌ
अवनिः = ल, लँ
अवनीधरः = द, दूँ
अश्वरः = न
अष्टकर्णः = क, कँ, म
अष्टमूर्त्तिः = ए, ग, स, ह
असितः = ऌ
अस्त्रम् = फट्
अस्थिमाली = ए, ग, स, [ह
अस्थिसंज्ञः = श
अहर्पतिः = म
अहस्करः = म
अहार्यः = द, दूँ
अहिद्विट् = इ, ल

[ आ ]

आः = क, कँ, म [हँ
आकाशः = आ, ख, ह,
आखण्डलः = इ, ल
आखुगः = गँ [म, क्लीँ
आत्मभूः = इ, क, कँ,
आत्मा = अ
आदिदेवः = अ, उ, क्लीँ
आदिमः = घ
आदिमा = ल, लँ
आद्या = ल, लँ
आनन्दः = उ
आपः = व, वँ
आप्यायनी = ओ
आलयः क्ष
आवकः = ट, य, यँ
आशयाशः = र, रँ
आशुगः = ट, य, यँ
आशुशुक्षणिः = र, रँ
आश्रयाशः = र, रँ
आषाढी = त
आस्फुजित् = औँ

[ इ ]

इच्छा = क्ष
इडा = ल, लँ
इडिका = ल, लँ
इन्दिरा = ई, श्रीँ
इन्दुः = ऐ, ग्लाँ, स,
इन्द्रः = इ, ल
इन्द्रजनकः = दूँ, क्लीँ
इन्द्रधाम = ऊ
इन्द्रावरजः = अ, उ, क्लीँ
इन्धिका = उ
इरः = य
इरा = ल, लँ, व, वँ
इरेशः = अ, उ, क्लीँ
इला = ल, लँ
इलिका ल, लँ

[ ई ]

ईरः = य
ईरा = ल, लँ
ईशः = ए, ग, स, सौ, ह
ईशानः = ए, ग, स, ह
ईश्वरः = ए, ग, स, ह
ईहा = ऊँ

[ उ ]

उः = ए, ग, स, ह
उग्रः = ए, ग, स, ह
उग्रशेखरा = ऌ
उडु = ग्लाँ
उडुपः = ऐ, ग्लाँ
उत्कारी = व
उदकम् = व, वँ
उदधिः = दूँ
उदधिवस्त्रा = ल, लँ
उदम् = व, वँ
उदर्चिः = र, रँ [क्लीँ
उन्मत्तोन्मत्तकः = इ, क,
उपलः = क्षुँ
उपान्त्यगः = लु
उपेन्द्रः = अ, उ, क्लीँ [ह
उमाकान्तः = ए, ग, ण, स,
उमापतिः = ए, ग, स, ह
उरोजः = जँ
उर्वरा = ल, लँ
उर्वी = ल, लँ
उशनाः = औँ
उषर्बुधः = र, रँ
उषर्बुधप्रिया = स्वाहा
उष्णरश्मिः = म

[ ऊ ]

ऊर्जम् = व, वँ
ऊर्ध्वदेवः = अ, उ, क्लीँ
ऊर्ध्वदन्तः = ओ
ऊर्ध्वम् = ए, ऐँ [ह
ऊर्ध्वरेताः = ए, ग, स,
ऊर्मिः = व, वँ
ऊर्मिमाली = दूँ

[ ऋ ]

ऋक्षम् = ग्लाँ
ऋतधामा = क्लीँ

ऋतम्=व, वँ
ऋद्धिः=ख
ऋभुक्षाः=इ, ल
ऋषिकुल्या=लृ

[ ए ]

एकदन्तः=गँ
एकनेत्रः=गँ, छ
एकशृङ्गः=अ, उ, क्लीँ
एकाङ्घ्रिः=लृ
एणतिलकः=ऐ, द्राँ, स, ँ
एणाङ्कः=ऐ, द्राँ, स, ँ

[ ऐ ]

ऐन्द्रम्=ई
ऐश्वरी=उ

[ ओ ]

ओषधीशः=ऐ, द्राँ, स, ँ

[ क ]

कंसारातिः=अ, उ, क्लीँ
कंसारिः=अ, उ, क्लीँ
ककुद्मतः=ल
कङ्काली=ए, ग, स, ह,
कचङ्गलः=रूँ
कचम्=ज
कच्छपः=च
कच्छेष्टः=च
कञ्जजः=कँ, कँ, म
कटकी=क्राँ
कटप्रः=ए, ग, स, ह,
कटी=क्राँ
कठिनपृष्ठगः=च
कण्ठेकालः=ए, ग, स, [ह

कन्दर्पः=इ, क, क्लीँ
कन्धिः=रूँ
कन्यास्तनः=ः
कपन्धम्=व, वँ
कपर्दी=ए, ग, स, ह
कपालभृत्=ए, ग, स, ह
कपिलः=र, रँ
कबन्धम्=व, वँ
कमठः=च
कमण्डलुः=ठ
कमलम्=व, वँ
कमला=श्रीँ
कमलाक्षी=स्त्रीँ
कमलासनः=क, कँ, म
कमलोद्भवः=क, कँ, म
कम्=व, वँ
कम्बलम्=व, वँ
करकम्=कुँ
करटी=क्राँ
करभी=क्राँ
करादिगः=क
करी=क्राँ
करेणुः=क्राँ
कर्णः=उ
कर्णिकी=क्राँ
कर्बुरम्=व, वँ
कर्मप्रिया=सौ
कलानिधिः=ऐ, द्राँ, स, ँ
कलावान्=ऐ, द्राँ, स, ँ
कल्पः=ध्रुँ
कल्पान्तः=ध्रुँ
कविः=लृ, ब्लौँ
काङ्क्षा=ऊँ

काण्डम्=व [क्लीँ, स
कान्तः=ऐ, द्राँ, इ, उ, क,
कान्ता=स्त्रीँ
कान्तिः=फ, हँ
कान्तिमान्=इ, क, क्लीँ
कार्पाशम्=ऊँ, ब्रीँ
कामः=इ, क, क्लीँ
कामगः=इ, क, क्लीँ
कामचारः=इ, क, क्लीँ
कामदः=इ, क, क्लीँ
कामरूपम्=ऐ
कामवर्धनः=इ, क, क्लीँ
कामिकः=त
कामी=इ, क, क्लीँ
कामुकः=इ, क, क्लीँ
कामेशी=ई
कायः=क्ष
कार्शिकः=ऋ
कालः=म
कालञ्जरः=ए, ग, स, ह
कालनेमिरिपुः=अ, उ, क्लीँ
कालम्=हूँ
काली=क्रीँ
काव्यः=लृँ, ब्लौँ
काशीनाथः=ए, ग, स, ह
काश्यपी=ल, लँ
किङ्करी=ऊ
कीलालम्=व, वँ
कुः=ल, लँ
कुञ्जरः=क्राँ
कुद्दारः=द, रूँ
कुन्ती=क्राँ

कुमारसूः = ऌ [स,ः
कुमुदः = ट
कुमुदिनीपतिः = ए, द्राँ.
कुमुदेशः = ए, द्राँ स, ः
कुमोदकः = अ, उ, क्लीँ
कुम्भी = क्राँ
कुलेश्वरः = ए, ग, स, ह
कुवेरदृक् = ऌ
कुशम् = व, वँ
कुसुमेषुः = इ, क, क्लीँ
कूटत्रयम् = ऐँ क्लीँ ह्रीँ
कूटम् = क्षौँ, श
कूर्मः = च
कूलङ्कषः = रूँ
कृत्तिवासाः = ए, ग, स, ह
कृपा = ऋ
कृपीटम् = व, वँ
कृपीटयोनिः = र, रँ
कृशा = ह्रीँ
कृशानुः = र, रँ
कृशानुरेताः = ए, ग, स, ह
कृपाद्रितः = क
कृष्णः = अ, उ, क्लीँ
कृष्णवर्त्मा = र, रँ
कृष्णा = थ
कृष्णार्चिः = र, रँ
केशवः = अ, उ, क्लीँ
केशी = अ, उ, क्लीँ
कैटभजित् = अ, उ, क्लीँ
कैलासनिकेतनः = ए, ग, स, ह
कोपीनत्वम् = क्ष
कोमलम् = व, वँ
कौमुदीपतिः = ए, द्राँ, स, ः
क्रतुध्वंसी = ए, ग, स, ह
क्रिया = ल
क्रूरः = ः
क्रोडकान्ता = ल, लँ
क्रोडाङ्गः = च
क्रोधिनी = र
क्रोधीशः = क
क्लीववक्त्रम् = ङ
क्लेदुः = ए, द्राँ, स, ः
क्षपाकरः = ए, द्राँ, स, ः
क्षमा = ल, लँ
क्षरम् = व, वँ
क्षान्तिः = उ
क्षामिदम् = ध्रुँ
क्षितिः = ल, लँ
क्षितिभृत् = द, रूँ
क्षीरम् = व, वँ
क्षीराब्धिः = रूँ [स, ः
क्षीरोदनन्दनः = ए, द्राँ,
क्षोणिः = ल, लँ
क्षोणिप्राचीरम् = रूँ
क्षौणिः = ल, लँ
क्ष्मा = ल, लँ
क्ष्माभृत् = द, रूँ

[ ख ]

खगवती = ल, लँ
खचमसः = ए, द्राँ, स, ः
खड्गीशः = व
खण्डनी = ल, लँ [ह
खण्डपरशुः = ए, ग, स,
खण्डपशुः = ए, ग, स, ह
खम् = ह, हँ
खरुः = ए, ग, स, ह
खश्वासः = ट, य, यँ
खसंस्थितः = क्ष
खसर्पणः = क, कँ, म
खापगा = ऌ
खेजरः = ए, ग, स, ह
खेलकः = इ, क, क्लीँ

[ ग ]

गगनम् = ख, ह, हँ
गङ्गा = ऌ
गङ्गाधरः = ए, ग, स, ह, रूँ
गजः = क्राँ
गजमुखः = गँ
गजाङ्कुशः = उ
गजाननः = गँ
गजास्यः = गँ
गणाधिपः = गँ
गणेशः = गँ
गदाग्रजः = अ, उ, क्लीँ
गदाधरः = अ, उ, क्लीँ
गदाभृत् = अ, उ, क्लीँ
गन्धवती = ल, लँ
गन्धव-(वा)हः = ट, य, यँ
गभस्तिमान् = म
गरुडध्वजः = अ, उ, क्लीँ
गर्जनम् = ह
गान्दिनी = ऌ
गायनः = इ, क, क्लीँ
गिरिः = द, रूँ
गिरिकर्णिका = ल, लँ

गिरि(री)शः=ए, ग, स, ह
गिरिसुता=ह्रीँ
गीतिजः=इ, क, क्लीँ
गुडाकेशः=अ, उ,ए, ग, स, ह, क्लीँ
गुणसागरः=क, कँ
गुह्यः=च
गूढाङ्गः=च
गृध्रः=अ, उ, क्लीँ
गोत्रः=द
गोत्रभित्=इ, लँ
गोत्रा=ल, लँ
गोपालः=अ, उ, क्लीँ
गोपेन्द्रः=अ, उ क्लीँ
गोमुखः=ग
गोवर्धनधरः=अ,उ, क्लीँ
गोविन्दः=अ, उ, क्लीँ
गौः=ऌ, ल, लँ
ग्रहपतिः=म
ग्रावा=द
ग्लौः=ऐ, द्राँ, स, ॅ

[ घ ]

घनः=घ
घनम्=व, वँ
घनरसः=व, वँ
घनस्मरः=घ
घृतम्=व, वँ
घोषः=ह

[ च ]

चक्रपाणिः=अ,उ, क्लीँ
चक्रभृत्=अ, उ, क्लीँ
चक्रवालुका=ख
चक्री=अ, उ, क, क्लीँ
चञ्चलः=च, ट, य, यँ
चटी=ह्रीँ
चण्डः=ऐँ
चण्डांशुः=म
चण्डिकेश्वरः=ऐ, ऐँ
चण्डीभम्=ह्राँ
चतुराननः=क, कँ, ज
चतुर्मुखः=अ, क, कँ
चतुष्कलम्=हुँ
चन्दिरः=ऐ, द्राँ, स, ॅ
चन्द्रः=ऐ, द्राँ, स, ॅ
चन्द्रमाः=ऐ, द्राँ, स,ॅ
चन्द्रबिम्बम्=ठ
चन्द्रशेखरः=ए,ग,स,ह
चन्द्रापीडः=ए,ग,स, ह
चरः=च
चर्म=ऐ
चर्मण्यम्=ऐ
चर्मवसनम्=ऐँ
चाणूरसूदनः=अ,उ,क्लीँ
चामुण्डा=ब्रीँ
चारः=ण
चारुकम्=छ्रीँ
चार्वङ्गी=ऐ, छ्रीँ, ऐँ
चित्=ऐँ
चित्रकारी=च
चित्रकूटः=ऌ,
चित्रकोणः=ए
चित्रभानुः=म र, रँ,
चित्रमूर्त्तिः=ई
चित्रमूर्त्तीशः=ई
चित्राटीरः=ऐ, द्राँ, स,ॅ
चिन्तामणिः=क, कँ
चिह्नम्=हूँ
चेटी=ह्रीँ

[ छ ]

छगलाण्डः=ब
छविः=फ, हँ
छागवाहनः=र, रँ
छायामृगधरः=ऐ,द्राँ,स,ॅ

[ ज ]

जगत्=ऌ
जगती=ल, लँ
जगत्पार्श्वः=प
जगदीशः=अ, उ क्लीँ
जगन्नाथः=अ, उ, क्लीँ
जटाधरः=ए, क, कँ, ग, स, ह
जठरगः=म
जनकः=ज
जनार्दनः=अ,उ,क्लीँ, फ
जम्भभेदी=इ, ल
जम्भादिः=स्त्रीँ
जयनः=ज
जयन्तः=ज,ए,ग,स,ह
जरा=ट
जलकङ्कः=क्राँ
जलकाङ्क्षः=क्राँ
जलदा=क्लीँ, स्त्रीँ
जलधिः=रूँ
जलनिधिः=रूँ
जलपीथम्=व, वँ
जलम्=स्वाहा

जलसंज्ञः = व, वँ
जलेन्द्रः =
जलेशयः = अ, उ, क्लीँ
जह्नुः = अ, उ, क्लीँ
जह्नुकन्या = ऌ
जह्नुतनया = ऌ
जह्नुसुता = ऌ
जातवेदाः = र, रँ
जातसंज्ञः = झ
जाली = र
जाह्नवी = ऌ
जितामित्रः = अ, उ, क्लीँ
जिनः = अ, उ, क्लीँ, घ
जिष्णुः = अ, उ, क्लीँ
जिह्वा = क्लीँ
जीवः = स
जीवनम् = व, वँ, स
जुहूवारः(लः) = र, रँ
जैवातृकः = ऐ, द्राँ, स, ँ
ज्ञप्तिगः = त्र
ज्योतिः = त्राँ
ज्वलनः = र, रँ

[ झ ]

झषः = प
झिण्टी = ए
झिण्टीशः = ए

[ ड ]

डाकिनी = स्फ्रे
डामरः = ड

[ त ]

तटम् = हूँ
तनूनः = ठ, य, यँ

तनूनपात् = र, रँ
तन्द्री = म
तपनः = ऋ, म
तपसः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तपस्तक्षः = इ, ल
तमः = औं, त, ल, लँ
तमोनुत् = र, रँ
तमोहरः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तरङ्गः = वँ
तरणिः = ण, म
तरन्तः = रूँ
तरलः = त
ताण्डवम् = चँ
तापनः = म
तामरसम् = व, वँ
तारः = ओँ, त्राँ
तारकः = ओँ
तारकम् = त्राँ
तारा = ऊँ, त्राँ
ताराधिपः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तारापतिः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तारापीडः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तारिका = त्राँ
तारिघः = रूँ
तारिपः = रूँ
तार्क्ष्यध्वजः = अ, उ, क्लीँ
तिथिमणीः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तिमिः = रूँ
तिमिकोशः = रूँ
तिमिरम् = ल, लँ
तीक्ष्णः = प, य
तीरम् = हूँ
तीव्रः = ए, ग, त, स, ह

तुङ्गी = ऐ, द्राँ, स, ँ
तुङ्गीपतिः = ऐ, द्राँ, स, ँ
तुराषाट् = इ, ल [स, ँ
तुषारकिरणः = ऐ, द्राँ,
तोयनिधिः = रूँ
तोयम् = व, वँ
त्रपा = ह्रीँ
त्रिगुणाकारः = ण
त्रितत्त्वम् = हूँ, ओँ
त्रिदशः = क्ष
त्रिदिवेशः = क्ष
त्रिपात् = अ, उ, क्लीँ
त्रिपुरः = ऐ [ह
त्रिपुरान्तकः = ए, ग, स,
त्रिमात्रः = ओँ
त्रिमूर्त्तिः = ई,
त्रिमूर्त्तीशः = ई
त्रिरेखः = ण
त्रिलोचनः = ए, ग, स, ह
त्रिविक्रमः = ऋ, अ, इ, क्लीँ
त्रिविन्दुः = छ
त्रिवृत् = ओँ
त्र्यम्बकः = ए, ग, स, ह
त्वक् = य
त्विषाम्पतिः = म

[ द ]

दकम् = व, वँ
दक्षकपोलः = ऌ
दक्षगुल्मगः = ड
दक्षजान्वग्रगः = ठ
दक्षनेत्रम् = इ
दक्षपादगः = ट
दक्षपादाङ्गुलिमूलगः = ढ

दक्षपार्श्वः = प
दक्षाङ्गुल्यग्रगः = ङ
दक्षिणकूर्परगः = ख
दक्षिणहस्तगः = श
दक्षिणाङ्गुलिमूलगः = घ
दण्डः = नमः, ०
दण्डी = थ
दण्डीशः = थ
दन्तावलः = क्राँ
दन्ती = क्राँ
दमुना = र, रँ
दर्पकः = इ, क, क्लीँ
दर्शविपत् = ऐ, द्राँ, स, ँ
दशाश्वः = ऐ, द्राँ, स, ँ
दहनः = र, रँ
दाता = द
दामोदरः = अ, उ, ऐ, क्लीँ
दारकः = ड
दारदः = रूँ
दाशार्हः = अ, उ, क्लीँ
दिगम्बरः = ए, ग, स, ह
दिनकरः = म
दिनमणिः = म
दिवस्पतिः = म
दिवाकरः = म
दिवौकाः = क्ष
दीपिका = ऊ
दीर्घः = न
दीर्घमारुतः = क्राँ
दुश्च्यवनः = इ, ल
देवः = क्ष
देवकीनन्दनः = अ, उ, [क्लीँ
देवकीसूनुः = अ, उ, क्लीँ

देवताधिपः = इ, ल
देवदेवः = ए, ग, स, ह
देवमाता = ऋ, ॠ
देवराजः = इ, ल
देहिनी = ल, लँ
दैत्यगुरुः = ऌँ, ब्रौँ
दैत्यमान्यः = ऌ, ब्रौँ
दैत्यारिः = अ, उ,, क्लीँ
दैवज्ञः = ऋ, ॠ
दोग्घ्री = हूँ
दोला = फ्रेँ
दोषाकरः = ऐ, द्राँ, स, ँ
दौर्गमाता = ॠ
द्युतिः = छ
द्युमणिः = म,
द्योः = आ, ख, ह, हँ
द्यौः = आ, ख, ह, हँ
द्रुघणः = क, कँ
द्रुमारिः = क्राँ
द्रुहिणः = क, कँ
द्वादशात्मा = म
द्वारकेशः = अ, उ, क्लीँ
द्विजपतिः = ऐ, द्राँ, स, ँ
द्विजराजः = ऐ, द्राँ, स, ँ
द्विपः = क्राँ
द्विरण्डेशः = भ
द्विरदः = क्राँ
द्विरदनः = क्राँ
द्वीपवान् = रूँ
द्वैमातुरः = गँ

[ ध ]

धनञ्जयः = र, रँ
धनेशः = ध
धर(णी)णिः = ल, लँ
धरणीकीलकः = द [क्लीँ
धरणीधरः = द, अ, ड,
धरणीध्रः = च
धरणीपूरः = रूँ
धरणीशः = ध
धरा = ल, लँ
धराधरः = च, द
धरित्री = ल, लँ
धर्मद्रवी = ऌ
धवलम् = व, वँ
धाता = क, कँ
धातृभृत् = द
धात्री = ल, लँ
धारयित्री = ल, लँ
धारिणी = ल, लँ
धुनीनाथः = रूँ
धूर्जटिः = ए, ग, स, ह
धूलिध्वजः = ख, ट, य, यँ, ह, हँ
धेनुकारिः = अ, उ, क्लीँ
ध्रुवः = अ, उ, ए, क्लीँ, ग, स, ह
ध्रौवम् = अः
ध्वान्तम् = लँ

[ न ]

नकुली = ह
नक्षत्रनेमिः = ऐ, द्राँ, स, ँ
नक्षत्रम् = त्राँ
नक्षत्रेशः = ऐ, द्राँ, स, ँ
नगः = द

नटनम् = चँ
नदी = न
नदीनः = न
नन्दकः = इ, क, क्लीं
नन्दजः = ठ
नन्दनः = इ, क, क्लीं
नन्दनन्दनः = अ, उ, क्लीं
नन्दयिता = इ, क, क्लीं
नन्दात्मजः = अ, उ, क्लीं
नन्दिनी = ऌ
नन्दिवर्धनः = ए, ग, स, ह
नन्दी = इ, क, क्लीं, उ
नन्दीश्वरः = ए, ग, स, ह
नपुंसकमन्त्रः = नमोऽन्तः
नभः = ऌ, नमः, आ, ख, ह, हँ
नभःप्राणः = ट, य, यँ
नभःस्वरः = ट, य, यँ
नभश्चमसः = ऐ, द्राँ, स, ँ
नभसम् = आ, ख, ह, हँ
नभस्वान् = ट, य, यँ
नमुचिसूदनः = इ, ल
नरः = ढ
नरकजित् = अ, उ, ण, क्लीं
नरसिंहः = अ, उ, क्लीं
नरायणः = अ, उ, क्लीं
नर्त्तकः = इ, क, क्लीं
नर्त्तकम् = चँ
नर्त्तकी = ऊँ–ब्रीं, स्त्रीं
नाकनाथः = इ, ल
नाकम् = आ, ख, ह, हँ
नागः = औ, अः, क्राँ
नागलोकः = थ
नाट्यम् = च, चँ
नादः = ँ
नादी = न
नाभिगतः = भ
नाभिजन्मा = क, कँ
नाम्म् = व, वँ
नारायणः = अ, उ, क्लीं
नारायणप्रिया = श्रीं
निःश्वासकः = ट, य, यँ
निद्रा = भ
निधनः = क, कँ
निरञ्जनः = अ
निर्जरः = क्ष
निर्झरः = क्राँ
निर्झरी = द
निर्वाणः = ण
निवृत्तिकला = ह्राँ
निशाकरः = ऐ, द्राँ, स, ँ
निशाचरः = इ, क, क्लीं

[ प ]

पक्षजः =
पक्षजन्माः =
पक्षधरः = } ऐ, द्राँ, स, ँ
पञ्चधन्वा = इ, क, क्लीं
पञ्चनखः = च, क्राँ
पञ्चबाणः = इ, क, क्लीं
पञ्चरश्मिः = ओँ
पञ्चशरः = इ, क, क्लीं
पञ्चसुप्तः = च
पञ्चाननः = ए, ग, स, ह
पञ्चान्तकः = ग
पद्मः = ठ, ऊ, ब्रीं
पद्मनाभः = अ, उ, क्लीं
पद्मपाणिः = क, कँ
पद्मा = ऊ, श्रीं
पद्मासनः = क, कँ
पद्मी = क्राँ
पद्मेशः = य
पपश्चमः = म
पम्पा = ख
परमात्मा = क्ष
परमेष्ठी = क, कँ
परा = ऌ, ह्रीं
परिज्ञाः = ऐ, द्राँ, स, ँ
पर्वतः = द
पर्वतारिः = इ, ल
पर्वाधिः = ऐ, द्राँ, स, ँ
पर्यण्यः = इ, ल
पर्शुपाणिः = गँ
पल्वलावासः = च
पवनः = ट, य, यँ
पवमानः = ट, य यँ
पांशुचन्दनः = ए, ग, स, ह
पाकशासनः = इ, ल
पाचनः = र, रँ
पाण्डवायनः = अ, उ, क्लीं
पातकः = र
पाथः = व, वँ
पानीयम् = व, वँ
पापम् = ऊ
पारा = ल, लँ
पारावारः = ॠँ
पार्थिवः = ँप
पार्श्वः = ष
पाल्लिनी = ठ

निशापतिः = इ, क, क्लीँ
निशामणिः = ऐ, द्राँ, स ॰
निशीथनानाथः = ऐ, द्राँ, स, ॰
निश्चला = ल, लँ
नीरम् = व, वँ, स्वाहा
नीलः = त
नीलकण्ठः = ए, ग, स, ह
नीलचरणः = ऌ
नीललोहितः = ए, ग, स, ह
नृहरि = अ, उ, क्लीँ
नृसिंहास्त्रम् = ईं
पावकः = र, रँ
पाशः = आँ
पिङ्गलः = र, रँ
पिङ्गलिका = ऊँ, श्रीँ
पिण्डपादः = क्राँ
पितामहः = अ, क, कँ, म
पिनाकपाणिः = ए, ग, स, ह
पिनाकी = ए, ग, ल, स, ह
पिप्पलम् = व, वँ
पीता = ष
पीताम्बरः = अ, उ, क्लीँ
पीयुषमहाः = ऐ, द्राँ, स, ॰
पीलुः = क्राँ
पीवरः = च
पुण्डरीकाक्षः = अ, उ, क्लीँ
पुनर्वसुः = अ, उ, क्लीँ
पुम्मन्त्रः = हुँफडन्तः
पुरदंशा = इ, ल
पुरद्विट् = ए, ग, स, ह

पुरन्दरः = इ, ल
पुरहूतः = इ, ल
पुराणगः = क, कँ, म
पुराणपुरुषः = अ, उ, क्लीँ
पुरुषोत्तमः = अ, उ, क्लीँ, प
पुलोमारिः = इ, ल
पुष्करम् = आ, ख, ग्लौँ, व, वँ, ह, हँ
पुष्करी = क्राँ
पुष्पम् = ध
पूतक्रतुः = इ, ल
पूतनारिः = अ, उ, क्लीँ
पूर्वः = क, कँ
पूर्वदिक्पतिः = इ, ल
पूषा = म, स
पृतनाराषाट् = इ, ल
पृथिवी = ल, लँ
पृथुशेखरः = द
पृथ्वी = ल, लँ
पृषताम्पतिः = ट, य, यँ
पृषदश्वः = ट, य, यँ
पेटकी = क्राँ
पेटलः = क्राँ
प्रकम्पनः = ट, य, यँ
प्रजापतिः = क, कँ, म
प्रणवः = ओँ
प्रतिष्ठाकला = ह्रीँ
प्रद्युम्नः = इं, क, क्लीँ
प्रभञ्जनः = ट, य, यँ
प्रभुः = अं, उ, क, कँ, क्लीँ, म
प्रमथाधिपः = ए, ग, स, ह
प्रलयक्षयः = ध्रुँ
प्रशास्तिका = ह्रीँ

प्रसूतिः = ध
प्रसूनः = ध
प्रस्थम् = ग्लौँ
प्रस्थवान् = द
प्राचीनबर्हिः = इ, ल
प्राणः = ह
प्रासादः = हौँ
प्रियतमः = ए, ग, स, ह
प्रिया = स्त्रीँ
प्रीतिः = ध

[ फ ]

फट्कारः = फ
फणाधरधरः = ए, ग, स, ह
फणिप्रियः = ट, य, यँ
फली = क्रौँ
फेत्काटी = हेँ स्फ्र = ह् + स् + ख् + फ्रैँ

[ ब ]

बकः = श
बकेशः = श
बभ्रुः = अ, उ, क्लीँ
बलम् = व
बलारातिः = इ, ल
बलिध्वंसी = अ, उ, क्लीँ
बहुरूपः = क, कँ, म
बाणः = ण
बालः = व
बीजप्रसूः = ल, ल
बृहद्भानुः = र, रँ
ब्रध्नः = म
ब्रह्मसूः = इ, क, क्लीँ
ब्रह्मा = क, कँ, म

[ भ ]

भगः = ए
भगाली = ए, ग, स, ह
भद्रः = क्रौँ
भद्रिका = भ
भपातिः = ऐ, द्रौं, स, ँ
भम् = त्राँ
भयदः = ऐ
भया = ब
भयावहः = भ
भरद्वाजः = भ
भरुः = ए, ग, स, ह
भर्गः = ए, ग, स, ह
भवः = ए, ग, स, ह
भवायना = ऌ
भागीरथी = ऌ
भानुः = म
भारभूतिः = ऋ
भार्गवः = अः, ऌ, ब्रौँ
भास्करः = म
भास्वती = भ
भास्वान् = म
भीमः = ए, ग, स, ह
भीमा = भ,
भीरुः = ए, ग, स, ह
भीषणः = ए, ग, स, ह
भीष्मजननी = ऌ
भीष्मसूः = ऌ
भुजगः = य
भुजङ्गेशः = ट
भुवनम् = व, व
भुवनमाता = ल, लँ
भुवनेशः = ह
भुवनेशी = ह्रीँ
भूः = ल. लँ
भूतधात्री = ल, लँ
भूतनाथः = ए, ग, स, ह
भूतम् = उ, फ्रेँ, स्फ्रेँ
भूतिः = ह्रीँ
भूतेशः = ए, ग, स, ह
भूधरः = द, व
भूभृत् = द
भूमिः = ल, लँ
भूरिः = ए, ग, स, ह
भृगुः = स
भृङ्गः = इ, क, क्लीँ
भृङ्गीशः = ए, ग, स, ह
भृङ्गेशः = इ, क, क्लीँ
भैरवः = ए, ग, स, ह
भोगिकान्तः = ट, य, यँ
भौतिकः = ऐँ
भौमजः = ड
भ्रमणः
भ्रममाणः
भ्रमावहः
भ्रमोऽपरः = इ, क, क्लीँ
भ्रान्तः
भ्रान्तचारः
भ्रामकः
भ्रामणः
भ्रूकुटी = भ

[ म ]

मः = क, कँ, म
मकरध्वजः = इ, क, क्लीँ
मघवा = इ, ल
मघाभूः = ऌँ, ब्रौँ
मज्जा = ष
मञ्जुघोषः = म, क, कँ
मठसंज्ञः = ग्लौँ
मण्डलः = म
मण्डूकः = म
मतङ्गः = क्रौँ
मत्स्यः = प
मथुरेशः = अ, उ, क्लीँ
मदनः = इ, क, क्लीँ
मधुजित् = अ, उ, क्लीँ
मधुरिपुः = अ, उ, क्लीँ
मधुसूदनः = अ, उ, क्लीँ
मनासिजः = इ, क, क्लीँ
मनुः = औ
मन्त्रनाथः = औ
मन्त्रमनुः = स्वाहा
मन्त्रेशः = म
मन्दाकिनी = ऌ
मन्दाक्षम् = ह्रीँ
मन्दास्यम् = ह्रीँ
मन्मथः = इ, क, क्लीँ
मरुत् = ट, य, यँ
मरुत्वान् = इ, ल
मलिनम् = ढ
महाकच्छः = रूँ
महाकान्ता = ल, लँ
महाकालः = ए, ग, म, स, ह
महाघोषः = ह
महानटः = ए, ग, स, ह
महामाया = ई
महात्रिलिः = आ, ख, ह, हँ
महासेनः = ट

मही=ल, लँ
महीध्रः=द
मातङ्गः=इ,क,क्राँ, क्लीँ
मातरिश्वा=ट, य, यँ
मादिः=इ, क, क्लीँ
माधवः=अ,इ,उ,क्लीँ
मानवः=अः
मानी=म
माया=ई, ह्रीँ
मायी=औ
मायोत्तरम्=उ
मारः=इ, क, क्लीँ
मारुतः=ट, य,यँ
मार्जः=अ, उ, क्लीँ
मार्त्तण्डः=म
मालूरः=क्षौँ
मित्रः=म
मिहिरः=म
मीनकेतनः=इ,क,क्लीँ
मुकुन्दः=अ, उ, क्लीँ
मुखाङ्कुरम्=इ
मुञ्जकेशी=अ,उ,क्लीँ
मुरलीधरः=अ,उ,क्लीँ
मुरारिः=औ
मूर्धा=ऐ
मृगपिपुः=ऐ, द्राँ, स,ँ
मृगवाहनः=ट, य, यँ
मृडः=ए,ग, स, ह
मृत्तिका=ह्रीँ
मृत्युः=श
मृत्युञ्जयः=ए,ग, स, ह
मृत्=ह्रीँ

मृत्स्ना=ह्रीँ
मेघः=व
मेघपुष्पम्=व, वँ
मेघवान्=इ, ल
मेघवेश्म=आ, ख, ह, हँ
मेदः=व
मेदिनी=ल, लँ
मेरुः=क्ष, ष
मेषः=न
मोक्षः=औ
मोचिका=ॠ
मोहः=इ, क, क्लीँ
मोहनः= ,,
मोहवर्धनः=,,

[ य ]

यज्वनाम्पति=ऐ,द्राँ,स,ँ
यदुनाथः=अ, उ, क्लीँ
यमः=ञ
यमान्तकः=ए,ग,स,ह
यादःपति=रूँ
यादवः=अ, उ, क्लीँ
यादसाम्पतिः=रूँ
यामिनीपतिः=ऐ,द्राँ,स,ँ
यामुनः=य
यामुनेयः=य
योगिनी=छ्रीँ
योनिः=ए

[ र ]

रक्तम्=र
रक्षणाधिपः=ऊ
रतिः=इ, क्लीँ
रतिनाथः=इ, क, क्लीँ

रतिपतिः=इ, क, क्लीँ
रतिप्रियः=इ, क, क्लीँ
रतिसखः=इ, क, क्लीँ
रत्नगर्भा=ल, लँ
रत्नाकरः=रूँ
रत्नावली=ल, लँ
रदनी=क्राँ
रन्तिदेवः=अ, उ, क्लीँ
रमः=इ, क, क्लीँ
रमणः=इ, क, क्लीँ
रममाणः=इ, क, क्लीँ
रमा=श्री
रमाकान्तः=इ,क, क्लीँ
रम्भा=स्त्रीँ
रविः=म
रशना=क्रीँ
रसज्ञा=क्रीँ
रसना=क्रीँ
रसनायकः=ए,ग,स,ह
रसा=क्रीँ
रसाङ्का=क्रीँ
रसाला=क्रीँ
रसिका=क्रीँ
राजा=ऐ, द्राँ, स,ँ
राजीवः=क्राँ
रात्रिः=त
रात्रिनाथः=इ, क, क्लीँ
रामा=स्त्रीँ
रावः=फ्रेँ
राहुभेदी=अ, उ, क्लीँ
रिपुघ्नः=ॠ
रुक्मिणी=श्रीँ
रुचिरः=र

रुद्रः = ए, ग, स, ह
रुद्रशेखरा = ऌ
रुधिरम् = र
रेणुका = इ
रेरिहाणः = ए, ग, स, ह
रोचिष्मान् = र
रोहिणीपतिः = ऐ, द्राँ, स, ॰
रोहिणीशः = ऐ, द्राँ, स, ॰
रोहिताश्वः = र, रँ
रौद्री = फ

[ ल ]

लकुली = ह
लक्ष्मीः = ब, श्रीँ
लक्ष्मीसहजः = ऐ, द्राँ, स, ॰
लज्जा = स्त्रीँ, ह्रीँ
लता = ए
लम्पटः = ल
लम्बोदरः = गँ
ललना = क्लीँ, स्त्रीँ
लवणम् = न
लिप्सा = ऊँ
लेखः = क्ष
लेखर्षभः = इ, ल
लेखा = ह्रीँ
लोकनाथः = क, कँ, म
लोकेशः = क, कँ, म
लोभवर्धनः = इ, क क्लीँ
लोला = क्लीँ
लोहितः = प, ह्रीँ

[ व ]

वज्रकायः = क्ष
वज्रदण्डः = ऌ
वज्रपाणिः = इ, ल
वज्रमुष्टिः = व
वज्री = इ, ल
वधूः = स्त्रीँ
वनम् = व, वँ
वनम् = स्वाहा
वनमाली = अ, उ, क्लीँ
वराकः = ए, ग, स, ह
वराहः = न
वरुणः = वँ
वरेश्वरः = ए, ग, स, ह
वर्गादिः = क
वर्त्तः = ऐ
वर्धमानः = अ, उ, क्लीँ
वर्म = हुँ
वर्हा = थ
वर्हिः = र, रँ
वर्हिशुष्मा = रूँ
वलक्षगुः = ऐ, द्राँ, स, ॰
वसुः = ए, ग, स, ह
वसुन्धरा = ल, लँ
वस्त्रबीजम् = आँ
वह्निः = र, रँ
वाः = व, वँ
वाक् = ऐ, ऐँ
वागुरा = म्रीँ
वाग्भवम् = ऐँ
वाग्मी = म्रीँ
वाङ्कः = रूँ
वाणी = ऐँ
वातुदा = म्रीँ
वामकर्णः = ऊ
वामगण्डः = ऌ
वामगुल्फगः = द
वामदेवः = ए, ग, स, ह
वामनः = अ, उ, ऋ, क्लीँ
वामनासिकः = ऋ
वामनेत्रम् = ई
वामपादाङ्गुलितलगः = ज
वामपादाङ्गुलीगः = ध
वामपार्श्वगः = फ
वाममणिमध्यगः = न
वामलोचनम् = ई
वामलोचना = ऋ
वामहस्ताङ्गुलितलगः = झ
वामहस्ताङ्गुल्यग्रगः = ञ
वामांसगतः = व
वामोरुमूलगः = त
वायुः = ट, य, यँ
वायुसखः = र, रँ
वारणः = क्राँ
वारणम् = ऐ, ऐँ, क्राँ
वारांनिधिः = रूँ
वाराही = ए
वारि = व, वँ
वारिदः = व
वारिधिः = रूँ
वारिनिधिः = रूँ
वारिराशिः = रूँ
वारुणम् = क, व
वार्तादा = म्रीँ
वार्धिः = रूँ
वार्षः = त्रूँ
वासना = ऐ, ऐँ, ऊँ, श्रीँ
वासवः = इ, ल

वासुः = अ, उ, औं, क्लीँ
वासुदेवः = ,,
वास्तोष्पतिः = इ, ल
वाहिनीपतिः = ह्लूँ
वाह्लिकम् = ग्लौँ
विघ्नपः = ग, गँ
विजयी = उ
विद्या = इ
विद्युत् = ष
विधिः = क, कँ, म, वँ
विन्दुः = ०
विन्दुमाली = ई
विपुला = ल, लँ
विभावसुः = र, रँ
विभूतिः = ह्रीँ
विमलः = ल
विलः = थ
विशालाक्षः = थ
विश्वप्सा = र, रँ
विश्वम् = ऌ, नमः
विश्वम्भरा = ल, लँ
विश्वमूर्त्तिः = भ
विषः = म
विष्णुः = अ, उ, क्लीँ
वीतिहोत्रः = र, रँ
वीरः = य
वृक्षः = अं, अः
वृषः = ष
वृषाकपिः = र, रँ
वृष्टिः = क्रँ
वेदादिः = ऊँ
वेश्या = ऊँ, ब्रीँ
वैकुण्ठः = म
वैश्यः = य
वैश्वानरः = र, रँ
वैष्णवः = आ
व्यक्तः = ऌ
व्याघ्रपादः = उ
व्यापिनी = औं
व्योम = आ, ऌ, ख, ह, हँ, ०
व्योषम् = ह्रीँ

[ श ]

शंवरम् = व, वँ
शक्तिः = ए, स, ह्सौँ
शक्रः = इ, ल
शङ्करः = ए, ग, स, ह
शङ्कुकर्णः = श
शङ्खभृत् = अ, उ, क्लीँ
शङ्खान्तराकृतिः = ढ
शचीपतिः = इ, ल
शतक्रतुः = इ, ल
शतघ्नी = घ्रीँ
शतधामा = अ, उ, क्लीँ
शतधृतिः = इ, क, कँ, म, ल
शतपत्रनिवासः = क, कँ, म
शतपर्वेशः = ऌँ, ब्रौँ
शतमन्युः = इ, ल
शतानन्दः = क, कँ, म
शतावर्त्तः = अ, उ, क्लीँ
शतावर्त्ती = ,,
शनिः = छ
शम्बरारिः = इ, क, क्लीँ
शम्भुः = ए, ग, श, स, ह
शम्भुवनिता = ह्रीँ
शरजन्मा = टँ
शरत् = स
शर्म = ए, स
शर्वरीपतिः = ऐ, द्राँ, स, ँ
शर्वरीशः = ,,
शशधरः = ,,
शशविन्दुः = अ, उ, क्लीँ
शसीनः = ट, य, यँ
शान्तिः = ई [ह्लैँ, ह्लौँ
शान्त्यतीता कला = ह्लूँ,
शाम्भवम् = ह्लूँ
शार्ङ्गभृत् = अ, उ, क्लीँ
शार्ङ्गी = अ, उ, क्लीँ, ग
शालिका = ध्रीँ
शिखरम् = म्लौँ
शिखरी = द
शिखावान् = र, रँ
शिखी = र, रँ
शितिकण्ठः = ए, ग, स, ह
शिपिविष्टः = ,,
शिरः = ०, क
शिली = म
शिलोच्चयः = द
शिवः = ए, ग, स, ह
शिवकीर्त्तनः = अ, उ, क्लीँ
शिवा = ह्रीँ
शिविपिष्टः = ए, ग, स, ह
शिवोत्तमः = घ
शीतभानुः = ऐ, द्राँ, स, ँ
शीतमरीचिः = ,,
शीतरश्मिः = ,,
शीतलः = ,,
शीतांशुः = ,,
शुक्रः = स, ऌँ, ब्रौँ
शुक्लः = स

शुक्रा = धीँ
शुचिः = र, रँ
शुभाङ्गिः = ड
शुभ्रा = ऌ
शुभ्रांशुः = ऐ, द्राँ, स,
शुष्मा = र, रँ
शूकरः = न
शून्यम् = हसौँ
शूरः = प, म
शूर्पकः = ग, गँ
शूर्पकर्णः = क्राँ
शूलः = द
शूलधरः = ए, ग, स, ह
शूली = ,,
शृङ्गारी = क्राँ
शृङ्गी = द
शृणिः = क्रो
शैलः = द
शैलशिखरम् = रूँ
शैलेन्द्रजा = ऌ
शोचिष्केशः = र, रँ
शोभा = फ, हँ
शौरिः = थ, न
श्मरी = नमः
श्यामा = क्रीँ, धंँ, ल, लँ
श्रवणः = उ
श्रीकण्ठः = ए, ग, स, ह
श्रीकरः = अ, उ, क्लीँ
श्रीकान्तः = ,,
श्रीगर्भः = ,,
श्रीधरः = ऌ ,,
श्रीनिकेतनः = अ, उ, क्लीँ
श्रीनिवासः = ,,
श्रीपतिः = अ, उ, क्ली
श्रीमान = ,,
श्रीवत्सः = ,,
श्रीवत्सभृत् = ,,
श्रीवत्सलाञ्छनः = ,,
श्रीवराहः = ,,
श्रीशः = ,,
श्रीहरिः = ,,
श्रुतिः = उ, ॐ
श्लेष्मकः = छ
श्वसनः = ट, य, यँ
श्वेतः = ऌँ, व्रौँ
श्वेतरथः = ऌँ, व्रौँ, म
श्वेतवाहनः = ऐ, द्राँ, म,
श्वेतेश्वरः = प

[ ष ]

षडाकारः = प
षडाननः = टँ, ष
षण्मुखः = ऊ, टँ
षष्टिहायनः = क्राँ
षोडशांशुः = ऌँ, व्रौँ
षोडशार्चिः = ऌँ, व्रौँ

[ स ]

संक्रन्दनः = इ, ल
संवर्त्तकः = क्ष
संहारः = ख
सकला = ह्रीँ
सङ्कर्षणः = आँ
सङ्क्षयकः = ङ
सङ्गतिः = स
सत्यः = द
सत्यकः = क, कँ, म
सदनम् = व, वँ
सदागतिः = ट, य, यँ
सदानन्दः = क, कँ, म
सदायोगी = अ, उ, क्लीँ
सदाशिवः = व, फोँ, स्फोँ
सद्यः = ओ
सद्योजातः = ओ
सनत् = क, कँ, म
सनातनः = अ, उ, क्लीँ
सन्ध्यानटी = ए, ग, स, ह
सन्ध्यारामः = क, कँ, म
सपरः = ह
सप्तजिह्वः = र, रँ
सप्तार्चिः = र, रँ
सप्ताश्वः = म
सफरी = फ
समयः = स
समस्ता = ह्रीँ
समीरः = ट, य, यँ
समीरणः = ट, य, यँ
समुद्रः = रूँ [स,
समुद्रनवनीतः = ऐ, द्राँ,
समुद्रसुभगा = ऌँ
सम्बलम् = व, वँ
सरः = व, वँ
सरम् = व, वँ
सरसी = उ
सरस्वान् = रूँ
सरित्पतिः = रूँ
सरिताम्पतिः = रूँ
सरिद्वरा = ऌँ
सरिलम् = व, वँ
सरोजी = क, कँ, म
सरोरुहनिवासिनी = श्रीँ

सर्गः = ः
सर्पः = द
सर्पाकारः = दः
सर्वः = ए, ग, स, ह
सर्वज्ञः = ए, ग, स, ह
सर्वतोमुखम् = व, वँ
सर्वसंज्ञः = ञ
सलम् = व, वँ
सलिलम् = व, वँ
सत्वः = व, वँ
सत्वकर्त्ता = क, कँ, म
सत्वमुखः = र, रँ
सत्वरम् = व, वँ
सविता = म
सहस्रवदनः = अ, उ, क्ष्रीँ
सहस्रांशुः = म
सहस्राक्षः = इ, ल
सहा = ल, लँ
सागरः = रूँ
सागरमेखला = ल, लँ
सागराम्बरम् = र, रँ
सात्वतः = ध
सानुः = म्लौँ
सानुमान् = द
सामगः = स
सामगर्भः = अ, उ, क्ष्रीँ
सामजः = क्राँ
सामयोनिः = क्राँ
सारः = ट, य, यँ
सारसः = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
साधबला = ध्रीँ
सिंहः = ग
सिंहिका = ड

सितभानुः = ०
सितसिन्धुः = ॡँ
सिद्धदेवः = ए, ग, स, ह
सिद्धसिन्धुः = ॡँ
सिद्धापगा = ॡँ
सिद्धिः = ञ
सिन्धुः = रूँ
सिन्धुजन्मा = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
सिन्धुरः = क्राँ
सिन्धुरतिलकः = क्राँ
सिप्रः = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
सुखाशः = ट, य, यँ
सुत्रामा = इ, ल
सुधा = ॡँ
सुधाकरः = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
सुधाङ्गः = ,,
सुधाधारः = ,,
सुधानिधिः = ,,
सुधाबीजम् = वँ
सुधारश्मिः = द्राँ
सुधावर्षी = क, कँ, म
सुधासूतिः = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
सुधास्रवा = क्ष्रीँ
सुधांशुः = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
सुपूज्या = प्रीँ
सुप्रजा = ध
सुप्रसादः = ए, ग, स, ह
सुरज्येष्ठः = क, कँ, म
सुरदीर्घिका = ॡँ
सुरनदी = ,,
सुरनिम्नगा = ,,
सुरपतिः = इ, ल
सुरवर्त्म = आ, ख, ह, हँ

सुरसः = ब
सुरापगा = ॡँ
सुवर्णविन्दुः = अ, उ, क्ष्रीँ
सुषमा = ह
सूक्ष्मः = ॡ
सूक्ष्मा = ए
सूरः = म
सूर्यः = म
सृष्टिः = क
सोमः = ऐ, द्राँ, स, ॱँ
सोमम् = व, वँ
सोमसिन्धुः = अ, उ, क्ष्रीँ
सोमेशः = ट
सौष्मकम् = नमः
स्कन्दः = टँ
स्कन्दम् = ह्राँ
स्तनः = ज, जँ
स्तम्बेरमः = क्राँ
स्तम्भनम् = नमः
स्तरमः = क्राँ
स्त्रीबीजम् = प्रीँ
स्त्रीमन्त्रः = स्वाहान्तः
स्थविरः = ठ
स्थाणुः = ॡ
स्थायी = ठ
स्थावरः = ए, ग, स, ह
स्थितिः = झ
स्थिरः = ज, द
स्थिरा = ज, ल, लँ
स्पर्शनः = ट, य, यँ
स्पृहा = ऊँ
स्मरः = इ, क, क्ष्रीँ
स्मरणम् = ग

स्मरहरः=ए, ग, स, ह
स्मृतिः=ग
स्यन्दनम्=व, वँ
स्रष्टा=क, कँ, म
स्वकम्पनः=ट, य, यँ
स्वभूः=अ, उ, क, क्लीँ
कँ, म
स्वयम्भुः=क, कँ, म
स्वयम्भूः=क, कँ, म
स्वरः=ट, य, यँ
स्वरादिः=ॐ
स्वर्गापगा=लृँ
स्वर्ग्यापगा=लृँ
स्वर्णरेतसोवल्लभा=स्वाहा
स्वर्धुनी=लृँ
स्वर्नदी=लृँ
स्वर्वापी=लृँ
स्वस्तिकः=झ [कँ, म
स्वायम्भुवमनुपिता=क,
स्वाराट्=इ, ल

[ ह ]

हंसः=म, स
हंसरथः=क, कँ, म
हंसवाहनः=क, कँ, म
हनुः=स्वाहा
हयाननः=ह
हरः=लृ,ए,ग,स,स्वाहा
[ह्रीँ,ह
हरचूडामणिः=ऐ, द्राँ,
स,ँ
हरम्=फट्
हररूपः=ए, ग, स, ह
हरशेखरा=लृँ
हरिः=अ, उ, त, क्लीँ
हरिकान्ता=श्रीँ
हरिणः=ह्सौँ
हरिणाङ्कः=ऐ, द्राँ, स,ँ
हरिणाक्षी=श्रीँ
हरिणीबीजम्=ह्सौँ
हरिदश्वः=म
हरिद्राबीजम्=ह्सौँ
हरिहयः=इ, ल
हव्यभुक्=र,रँ
हव्यवाहनः=र, रँ
हस्ती=क्राँ
हिङ्गुबीजम्=ग्लौँ
हिण्डी=ए, ग, स,
हिमद्युतिः=ऐ, द्राँ, स
हिमरेताः=र, रँ
हिमाद्रितनयापतिः=ए,
ग, स, ह
हिमारातिः=र, रँ
हुतभुक्=र, रँ
हेमशङ्खः=क्ली
हेमवती=लृँ
हृत्=नमः
हृद्गतः=य
हृदा दक्षिणपादगः=स
हृदा दक्षिणहस्तगः=श
हृदा नाभिगः=लु
हृदा मुखगः=क्ष
हृदा वामपादगः=इ
हृदा वामबाहुगः=ष
हृल्लेखा=ह्री
हृषीकेशः=अ,उ,लृ,क्लीँ
ह्लादिनी=द, प

